माननीय सुशील हरकौली, कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश

हरि नारायण राय

बनाम

भारत संघ एवं अन्य

W.P. (Cr.) No. 325 of 2010. Decided on 6th August, 2010.

मनी लॉन्ड्रिग निवारण अधिनियम, 2002—धाराएँ 3 एवं 19 सह-पठित धारा 2(u) एवं 2(v)—भारत का संविधान, 1950—अनुच्छेद 20(1) एवं 226—मनी लॉन्ड्रिग—प्रासंगिक तिथि अवैध धन के अर्जन की तिथि नहीं है बल्कि वे तिथियाँ हैं जिसपर ऐसे धन को अकलंकित बताने के लिए प्रसंस्कृत की जा रही है—याची को मात्र किसी ऐसे कृत्य के लिए अभियोजित नहीं किया जा रहा है जो कि उस तिथि पर अनुसूचित अपराध नहीं था जब इसे कारित किया गया था—अनुच्छेद 20(1) द्वारा गारंटीप्रदत्त याची के मौलिक अधिकार का उल्लंघन नहीं किया जा रहा है—जब याची को न्यायिक आदेश द्वारा निरोध के लिए रिमांड पर लिया जा रहा था तब अवर न्यायालय के समक्ष इस अभिवाक् के सम्बन्ध में तथ्य का एक शुद्ध प्रश्न नहीं उठाया गया था कि निरोध के आधार याची को संसूचित नहीं किए गए थे—ऐसे आधार को सर्वप्रथम रिट अधिकारिता में उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है—याचिका खारिज। (पैराएँ 7 से 13)

अधिवक्तागण.—M/s Biren Poddar, Darshan Poddar, Deepak Sinha, Piyush Poddar, For the Petitioner; M/s Amit Kumar Das, Charanjeet Mukherjee, For the Respondent.

आदेश

मैंने पक्षों को विस्तारपूर्वक सुना है। याची मनी लॉन्ड्रिंग निवारण अधिनियम, 2002 (इसके बाद ''अधिनियम'' के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 3 के अधीन अभियोजित किया जा रहा है।

2. यह रिट याचिका यह अभिकथन करते हुए दाखिल की गई है कि अभियोजन को इस आधार पर कि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 (1) के अधीन गारंटीकृत याची के मूल अधिकार का उल्लंघन करता है, अभिखंडित कर दिया जाना चाहिए। अधिक विनिर्दिष्ट रूप से, उक्त मूल अधिकार का उल्लंघन किया जाना कहा गया है क्योंकि अपराध गठित करते कृत्य; जिन्हें पैसा उत्पन्न करने वाला कहा गया है, दिनांक 1.6.2009 के पहले किए गए थे। उस तिथि के पहले भारतीय दंड संहिता और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अपराधों, जिन्हें आक्षेपित परिवाद में दिया गया है, को अधिनियम की अनुसूची में उल्लिखित नहीं किया गया था।

3. इन सारे अपराधों को दिनांक 1.6.2009 के प्रभाव से वर्ष 2009 के संशोधन अधिनियम द्वारा अनुसूची में अंत:स्थापित किया गया था। तर्क का मूल्यांकन करने के लिए अधिनियम की धारा 3, 2 (u) एवं 2 (v) को उद्धृत करना आवश्यक है:—

> *"3. **मनी-लॉन्ड्रिग का अपराध.**—जो कोई प्रत्यक्षतः या अप्रत्यक्षतः पक्षपात का प्रयास करता है या जानबूझकर सहायता करता है या जानबूझकर एक पक्षकार होता है या अपराध के प्रतिफल के साथ जुड़ी किसी प्रक्रिया या गतिविधि में वास्तव में शामिल होता है और अदूषित सम्पत्ति के रूप में योजना करता है, मनी-लॉन्ड्रिग के अपराध का दोषी होगा।*
>
> *2(u) ''**अपराध के प्रतिफल**'' से अनुसूचित अपराध से सम्बन्धित दाण्डिक गतिविधि के परिणामस्वरूप किसी व्यक्ति द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष अर्जित या प्राप्त कोई सम्पत्ति या किसी ऐसी सम्पत्ति का मूल्य अभिप्रेत है।''*

*2(v) ''**सम्पत्ति**'' से प्रत्येक प्रकार की कोई सम्पत्ति या आस्ति अभिप्रेत है चाहे भौतिक हो या अभौतिक, चल हो या अचल, मूर्त हो या अमूर्त और उस सम्पत्ति या आस्ति के हक में हित को बताते विलेखों और लिखतों को शामिल करते हैं, जहां भी स्थिति हो।''*

4. याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार उस तिथि पर ''अपराध के आगम'' को अर्जित/उत्पन्न किया गया था जो प्रासंगिक तिथि है। तर्क यह कहने हेतु अग्रसर होता है कि धारा 3 में शब्द ''अपराध'' का अर्थ अनुसूची में सूचीबद्ध अपराध है। अधिनियम की धारा 2(u) जो फ्रेज ''अपराध का आगम'' परिभाषित करती है, को उक्त व्याख्या के लिए प्रयुक्त किया गया है।

5. अत: सारभूत रूप से तर्क यह है कि अभिकथित रूप से अर्जित किया गया धन ''अपराध का आगम'' की परिभाषा के अंतर्गत नहीं आएगा क्योंकि इसकी उत्पत्ति की ओर ले जाते कृत्य अनुसूची में सूचीबद्ध अपराधों के बीच नहीं थे जैसा कि वह उस तिथि पर था जब कृत्यों को किया गया था।

6. तर्क भ्रामक है। कारण यह है कि जिसे धारा 3 और अधिनियम के अन्य प्रावधान द्वारा लक्ष्य बनाया जा रहा है, वह अनुसूचित अपराध करके अर्जित किया गया ''लॉन्ड्रिंग ऑफ मनी'' है और इसलिए ''शोधन'' की तिथि प्रासंगिक होगी। धारा 3 में प्रयुक्त ''लॉन्ड्रिंग'' किसी प्रक्रिया अथवा क्रिया, जिसके द्वारा अवैध धन को अकलुषित दर्शाया जा रहा है, में अंतर्ग्रस्तता से गठित होता है।

7. अत: प्रासंगिक तिथि अवैध धन के अर्जन की तिथि नहीं है बल्कि वे तिथियाँ है जिनपर ऐसे धन को अकलुषित बताने के लिए प्रसंस्कृत किया जा रहा है।

8. इस चरण पर हम अभिकथनों से सरोकार रखते हैं, न कि इस विचार पर कि अभिकथनों को अंतत: सिद्ध किया जाएगा या नहीं। प्रत्यर्थीगण की ओर से कार्य और लोप के कृत्यों के बारे में विभिन्न अभिकथनों पर विश्वास करते हुए तर्क किया गया है कि अवैध रूप से अर्जित धन के लॉन्ड्रिंग का प्रयास अभी भी जारी है कि इसे याची के करीबी व्यक्तियों की वैध आय दर्शाते हुए किया जा रहा है।

9. इन परिस्थितियों में, मेरा दृष्टिकोण है कि याची को किसी कृत्य, जो इसके किए जाने की तिथि पर अनुसूचित अपराध नहीं था, मात्र के लिए अभियोजित नहीं किया जा रहा है। अत: अनुच्छेद 20(1) द्वारा गारंटीकृत याची के मूल अधिकार का उल्लंघन नहीं हो रहा है।

10. यह तर्क भी किया गया है कि याची का निरोध गैर-कानूनी है। यह तर्क उस अभिकथन पर आधारित है कि निरोध का आधार संसूचित नहीं किया गया था जैसा अधिनियम की धारा 19 द्वारा अपेक्षित है।

11. प्रथमत: यह बन्दी प्रत्यक्षीकरण के लिए रिट याचिका नहीं है। केवल दिनांक 13.10.2009 के न्यायिक रिमान्ड आदेश, इस रिट याचिका का परिशिष्ट-5, के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया गया है।

12. उस रिमान्ड आदेश का परिशीलन दर्शाता है कि जब याची निरोध के लिए अवर न्यायालय के न्यायिक आदेश द्वारा निरोध के लिए रिमान्ड किया जा रहा था, उस समय अवर न्यायालय के समक्ष ऐसा आधार नहीं लिया गया था।

13. तथ्य का शुद्ध प्रश्न होने के नाते, जिसे अवर न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया गया है, इसे रिट अधिकारिता में पहली-पहली बार उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसके अतिरिक्त, प्रतिशपथपत्र में इस तथ्य से इंकार किया गया है जो इसे तथ्य का विवादित प्रश्न बनाता है। सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि दिनांक 13.10.2009 के रिमाण्ड के बाद अनेक अन्य न्यायिक रिमाण्ड आदेश

होंगे जिन्हें चुनौती नहीं दी गयी है। अत: दिनांक 13.10.2009 के रिमाण्ड आदेश के अभिखंडन की प्रार्थना निरर्थक है।

14. मैं विस्तार में जाना समुचित नहीं समझता हूँ क्योंकि यह विचारण को प्रभावित कर सकता है।

15. ऊपर दिए गए कारणों से यह रिट याचिका विफल है और खारिज की जाती है।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

जोगेन्दर सिंह उर्फ योगेन्द्र सिंह एवं एक अन्य

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 820 of 2010. Decided on 6th August, 2010.

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 319—विचारण का सामना करने के लिए एक अतिरिक्त अभियुक्त का सम्मन किया जाना—दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 319 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग केवल अभियुक्त व्यक्तियों के विचारण के अनुक्रम में प्राप्त साक्ष्य के आधार पर केवल सम्बन्धित न्यायालय द्वारा ही किया जा सकता है—जिन लोगों को आरोप पत्रित किया गया था और विचारण के लिए भेजा गया था, उनके साथ-साथ अभियुक्त व्यक्तियों में से किसी के विरूद्ध भी विचारण शुरू नहीं हुआ और जिन लोगों के विरूद्ध संज्ञान लिया गया था उनके विरूद्ध विचारण प्रारम्भ—अवर न्यायालय के लिए साक्ष्य एकत्रित करने का कोई अवसर नहीं हो सकता था—अपराध का संज्ञान पुलिस रिपोर्ट के आधार पर लिया गया था—इस प्रकार, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 319 के उपबंधों में निर्दिष्ट जाँच पूरा करने का अवर न्यायालय के पास कोई अवसर नहीं था—दं॰ प्र॰ सं॰ के धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है अगर यह विश्वास करने का युक्तियुक्त आधार हो कि अभियुक्त के अलाबे कोई अन्य व्यक्ति अपराध के लिए दायी है और उसकी दोषसिद्धि की संभावना है—आक्षेपित आदेश प्रक्रियात्मक विधि के विपरीत एवं अवैध है—आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 8 से 14)

निर्णयज विधि.—AIR 1996 SC 1931; 2008(4) JLJR 246(SC); 2009(1) Eastern Cr. Cases 157(SC)—Relied upon.

अधिवक्तागण.—M/s. K.P. Deo, Ashish Kumar, Gaurav, For the Petitioners; Mr. Mukesh Kumar, For the State.

आदेश

याचीगण के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता को सुना गया।

2. याचीगण ने अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰, सिमडेगा द्वारा पारित दिनांक 2.2.2009 के आक्षेपित आदेश का विरोध करते हुए आदेश को चुनौती दी है जिसके द्वारा विद्वान अवर न्यायालय ने याचीगण को उपस्थित होने और विचारण का सामना करने का निर्देश दिया है और एस॰ टी॰ सं॰ 69 (A)/ 2008 के तहत याचीगण के विरुद्ध कार्यवाही के लिए पूरक अभिलेख खोला है।

3. इस मामला को निपटाने के लिए प्रासंगिक तथ्य निम्नलिखित है:—

सूचक अर्थात् कोई रामेश्वर बराइक द्वारा दर्ज प्राथमिकी के आधार पर दिनांक 3.1.2008 को अन्वेषण के लिए मामला दर्ज किया गया था। दोनों याचीगण को प्राथमिकी में नामित किया गया था और न केवल याचीगण के विरुद्ध बल्कि कुछ अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध भी अभिकथन लगाए गए थे। अन्वेषण

समाप्त करने के बाद अन्वेषण अधिकारी ने अभियुक्त बिजय सिंह के विरुद्ध विचारण की अनुशंसा करते हुए किन्तु याचीगण के विरुद्ध विचारण की अनुशंसा नहीं करते हुए आरोप-पत्र दाखिल किया। किन्तु अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध अन्वेषण लंबित पड़ा रहा और बाद में एक पूरक आरोप-पत्र दाखिल किया गया था जिसमें अन्वेषण अधिकारी ने अभियुक्त रंगटू घाँसी, सन्तू उर्फ संतोष लकवा और भूटुंग लकवा के विरुद्ध विचारण की अनुशंसा की थी किन्तु साथ ही विनिर्दिष्ट संप्रेक्षण किया और मत दिया कि अन्वेषण के दौरान वर्तमान याचीगण के विरुद्ध कोई सामग्री संग्रहित नहीं की गयी थी और इसलिए विचारण के लिए उनकी अनुशंसा नहीं की गयी थी।

आरोप पत्र के आधार पर, दंडाधिकारी ने अपराध का संज्ञान लिया और वैसे अभियुक्तगण के विरुद्ध समन जारी किया जिनके विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था और विचारण के लिए जिनकी अनुशंसा की गयी थी। यद्यपि वर्तमान याचीगण के विरुद्ध ऐसा कोई संज्ञान नहीं लिया गया था।

बाद में, धारा 207 दं० प्र० सं० के अधीन प्रावधानों का अनुपालन करने के बाद, विद्वान दंडाधिकारी ने उक्त आरोप-पत्रित अभियुक्तगण का मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द कर दिया।

इस चरण पर जब मामला सुपुर्द किए जाने के बाद सत्र न्यायाधीश के समक्ष लंबित पड़ा हुआ था, अभियुक्तगण ने जमानत के लिए अपना आवेदन दाखिल किया था और जमानत याचिका निपटाते हुए सत्र न्यायाधीश ने संप्रेक्षित किया था कि वर्तमान याचीगण जिन्हें प्राथमिकी में नामित किया गया था किन्तु आरोप पत्रित नहीं किया गया था, को भी उपस्थित होने और विचारण का सामना करने का निर्देश देना चाहिए और ऐसे संप्रेक्षण के आधार पर कार्यालय को समन जारी करने का निर्देश जारी किया और एस० टी० सं० 69(A)/2008 के तहत वर्तमान याचीगण के विचारण के संचालन के उद्देश्य से पृथक पूरक अभिलेख खोला गया था।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश की आलोचना इस आधार पर की है कि यह पूरा का पूरा अवैध और प्रक्रियात्मक विधि के प्रावधानों के प्रतिकूल है एवं मामले के तथ्यों का उचित परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन किए बगैर पारित किया गया है।

विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते है कि धारा 319 दं० प्र० सं० के अधीन शक्तियों का प्रयोग केवल तब ही किया जा सकता है जब कुछ अभियुक्तगण के विरुद्ध विचारण में, साक्ष्य दिए जाते हैं जो अधिमूल्यन किए जाने पर अभिकथित अपराधों में किसी अन्य अभियुक्त की सह-अपराधिता सुझाएँगे। ऐसे चरण के पहले धारा 319 दं० प्र० सं० के प्रावधानों का अवलम्ब नहीं लिया जा सकता है।

5. वर्तमान मामला के तथ्यों के संदर्भ में विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि जैसा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों से स्पष्ट होगा कि सह-अभियुक्तगण अर्थात् जिनको पुलिस द्वारा आरोपपत्रित किया गया था, के विरुद्ध भी विचारण शुरु नहीं हुआ था क्योंकि उनके विरुद्ध आरोप विरचित नहीं किए गए थे और फिर भी विद्वान अवर न्यायालय केवल प्राथमिकी के आधार पर वर्तमान याचीगण को समन करने के लिए धारा 319 दं० प्र० सं० की शक्तियों का अवलंब लेने हेतु अग्रसर हुए।

6. राज्य के विद्वान अधिवक्ता निष्पक्षत: स्वीकार करते हैं कि याचीगण द्वारा कथित तथ्य सत्य प्रतीत होता है और अविवादित तथ्यों के आलोक में आक्षेपित आदेश, जिसके द्वारा विद्वान सत्र न्यायाधीश ने अभियुक्तगण का विचारण शुरू किए बिना और अभिलेख पर साक्ष्य प्राप्त किए बिना धारा 319 दं० प्र० सं० के अधीन शक्तियों का अवलंब लिया था, समर्थन योग्य नहीं है।

7. दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 319 अपराध का दोषी प्रतीत होते अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध अग्रसर होने के लिए न्यायालय की शक्तियाँ अधिकथित करती है। प्रावधानों का पठन निम्नलिखित है:–

319. अपराध के दोषी प्रतीत होने वाले अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने की शक्ति.–(1) जहां किसी अपराध की जांच या विचारण के दौरान साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि किसी व्यक्ति ने, जो अभियुक्त नहीं है, कोई ऐसा अपराध किया है जिसके लिए ऐसे व्यक्ति का अभियुक्त के साथ विचारण किया जा सकता है, वहां न्यायालय उस व्यक्ति के विरुद्ध उस अपराध के लिए जिसका उसके द्वारा किया जाना प्रतीत होता है, कार्यवाही कर सकता है।

(2) जहां ऐसा व्यक्ति न्यायालय में हाजिर नहीं है वहां पूर्वोक्त प्रयोजन के लिए उसे मामले की परिस्थितियों की अपेक्षानुसार, गिरफ्तार या समन किया जा सकता है।

(3) कोई व्यक्ति जो गिरफ्तार या समन न किए जाने पर भी न्यायालय में हाजिर है, ऐसे न्यायालय द्वारा उस अपराध के लिए, जिसका उसके द्वारा किया जाना प्रतीत होता है, जांच या विचारण के प्रयोजन के लिए निरुद्ध किया जा सकता है।

(4) जहां न्यायालय किसी व्यक्ति के विरुद्ध उपधारा (1) के अधीन कार्यवाही करता है, वहां□

(a) उस व्यक्ति के बारे में कार्यवाही फिर से प्रारम्भ की जाएगी और साक्षियों को फिर से सुना जाएगा;

(b) खण्ड (a) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, मामले में ऐसे कार्यवाही की जा सकती है, मानो वह व्यक्ति उस समय अभियुक्त व्यक्ति था जब न्यायालय ने उस अपराध का संज्ञान लिया था जिस पर जांच या विचारण प्रारम्भ किया गया था।

8. उक्त प्रावधान के कोरे पठन पर यह स्पष्ट होगा कि केवल किसी जाँच अथवा विचारण के दौरान दर्ज किए गए साक्ष्य पर ही शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है।

शब्द ''जाँच'', जैसा यह प्रावधान में प्रतीत होता है, पुलिस रिपोर्ट के सिवाए किसी परिवाद पर संस्थापित मामला में संचालित जाँच को निर्दिष्ट करता है।

यह पूरी तरह स्पष्ट है कि धारा 319 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन शक्ति का प्रयोग संबंधित न्यायालय द्वारा अभियुक्तगण के विचारण के क्रम में प्राप्त साक्ष्य के आधार पर ही किया जा सकता है और जो प्रथम दृष्टया पहले से ही विचारण का सामना कर रहे अभियुक्त के अलावा अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध अग्रसर होने की आवश्यकता सुझाएगा जो अपराध का दोषी प्रतीत हो रहे हों।

9. स्वीकृत रूप से वर्तमान मामले में, विचारण उन अभियुक्तगण जिन्हें आरोप पत्रित किया गया था और विचारण के लिए भेजा गया था और जिनके विरुद्ध संज्ञान लिया गया था सहित किसी भी अभियुक्तगण के विरुद्ध शुरू नहीं किया गया था और इसलिए साक्ष्यों के संग्रह के लिए अवर न्यायालय के पास अवसर नहीं हो सकता था। इसके अलावा, स्वीकृत रूप से अपराध का संज्ञान पुलिस रिपोर्ट के आधार पर लिया गया था और इसलिए धारा 319 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन प्रावधान में निर्दिष्ट किसी जाँच को संचालित करने के लिए अवर न्यायालय के पास अवसर नहीं था।

10. नि:संदेह धारा 319 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन विधि शक्तियाँ निहित करती है जिनका प्रयोग न्यायालय द्वारा किया जा सकता है और धारा के प्रावधानों के अधीन कार्रवाई करना इसके स्वविवेक के अंतर्गत है, किन्तु ऐसा करते हुए, प्रत्येक मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में लेते हुए आरोप सिद्ध करने में अभियोजन सक्षम होगा, और एक युक्तिसंगत समाधान पाने पर न्यायोचित रूप से स्वविवेक का प्रयोग करने हेतु न्यायालय बाध्य है।

11. वह चरण जिस पर न्यायालय को ऐसे स्वविवेक का प्रयोग करने हेतु कहा जाएगा, के बारे में यह सुनिश्चित है कि कुछ अभियुक्तगण के विरुद्ध संचालित विचारण के अनुक्रम में जिस अनुक्रम में और संग्रहित साक्ष्य के आधार पर यदि युक्तियुक्त विश्वास है कि अभियुक्त के अलावा अन्य व्यक्तिगण भी अपराध के जिम्मेदार है और उनकी दोषसिद्धि की संभावना है और इसलिए उन्हें अन्य अभियुक्तगण के साथ संयुक्त रूप से विचारण का सामना करने के लिए बुलाया जाना चाहिए, ऐसा चरण साक्ष्य संग्रहित किए जाने का चरण होगा।

12. इस संबंध में **भोलू राम बनाम पंजाब राज्य एवं एक अन्य, 2009 (1) Eastern Cr. Cases 157 (SC)** के मामले और **कैलाश बनाम राजस्थान राज्य एवं एक अन्य,** 2008 (4) JLJR 246 (SC) के मामले में निर्णय को निर्दिष्ट किया जा सकता है। **राजकिशोर प्रसाद बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, AIR 1996 SC 1931** मामले में धारा 319 दं॰ प्र॰ सं॰ के प्रावधानों के विस्तार और परिधि का परीक्षण करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि ''धारा 319 दं॰ प्र॰ सं॰ के प्रावधानों को लागू करने के लिए यह आवश्यक है कि अभियुक्त के अलावा अपराध का दोषी प्रतीत होते व्यक्ति के विरुद्ध अग्रसर होने की आवश्यकता केवल किसी जाँच अथवा विचारण के क्रम में दर्ज साक्ष्य पर ही उद्‌भूत होती है। धारा 209 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन दंडाधिकारी के समक्ष कार्यवाही स्पष्ट रूप से विचारण कार्यवाही नहीं है और समय के किसी बिन्दु पर उसे ऐसा माना नहीं गया था। वर्तमान रूप में दंड प्रक्रिया संहिता के संशोधन के पहले सुपुर्दगी कार्यवाही जाँच के मुख्य लक्षण रखती थी और इस प्रकार बताई गई की गयी थी।''

13. पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए एवं सुनिश्चित विधि के प्रकाश में धारा 319 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन स्वविवेक के तात्पर्यित प्रयोग में विचारण का सामना करने हेतु उनको बुलाते हुए याचीगण के विरुद्ध समन जारी करता विद्वान सत्र न्यायाधीश का आक्षेपित आदेश प्रक्रियात्मक विधि के विपरीत होने के नाते गैरकानूनी है।

14. कहे गए कारणों से मैं इस आवेदन में गुणागुण पाता हूँ। तद्‌नुसार, यह याचिका अनुज्ञात की जाती है। अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰, सिमडेगा द्वारा पारित दिनांक 2.2.2009 का अवर न्यायालय का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है और एस॰ टी॰ सं॰ 69(A)/2008 के तहत पूर्वोल्लिखित आक्षेपित आदेश के आधार पर याचीगण के विरुद्ध शुरू की गयी कार्यवाही भी अभिखंडित की जाती है।

किन्तु, यह आदेश अन्य अभियुक्तगण के विचारण के क्रम में संग्रहित साक्ष्यों के आधार पर कि क्या साक्ष्य उन अपराधों, जिनके लिए संज्ञान लिया गया था, के लिए उनके विरुद्ध विचारण हेतु अग्रसर होने के लिए वर्तमान याचीगण के विरुद्ध मामला बनाते हैं, इसपर विचार करने से विचारण न्यायालय को नहीं रोकेगा।

माननीय आर॰ आर॰ प्रसाद, न्यायमूर्ति

गुलवन्ती देवी

बनाम

भारत कोकिंग कोल लिमिटेड एवं अन्य

W.P.(S) No. 676 of 2010. Decided on 10th August, 2010.

श्रम एवं औद्योगिक विधि—अनुकंपा पर नियुक्ति—NCWA का खंड 9.5.0—अनुकंपा पर नियुक्त किए जाने के याची के दावे का विरोध एक अन्य महिला द्वारा किया जा रहा है जो भी

मृतक कर्मचारी की पत्नी होने का दावा कर रही है—अभिधान वाद को समझौते के निबंधनों में डिक्री किया गया—पति के आश्रितों में से एक पत्नी होती है जिसका अर्थ सदैव ही विधितः विवाहित पत्नी होगा—विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए दूसरी महिला को विधिसम्मत रूप से विवाहित पत्नी घोषित किया कि मृतक कर्मचारी के जीवन में याची की कोई प्रास्थिति नहीं थी—पत्नी का दर्जा नहीं रखने के कारण याची नेशनल कोल वेज एग्रीमेंट के खंड 9.5.0 के निबंधनों में अनुकंपा के आधार पर नियुक्त किए जाने का हकदार नहीं है इस तथ्य के बावजूद कि याची को नियोजन पाने का हकदार अभिनिर्धारित करते हुए समझौते के निबन्धनों में अपील को डिक्री किया गया था—ऐसा समझौता BCCL पर बाध्यकारी नहीं होगा—लेकिन, समझौते के निबंधनों में याची संचित निधि एवं उपदान पाने का हकदार है—आवेदन खारिज।

(पैराएँ 7 से 10)

निर्णयज विधि.—2008(2) AIR Jhar. R 377—Explained.

अधिवक्तागण.—Mr. Amit Kumar Sinha, For the Petitioner; Mr. Anoop Kumar Mehta, For the Respondents.

आदेश

याची का मामला यह है कि याची का पति और मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड का स्थायी कर्मचारी सरजू ठाकुर कार्यरत रहते अपने पीछे याची और चार अवयस्क संतानों को छोड़कर दिनांक 15.4.1996 को मृत्यु प्राप्त किया। इस याची और उसके दो पुत्रों का नाम वर्ष 1987 में तैयार किए गए उसके पति की सेवा पुस्तिका में वस्तुतः उल्लिखित है। अपने पति की मृत्यु के बाद याची ने राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के खंड 9.5.0 के निबंधनों के अनुसार अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति हेतु आवेदन दिया। सारी औपचारिकताओं को पूरा करने के बाद, मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड के कार्मिक प्रबंधक ने अनुकम्पा के आधार पर याची की नियुक्ति से संबंधित दिनांक 26.3.1998 को पत्र जारी किया। किन्तु इसके पहले कि याची नियुक्त किया जाता, किसी भुवनेश्वरी देवी ने स्वयं को सरजू ठाकुर की विधिवत विवाहित पत्नी होने का दावा करते हुए याची की नियुक्ति पर आपत्ति की। तत्पश्चात् यह घोषणा करवाने के लिए कि वे स्व॰ सरजू ठाकुर के वैध उत्तराधिकारी हैं, उक्त भुवनेश्वरी देवी ने विद्वान मुंसिफ-I, धनबाद के समक्ष हकवाद सं॰ 53 वर्ष 1998 दाखिल किया। उस वाद में याची को प्रतिवादीगण में से एक बनाया गया। कार्यवाही के क्रम में जब उक्त भुवनेश्वरी देवी (वादी सं॰ 1) की मृत्यु हो गयी, उसका नाम मामले के वाद हेतुक से निकाल दिया गया। किन्तु वाद वादीगण के पक्ष में डिक्री किया गया था।

2. उस डिक्री से व्यथित होकर, इस याची ने हक अपील सं॰ 103 वर्ष 2004 दाखिल किया जिसमें हकवाद के वादीगण और प्रोजेक्ट अधिकारी को प्रत्यर्थीगण बनाया गया था। जब न्याय निर्णयन के लिए अपील लंबित था, अपीलार्थी और प्रत्यर्थीगण (मृतका भुवनेश्वरी देवी के उत्तराधिकारी और विधिक प्रतिनिधि) ने मित्रों की मदद से मामला सुलझा लिया और सुलह के शर्तों को लिखित रूप दिया गया था। तद्नुसार सुलह के निम्नलिखित निबंधनों के अनुसार हक अपील डिक्री किया गया:—

> *''(a) वादी/प्रत्यर्थीगण अर्थात् गीता देवी और मेमिनि कुमारी पी० एफ०, ग्रैच्यूटी सहित स्व० सरजू ठाकुर के सेवा लाभों का आधा पाने के हकदार होंगे जबकि सेवा लाभों का शेष आधा प्रत्यर्थीगण/अपीलार्थी गुलवन्ती देवी को मिलेगा।*

(b) यदि आवश्यकता उद्‌भूत होती है, दोनों पक्ष सेवा लाभों की विभाजन के पूर्वोक्त शर्तों को प्रभाव में लाने हेतु दस्तावेज निष्पादित करेंगे।

(c) अनुकंपा पर नियुक्ति किए जाने के सम्बन्ध में, अगर नियोक्ता BCCL द्वारा गुलवंती देवी को नियोजन उपलब्ध कराया गया हो, वादी/प्रत्यर्थीगण को इसपर कोई आपत्ति नहीं होगी।''

3. डिक्री पारित किए जाने के उपरान्त, अपने कर्तव्यों पर उपस्थित होने के लिए उसको अनुमति देने की प्रार्थना उसमें करते हुए याची ने अभ्यावेदन दाखिल किया किन्तु प्रोजेक्ट अधिकारी, धनसर इंडस्ट्री कोलियरी, प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने इस आधार पर अभ्यावेदन को अस्वीकार कर दिया कि सुलह याचिका में सम्मिलित निबंधन और शर्त भारत कोकिंग कोल लिमिटेड पर बाध्यकारी नहीं है।

4. परिशिष्ट-3 में अंतर्विष्ट दिनांक 11.6.2008 के आदेश से व्यथित होकर, इसके अभिखंडन के लिए और याची को उसका कर्तव्य ग्रहण करने की अनुमति देने का निर्देश प्रत्यर्थी को देने के लिए भी यह रिट आवेदन दाखिल किया गया है।

5. याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यद्यपि याची मृतक कर्मचारी की पहली पत्नी नहीं है किन्तु इस याची और उसकी संतानों का नाम मृतक कर्मचारी की सेवा पुस्तिका में था और पक्षों के बीच हुए सुलह के निबंधनानुसार, भारत कोकिंग कोल लिमिटेड को याची को रोजगार देना होगा क्योंकि वह वाद एवं अपील का पक्ष था और जिसकी उपस्थिति में सुलह के निबंधनानुसार टाईटल अपील डिक्री किया गया था और इसलिए भारत कोकिंग कोल लिमिटेड को सुलह के निबंधनों को अभिस्वीकृत करता कहा जा सकता है क्योंकि न्यायालय के समक्ष दाखिल सुलह याचिका पर भारत कोकिंग कोल लिमिटेड के अधिवक्ता द्वारा हस्ताक्षर किया गया था और इस स्थिति के अधीन भारत कोकिंग कोल लिमिटेड इस अभिवाक् पर याची को नियुक्त करने से इंकार नहीं कर सकता है कि याची मृतक कर्मचारी की दूसरी पत्नी है जब अपील सुलह के निबंधनानुसार डिक्री किया गया है जिसके द्वारा पक्षों के बीच सहमति बनी थी कि याची को भारत कोकिंग कोल लिमिटेड द्वारा रोजगार दिया जाना है।

6. विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि इस याची को मृत कर्मचारी द्वारा पत्नी का दर्जा दिया गया था अत: वह भविष्य निधि एवं उपदान के प्रति भुगतान योग्य राशि की हकदार है। समरुप स्थिति में, जब पहली पत्नी और दूसरी पत्नी जिसे मृतक द्वारा नामनिर्देशिति बनाया गया था, के बीच उत्तराधिकार प्रमाण-पत्र प्रदान करने के मामला में विवाद उद्‌भूत हुआ, तो माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **विद्याधारी एवं अन्य बनाम सुखराना बाई एवं अन्य [2008 (2) AIR Jhar. R 377]** मामले में अभिनिर्धारित किया है कि उत्तराधिकार प्रमाण पत्र प्राप्त करने हेतु दूसरी पत्नी हकदार है। मामले के उस दृष्टिकोण से, राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के खंड 9.5.0 के निबंधनानुसार याची नियुक्त किए जाने की हकदार है।

7. दूसरी ओर, मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि टाईटल वाद में और इस याची द्वारा दाखिल टाईटल अपील में भी स्वीकार किया गया था कि भुवनेश्वरी देवी स्व॰ सरजू ठाकुर की विधिवत विवाहित पहली पत्नी है। मामले के उस दृष्टिकोण में, विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि याची को मृत कर्मचारी की पत्नी का दर्जा प्राप्त नहीं था और उस निष्कर्ष को अपीलीय न्यायालय द्वारा कभी नहीं छेड़ा अथवा पलटा गया था यद्यपि अपीलीय न्यायालय ने भुवनेश्वरी देवी के उत्तराधिकारियों (वादीगण) और इस याची के बीच हुए सुलह के निबंधनानुसार अपील डिक्री किया था और इस प्रकार, याची विधिवत् विवाहित पत्नी नहीं होने के नाते राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के खंड 9.5.0 के निबंधनानुसार नियुक्ति पाने की हकदार नहीं है।

8. पक्षों की ओर से किए गए निवेदनों पर आने से पहले राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के खंडों 9.3.1 और 9.4.0 (iii) जो आश्रित के नियोजन से संबंधित है, को ध्यान में लेना आवश्यक है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

''खंड 9.3.1—मजदूरों, जो स्थायी रूप से नि:शक्त हो गए है और वे भी जिन की मृत्यु सेवा में रहते हो गयी है, के एक आश्रित को रोजगार प्रदान किया जाएगा।

खंड 9.4. (iii) इस उद्देश्य हेतु आश्रित का अर्थ है पति/पत्नी जैसा भी मामला हो, अविवाहित पुत्री, पुत्र और विधिपूर्वक गोद लिया गया पुत्र/यदि नियोजन के लिए कोई प्रत्यक्ष आश्रित उपलब्ध नहीं है, कर्मचारी के साथ रहने वाले और कर्मचारी की कमाई पर लगभग आश्रित भाई, विधवा पुत्री/विधवा बहु अथवा दामाद पर विचार किया जा सकता है।

जहाँ तक महिला आश्रित का संबंध है, उनका नियोजन खंड 9.5.0 के प्रावधानों द्वारा शासित होगा।''

9. इसके परिशीलन से, यह बिल्कुल विनिर्दिष्ट है कि पति के आश्रितों में से एक पत्नी है जिसका अर्थ सदैव विधिवत् विवाहिता पत्नी होगा। यहाँ, वर्तमान मामले में, विचारण न्यायालय ने भुवनेश्वरी देवी को विधिवत विवाहित पत्नी के रूप में घोषित किया है और जहाँ तक इस याची का संबंध है, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि स्व॰ सरजू ठाकुर के जीवन में उसका कोई दर्जा नहीं है। मामला के उस दृष्टिकोण में, इस तथ्य के बावजूद कि भुवनेश्वरी देवी के उत्तराधिकारियों और इस याची के बीच हुए सुलह के निबंधनानुसार अपील डिक्री की गयी थी जिसके निबंधनों में से एक यह था कि रोजगार याची को दिया जाएगा, याची राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के खंड 9.5.0 के निबंधनानुसार अनुकम्पा के आधार पर नियुक्त किए जाने की हकदार नहीं थी क्योंकि राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के अधीन अनुबंधित खंड 9.5.0 की दृष्टि में प्रत्यर्थी-भारत कोकिंग कोल लिमिटेड पर यह बाध्यकारी नहीं था। ऊपर निर्दिष्ट मामला में **(विद्याधारी एवं अन्य बनाम सुखराना बाई एवं अन्य)** दूसरी पत्नी को उच्च न्यायालय अथवा सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कभी भी विधिवत विवाहित पत्नी के रूप में मान्यता प्रदान नहीं किया गया था। किन्तु माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह दृष्टि में रखते हुए कि दूसरी पत्नी को नोमिनी बनाया गया था और उसकी चार संतान थी, अभिनिर्धारित किया कि वह उत्तराधिकार प्रमाण पत्र प्राप्त करने की हकदार है।

10. इस प्रकार, अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति पाने की हकदार याची नहीं है किन्तु याची और भुवनेश्वरी देवी के उत्तराधिकारियों के बीच हुए सुलह के निबंधनानुसार भविष्य निधि और उपदान की राशि प्राप्त करने की हकदार वह होगी।

11. पूर्वोक्त संप्रेक्षण के साथ, यह रिट आवेदन खारिज किया जाता है।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

सुशीला अग्रवाल एवं एक अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 689 of 2007. Decided on 6th August, 2010.

भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धारा 498-A सहपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 का धारा 3/4—दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 177, 178 एवं 482—क्रूरता—संज्ञान—न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकारिता की कमी के आधार पर संज्ञान के आदेश को चुनौती—अपराध का संज्ञान झारखंड में गिरिडिह में लिया गया जबकि अभिकथित आपराधिक संव्यवहार नई दिल्ली में हुए—ऐसा कोई अभिकथन नहीं कि गिरिडिह में अपने पिता के घर में रहने के दौरान, या तो उसके पति या उसके ससुराल का कोई सदस्य कभी उसके पिता के घर आया था या ऐसे किसी कृत्य में लिप्त रहा था जो क्रूरता गठित करेगा—यह प्रतिवाद नहीं किया जा सकता है कि टेलीफोन पर दी गई धमकी क्रूरता के तुल्य होगी—टेलीफोन पर किया गया एक पृथक दृष्टांत अपने आप में अपराध की निरन्तरता गठित नहीं करेगा—आक्षेपित आदेश मजिस्ट्रेट द्वारा न्यायिक विवेक का प्रयोग किए बिना पारित किया गया—संज्ञान का आक्षेपित आदेश और सम्पूर्ण दाण्डिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 8 से 11)

निर्णयज विधि.—2004(8) SCC 100; AIR 2005 SC 1989; 2006(8) Supreme 372—Relied upon; 2007(2) JLJR 282; 404; 2010(1) JLJ 157—Referred.

अधिवक्तागण.—Mr. R.K. Singh, For the Petitioners; Mr. Jagannath Mahato, For the State; Mr. Prabhat Kumar Sinha, For the O.P. No.2.

आदेश

याचीगण के अधिवक्ता, विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता को सुना गया।

2. याचीगण ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के इस आवेदन में परिवाद केस सं॰ 99 वर्ष 2007 (टी॰ आर॰ केस सं॰ 1052 वर्ष 2007) में एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, गिरिडीह द्वारा पारित दिनांक 22.3.2007 के संज्ञान के आक्षेपित आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना की है जिसके द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन अपराधों के लिए याचीगण के विरुद्ध संज्ञान लिया गया था और इस मामले में विचारण का सामना करने का उनको निर्देश देते हुए समन जारी किया गया था।

3. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना और समुचित परिप्रेक्ष्य में मामले के स्वीकृत तथ्यों का अधिमूल्यन किए बिना आक्षेपित आदेश पारित किया गया है।

परिवाद याचिका में अभिकथनों और न्यायालय के समक्ष परिवादी/विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा दिए गए पूरक बयानों, और पूरक बयान के आधार पर अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश को निर्दिष्ट करते हुए विद्वान अधिवक्ता स्पष्ट करते हैं कि समस्त वाद हेतुक और घटनास्थल, जैसा स्वयं परिवादी द्वारा स्वीकार किया गया है, रोहिणी, नयी दिल्ली था और अभिकथित आपराधिक संव्यवहारों का कोई अंश गिरिडीह में अथवा अवर न्यायालय की अधिकारिता के अंतर्गत किसी अन्य स्थान पर नहीं हुआ था। इन परिस्थितियों के अधीन, विद्वान अवर न्यायालय मामले में याचीगण अथवा अभियुक्तगण के गिरिडीह में विचारण के लिए अधिकारिता का प्रयोग संभवत: नहीं कर सकता था क्योंकि ऐसी शक्तियाँ दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराएँ 177 एवं 178 के प्रावधानों के अधीन निर्बंधित है।

अपने तर्को को पुख्ता करने के लिए विद्वान अधिवक्ता **अजय कुमार जैन बनाम झारखण्ड राज्य,** 2007 (2) JLJR 282 मामले में और **देवव्रत साह एवं अन्य बनाम झारखण्ड राज्य एवं एक अन्य,** 2007 (2) JLJR 404 मामले में इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों और **संतोख सिंह बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2010 (1) JLJ 157** मामला में इस न्यायालय की एकलपीठ के निर्णय को निर्दिष्ट करते हैं।

4. दूसरी ओर, विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता तर्क किए कि याची द्वारा उठाए गए आधार इस तथ्य की दृष्टि में भ्रामक और मार्गभ्रष्ट करनेवाले हैं कि संव्यवहार का अंश गिरिडीह में भी किया गया था। परिवाद याचिका के पैराग्राफ-5 में अंतर्विष्ट अभिकथनों को निर्दिष्ट करते हुए विद्वान अधिवक्ता स्पष्ट करते हैं कि जैसा परिवाद याचिका के पूर्वोक्त पैरा में अभिकथित किया गया है कि परिवादी/विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा पुत्री के जन्म के बारे में टेलीफोन द्वारा सूचित किए जाने पर उसके पति और सास अर्थात वर्तमान याचीगण ने संतान को देखने के लिए उसके पिता के घर आकर परिवादी से मिलने से न केवल इंकार कर दिया बल्कि धमकी भी दी कि उसे उसके दाम्पत्य गृह वापस नहीं ले जाया जाएगा। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार यह महिला को मानसिक क्रूरता कारित करना है जिससे वह पीड़ित हुई है जब वह गिरिडीह में अपने पिता के घर में रह रही थी।

5. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को सुना है और परिवाद याचिका तथा अवर न्यायालय के समक्ष परिवादी/विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा दाखिल पूरक बयान सहित अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का परिशीलन किया है।

6. परिवाद याचिका के परिशीलन से स्पष्ट है कि दिनांक 2.5.2004 को याची सं॰ 2 का विवाह विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के साथ वाराणसी में हुआ था। तत्पश्चात् उसे उसके पिता के घर गिरिडीह में 5.6.2004 को लाया गया था और बाद में उसे पति और ससुराल वालों द्वारा उनके दिल्ली स्थित घर ले जाया गया था। अपने दाम्पत्य गृह में रहने के क्रम में दहेज की मामूली राशि, जो महिला ने अपने माता-पिता से पाया था, पर पति और सास की असंतुष्टि के कारण अभिकथित रूप से मतभेद सामने आए। महिला को शारीरिक और मानसिक यातना दी जाने लगी। किन्तु इस अवधि के दौरान, वह गर्भवती हो गयी और जब वह इस अवस्था में थी उसे उसके माता-पिता द्वारा गिरिडीह लाया गया था जहाँ दिनांक 15.8.2005 को उसने स्थानीय अस्पताल में पुत्री को जन्म दिया। यह अभिकथन किया गया है कि जब उसके पति और सास को पुत्री के जन्म के बारे में सूचित किया गया था, अभियुक्त पति और सास ने संतान को देखने से इंकार कर दिया और विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 को अपने घर वापस ले जाने से इंकार कर दिया था और टेलीफोन पर महिला को गाली दिया था।

परिवाद याचिका में कतिपय अन्य संव्यवहारों को अभिकथित किया गया है जिनमें से सभी महिला के दिल्ली स्थित दाम्पत्य गृह से संबंधित है।

आगे प्रतीत होता है कि यद्यपि परिवाद याचिका में घटना स्थल विनिर्दिष्टत: उल्लिखित नहीं किया गया था, परिवादी/विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 ने पृथक याचिका दाखिल करके स्पष्ट किया था कि परिवाद याचिका में घटनास्थल का उल्लेख नहीं किया जाना अनजाने में हुई गलती थी और स्पष्ट किया है कि समस्तवाद हेतुक जिसके लिए उसके द्वारा मामला से स्थापित किया गया था, दिल्ली में हुआ था और तद्नुसार अपनी परिवाद याचिका संशोधित करने के लिए उसने अवर न्यायालय की अनुमति ईप्सित की थी। दिनांक 8.2.2007 के अपने आदेश द्वारा अवर न्यायालय ने ऐसा संशोधन अनुज्ञात किया था।

7. विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के अधिवक्ता का निवेदन है कि याचीगण द्वारा विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 को टेलीफोन पर दी गयी धमकी, जब उन्हें पुत्री के जन्म के बारे में सूचित किया गया था, क्रूरता का कृत्य गठित करेगी जिसे महिला ने गिरिडीह में अपने पिता के घर झेला था और इसलिए विद्वान अवर न्यायालय को मामले के अभियुक्तगण का विचारण करने की अधिकारिता है, प्रकटत: भ्रामक है और मान्य नहीं है।

8. अजय कुमार जैन (ऊपर) के मामले में समरुप विवाद्यक इस न्यायालय के समक्ष विचारणार्थ आया था जिसमें, मामले के तथ्यों और यह घोषणा करते कि अभिकथित संव्यवहार का कोई अंश न्यायालय, जिसने अपराध का संज्ञान लिया था, की अधिकारिता के अधीन नहीं हुआ था, अभिकथनों पर विचार करते हुए, इस न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धाराएँ 177 एवं 178 के प्रावधानों पर विचार करने के बाद और **मनीष रतन एवं अन्य बनाम म॰ प्र॰ राज्य एवं एक अन्य 2006 (8) Supreme 372** मामला में और **रमेश एवं अन्य बनाम तमिलनाडु राज्य AIR 2005 Supreme Court 1989** मामला में और **वाई॰ अब्राहम अजिथ बनाम पुलिस निरीक्षक, चेन्नई एवं एक अन्य, 2004 (8) SCC 100** मामले में भी सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में विनिश्चित निर्णयाधार पर विश्वास करते हुए अभिनिर्धारित किया था जब अभियुक्तगण द्वारा किए गए अभिकथित कृत्यों का कोई अंश उस न्यायालय, जिसने अपराध का संज्ञान लिया था, की क्षेत्रीय अधिकारिता के अधीन नहीं हुआ था, ऐसे न्यायालय को संज्ञान लेने और अभिकथित अपराधियों के विचारण करने की अधिकारिता नहीं थी।

9. वर्तमान मामला के तथ्यों से, स्वीकृत रूप से विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 ने अपने भाइयों और माता-पिता द्वारा लाए जाने पर अपना दाम्पत्य गृह छोड़ दिया और अपने मायका वापस आने के बाद से वह अपने पिता के साथ रह रही है। ऐसा कोई अभिकथन नहीं है कि गिरिडीह में अपने पिता के घर में रहने के दौरान उसके पति अथवा उसके दाम्पत्य गृह का कोई सदस्य कभी भी उसके पिता के घर आया था अथवा कोई ऐसा कृत्य किया था जो क्रूरता गठित करेगा जैसा भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के प्रावधानों के अधीन स्पष्ट किया गया है। विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के अधिवक्ता का प्रतिवाद की टेलीफोन पर दी गयी धमकी क्रूरता है, स्वीकार योग्य नहीं है। यदि ऐसी धमकियों को विचार में लिया भी जाए, यह केवल यह सुझाएगा कि अभियुक्तगण ने महिला को अपने घर में स्वीकार नहीं करने का आशय घोषित किया था। अन्यथा भी, अभिकथन सुझाते हैं कि याचीगण ने परिवादी को कभी टेलीफोन नहीं किया अथवा टेलीफोन पर बातचीत के माध्यम से उसको और उसके माता-पिता को किसी विनिर्दिष्ट मांग के लिए धमकी दी थी। जैसा **देवव्रत साह (ऊपर)** मामले में अभिनिर्धारित किया गया है कि दूरभाष-वार्तालाप का एकल उदाहरण स्वयं में अपराध गठित नहीं करेगा जैसा भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के प्रावधानों के स्पष्टीकरण सं॰ 1 अथवा 2 में स्पष्ट किया गया है और न ही विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 की प्रार्थना को मानने से याचीगण का इंकार स्वयं में एक चालू रहने वाला अपराध अथवा आचरण गठित करेगा जिसका परिणाम भुगतने का दावा परिवादी द्वारा गिरिडीह में अपने पिता के घर रहते हुए किया जा सकता है।

10. यह प्रतीत होता है कि उसी दंडाधिकारी ने संज्ञान के आक्षेपित आदेश पारित करने के पहले, परिवादी को अपनी परिवाद याचिका संशोधित करने की अनुमति देते हुए संप्रेक्षित किया था कि परिवादी की स्वीकृति के अनुसार भी घटना स्थल, जिसके लिए उसके द्वारा शिकायत की गयी थी, दिल्ली था, फिर भी विद्वान दंडाधिकारी इस पहलू को नजर अंदाज करते हुए और न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना और प्रकटत: यांत्रिक रूप से संज्ञान का आक्षेपित आदेश पारित करते प्रतीत होते हैं।

11. इन तथ्यों और परिस्थितियों और ऊपर की गयी चर्चा के प्रकाश में मैं इस आवेदन में गुणागुण पाता हूँ। तद्नुसार आवेदन अनुज्ञात किया जाता है। परिवाद केस सं॰ 99 वर्ष 2007 (टी॰ आर॰ केस सं॰ 1052 वर्ष 2007) के तहत एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, गिरिडीह के न्यायालय के समक्ष संज्ञान के आक्षेपित आदेश के अनुसरण में याचीगण के विरुद्ध समस्त दांडिक कार्यवाही और याचीगण के विरुद्ध अवर न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 22.3.2007 के संज्ञान के आक्षेपित आदेश को एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

माननीय अमरेश्वर सहाय, न्यायमूर्ति

मेसर्स टाटा स्टील लिमिटेड के सिजुआ कोलियरी के प्रबन्धन के सम्बन्ध में नियोक्तागण

बनाम

उनके कर्मकार दिलीप कुमार सिंह

W. P. (L) No. 1086 of 2010. Decided on 14th May, 2010.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–बर्खास्तगी–औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 का धारा 11—अधिकरण ने 25% बकाया मजदूरियों के साथ सेवा में बने रहने एवं पुनर्बहाल करने का निर्देश दिया–ड्यूटी से अनधिकृत रूप से अनुपस्थिति–बीमारी के कारण ड्यूटी से अनुपस्थित–यथोचित मामले में साक्ष्य का पुनर्अधिमूल्यन करके घरेलू जाँच में प्राप्त निष्कर्षों को श्रम न्यायालय बदल सकता है–आक्षेपित अधिनिर्णय किसी अशक्तता से ग्रस्त नहीं–याचिका खारिज। (पैराएँ 7 से 11)

निर्णयज विधि.–AIR 1973 SC 1227; (2007) 1 SCC 491; (2008) 12 SCC 726—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s G.M. Mishra, Manish Mishra, Umesh Mishra, For the Petitioner; xxx, For the Respondent.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. इस रिट याचिका में याची ने संदर्भ केस सं॰ 99 वर्ष 2006 में दिनांक 18.9.2009 के केन्द्रीय सरकार औद्योगिक अधिकरण-I, धनबाद के अधिनिर्णय को चुनौती दी है जिसके द्वारा, निम्नलिखित संदर्भ के उत्तर में ''क्या श्री दिलीप कुमार सिंह, ट्रामर को 26.4.2000 के प्रभाव से कम्पनी की सेवा से बर्खास्त करने में मेसर्स टिस्को की सिजुआ कोलियरी के प्रबन्धन की कार्रवाई निष्पक्ष एवं न्यायोचित है? अगर नहीं तो संबंधित कर्मकार कौन-कौन से अनुतोष का हकदार है?'' विद्वान अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया कि कर्मकार दिलीप कुमार सिंह को 26.4.2000 के प्रभाव से कम्पनी की सेवा से बर्खास्त करने में मेसर्स टिस्को के प्रबन्धन की कार्रवाई न्यायोचित नहीं थी एवं इस प्रकार वह 25% बकाये मजदूरी के साथ सेवा में बने रहने और पुनर्बहाल किये जाने का हकदार है।

3. कर्मकार के विरुद्ध आरोप यह था कि वह नियोक्ता कम्पनी को सूचना दिए बगैर और अनुमति प्राप्त किये बगैर 15.7.1999 से 26.9.1999 तक अनधिकृत रूप से ड्यूटी से अनुपस्थित रहा था जो कम्पनी के सर्टीफाईड स्टैंडिंग ऑर्डर्स के खण्ड 19(16) के अर्थ के अन्तर्गत अवचार के तुल्य था।

4. आक्षेपित अधिनिर्णय से यह प्रतीत होता है कि कर्मकार का बचाव यह था कि वह पीलिया से ग्रस्त था एवं, इसलिए उसने बेहतर ईलाज के लिए 14.7.1999 को अपना गाँव को चल दिया था जहाँ उसका ईलाज चला था एवं उसने अपने नियोक्ता के संबंधित प्राधिकारी को अपनी बीमारी के बारे में सम्यक् रूप से सूचित किया। 60 दिनों के बाद जब वह अपने बीमारी से मुक्त हुआ तो उसने 22.9.1999 को अपनी ड्यूटी पर हाजिर होने की अनुमति लेने के लिए मेडिकल प्रमाण-पत्र के साथ आवेदन दाखिल करके प्रबन्धन से संपर्क किया परन्तु वास्तव में प्रबन्धन ने उसे 27.9.1999 को उसे कार्यभार ग्रहण करने की अनुमति दी परन्तु तत्पश्चात्, उसे 26.4.2000 के प्रभाव से सेवा से बर्खास्त किया गया था।

5. याची-कम्पनी के अनुसार, कर्मकार याची एक आदतन गैरहाजिर रहने वाला व्यक्ति था एवं पूर्व के अवसर पर भी इसी प्रकार के अवचार पर उसे कुछ दण्ड प्रदान किया गया था।

6. आक्षेपित अधिनिर्णय से यह प्रतीत होता है कि विद्वान अधिकरण ने दस्तावेजी साक्ष्य प्रदर्श ME-4 अर्थात् डॉक्टर के प्रमाण पत्र पर भरोसा करते हुए जो इस तथ्य को प्रकट करता था कि कर्मकार हेपेटाइटिस से पीड़ित था, अभिनिर्धारित किया था कि यद्यपि कर्मकार बीमारी से ठीक होने के उपरान्त काम पर योगदान देने आया था परन्तु प्रबन्धन ने उसे कार्यभार ग्रहण करने की अनुमति नहीं दी। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य एवं सामग्रियों के आधार पर अधिकरण द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि कर्मकार द्वारा 22.9.1999 को ड्यूटी पर लौटने की अनुमति उसे देने के लिए आग्रह करते हुए एक आवेदन दाखिल किया गया था, परन्तु प्रबन्धन ने उसे उस दिन कार्यभार ग्रहण करने की अनुमति नहीं दी बल्कि उसे 26.9.1999 तक अनुपस्थित मानते हुए 26.9.1999 तक अर्थात् छह दिनों बाद कार्य में योगदान करने की अनुमति दी गयी थी। यह प्रबन्धन का अड़ंगा लगाने वाला रवैया दर्शाता था।

अधिकरण ने तथ्यों पर आगे अभिनिर्धारित किया है कि संबंधित कर्मकार जिस बीमारी से पीड़ित था वह दर्शाता था कि उसकी अनुपस्थिति साशय नहीं थी एवं इसलिए सेवा से सम्बन्धित कर्मकार की बर्खास्तगी अति-कठोर थी।

7. याची-प्रबंधन की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता, श्री जी॰ एम॰ मिश्रा ने **(2008)5 SCC 554** में प्रकाशित **ऊषा ब्रेको मजदूर संघ बनाम ऊषा ब्रेको लिमिटेड का प्रबंधन एवं एक अन्य** के मामले में एवं **(2007)1 SCC 491** में प्रकाशित **मुईर मिल्स यूनिट ऑफ NTC (U.P.) लिमिटेड बनाम स्वयं प्रकाश श्रीवास्तव एवं एक अन्य** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास व्यक्त करते हुए निवेदन किया कि एक बार जब अधिकरण पाता है कि करायी गयी घरेलू जाँच विधिक एवं वैध थी तब उस मामले में अधिकरण की अधिकारिता काफी सीमित हो जाती है। ऐसे एक मामले में, अधिकरण घरेलू जाँच में प्राप्त तथ्यों के निष्कर्ष से छेड़छाड़ नहीं कर सकता जहाँ सम्बन्धित कर्मकार के विरुद्ध आरोपों को प्रमाणित पाया जाता है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 11A के तहत श्रम अधिकरण सम्पूर्ण साक्ष्य का अधिमूल्यन नये सिरे से नहीं कर सकता है, इस बात का पता लगाने के क्रम में कि क्या सम्बन्धित कर्मकार को दण्डित करने में प्रबन्धन की कार्रवाई न्यायोचित थी अथवा नहीं। अन्त: में, उन्होंने निवेदन किया कि श्रम अधिकरण सम्बन्धित कर्मकार को बकाया मजदूरियों का 25% अधिनिर्णित नहीं कर सकता था।

8. इस सम्बन्ध में सर्वोच्च न्यायालय ने विधि को पहले ही स्थापित कर चुका है, यह अभिनिर्धारित करके कि जहाँ एक उचित एवं वैध जाँच के माध्यम से अवचार के आधार पर किसी नियोक्ता द्वारा कर्मकार की बर्खास्तगी की कार्यवाही की जाती है वहाँ भी धारा 11A श्रम न्यायालय या अधिकरण को साक्ष्य का पुनर्अधिमूल्यन करने एवं इसके निष्कर्षों की सत्यता की जाँच करने को सशक्त करता है। धारा 11A दण्ड में हस्तक्षेप करने या इसे परिवर्तित करने के लिए भी श्रम न्यायालय या अधिकरण को सशक्त करता है। इस सम्बन्ध में **AIR 1973 SC 1227** में प्रकाशित **मेसर्स फायरस्टोन टायर एण्ड रबर कं॰**

ऑफ इण्डिया प्रा॰ लि॰ के कर्मकार बनाम प्रबन्धन एवं अन्य के मामले को, विशेषत: इसके पैराग्राफ सं॰ 32, 33, 37 एवं 45 को संदर्भ बनाया जा सकता है।

हाल में भी सर्वोच्च न्यायालय ने **(2008)12 SCC 726,** में प्रकाशित **मावजी सी॰ लकुम बनाम सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया** के मामले में पैराग्राफ 23 पर निम्नवत् अभिनिर्धारित किया है:–

"23. .....अगर जाँच को निष्पक्ष भी पाया जाता है, अर्थात् यह प्रमाणित करने वाला निष्कर्ष कि अपचारी को सभी सम्भव अवसर दिये गये थे एवं नैसर्गिक न्याय तथा निष्पक्षता के सिद्धान्तों का पालन किया गया था। इसका अर्थ यह नहीं है कि प्राप्त निष्कर्ष अनिवार्यतः सही निष्कर्ष है। अगर औद्योगिक अधिकरण इस निष्कर्ष पर आता है कि निष्कर्षों का समर्थन दिये गये साक्ष्य के आधार पर नहीं किया जा सकता था अथवा आगे इस निष्कर्ष पर आता है कि दिया गया दण्ड हतवाक् करने वाला अननुपातिक है फिर भी साक्ष्य का पुनर्अधिमूल्यन करने में एवं या दण्ड की मात्रा में हस्तक्षेप करने में औद्योगिक अधिकरण न्यायोचित होगा। इस बात पर कोई विवाद नहीं हो सकता है कि धारा 11-A के अधीन शक्ति का प्रयोग न्यायपूर्ण रूप से किया जाना होता है और इसमें हस्तक्षेप तभी सम्भव होता है जब अधिकरण निष्कर्षों से संतुष्ट न हो एवं आगे, यह निष्कर्ष निकाले कि प्रबन्धन द्वारा अधिरोपित दण्ड सम्बन्धित कर्मकार के दोष की मात्रा को देखते हुए अत्यधिक अननुपातिक है। इसके अतिरिक्त अधिकरण को इस बात का कारण देना होता है कि यह दण्ड की मात्रा से या निष्कर्षों से क्यों नहीं संतुष्ट है एवं यह कि ऐसे कारण मनगढ़ंत अथवा सनकपूर्ण नहीं होने चाहिए अपितु इसके लिए उचित कारण होने चाहिए।''

9. ऊषा ब्रेको मजदूर संघ (ऊपर) के मामले में, याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में, मैं उक्त निर्णय के कहीं पर भी यह अभिनिर्धारित किया गया नहीं पाता हूँ कि किसी भी मामले में, घरेलू जाँच में प्राप्त निष्कर्षों में श्रम न्यायालय या अधिकरण छेड़छाड़ नहीं कर सकता जब एक बार इसे वैध एवं उचित अभिनिर्धारित किया जाता है। बल्कि दूसरी ओर इसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि एक यथोचित मामले में साक्ष्य का पुनर्अधिमूल्यन करके घरेलू जाँच में प्राप्त निष्कर्षों को श्रम न्यायालय बदल सकता है।

10. वर्तमान मामले में भी, यद्यपि घरेलू जाँच को उचित एवं वैध पाया गया था फिर भी अधिकरण के आक्षेपित अधिनिर्णय में, जिसमें अभिलेखों पर मौजूद सामग्रियों एवं साक्ष्यों पर विचार करके अभिनिर्धारित किया गया है कि कम्पनी द्वारा कर्मकार की बर्खास्तगी का निष्कर्ष न्यायोचित नहीं था, मैं पाता हूँ कि यह किसी अशक्तता से ग्रस्त नहीं है। आक्षेपित अधिनिर्णय को अधिकारिता विहीन नहीं कहा जा सकता है। सम्बन्धित कर्मकार को बकाया मजदूरियों का 25% मंजूर किया जाना भी मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में पूर्णत: न्यायोचित है।

11. इसमें ऊपर बताये गये कारणों से, मैं इस रिट याचिका में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार इसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

माननीय प्रदीप कुमार, न्यायमूर्ति

शांति देवी

बनाम

अनिल कुमार अग्रवाल

First Appeal (S.J.) No. 21 of 1999. Decided on 19th May, 2010.

एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 21 वर्ष 1992 में श्रीमती विद्युत प्रभा सिंह, द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 7.9.1998 के निर्णय और दिनांक 24.9.1998 की डिक्री के विरुद्ध।

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955—धारा 13(i)(b)—पत्नी के क्रूरता के आधार पर तलाक डिक्री-अपीलार्थी-पत्नी द्वारा प्रत्यर्थी-पति के विरुद्ध दांडिक मामले दाखिल किए गए जिसमें आरोपों को सिद्ध किया नहीं जा सका था—यातना, दहेज मांग के झूठे अभिकथन भी पति के विरुद्ध क्रूरता के तुल्य है—अपीलार्थी-पत्नी अपने पति के साथ रहने के लिए सहमत नहीं है—उसके वैवाहिक जीवन को दोबारा शुरू करने के लिए अपीलार्थी अथवा उसके परिवार के सदस्यों की ओर से कोई प्रयास नहीं—स्थायी भरण-पोषण हेतु 5 लाख रुपया का भुगतान अपीलार्थी को करने हेतु प्रत्यर्थी-पति को निर्देश के साथ अपील खारिज।(पैराएँ 22 से 26)

निर्णयज विधि.—(2002)2 SCC 73—Referred to; (2005)2 SCC 22; (2006)4 SCC 558—Relied on.

अधिवक्तागण.—M/s Himanshu Kumar Mehta, M. Patra, Tapan Mahto, R.B. Singh, For the Appellant; M/s Sunil Kumar Sinha, Sailesh Kumar Sinha, For the Respondent.

प्रदीप कुमार, न्यायमूर्ति—अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. वर्तमान प्रथम अपील शांति देवी, अपीलार्थी द्वारा दाखिल की गयी है जो अवर वाद में प्रतिवादी थी जब एम॰ टी॰ एस॰ केस सं॰ 21 वर्ष 1992 में श्रीमती विद्युत प्रभा सिंह, द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा तलाक डिक्री प्रदान की गयी थी जिसके द्वारा विद्वान अपर न्यायाधीश ने अपने दिनांक 7.9.1998 के आदेश द्वारा अपीलार्थी शांति देवी का प्रत्यर्थी-वादी अनिल कुमार अग्रवाल के साथ विवाह विघटित कर दिया गया था।

3. अपीलार्थी-पत्नी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी-वादी अनिल कुमार अग्रवाल अपीलार्थी-प्रतिवादी द्वारा किए गए क्रूरता के किसी कृत्य को सिद्ध करने में विफल रहा और वाद पत्र में कथन किए गए और साक्ष्यों द्वारा सिद्ध किए गए कृत्य क्रूरता के कृत्य नहीं है और इसलिए क्रूरता के आधार पर तलाक डिक्री प्रदान किया जाना विधि की दृष्टि में दोषपूर्ण है और अपास्त किए जाने योग्य है। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि दो वर्षों से अधिक के लिए अपीलार्थी द्वारा दांपत्य गृह के अधित्यजन के आधार पर भी डिक्री पारित की गयी है किन्तु उक्त आधार, जब वाद दाखिल किया जा रहा था, वाद पत्र पर उपलब्ध नहीं था और हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 (1)(b) के मुताबिक उस तिथि पर जब आवेदन दाखिल किया जा रहा है, अधित्यजन दो वर्षों से अधिक का होना चाहिए। इस प्रकार, दिनांक 7.9.1998 को पारित निर्णय और डिक्री विधि की दृष्टि में दोषपूर्ण है और अपास्त किए जाने योग्य है।

4. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी-वादी, पति के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि प्रत्यर्थी-वादी ने वादी के साथ उसके विवाह के तुरन्त बाद अपीलार्थी द्वारा किए गए क्रूरता के कृत्यों को युक्तियुक्त संदेहों के परे सिद्ध किया है और यह भी सिद्ध किया है कि कुछ माह अपने दाम्पत्य गृह में रहने के बाद दिनांक 5.4.1991 को उसने अपना घर अंतत: छोड़ दिया और तत्पश्चात् वह हजारीबाग स्थित अपने दाम्पत्यगृह कभी नहीं आयी। इस प्रकार, लगभग 7 वर्षों के बाद दिनांक 7.9.1998 के निर्णय द्वारा तलाक डिक्री प्रदान किया जाना अभित्यजन और क्रूरता के कृत्य की परिभाषा के पूर्णत: अंतर्गत था और इसलिए डिक्री सही प्रदान की गयी थी। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि अपीलार्थी वर्ष 1991 से ही अलग रह रही थी और

दो वर्षों का अभित्यजन पूरा किया जाने के बाद वाद पत्र के संशोधन के लिए आवेदन दाखिल किया गया था जिसे दोनों पक्षों को सुनने के बाद विचारण न्यायालय द्वारा अनुज्ञात किया गया था और अपीलार्थी–प्रतिवादी द्वारा उस संशोधन को चुनौती कभी नहीं दी गयी थी और इस प्रकार उक्त संशोधन अंतिम हो गया है और अभित्यजन का मामला उस तिथि पर शुरू हुआ जब संशोधन अनुज्ञात किया गया था और इस प्रकार दो वर्षों से अधिक समय बीत जाने के बाद डिक्री पारित किया जाना न्यायालय की अधिकारिता के अंतर्गत है और हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है।

5. दोनों पक्षों को सुनने के बाद और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों के परिशीलन के बाद मैं पाता हूँ कि प्रत्यर्थी–वादी पति अनिल कुमार अग्रवाल ने हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(i)(c) के अधीन दिनांक 1 जून, 1992 को जिला न्यायाधीश, हजारीबाग के समक्ष वैवाहिक टाइटल वाद दाखिल किया। वाद पत्र में प्रत्यर्थी–वादी का मामला यह था कि वादी अनिल कुमार अग्रवाल और प्रतिवादी शांति देवी दोनों भारत के निवासी हैं और विश्वास एवं धर्म से हिन्दु हैं। दिनांक 4 फरवरी, 1990 को वादी 28 वर्षीय अनिल कुमार अग्रवाल ने 19 वर्षीया शांति देवी के साथ बरियातू, राँची में हिन्दु विधि के अनुसार विधिपूर्वक विवाह किया। विवाह अग्रवाल के हिन्दू रीति–रिवाजों के मुताबिक संपन्न हुआ था। विवाह के बाद दिनांक 5.2.1990 को प्रतिवादी शांति देवी हजारीबाग आयी और याची के साथ उसके घर में पति–पत्नी के रूप में रहने लगी। तत्पश्चात्, अपनी 'रुखसदी' पर दिनांक 9.2.1990 को राँची वापस आयी और पुन: दिनांक 12.12.1990 को राँची से अपने ससुराल वापस आयी। विवाह सूत्र से अक्टूबर, 1991 में उसे एक पुत्र हुआ। यह कथन किया गया है कि अपने विवाह के तुरन्त बाद शांति देवी ने मांग की कि उसे अपनी शिक्षा जारी रखने के लिए उसे राँची वापस भेज देना चाहिए जिस पर वादी–पति ने सुझाव दिया कि हजारीबाग में भी अच्छे महाविद्यालय हैं और उसे हजारीबाग में ही अपनी शिक्षा जारी रखनी चाहिए। किन्तु अपीलार्थी–पत्नी, शांति देवी सहमत नहीं हुई और अपने पिता राम अवतार प्रसाद अग्रवाल और अपने परिवार के सदस्यों के प्रोत्साहन पर वह वादी–प्रत्यर्थी के साथ बुरा व्यवहार करने लगी और जब उसने राँची से वापस आने से अंतत: इंकार कर दिया तब इस आधार पर कि दिनांक 12.12.1990 को रुखसदी पर हजारीबाग आने के बाद प्रतिवादी शांति देवी अपनी शिक्षा जारी रखने के लिए राँची वापस जाना चाहती थी जिसका पति–वादी ने विरोध किया, वादी–पति द्वारा क्रूरता के आधार पर वाद दाखिल किया गया था। तब उसको वापस भेजने के लिए उसके पिता ने भी दबाव डाला और जब वादी–पति ने उसे वापस भेजने से इंकार कर दिया, तब बरियातू, राँची में शांति देवी की माता की बीमारी के आधार पर उन्होंने यह कथन करते हुए कि शांति देवी की माता गंभीर रूप से बीमार है और उसे तुरन्त राँची भेज दिया जाना चाहिए, उसके पिता राम अवतार प्रसाद अग्रवाल के पत्र के साथ उसके भाई विजय अग्रवाल को किसी बैजनाथ पांडे के साथ भेजा गया। उसके पिता ने पत्र में यह धमकी भी दी कि यदि उसे वापस नहीं भेजा जाता है, तब उन्हें गंभीर परिणामों का सामना करना होगा। आशंकित होकर, उनसे यह प्रमाण पत्र कि अपनी माता के स्वास्थ्य लाभ के बाद शांति देवी तुरन्त अपने ससुराल वापस भेज दी जाएगी प्राप्त करने के बाद वादी–पति ने शांति देवी को उसके भाई विजय अग्रवाल और किसी बैजनाथ पांडे के साथ भेज दिया। उसने अपने भाई विजय के साथ दिनांक 5.4.1991 को अपना ससुराल छोड़ दिया। उसने आगे आधार लिया कि दिनांक 2.6.1991 को जब वह अपनी पत्नी को वापस लाने अपने ससुराल गया, उसके ससुर और उसके परिवार के सदस्यों द्वारा उसके साथ दुर्व्यवहार किया गया और अपमानित किया गया। उसे वापस अकेले आना पड़ा। तत्पश्चात् वादी और उसके पिता हजारीबाग स्थित महिला लोक समिति के पास गए और महिला समिति की संयोजक श्रीमती मोनिका राय को मामले में हस्तक्षेप करने के लिए कहा था। अपनी बहू को वापस लाने के लिए वादी–प्रत्यर्थी अग्रवाल महा सभा और इसके अध्यक्ष श्री पारसनाथ अग्रवाल के पास भी गए और उनसे अपने प्रभाव का प्रयोग करने को कहा। यह निवेदन किया गया है कि श्रीमती मोनिका राय और श्री पारसनाथ अग्रवाल दोनों उसे वापस

लाने में विफल रहे। उन्होंने यह कथन भी किया कि दिनांक 20.6.1991 को सायं लगभग 6 बजे प्रतिवादी–शांति देवी के पिता अपने पुत्र विजय, दामाद हरिप्रसाद अग्रवाल और अन्य के साथ आए और उनकी अनुपस्थिति में वादी के घर में जबरन घुसे और वादी की माता के साथ दुर्व्यवहार किया और उसे चुड़ैल कहते हुए और उसे खींचते हुए जबरन राँची ले जाने का प्रयास किया। परिवाद मामला सं॰ 201 वर्ष 1991 के तहत सी॰ जे॰ एम॰, हजारीबाग के समक्ष परिवाद मामला दाखिल किया गया था जिसमें सारे अभियुक्तगण को दोषी अभिनिर्धारित किया गया था। किन्तु उस घटना के कारण वादी की माता बीमार हो गयी और अंतत: दिनांक 3.6.1995 को उसकी मृत्यु हो गयी। अत: वादी अभिस्वीकृत करते हैं कि प्रतिवादी के साथ अपने विवाह के तुरन्त बाद और वाद दाखिल किए जाने की तिथि तक उसने अपीलार्थी–प्रतिवादी की क्रूरता के कृत्य के कारण प्रतिवादी–पत्नी के साथ शांतिपूर्ण विवाहित जीवन का एक दिन भी नहीं बिताया था और इसलिए वाद दाखिल किया गया था। यह नोट करना महत्वपूर्ण है कि तत्पश्चात् दिनांक 5.3.1998 को दिनांक 5.4.1991 से दिनांक 3.3.1998 तक प्रतिवादी–पत्नी द्वारा किए गए अभित्यजन के बिन्दु को लेते हुए वादी द्वारा संशोधन याचिका दाखिल की गयी थी और चूँकि उसने अपने ससुराल वालों और पति के साहचर्य का भी दो वर्षों से अधिक के लिए अधित्यजन किया था, वादी ने दावा किया कि हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13(i)(b) के मुताबिक अभित्यजन के आधार पर भी उसे तलाक डिक्री प्रदान किया जाना चाहिए। इसका विरोध करते हुए प्रतिवादी–पत्नी द्वारा एक प्रत्युत्तर दाखिल किया गया था और दोनों पक्षों को सुनने के बाद, दिनांक 10.3.1998 को विद्वान जिला न्यायाधीश ने अपने आदेश द्वारा उक्त संशोधन अनुज्ञात किया। पूर्वोक्त संशोधन को प्रतिवादी द्वारा पुनरीक्षण अथवा अपील में चुनौती नहीं दी गयी थी बल्कि तत्पश्चात पक्षकार सुनवाई के लिए अग्रसर हुए।

6. दूसरी ओर, प्रतिवादी–अपीलार्थी, पत्नी शांति देवी इस मामले में उपस्थित हुई और वाद का प्रतिवाद करते लिखित कथन दाखिल किया। लिखित कथन में प्रतिवादी का मामला यह था कि उन्होंने स्वीकार किया कि वादी और प्रतिवादी का विवाह हिन्दू विधि के अनुसार हुआ था और वादी–पति के परिवार के सदस्यों के साथ वे पति–पत्नी के रूप में रह रहे थे किन्तु उसने अभिकथन किया कि वादी–पति के परिवार के सदस्यगण ने उसके साथ बुरा व्यवहार किया। वादी–प्रत्यर्थी और उसके परिवार ने उसे अनेक वस्तुओं, कलर टी॰ वी॰, वी॰ सी॰ आर॰ और अन्य बहुमूल्य सामान लाने को कहा और उसका गहना भी भेजने को कहा जिसके लिए परिवाद केस सं॰ 262 वर्ष 1993 राँची में दाखिल किया गया था। उसने कथन किया कि वह अपने पति के साथ हजारीबाग में लगभग 4-5 माह रही किन्तु उसके ससुरालवालों ने सदैव उसके साथ बुरा व्यवहार किया और अनेक वस्तुओं की मांग की जिसपर वह राँची वापस चली आयी और वादी के परिवार के सदस्यों के क्रूरतापूर्ण कृत्य के कारण अपने पिता के साथ रहने लगी। तत्पश्चात् विवाह सूत्र से उसने अक्टूबर 1991 में पुत्र को जन्म दिया। तत्पश्चात्, वह उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में उत्तीर्ण हुई किन्तु उसे हजारीबाग में अपनी शिक्षा जारी रखने की अनुमति नहीं दी गयी थी और पैरा–4 में किए गए अभिकथन से इंकार किया गया है। उसने कथन किया कि उसने अपने ससुर, सास, पति अथवा ससुराल के परिवार, के किसी भी सदस्य के साथ बुरा व्यवहार नहीं किया। उसने कथन किया कि वाद पत्र के पैरा–5 में कथित आधार सृजित, झूठे और मनगढ़ंत हैं। उसने कथन किया कि उसके पति और ससुरालवालों द्वारा किए गए बुरे व्यवहार के कारण, उसके पिता द्वारा उसे राँची वापस लाया गया था। उसने पैरा 2 और 3 में किए गए अभिकथन से भी इंकार किया और कथन किया कि उसके पिता और परिवार के सदस्यों ने वादी अथवा उसके परिवार के सदस्यों को कभी कोई उपहति कारित नहीं किया था। उसने वाद पत्र के पैरा 4 और 5 में किए गए अभिकथन से भी इंकार किया और कथन किया कि उसका बबलू नाम के किसी व्यक्ति से कोई प्रेम प्रसंग नहीं है। उसने यह कथन भी किया कि वादी और उसके परिवार के सदस्य उसकी देखभाल करने में विफल रहे और उसने (प्रतिवादी–पत्नी) ने भरण–पोषण के लिए एक पृथक मामला विविध केस सं॰ 39 वर्ष 1993 दाखिल किया है। उसने इंकार किया कि क्रूरता के आधार पर तलाक का वाद दाखिल करने के लिए कोई वाद हेतुक नहीं था। प्रतिवादी द्वारा दिनांक 19.3.1998

को एक अतिरिक्त लिखित कथन भी दाखिल किया गया था जिसमें उसने कथन किया कि वाद पत्र के पैरा 6 में किए गए अभिकथन से भी इंकार किया जाता है। हृदयाघात के कारण वादी की माता की स्वाभाविक मृत्यु हो गयी क्योंकि वादी के साथ उसके विवाह के काफी पहले से वह इस रोग से पीड़ित थी। उसने वाद पत्र के पैरा 7 (A) के बयान के जवाब में आगे कथन किया कि उसने 498A भा॰ दं॰ सं॰ और 3/4 डी॰ पी॰ अधिनियम के अधीन मानसिक यातना और क्रूरता का मामला दाखिल किया था जिसे विचारण न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था किन्तु अपील माननीय उच्च न्यायालय, राँची के समक्ष लंबित है। उसने यह कथन भी किया कि दिनांक 5.4.1991 के बाद उसने (प्रतिवादी) ने अपने ससुराल में रहने का अनेक प्रयास किया और हस्तक्षेप के लिए वह अपने पिता के साथ हजारीबाग भी गयी किन्तु उसे वादी ने अपने घर में रखने से इंकार कर दिया और इस प्रकार यह वादी है जिसने प्रतिवादी-पत्नी को अपने साथ रखने से इंकार किया है।

7. यह प्रतीत होता है कि विचारण के क्रम में, वादी ने 5 गवाहों का परीक्षण किया है।

अ० सा० 1 श्रीमती मोनिका रॉय है।

अ० सा० 2 विरेन्द्र प्रसाद अग्रवाल है।

अ० सा० 3 भोला प्रसाद है।

अ० सा० 4 अनिल कुमार अग्रवाल है।

अ० सा० 5 केदार नाथ अग्रवाल है।

8. प्रतिवादी ने भी 4 गवाहों का परीक्षण किया है।

ब० सा० 1 राम अवतार प्रसाद अग्रवाल है।

ब० सा० 2 हरि प्रसाद अग्रवाल है।

ब० सा० 3 नरेश साव है।

ब० सा० 4 शांति देवी है।

9. अ॰ सा॰ 1 मोनिका रॉय ने न्यायालय में कथन किया है कि वह दोनों पक्षों को जानती है और वादी अनिल कुमार अग्रवाल ने दिनांक 3 अप्रैल, 1991 को यह कथन करते हुए कि उसे अपनी पत्नी द्वारा यातना दी जा रही है, जो अपने पिता के घर राँची जाने के लिए उद्दत है और उसने मदद के लिए उससे प्रार्थना करते हुए उसके कार्यालय में आवेदन दाखिल किया था। तब वह वादी के घर गयी थी और उसकी पत्नी शांति देवी के साथ बातचीत किया था किन्तु उसने कथन किया कि उसकी माता बीमार है और वह यहाँ नहीं रहेगी और उसने उसे उसको राँची ले जाने के लिए कहा। उसने कथन किया कि वर्तमान में वह कुछ निजी काम से पटना जा रही है और जब वह पटना से वापस आएगी, वह उसको राँची भेजने की व्यवस्था करेगी। उसने कथन किया कि जब दिनांक 6.4.1991 को वह पटना से वापस आयी और वादी के घर गयी, तब उसे सूचित किया गया था कि शांति देवी अपने भाई के साथ राँची चली गयी है। तब उसने उन्हें प्रतीक्षा करने को कहा कि संभवत: वह स्वयं अपने माता के ठीक होने पर वापस आ जाएगी। किन्तु जब वह दो माह के बाद भी नहीं वापस आयी और जब 7 जून को एकबार फिर उससे बात किया गया, वह एक व्यक्ति के साथ राँची आयी और शांति देवी के घर गयी और उसके माता, पिता और अन्य सदस्यों से बातचीत किया। उसने कथन किया कि शांति देवी के पिता ने कथन किया कि अनिल की माता डायन है और जब तक वह राँची नहीं आती है और उसकी पत्नी को अच्छा करने के लिए नहीं छूती है, उसकी पुत्री हजारीबाग नहीं जाएगी। उसने यह कथन भी किया कि शांति के ससुराल का वातावरण उचित नहीं है और इसलिए यह बेहतर होगा कि अनिल उसके घर में रहे। तत्पश्चात् उसने शांति से बातचीत की और उसे कहा कि वह एक शिक्षित महिला है और वह कैसे अपने पिता की डायन-चुड़ैल की धारणा पर विश्वास कर रही है, जिसका शांति ने उत्तर दिया कि चूँकि उसका पिता का इस पर विश्वास

है, अत: उसको भी विश्वास है। मोनिका रॉय ने पुन: शांति देवी के माता-पिता से पूछा किन्तु उन्होंने कहा कि बेहतर होगा कि अनिल राँची आए और 'घरजमाई' के रूप में राँची रहे। तत्पश्चात्, वह हजारीबाग वापस आयी और अपने संस्थान के लेटर हेड पर अपनी राँची यात्रा का लिखित रिपोर्ट दिया। उसने विचारण में उक्त पत्र को प्रदर्श-1 के रूप में प्रमाणित किया है। अपने प्रतिपरीक्षण में उसने कथन किया है कि वह कामर्स में स्नातक है और सोसायटी रजिस्ट्रेशन अधिनियम के अधीन रजिस्टर्ड नव भारत जागृति केन्द्र वर्तमान में चला रही है और वह अपने संस्थान के कागजात प्रस्तुत कर सकती है। उसने यह कथन भी किया कि उसके संगठन के नियमों के मुताबिक प्रत्येक मामले में वे संबंधित व्यक्ति को एक रिपोर्ट प्रस्तुत करते है, और इसकी एक प्रति उनके कार्यालय में भी रखी जाती है। उसने यह कथन भी किया कि उसकी राँची यात्रा का व्यय उसकी 'संस्था' द्वारा न कि पक्ष द्वारा वहन किया गया था। उसने इंकार किया कि रिपोर्ट सृजित रिपोर्ट है।

10. अ॰ सा॰ 2 बिरेन्द्र प्रसाद अग्रवाल ने कथन किया कि वह वादी अनिल कुमार अग्रवाल का पिता है, जिसका विवाह प्रतिवादी शांति देवी के साथ दिनांक 4.2.1990 को राँची में हिन्दू विधि के मुताबिक हुआ था और विवाह के बाद दिनांक 5.2.1990 को वह हजारीबाग घर आयी और 4/5 दिन रहने के बाद वह वापस राँची चली गयी। पुन: रुखसदी के बाद वह दिनांक 12.12.1990 को हजारीबाग आयी और वहाँ रही। हजारीबाग आने के बाद, कुछ समय बाद उसका भाई आया और कथन किया कि पढ़ाई जारी रखने के लिए शांति देवी को राँची वापस भेज दिया जाना चाहिए जिस पर उसने और उसके पुत्र ने कथन किया कि वह हजारीबाग में ही अपनी पढ़ाई जारी रख सकती है। तब शांति देवी के भाई ने कथन किया कि चूँकि उसकी माता का स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं है, शांति को वापस भेजना होगा ताकि वह अपनी माता की देखभाल कर सके। शांति के भाई ने यह अभिकथन भी किया कि शांति की सास डायन है और उसके जादू के चलते उसकी माता बीमार हो गयी है। इस झूठे अभिकथन के कारण उसे और उसके पुत्र अनिल कुमार अग्रवाल को गहरी मानसिक यातना कारित हुई थी। किन्तु इसका उन्हें अफसोस नहीं था। दिनांक 5.4.1991 को शांति का भाई विजय पुन: किसी बैजनाथ पांडे के साथ अपने पिता का पत्र लिए आया जिसमें कथन किया गया था कि शांति देवी की माता बीमार है और उसे उनके साथ तुरन्त राँची वापस भेज देना चाहिए अन्यथा उन्हें गंभीर परिणामों का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए। इससे भी उसके पुत्र अनिल को गंभीर मानसिक यातना कारित की। अंतत: वे शांति देवी को राँची भेजने के लिए तैयार हुए किन्तु उसने उन्हें लिखित रूप से देने को कहा कि अपनी माता के ठीक होने के तुरन्त बाद वह वापस भेज दी जाएगी जिसे उक्त बैजनाथ पांडे द्वारा लिखित रूप में दिया गया था। यह कथन किया गया है कि शांति देवी ने अपने सारे गहनों और वस्तुओं के साथ उक्त बैजनाथ पांडे और अपने भाई के साथ हजारीबाग से चली गयी। अ॰ सा॰ 2 ने आगे कथन किया है कि दिनांक 5.4.1991 से शांति देवी अपने ससुराल कभी वापस नहीं आयी। दिनांक 2.6.1991 को जब अनिल कुमार अग्रवाल उसे वापस लाने अपने ससुराल गया, तब उसे अपमानित किया गया और उस पर प्रहार किया गया। तत्पश्चात्, उन्होंने उसे वापस भेजने के लिए अनेक पत्र लिखा और महिला लोक समिति, हजारीबाग की श्रीमती मोनिका रॉय के पास भी गए। वह उसे वापस लाने राँची गयी किन्तु विफल रही। उसके पुत्र की मानसिक यातना दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। तब वह पुन: अग्रवाल समाज के पास गया। उन्होंने भी मामला शांत करने और शांति को हजारीबाग लाने का प्रयास किया किन्तु वे भी विफल रहे। दिनांक 20.6.1991 को शांति का पिता राम प्रसाद अग्रवाल अपने पुत्र विजय अग्रवाल और अन्य के साथ आया और उसके पुत्र अनिल की अनुपस्थिति में उसके घर में बलपूर्वक घुसे और उसकी पत्नी को डायन कहते हुए उसे जबरन खींचना चाहा और बलपूर्वक राँची ले जाना चाहा किन्तु मुहल्ला वालों के हस्तक्षेप पर वे विफल रहे। अ॰ सा॰ 2 ने आगे कथन किया कि उक्त घटना के बाद उन्होंने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के न्यायालय में परिवाद दर्ज किया और मामला श्रीमती सीमा सिन्हा, न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग द्वारा सुना गया था जिन्होंने सारे अभियुक्तगण को दोषी पाया था और फटकार लगाते हुए उनको निर्मुक्त किया

था। अ॰ सा॰ 2 ने यह कथन भी किया कि प्रतिवादी-शांति देवी और उसके परिवार के सदस्य चाहते थे कि अनिल कुमार अग्रवाल राँची में उनके घर में घर जमाई के रूप में रहे। इस स्थिति में उसने कथन किया है कि अब अपनी पत्नी के साथ रहना अनिल के लिए संभव नहीं है। प्रति परीक्षण में, उसने कथन किया कि वकील से सलाह लेने के बाद अनिल द्वारा परिवाद किया गया था। उसने प्रति परीक्षण में स्वीकार किया कि दिनांक 5.4.1991 के बाद वह हजारीबाग वापस कभी नहीं आयी यद्यपि उसका पुत्र अनेक बार उसे वापस लाने के लिए गया था। उसने यह कथन भी किया कि उन्होंने शांति से अथवा उसके पिता से कभी दहेज नहीं मांगा था। किन्तु उसने कथन किया है कि विवाह के बाद शांति देवी के पिता द्वारा अपने दामाद को एक स्कूटर दिया गया था। उसने इंकार किया कि उसके पुत्र अनिल कुमार अग्रवाल ने कभी भी टी॰ वी॰, वी॰ सी॰ आर॰, आदि मांगा था।

11. अ॰ सा॰ 3 भोला प्रसाद ने न्यायालय में कथन किया कि वह दोनों पक्षों को जानता है और वह प्रतिवादी शांति देवी के पिता राम अवतार प्रसाद अग्रवाल की लिखावट से भली-भाँति परिचित था। उसने प्रदर्श 2 से 2/A तक के रूप में चिन्हित राम अवतार प्रसाद अग्रवाल के पत्र को प्रमाणित किया है। उसने प्रदर्श 2/C के रूप में चिन्हित उसके वचन पत्र पर बैजनाथ पांडे की लिखावट भी सिद्ध किया है। अपने प्रति परीक्षण में उसने इंकार किया कि उसका अनिल के साथ कोई संबंध है। उसने यह कथन भी किया कि वह बैजनाथ पांडे के पिता का नाम एवं निवास नहीं जानता है।

12. अ॰ सा॰ 4 विचारण न्यायालय में वादी और अपील में प्रत्यर्थी अनिल कुमार अग्रवाल है। उसने अपने मामला का समर्थन किया है और निवेदन किया है कि दिनांक 4.2.1990 को हिन्दू रीति के मुताबिक उसका विवाह प्रतिवादी शांति देवी के साथ बरियातू, राँची में हुआ था और तत्पश्चात् वह हजारीबाग आयी और 4 दिनों तक रही और दिनांक 9.2.1990 को राँची वापस चली गयी। तत्पश्चात, रुखसदी पर दिनांक 12.12.1990 को वह हजारीबाग वापस आयी। उसके हजारीबाग आने के बाद, वह अपनी शिक्षा जारी रखने के लिए राँची पुनः वापस जाना चाहती थी जिस पर उसने उससे कहा कि चूँकि हजारीबाग में भी अच्छे महाविद्यालय हैं, उसे हजारीबाग में अपनी शिक्षा जारी रखनी चाहिए किन्तु उसने इंकार कर दिया। उसने उसके माता-पिता के साथ दुर्व्यवहार करना शुरू किया और कथन किया उसकी सास जो एक डायन है, की 'जादूगरी' के कारण उसकी माँ राँची में बीमार है। उसे उसकी सास के विरूद्ध ऐसा कहने का दुःख नहीं था। उसने कथन किया है कि दिनांक 5.4.1991 को कोई बैजनाथ पांडे प्रतिवादी के भाई विजय अग्रवाल के साथ प्रतिवादी के पिता राम अवतार प्रसाद अग्रवाल का पत्र लिए आया जिसमें कथन किया गया था कि चूँकि उसकी माता बीमार है अतः उसे तुरन्त राँची भेज देना चाहिए अन्यथा उन्हें गंभीर परिणामों का सामना करना पड़ेगा। उसने प्रदर्श 2/a के रूप में चिन्हित पत्र को प्रमाणित किया है। तत्पश्चात् अपने माता-पिता की सलाह पर उससे यह वचनबंध कि उसकी माता के ठीक हो जाने के तुरन्त बाद उसे ससुराल वापस भेज दिया जाएगा, लेने के बाद उसने उसे उक्त बैजनाथ पांडे के साथ राँची वापस जाने की अनुमति दी थी। उसने प्रदर्श-E के रूप में चिन्हित बैजनाथ पांडे द्वारा लिखे गए पत्र को भी प्रमाणित किया है। उसने कथन किया है कि प्रतिवादी अपने सारे गहनों और सामानों को साथ लेकर चली गयी और तत्पश्चात् उन्होंने उसे हजारीबाग वापस लाने का अनेक प्रयास किया किन्तु वह कभी नहीं लौटी। दिनांक 2.6.1991 को वह स्वयं राँची गया किंतु उसने उसके साथ दुर्व्यवहार किया और उसके भाई विजय ने भी उसे फटकारा और उस पर प्रहार किया। तब वह हजारीबाग वापस आया। तब उसने उसको अनेक पत्र लिखे और अंततः उसने हजारीबाग की समाज सेविका श्रीमती मोनिका रॉय से उसे वापस लाने की प्रार्थना की किन्तु वह भी विफल रही। तब वह अग्रवाल समाज के अध्यक्ष पारस नाथ अग्रवाल के पास गया किन्तु वह भी उसको वापस लाने में विफल रहे। उसने यह कथन भी किया कि दिनांक 20.6.1991 को जब वह अपने घर पर नहीं था, तब उसके ससुर और साला और अन्य उसके घर आए और उन्होंने बलपूर्वक उसकी माता का बाल पकड़ा और उसे राँची ले जाने के लिए उसे घर से खींचकर ले जाना चाहते थे किन्तु मुहल्ला वालों के विरोध के कारण वे अपने कृत्य में विफल हुए। अंततः उसने

मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग के समक्ष परिवाद मामला दाखिल किया। तत्पश्चात, विचारण के बाद प्रतिवादीगण तत्कालीन न्यायिक दंडाधिकारी श्रीमती सीमा सिन्हा द्वारा दोषी पाए गए थे। उसने आगे कथन किया है कि उसके ससुर उसको राँची में 'घरजमाई' के रूप में अपने साथ रखना चाहते थे। उसने कथन किया है कि प्रतिवादी शांति देवी ने दहेज मांग और यातना का झूठा अभिकथन करते हुए उनके विरुद्ध राँची में एक मामला दाखिल किया। किन्तु मामले में विचारण के बाद उन्हें दोषमुक्त किया गया था। उसने आगे कथन किया है कि दिनांक 5.4.1991 से ही वह अपने ससुराल वापस नहीं आयी और उसका उसके साथ कोई संबंध नहीं था और इस प्रकार उसने उक्त तिथि से ही उसका (वादी) अभित्यजन कर दिया है। उसने इंकार किया कि उसने कभी शांति देवी को यातना दी अथवा उससे अथवा उसके पिता से स्कूटर, रंगीन टी॰ वी॰ आदि मांगा। उसने कथन किया है कि उसने अपने पैसे से सेकेण्ड हैन्ड स्कूटर के तौर पर अपना स्कूटर खरीदा था। उसने प्रदर्श 3 से 3/G के रूप में पोस्टिंग सर्टिफिकेट के अधीन शांति को लिखे गए पत्रों को भी प्रमाणित किया। उसने कथन किया कि नगद राशि देकर किसी श्याम किशोर सिंह से BR 1496339 रजिस्ट्रेशन नम्बर वाला स्कूटर खरीदा था। उसने कथन किया है कि उसने स्वयं, न कि किसी की सलाह पर, यह मामला दाखिल किया है। प्रति परीक्षण में उसने यह कथन भी किया कि उसके द्वारा अनेक प्रयास किए जाने के बावजूद वह राँची में अपनी संतान को देखने में विफल रहा। तब दिनांक 2.6.1991 को जब वह अपने ससुराल गया, उसे अपने पुत्र को देखने की अनुमति नहीं दी गयी थी। उसने कथन किया है कि उसकी पत्नी के इस क्रूर कृत्य के कारण उसकी माँ बीमार हो गयी और दिल की मरीज बन गयी। उसने कथन किया है कि वह बबलू का पता नहीं जानता है। उसने इंकार किया कि उसके ससुर द्वारा उसे स्कूटर दिया गया था। उसने इंकार किया कि उसने मामले में झूठा अभिकथन किया है।

13. अ॰ सा॰ 5 केदारनाथ अग्रवाल ने न्यायालय में कथन किया है कि वह दोनों पक्षों को जानता है और दिनांक 4.2.1990 को हिन्दू रीति के मुताबिक बरियातू, राँची में उनका विवाह हुआ था। उसने यह कथन भी किया कि दिनांक 5.2.1990 को विवाह के बाद शांति देवी हजारीबाग आयी और दिनांक 9.2.1990 को ''चौथारी'' के बाद चली गयी और तत्पश्चात् दिनांक 12.12.1990 को रुखसदी के बाद हजारीबाग आयी। वह अपनी शिक्षा जारी रखने के लिए राँची भेजे जाने की मांग किया करती थी किन्तु अनिल चाहता था कि वह हजारीबाग महाविद्यालय में प्रवेश ले जिस पर उसने अपनी माता की बीमारी के आधार पर राँची जाने की योजना बनायी और यह कथन भी किया कि उसकी सास डायन थी और 'जादू' से उसने उसकी माता को बीमार बना दिया है जिससे अनिल को गहरी मानसिक यातना कारित हुई। तत्पश्चात, दिनांक 5.4.1991 को उसका भाई किसी बैजनाथ पांडे के साथ अपने पिता का पत्र लिए उसके घर आया जिसमें उसे वापस भेजने के लिए कहा गया था क्योंकि उसकी माँ बीमार थी अन्यथा उन्हें गंभीर परिणामों का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए। तत्पश्चात्, शांति देवी को राँची जाने की अनुमति दी गयी थी किन्तु उन्होंने बैजनाथ पांडे से वचनबंध लिया कि उसकी माता के ठीक हो जाने के बाद उसे तुरन्त वापस भेज दिया जाएगा और जब वह बाद में राँची नहीं लौटी, तब दिनांक 2.6.1991 को अनिल को राँची भेजा गया था जहाँ उसके साथ दुर्व्यवहार हुआ था। जब उसकी माता को डायन कहा गया था, उन्होंने राँची जाने के लिए महिला समिति की अध्यक्षा श्रीमती मोनिका रॉय से प्रार्थना की। वह दिनांक 6.4.1991 को राँची गयी किन्तु उसे वापस लाने में विफल रही। तत्पश्चात, अग्रवाल समाज के अध्यक्ष श्री पारसनाथ अग्रवाल के पास गए। वह भी राँची गए किन्तु उसे वापस लाने में विफल रहे। तत्पश्चात्, अनिल कुमार अग्रवाल के पिता द्वारा शांति को अनेक पत्र लिखे गए किन्तु वह नहीं आयी। तत्पश्चात् दिनांक 20.6.1991 को शांति देवी के पिता, उसका भाई और अन्य सदस्य हजारीबाग आए और उसकी अनुपस्थिति में अनिल के घर में घुसे और बलपूर्वक राँची ले जाने के लिए उसकी माता का बाल खींचने लगे किन्तु मुहल्लावालों के हस्तक्षेप के कारण वे विफल रहे। तत्पश्चात, जब मुख्य न्यायिक

दंडाधिकारी, हजारीबाग के समक्ष मामला दाखिल किया गया था, उस मामला में सारे अभियुक्तगण/प्रतिवादीगण को दोषी पाया गया था और प्रतिवादी और उसके पिता अनिल कुमार अग्रवाल को 'घरजमाई' के रूप में राँची में अपने घर में रखना चाहते थे। वे शांति देवी को हजारीबाग लाने में विफल रहे और तब यातना के आधार पर यह मामला दर्ज किया गया था। उसने कथन किया है कि शांति देवी और उसके पिता ने क्रूरता और दहेज मांग का झूठा मामला दाखिल किया किन्तु विचारण के बाद उन्हें आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया था। इन सारे यातना और क्रूरता के कारण, अनिल की माता की मृत्यु हो गयी। अपने प्रतिपरीक्षण में उसने स्वीकार किया कि वह अनिल की भाभी का पिता है। वह अक्सर अपनी पुत्री के ससुराल जाया करता था और आने-जाने के दौरान उसे घटना के बारे में जानकारी हुई थी। अपने प्रति परीक्षण में उसने कथन किया कि अनिल हजारीबाग में 'कृषि संबंधी औषधि और बीज, आदि का व्यवसाय कर रहा था।

14. इस प्रकार, अभियोजन गवाहों (अ॰ सा॰) से यह प्रतीत होता है कि वादी अनिल कुमार अग्रवाल के साथ उसके विवाह के बाद प्रतिवादी शांति देवी अपनी प्रथम यात्रा में चार दिनों तक अर्थात् दिनांक 5.2.1990 से 9.2.1990 तक रही और जब वह रुखसदी के बाद दिनांक 12.12.1990 को पुनः आयी, तब वह अपनी शिक्षा जारी रखने के लिए राँची वापस जाना चाहती थी और जब वादी-पति द्वारा इस पर आपत्ति की गयी, चूँकि हजारीबाग में अच्छा महाविद्यालय था, तब उसने अपनी माता की बीमारी के आधार पर और अपनी सास के विरुद्ध डायन का अभिकथन करते हुए उसने राँची जाना चाहा और अंततः सफल हुई जब उसका भाई किसी बैजनाथ पांडेय के साथ अपने पिता का पत्र लिए हुए दिनांक 5.4.1991 को आया जिसमे कथन किया था कि यदि उसे वापस नहीं भेजा जाता है, वादी और उसके परिवार के सदस्यों को गंभीर परिणाम का सामना करना होगा। तब उक्त बैजनाथ पांडे से यह वचन कि उसकी माता के ठीक होने के बाद शांति देवी वापस आ जाएगी, लेते हुए उसे जाने की अनुमति दी गयी थी। सारे गवाहों ने वादी की ओर से क्रूरता के कृत्य को आधार के रूप में सिद्ध किया है। यह प्रतीत होता है कि गवाहों ने यह भी सिद्ध किया है कि स्वयं वादी उसके पिता और अन्य स्वतंत्र व्यक्तियों द्वारा उसको वापस लाने के लिए किए गए अनेक प्रयासों के बावजूद, उसने हजारीबाग आने से इंकार कर दिया। वादी-पति स्वयं दिनांक 2.6.1991 को राँची गया किन्तु उसे अपमानित किया गया, फटकारा गया और उस पर प्रहार किया गया। तत्पश्चात् वे लोग एक समाज सेविका मोनिका रॉय के पास गये जो दिनांक 6 जून, 1991 को राँची गयी किन्तु वह भी विफल रही और शांति देवी के माता-पिता ने उसे अनिल को राँची भेजने को कहा ताकि वह उनके साथ 'घरजमाई' के रूप में रहे। वादी ने यह तथ्य भी सिद्ध किया है कि बाद में उसको वापस लाने के लिए अग्रवाल समाज के अध्यक्ष श्री पारस नाथ अग्रवाल को भी राँची भेजा गया था किन्तु वह भी विफल रहे। अ॰ सा॰ ने साक्ष्य द्वारा सिद्ध किया है कि उसकी सास की मृत्यु के बाद भी प्रतिवादी-शांति देवी अपने ससुराल हजारीबाग नहीं आयी और अपने पति, ससुर और अन्य के विरुद्ध राँची में यातना और दहेज का मामला दाखिल किया जिसे खारिज कर दिया गया था और वादी एवं अन्य को दोषमुक्त किया गया था जो भी क्रूरता का एक कृत्य है।

15. वादी द्वारा दिए गए साक्ष्यों के परिशीलन के बाद, अब हम विचारण में प्रतिवादी-अपीलार्थी द्वारा दिए गए साक्ष्य पर विचार करें। प्रतिवादी गवाह (ब॰ सा॰ 1) राम अवतार प्रसाद अग्रवाल ने न्यायालय में कथन किया कि शांति देवी उसकी पुत्री है और उसका विवाह राँची में अनिल कुमार अग्रवाल के साथ हुआ था और विवाह के बाद वह ससुराल चली गयी। ससुराल में उसे उसके पति, ससुर, सास और अन्य द्वारा यातना दी जाती थी और उसके आभूषणों को हजारीबाग भेजने के लिए बलपूर्वक उससे उसको एक पत्र लिखवाया था। तब उसने अपने पुत्र के माध्यम से आभूषणों को भेजा। तत्पश्चात् उसके दामाद अनिल कुमार अग्रवाल और उसके माता-पिता ने टी॰ वी॰ और वी॰ सी॰ आर॰ मांगना शुरू किया। चूँकि वह टी॰ वी॰ और वी॰ सी॰ आर॰ देने में विफल रहा, तब वे उसे और भी यातना देने लगे। दिनांक 5.4.1991

को उसने अपने मित्र बैजनाथ पांडे को अपने पुत्र विजय अग्रवाल के साथ उसे हजारीबाग से राँची लाने के लिए भेजा। तत्पश्चात् दिनांक 5.10.1991 को उसने एक पुत्र को जन्म दिया। उसने आगे कथन किया कि दिनांक 5.4.1991 के बाद उसकी पुत्री को वापस ले जाने के लिए उसका दामाद राँची कभी नहीं आया। यह कहना गलत है कि अपनी पत्नी को वापस ले जाने के लिए अनिल राँची आया था और उनके द्वारा उस पर प्रहार किया गया था। यह कहना भी गलत है कि जब तक शांति देवी हजारीबाग में रही, वह अपने ससुराल वालों को यातना दिया करती थी और उक्त यातना के कारण अनिल की माता की मृत्यु हो गयी। उसने इंकार किया कि उसने अपने दामाद, उसके माता-पिता के विरुद्ध धारा 498A भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन झूठा मामला दाखिल किया है जिसे न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था और अपील उच्च न्यायालय में लंबित है। अपने प्रति परीक्षण में उसने कथन किया है कि वह नहीं जानता है कि पत्र, जिसके द्वारा सारे आभूषणों को हजारीबाग मंगाया गया था, दाखिल किया गया है या नहीं। उसने यह कथन भी किया कि विवाह के समय, टी॰ वी॰, वी॰ सी॰ आर॰ मांगा गया था और उसे याद नहीं है कि उसने न्यायालय में कथन किया है कि अपीलार्थी ने उससे कभी दहेज नहीं मांगा था। उसने यह भी स्वीकार किया कि वह शांति देवी के ससुराल वालों के घर नहीं गया था और यातना के बारे में उसे अपने पुत्र से पता चला। उसने यह स्वीकार भी किया कि अनिल के पिता ने वर्ष 1991 में हजारीबाग में मामला दाखिल किया था जिसमें उन्हें फटकार के बाद निर्मुक्त कर दिया गया था। उसने कथन किया है कि वर्ष 1993 के सितम्बर माह में वादी और उसके माता-पिता के विरुद्ध 498A भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन मामला दाखिल किया गया था। उसने इंकार किया कि अनिल ने मारवाड़ी समाज के माध्यम से शांति देवी को वापस लाने का प्रयास किया था। उसने पैरा 17 पर स्वीकार किया कि धारा 498A भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन शांति देवी द्वारा दाखिल मामले में अभियुक्तगण (वादी एवं अन्य) को दोषमुक्त कर दिया गया था और उन्होंने उच्च न्यायालय में अपील दाखिल किया है।

16. ब॰ सा॰ 2, हरि प्रसाद अग्रवाल है जिसने कथन किया है कि दिनांक 12.12.1990 से दिनांक 5.4.1991 के बीच शांति देवी अपने ससुराल रही जब उसके ससुराल वाले टी॰ वी॰ और वी॰ सी॰ आर॰ मांगा करते थे और राँची से उसका गहना लाने के लिए उसे कहा करते थे और वह गहनों को शांति देवी को देने के लिए हजारीबाग उसके ससुराल ले गया था। दिनांक 5.4.1991 के बाद अनिल कुमार अग्रवाल अपनी पत्नी और संतान को देखने राँची कभी नहीं आया था। अपने प्रति परीक्षण में उसने स्वीकार किया कि राम अवतार प्रसाद अग्रवाल का एक अन्य दामाद उसके घर में 'घरजमाई' के रूप में रहता है। उसने यह स्वीकार भी किया कि उसने राँची न्यायालय में शांति देवी के पक्ष में साक्ष्य दिया था।

17. ब॰ सा॰ 3, नरेश साव ने राम अवतार प्रसाद अग्रवाल द्वारा दाखिल कुछ अभिस्वीकृति कार्डों को प्रमाणित किया है जो प्रदर्श A से A/1 के तौर पर चिन्हित है। अपने प्रति परीक्षण में, उसने स्वीकार किया कि वह 'चोपड़ा वकील' के साथ अधिवक्ता लिपिक के तौर पर कार्य करता था।

18. ब॰ सा॰ 4, स्वयं प्रतिवादी-शांति देवी है। उसने कथन किया है कि दिनांक 12.12.1990 को अपनी रुखसदी के बाद वह अपने ससुराल हजारीबाग आयी। दिनांक 5.4.1991 को, वह अपने भाई विजय अग्रवाल और बैजनाथ पांडे के साथ राँची वापस आयी। उसने कथन किया है कि दिनांक 12.12.1990 से दिनांक 5.4.1991 के बीच उसके ससुराल वालों का व्यवहार उसके प्रति अच्छा नहीं था और वे उसके पिता से स्कूटर मांगा करते थे और कहा करते थे कि यदि वह अपने पिता को स्कूटर देने के लिए नहीं कहेगी तो उस पर प्रहार किया जाएगा। उन्होंने उसके गहनों को उसे भेजने के लिए अपने पिता को एक पत्र लिखने के लिए भी कहा था जिसे उसके भाई के माध्यम से उसके पिता द्वारा भेजा गया था। उसने राँची में अपने पति और ससुरालवालों के विरुद्ध यातना का मामला दर्ज किया था और मामला राँची में उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित है। उसने वर्ष 1991 में एक पुत्र को जन्म दिया था और दिनांक 5.4.1991 के बाद से उसका पति राँची कभी नहीं आया था। उसने संतान के जन्म की सूचना भेजी थी किन्तु वह नहीं आया था। उसने कथन किया कि यह कहना गलत है कि दिनांक 12.12.1990 से दिनांक

5.4.1991 तक उसने अपने पति और सास और ससुर को यातना दी थी और वे उसकी शिक्षा हजारीबाग में जारी रखना चाहते थे। उसने इससे भी इंकार किया कि उसने अपनी सास को इतनी यातना दी कि उसकी मृत्यु हो गयी। उसने इससे भी इंकार किया कि उसका पति दिनांक 2.6.1991 को राँची आया था और उसपर उसके पिता ने प्रहार किया था और घर से निकाल दिया था। उसने इससे भी इंकार किया कि उसे वापस ले जाने के लिए मोनिका रॉय, राँची आयी थी। उसने इंकार किया कि बबलू गुप्ता के साथ उसका कोई संबंध है। अपने प्रतिपरीक्षण में उसने कथन किया है कि उसने अपना होमियोपैथी प्रशिक्षण पाठ्यक्रम पूरा नहीं किया है क्योंकि यह दो वर्षों का पाठ्यक्रम है और महाविद्यालय धुर्वा में है। पैरा 7 में उसने स्वीकार किया है कि अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद वह होमियोपैथी औषधि का कारोबार करना चाहती है। उसने स्वीकार किया कि दिनांक 5.4.1991 के बाद से वह राँची में रह रही है। उसने स्वीकार किया कि उसे उसके पिता द्वारा बुलाया गया था। उसने पत्र, प्रदर्श e/2, के बारे में स्वीकार किया। दिनांक 12.12.1990 से 5.4.1991 के बीच उसे कभी राँची नहीं भेजा गया था। पैरा 13 में उसने स्वीकार किया कि दिनांक 5.4.1991 को वह चली गयी थी, क्योंकि पति के साथ उसका संबंध खराब हो गया था किंतु उसने इंकार किया कि उसने अपनी सास को डायन कहा था। उसने पैरा-16 में कथन किया कि पहले उसके पिता के विरुद्ध उसके ससुराल वालों द्वारा दांडिक मामला दर्ज किया गया था। तत्पश्चात् उसने अपने ससुरालवालों के विरुद्ध धारा 498A भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन दांडिक मामला दर्ज किया था। उसने पैरा-18 में स्वीकार किया कि उसके द्वारा दाखिल किए गए 498A भा॰ दं॰ सं॰ के मामले में, समस्त अभियुक्तगण को रांची न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था और उसने उच्च न्यायालय में अपील दाखिल किया है।

19. इस प्रकार, ब॰ सा॰ के साक्ष्य से प्रतीत होता है कि ब॰ सा॰ 1 राम अवतार प्रसाद अग्रवाल और ब॰ सा॰ 4 शांति देवी ने स्वीकार किया कि विवाह के बाद वह हजारीबाग में अपने ससुराल में दिनांक 12.12.1990 से दिनांक 5.4.1991 अर्थात् 4 माह से भी कम रही थी। उसने अभिकथन किया कि इस अवधि के दौरान उसके प्रति उसके ससुराल वालों का व्यवहार अच्छा नहीं था और वे स्कूटर मांगा करते थे और उसके गहनों को लाने के लिए अपने पिता को पत्र लिखने के लिए कहा करते थे। ब॰ सा॰ 4 के अनुसार गहनों को उसके भाई द्वारा हजारीबाग लाया गया था। उसने कथन किया है कि दिनांक 5.4.1991 को राँची आने के बाद, बाद में, उसने अपने पति और ससुराल वालों के विरुद्ध धारा 498A भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन यातना का मामला दाखिल किया था। उसके पिता ने भी कथन किया है कि वादी के पिता ने गहनों को भेजने के लिए उसकी पुत्री के माध्यम से पत्र भेजा था जिसे उसने अपने पुत्र के माध्यम से भेज दिया था। ब॰ सा॰ 4 ने यह कथन भी किया कि चार माह के दौरान उसके ससुराल वालों का व्यवहार अच्छा नहीं था और इसलिए उसने दिनांक 5.4.1991 को अपने पिता के मित्र बैजनाथ पांडे और अपने भाई के साथ अपना दांपत्यगृह छोड़ दिया और कभी वापस नहीं गयी।

20. उक्त मूल्यांकन की दृष्टि में, अब मैं अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए तर्कों पर आता हूँ कि विद्वान विचारण न्यायालय ने क्रूरता के आधार पर तलाक की डिक्री गलत रूप से प्रदान किया है क्योंकि, यद्यपि क्रूरता को परिभाषित नहीं किया गया है, फिर भी इसे पक्षों के आचरण से एकत्रित किया जा सकता है। वादी ने अभिकथन किया कि दिनांक 5.4.1991 को प्रतिवादी-पत्नी को किसी बैजनाथ पांडे और उसके भाई द्वारा बलपूर्वक उसके ससुराल वालों के घर से ले जाया गया था और उन्होंने एक वचन दिया था कि उसकी माता की तबीयत ठीक हो जाने के बाद उसे हजारीबाग वापस भेज दिया जाएगा और यह वायदा पूरा नहीं किया गया था। इस संदर्भ में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि किसी तीसरे व्यक्ति द्वारा किए गए वादा को अपीलार्थी-प्रतिवादी पर बाध्यकारी नहीं माना जा सकता है और उसने इंकार किया है कि उसने अपनी सास को डायन कहकर उसे यातना दी थी और घर लौटने से इंकार किया था। इस प्रकार, क्रूरता सिद्ध नहीं की गयी है और प्रदत्त डिक्री विधि में दोषपूर्ण है और अपास्त किए जाने योग्य है।

21. ऊपर चर्चा किए गए साक्ष्यों से प्रतीत होगा कि प्रतिवादी ने स्वयं स्वीकार किया कि दिनांक 5.4.1991 के बाद वह ससुराल कभी नहीं गयी। यह भी स्वीकार किया गया है कि दिनांक 5.4.1991

को उसके पति और उसके ससुर उसे राँची वापस भेजने के लिए तैयार नहीं थे किन्तु उक्त बैजनाथ पांडे ने उसके पिता द्वारा लिखा गया एक पत्र लाया जिसे उसने अपने साक्ष्य में स्वीकार किया और जिसे वादी द्वारा सिद्ध भी किया गया था जिसमें उसके पिता ने कथन किया है कि यदि उसे राँची वापस नहीं भेजा जाएगा, तब उन्हें गंभीर परिणामों का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए। तत्पश्चात् उक्त बैजनाथ पांडे से एक वचन बंध लेकर, जिसे प्रदर्श 1/B के रूप में सिद्ध किया गया है, प्रतिवादी को राँची जाने की अनुमति दी गयी और यह स्वीकार किया गया है कि वह कभी वापस नहीं आयी। यद्यपि प्रतिवादी और उसके गवाहों ने इंकार किया है कि उन्होंने वादी की माता को डायन कहा था और दिनांक 20.6.1991 को वे हजारीबाग आए थे और प्रतिवादी के पिता राम अवतार प्रसाद अग्रवाल अन्य के साथ वादी के घर में बलपूर्वक घुसे थे और उसे बलपूर्वक राँची ले जाने के लिए वादी की माता को घसीटा था, क्योंकि वह एक डायन थी, जिस पर उन्हें मुहल्लावालों द्वारा रोका गया था जिसके लिए मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग के समक्ष परिवाद मामला भी दर्ज किया गया था किन्तु ब॰ सा॰ 1 और ब॰ सा॰ 4 दोनों ने स्वीकार किया है कि हजारीबाग न्यायालय द्वारा उन्हें दोषी पाया गया था और फटकार के बाद उन्हें छोड़ दिया गया था। मामला के उस दृष्टिकोण में, इंकार के बावजूद, यह स्वीकार किया गया है कि परिवाद मामला में उन्हें दोषी पाया गया था। यद्यपि अधिनियम में क्रूरता को परिभाषित नहीं किया गया है, किन्तु माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने अनेक निर्णयों में क्रूरता को परिभाषित किया है। **''ए॰ जयचन्द्र बनाम अनिल कौर, 2005 (2) SCC Page 22"** में प्रकाशित मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि **''अभिव्यक्ति क्रूरता हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 में परिभाषित नहीं की गयी है। उक्त अभिव्यक्ति मानवीय आचरण अथवा मानव व्यवहार के संबंध में प्रयुक्त की गयी है। यह वैवाहिक कर्तव्यों और बाध्यताओं के संबंध में आचरण है। क्रूरता किसी एक का आचरण अथवा course है जो अन्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहा है। इसे ऐसे चरित्र का जानबूझ कर किया गया और अन्यायोचित आचरण है जो जीवन, अंग, अथवा शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य को खतरा कारित करे, के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।''** आगे **नवीन कोहली बनाम नीलू कोहली, 2006 (4) SCC Page 558** में प्रकाशित मामले में पैरा 51 में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि **''मानसिक क्रूरता किसी पक्ष द्वारा तब कारित की जा सकती है जब पति/पत्नी यह अभिकथन लगाता है कि याची मानसिक रोगी है, अथवा कि उसे अपना मानसिक स्वास्थ्य पुनर्स्थापित करने हेतु मनोविज्ञान विशेषज्ञ के उपचार की आवश्यकता है, कि वह संविभ्रमी रोग और मानसिक मतिभ्रम से पीड़ित है, और इन सबके ऊपर यह अभिकथन करना कि वह और उसके परिवार के सभी सदस्यगण पागलों का एक झुंड है। यह अभिकथन कि याची के परिवार के सदस्यगण पागल है अथवा पागलपन का आभास समस्त परिवार में है, भी मानसिक क्रूरता का एक कृत्य है।''** माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 52 में अभिनिर्धारित किया कि झूठे अभिकथन पर पति के विरुद्ध पत्नी द्वारा दाखिल दांडिक मामला भी क्रूरता का निष्कर्ष देने के लिए पर्याप्त है और उस आधार पर उच्च न्यायालय का निष्कर्ष अपास्त कर दिया गया था।

22. अत: सर्वोच्च न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णय से स्पष्ट है कि विचारण न्यायालय ने सही पाया कि पति द्वारा यातना दिए जाने का झूठा अभिकथन प्रतिवादी-पत्नी द्वारा किया गया था किन्तु वे इसे सिद्ध करने में विफल रहे और धारा 498A भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन दाखिल मामला भी विफल हो गया और यातना, दहेज मांग का झूठा अभिकथन भी पति के विरुद्ध क्रूरता है। यह नोट करना भी महत्वपूर्ण है कि अपने ससुराल में प्रतिवादी अपने पति के साथ केवल चार माह रही और वह वहाँ रहने और अपनी शिक्षा जारी रखने के लिए तैयार नहीं थी और राँची आने के लिए तुली हुई थी और जब उसके ससुरालवालों ने उसे हजारीबाग में अपनी शिक्षा जारी रखने को कहा, तब अंतत: उसके पिता ने धमकी भरे पत्र, जिसे प्रदर्श 1/A के रूप में चिन्हित किया गया है, के साथ अज्ञात व्यक्ति बैजनाथ पांडे और अपने पुत्र को भेजा

जिसने वादी को उसे राँची जाने की अनुमति देने के लिए मजबूर किया और तत्पश्चात् वह कभी वापस नहीं गयी और इस अभिकथन के साथ उसका उक्त कृत्य कि उसकी सास डायन है, जैसा अभिकथन उसके पिता द्वारा भी किया गया था, इसे अ॰ सा॰ 1 मोनिका राय के साक्ष्य द्वारा सिद्ध किया गया है, भी क्रूरता है और मेरे मत में क्रूरता के आधार पर विचारण न्यायालय ने विवाह को सही विघटित किया है।

23. इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि प्रत्यर्थी-पति अनिल कुमार अग्रवाल ने इस अपील के लंबित रहने के दौरान एक अन्य स्त्री से विवाह कर लिया है और वह **2002 (2) SCC Page 73 में प्रकाशित सावित्रि पांडे बनाम प्रेमचन्द पांडे** मामले में दिए गए निर्णय पर विश्वास करते हैं जहाँ माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कथन किया है कि जब अपील के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी-पत्नी पुनर्विवाह कर लेती है, उक्त विवाह अपील में निर्णय के अधीन होगा। उसके उत्तर में प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि दिनांक 7 सितम्बर, 1998 को डिक्री पारित किए जाने के बाद वादी ने अपील दाखिल करने की अवधि तक प्रतीक्षा किया और दिनांक 15.10.1998 को उच्च न्यायालय में सूचना याचिका दाखिल किया और उसे सूचना दी गयी थी कि कोई अपील दाखिल नहीं की गयी है, तब उसने पुन: दिनांक 23.2.1999 को सूचना याचिका दाखिल किया जिस तिथि पर भी उसे सूचित किया गया था कि कोई अपील दाखिल नहीं की गयी है और जब अपील दाखिल किए जाने की अवधि का अवसान हो गया, तब उसने मार्च 1999 में पुनर्विवाह कर लिया। यह अपीलार्थी का स्वीकृत मामला है कि जब दिनांक 26.2.1999 को अपील दाखिल किए जाने की अवधि का अवसान हो गया, तब उसने विलम्ब माफ करने की याचिका के साथ अपील दाखिल किया और इस प्रकार समय पर कोई अपील दाखिल नहीं किया गया था। इसके अतिरिक्त, वर्तमान मामले में, चूँकि अभित्यजन के आधार पर भी डिक्री प्रदान की गयी है, यह स्वीकृत मामला है कि अभित्यजन के आधार पर तलाक प्रदान किए जाने की प्रार्थना वादी द्वारा की गयी थी, अत: संशोधन याचिका दाखिल की गयी थी जब दो वर्षों से अधिक बीत चुका था और पत्नी अपने दाम्पत्य गृह नहीं लौटी थी। प्रतिवादी द्वारा याचिका का प्रतिवाद किया गया था और अंतत: संशोधन अनुज्ञात किया गया था और चूँकि वाद के लंबित रहने के दौरान दो वर्ष से अधिक बीत चुका था और प्रतिवादी अपने दाम्पत्य गृह जाने में विफल रही और चूँकि कोई अपील अथवा पुनरीक्षण दाखिल नहीं किया गया था, अत: आदेश अंतिम हो गया था और संशोधन की तिथि से यह माना जाएगा कि धारा 13(i)(b) के अधीन अभित्यजन के आधार पर तलाक प्रदान करने के लिए एक नयी याचिका दाखिल की गयी थी।

24. मैं ऊपर चर्चा किए गए साक्ष्य से पाता हूँ कि प्रतिवादी अथवा उसके परिवार के सदस्यों की ओर से प्रतिवादी को उसके दाम्पत्य गृह भेजने और उसका वैवाहिक जीवन दोबारा शुरू करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया था। मामले के उस दृष्टिकोण में, मैं पाता हूँ कि दिनांक 5.4.1991 से किसी न्यायोचित कारण के बिना पत्नी-अपीलार्थी की ओर से जानबूझकर किया गया अभित्यजन है और अभित्यजन के आधार पर भी वादी तलाक का हकदार है। मैं विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय में कोई अवैधता नहीं पाता हूँ।

25. किन्तु, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने अंत में तर्क किया है कि तलाक की डिक्री पारित करते हुए पत्नी को स्थायी निर्वाह-व्यय प्रदान नहीं किया गया था। ऐसे आदेश को पारित करना न्यायालय का कर्तव्य था ताकि तलाक की डिक्री पारित करते हुए स्थायी निर्वाह-व्यय प्रदान किया जा सके।

26. जैसा ऊपर कहा गया है, चूँकि वादी हजारीबाग में व्यवसायी है और यह स्वीकार किया गया है कि वह कृषि औषधियों और बीजों का व्यापार करता है और उसने दूसरा विवाह भी कर लिया है, अत: न्याय के हित में, अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह का विघटन स्वीकार करते हुए, मैं इस आदेश की तिथि से तीन माह के भीतर स्थायी निर्वाह व्यय के तौर पर अपीलार्थी को पाँच लाख रुपया भुगतान करने का निर्देश प्रत्यर्थी-पति अनिल कुमार अग्रवाल को देता हूँ। विचारण न्यायालय, जहाँ अनुबंधित

अवधि के भीतर प्रत्यर्थी को उक्त राशि जमा करना होगा, से उक्त राशि वापस लेने के लिए अपीलार्थी को छूट होगी। यदि अनुबंधित अवधि के भीतर ऊपर उपदर्शित राशि का भुगतान करने में प्रत्यर्थी विफल होता है, प्रत्यर्थी-पति को प्रदान की गयी तलाक की डिक्री खारिज हो जाएगी।

27. तद्नुसार, अपील पूर्वोक्त निर्देश के साथ खारिज की जाती है और पक्षों को अपना-अपना व्यय वहन करने का निर्देश दिया जाता है।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

जगदीश चन्द कपूर एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 771 of 2007. Decided on 9th August, 2010.

भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धाराएँ 406, 420, एवं 120-B—दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—आपराधिक न्यास भंग, छल एवं षड़यंत्र—संज्ञान—सम्पूर्ण भुगतान प्राप्त करने के उपरांत भी याचीगण ने परिवादी के पक्ष में वाहन के स्वामित्व के स्थानान्तरण के लिए 'नो ड्यूज प्रमाणपत्र' जारी करने से अभिकथित तौर पर इनकार किया—पक्षों के बीच उठाया गया विवाद कि क्या ऋण राशि पूरा-पूरा लौटाया गया है या नहीं विचारण या जाँच के अनुक्रम में यथोचित न्यायालय द्वारा विचारण की विषय वस्तु है—मात्र 'अनापत्ति प्रमाणपत्र' का निर्गतिकरण न किए जाने के कारण भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 406 या धारा 420 के अवयव आकर्षित नहीं होते हैं—यह वित्तदाता और परिवादी के बीच वाणिज्यिक संव्यवहार है—आक्षेपित आदेश अपास्त। (पैराएँ 4, 7 से 9)

अधिवक्तागण.—M/s R. K. Prasad, A. Kumar, Y. Modi, For the Petitioners; A.P.P., For the State; None, For the O.P. No. 2.

आदेश

विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 पर नोटिस तामील किए जाने के बावजूद, वह न तो व्यक्तिगत रूप से और न हीं अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित हुआ है और इसलिए यह मामला ग्रहण के चरण पर निपटाने के लिए लिया जाता है।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

3. याचीगण ने इस आवेदन में परिवाद केस सं॰ 27 वर्ष 2006 में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, कोडरमा द्वारा पारित दिनांक 17.4.2006 के आक्षेपित आदेश को चुनौती दी है जिसके द्वारा याचीगण के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराएँ 406, 420 और 120B के अधीन अपराधों का संज्ञान लिया गया था और विचारण का सामना करने हेतु उन्हें समन किया गया था।

याचीगण ने सत्र न्यायाधीश के दिनांक 20.4.2007 के आक्षेपित आदेश को भी चुनौती दी है जिसके द्वारा सत्र न्यायालय ने याचीगण द्वारा सी॰ जे॰ एम॰ द्वारा पारित संज्ञान के आक्षेपित आदेश के विरुद्ध दाण्डिक पुनरीक्षण आवेदन सं॰ 27 वर्ष 2006 को खारिज कर दिया था।

4. इस मामला को निपटाने के लिए मामले के प्रासंगिक तथ्य संक्षेप में निम्नलिखित है:

विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 ने मारुति कार खरीदने के लिए याचीगण, जो वित्त प्रदान करनेवाली कम्पनी चलाते है, से कर्ज के रूप में वित्तीय सहायता प्राप्त की थी। करार के निबंधनों के मुताबिक परिवादी/विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 ने वाहन के लागत के समानुपात में मार्जिन धनराशि निक्षेपित की थी। तत्पश्चात्, याची ने विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 को 2,37,000/- रुपयों का कर्ज दिया था और वित्त के आधार पर विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने कार खरीदा था। करार के निबंधनों के मुताबिक, कार को वित्तदाता के साथ आडमान (hypothecation) किया था और करार के निबंधनों के अधीन, लेनदार को 29 बराबर मासिक किस्त में कर्ज अदा करना था।

परिवादी का अभिकथन है कि उसने कर्ज की पूरी राशि का भुगतान कर दिया था और तत्पश्चात वित्तदाता से वाहन का स्वामित्व अपने नाम पर अंतरित कराने में सक्षम होने के लिए 'नो ड्यूज प्रमाण पत्र' मांगा था किन्तु सारा भुगतान पाने के बाद भी परिवादी के पक्ष में वाहन का स्वामित्व अंतरित करने के लिए 'नोड्यूज प्रमाण पत्र' जारी करने से याचीगण ने गैर-कानूनी रूप से से इंकार कर दिया था। परिवादी के अनुसार यह भा॰ दं॰ सं॰ की धाराएँ 406 और 420 के अधीन अपराध गठित करता है।

आगे यह प्रतीत होता है कि जाँच के क्रम में परिवादी और एस॰ ए॰ पर दर्ज उसके गवाहों के बयानों और परिवाद याचिका में अंतर्विष्ट प्रकथनों के आधार पर, विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी याचीगण के विरुद्ध पूर्वोल्लिखित अपराधों का संज्ञान लेने हेतु अग्रसर हुए। संज्ञान के आक्षेपित आदेश के विरुद्ध याचीगण द्वारा दाखिल पुनरीक्षण आवेदन सत्र न्यायालय द्वारा इस आधार पर खारिज कर दिया गया था कि विद्वान सी॰ जे॰ एम॰ के आक्षेपित आदेश में अवैधता या दुर्बलता नहीं है।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता तर्क देते हैं कि संज्ञान का आक्षेपित आदेश पूर्णत: भ्रामक है और प्रकटत: मामले के तथ्यों पर न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना यांत्रिक रूप से पारित किया था। विद्वान अधिवक्ता तर्क देते हैं कि जैसा परिवादी द्वारा स्वीकार भी किया गया है, परिवादी ने वित्तदाता से कर्ज प्राप्त किया था और वह कर्ज उसके द्वारा 29 समान मासिक किस्तों में भुगतान किया जाना था परन्तु नौ किस्तों के भुगतान के बाद परिवादी वित्तदाता को आगे कोई राशि देने में विफल रहा। विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि परिवादी ने आशयपूर्वक तात्विक तथ्यों को दबाया है और परिवाद याचिका और एस॰ ए॰ पर दर्ज बयानों में भी झूठा और भ्रामक बयान दिया है और यह तथ्य छुपाया है कि वह कर्ज की पूरी राशि का भुगतान करने में विफल रहा था।

विद्वान अधिवक्ता इस संदर्भ में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 202 के अधीन जाँच के क्रम में एस॰ ए॰ पर दंडाधिकारी द्वारा दर्ज परिवादी और उसके गवाहों के बयानों को निर्दिष्ट करते हैं और निवेदन करते हैं कि परिवादी के बयानों से भी पता लगेगा कि उसके द्वारा प्रस्तुत दस्तावेज भी प्रकट करता था कि उसने मूलधन और सूद सहित 2,03,900/-रुपयों की बकाया राशि का भुगतान नहीं किया था और आगे कि उसने केवल आठ मनी रसीदें को प्रस्तुत किया था जिन्हें मासिक किस्त पर पाए जाने पर उसको जारी किया गया था और उसने आगे यह सम्पुष्ट करने के लिए कोई रसीद प्रस्तुत नहीं किया कि उसने बैलेन्स की सारी राशि का भुगतान कर दिया था।

विद्वान अधिवक्ता आगे तर्क करते हैं कि अन्यथा भी, यह तथ्य मात्र कि परिवादी के नाम पर वाहन का स्वामित्व अंतरित करने हेतु सक्षम बनाने के लिए याचीगण ने 'नो ड्यूज प्रमाण पत्र' जारी नहीं किया था, स्वयं में भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 406 अथवा धारा 420 के अधीन अपराध गठित नहीं करेगा।

6. दूसरी ओर, सत्र न्यायाधीश, के आक्षेपित आदेश को निर्दिष्ट करते हुए राज्य के विद्वान अधिवक्ता तर्क दिएं कि दांडिक दायित्व आकृष्ट करने से संबंधित मामले के तथ्यों पर विद्वान सत्र न्यायाधीश ने विचार किया था भले ही तथ्यों ने प्रकट किया कि सिविल विवाद बनता है और याचीगण द्वारा दाखिल अनेक निर्णयों को सुभिन्न करने के बाद अभिनिर्धारित किया है कि दंडाधिकारी द्वारा पारित संज्ञान का आक्षेपित आदेश अवैधता या दुर्बलता से पीड़ित नहीं था।

7. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और मैंने परिवाद याचिका में अभिकथनों, एस॰ ए॰ पर दर्ज परिवादी और उसके गवाहों के बयानों और दंडाधिकारी एवं सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेशों सहित अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का परिशीलन किया है।

8. स्वीकृत तथ्यों से यह प्रकट है कि परिवादी ने याचीगण-वित्तदाताओं से रकम उधार लिया था और 29 बराबर मासिक किस्तों में इस धन का भुगतान किया जाना था। यह परिवादी और वित्तदाता के बीच अनन्यत: व्यवसायिक संव्यवहार था। स्वीकृत तौर पर कर्ज राशि प्राप्त करने के बाद परिवादी ने गाड़ी खरीदी थी और इसके खरीदे जाने की तिथि से वाहन परिवादी के कब्जा, उपयोग और अधिभोग में था भले ही इसे वित्तदाता के पक्ष में आडमान किया गया था। पक्षों के बीच उठाया गया विवाद कि क्या पूरी कर्ज राशि चुका दी गयी है या नहीं, निसंदेह विचारण अथवा जाँच के क्रम में समुचित न्यायालय द्वारा विचार किया जानेवाला मामला था किन्तु ऐसा विवाद, मेरे मत में, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 406 या धारा 420 के घटकों को आमंत्रित नहीं करता है। स्वीकृतरूप से, याचीगण को कोई संपत्ति न्यस्त नहीं की गयी थी और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि उन्होंने केवल नोड्यूज प्रमाण पत्र नहीं देने के कारण न्यास का भंग किया है। इसी प्रकार, कोई ऐसा घटक प्रतीत नहीं होता है जो भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन अपराध गठित करता हो क्योंकि कोई अभिकथन नहीं है कि उनको कोई संपत्ति सौंपने के लिए परिवादी को याचीगण द्वारा बेईमानी से प्रेरित किया गया था।

अवर न्यायालयों के आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि न तो दंडाधिकारी और न ही सत्र न्यायाधीश ने परिवादी के मामला के प्रासंगिक पहलूओं पर विचार किया है और न ही पाया है कि परिवाद में किए गए अभिकथनों के आधार पर भी क्या याचीगण के विरुद्ध कोई दांडिक मामला बनता है।

9. मामले के इस दृष्टिकोण में, मैं पाता हूँ कि आक्षेपित आदेश अवैधता और अनौचित्यता से पीड़ित है और इन्हें विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। ऊपर उल्लिखित कारणों से और इस आवेदन में गुणागुण पाते हुए इसे अनुज्ञात किया जाता है। परिवाद केस सं॰ 27 वर्ष 2006 में मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, कोडरमा द्वारा पारित दिनांक 17.4.2006 का आक्षेपित आदेश और दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 27 वर्ष 2006 में अपर सत्र न्यायाधीश (एफ॰ टी॰ सी॰) कोडरमा द्वारा पारित दिनांक 20.4.2007 का आक्षेपित आदेश भी एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है और आक्षेपित आदेशों के अनुसरण में अवर न्यायालय के समक्ष लंबित समस्त दांडिक कार्यवाही को एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

माननीय रमेश कुमार मेराठिया, न्यायमूर्ति

श्रीमती चंद्रकला शर्मा

बनाम

बैंक ऑफ इंडिया

W.P. (C) No. 6318 of 2008. Decided on 11th August, 2010.

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण एवं पुनर्निर्माण एवं प्रतिभूति हितों का प्रवर्तन अधिनियम, 2002—धारा 13(2)—गारंटीदाता के विरूद्ध कार्रवाई—यह निर्णय करना बैंक का कार्य है कि प्रधान ऋणतादा या गारंटर का कौन सा सुरक्षित सम्पत्ति पर बकायों की वसूली के लिए कार्यवाही करनी चाहिए—प्रधान ऋणी एवं गारंटर के दायित्व समान विस्तार वाले हैं–प्रधान ऋणदाता और साथ ही गारंटर-याची के विरूद्ध भी साथ ही साथ कार्यवाही करने में बैंक पूर्णतः न्यायोचित है—निर्णय बैंक को लेना है किस सम्पत्ति से जो बंधक में रखा गया था, इसे बकायों की वसूली करने का प्रयास करना चाहिए—केवल बैंक के साथ प्रधान ऋणदाता के खाता को ही NAP के तौर पर घोषित किए जाने योग्य है न कि गारंटर का खाता—धारा 13(2) के अधीन उचित रूप से ही याची को नोटिस निर्गत किया गया—याचिका खारिज।

(पैराएँ 5 से 7)

निर्णयज विधि.–(2004) 4 SCC 311—Distinguished.

अधिवक्तागण.–Mr. Sumit Gadodia, For the Petitioner; Mr. Gyanendra Kumar, For the Respondent.

आदेश

पक्षों को सुना गया।

2. याची की मुख्य शिकायत यह है कि मुख्य लेनदार के विरुद्ध कार्रवाई किए बिना, जो अपना व्यवसाय कर रहा है और बैंक कर्ज के समापन हेतु पर्याप्त साधन रखता है, प्रत्यर्थी बैंक वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण तथा पुनर्निमाण एवं प्रतिभूति हितों का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (संक्षेप में SARFAESI अधिनियम) के अधीन याची के विरुद्ध कार्यवाही कर रहा है।

3. यह प्रतीत होता है कि मुख्य लेनदार मेसर्स सिलिकॉन इंडिया ने प्रत्यर्थी बैंक से 30 लाख रुपयों तक की उधार सुविधा प्राप्त किया जिसके लिए याची सारे आवश्यक दस्तावेजों के निष्पादन के बाद दिनांक 30.12.2006 को गारंटर बना। चूँकि मुख्य लेनदार उधार सुविधा के निबंधनों एवं शर्तों का अनुपालन करने में और देयों का पुनर्भुगतान करने में विफल रहा, बैंक ने दिनांक 30.11.2007 को मुख्य लेनदार का खाता नॉन परफार्मिंग ऐसेट (संक्षेप में एन॰ पी॰ ए॰) के रूप में वर्गीकृत किया और तद्नुसार मुख्य लेनदार और याची के विरुद्ध साथ-साथ SARFAESI अधिनियम की धारा 13(2) के अधीन दिनांक 30.8.2008 को डिमान्ड नोटिस जारी किया। आगे प्रतीत होता है कि मुख्य लेनदार ने कम्प्यूटर, लैपटॉप, डिजिटल कैमरा और इसके accessories और peripherals, आदि के स्टॉक को आडमान (hypothecate) किया जबकि याची ने गारंटी के विरुद्ध प्रतिभूति के रूप में संपत्ति दी।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता, श्री सुमित गदोदिया ने निवेदन किया कि बैंक मुख्य लेनदार के विरुद्ध कार्यवाही नहीं कर रहा है और इसे याची जो गारन्टर है, के विरुद्ध केवल तभी अग्रसर होना चाहिए जब मुख्य लेनदार के विरुद्ध कार्यवाही के बाद भी बैंक के देय का भुगतान नहीं होता है। वह आगे निवेदन करते हैं कि याची के खाता को नॉन परफॉरर्मिंग ऐसेट घोषित नहीं किया गया और इसलिए SARFAESI अधिनियम की धारा 13 (2) के निबंधनों के अनुसार उसको नोटिस जारी नहीं किया जा सकता था। उन्होंने

यह निवेदन भी किया कि धारा 13 (2) के अधीन उक्त नोटिस पाने पर याची ने दिनांक 24.11.1985 को रजिस्टर्ड डाक द्वारा अभ्यावेदन दिया किन्तु इसको निपटाए बिना बैंक याची के विरुद्ध कार्यवाही कर रहा है।

5. दूसरी ओर, बैंक के विद्वान अधिवक्ता, श्री ज्ञानेन्द्र कुमार ने निवेदन किया कि मुख्य लेनदार और गारंटर का दायित्व समान विस्तार का है। बैंक मुख्य लेनदार और याची के विरुद्ध साथ-साथ अग्रसर हुआ। यह बैंक को निर्णय करना है कि मुख्य लेनदार अथवा गारन्टर के किस सुरक्षित संपत्ति के विरुद्ध अपने देयों को प्राप्त करने के लिए अग्रसर हो। इस मामला में, बैंक ने याची की बंधक संपत्ति के विरुद्ध अग्रसर होना समुचित समझा क्योंकि मुख्य लेनदार द्वारा बंधक की गयी संपत्तियाँ अपर्याप्त है। परिणामों की पूरी जानकारी के बाद ही याची गारन्टर बना था। उन्होंने आगे निवेदन किया कि याची ने अभ्यावेदन दिए जाने की झूठी कहानी के साथ यह रिट याचिका का दाखिल किया है। उन्होंने बैंक की ओर से दिए गए बयान को कि ऐसा कोई अभ्यावेदन प्राप्त नहीं किया गया था, और डाक रसीद को निर्दिष्ट किया। अत: उन्होंने निवेदन किया कि इस रिट याचिका को व्यय के साथ खारिज कर देना चाहिए।

6. पक्षों को सुनने के बाद, मैं संतुष्ट हूँ कि हस्तक्षेप के लिए याची द्वारा कोई मामला बनाया नहीं गया है। यह विधि की सुनिश्चित स्थिति है कि मुख्य लेनदार और गारन्टर का दायित्व समान विस्तार का है। मुख्य लेनदार और गारन्टर याची के भी विरुद्ध साथ-साथ अग्रसर होने में बैंक पूरी तरह न्यायोचित है। यह बैंक को निर्णय करना है कि किस बंधक संपत्ति से वह अपने देयों को बसूलने का प्रयत्न करें। इसके अतिरिक्त SARFAESI अधिनियम की धारा 13 (2) के निबंधनों के अनुसार याची के विरुद्ध नोटिस सही जारी किया गया है। केवल बैंक के साथ मुख्य लेनदार का खाता एन॰ पी॰ ए॰ के रूप में घोषित करना अपेक्षित है, न कि गारन्टर का खाता। आगे प्रतीत होता है कि याची ने केवल इस रिट याचिका को दाखिल करने और मामला में देरी करने के उद्देश्य से मामला बनाने का प्रयास किया है कि उसने अभ्यावेदन दिया है। तात्पर्यित डाक रसीद पर कोई सील अथवा तिथि नहीं है। बैंक ने पक्के तौर पर कहा है, कि इसने कोई ऐसा अभ्यावेदन प्राप्त नहीं किया है। इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में **मारडिया केमिकल्स लि॰ बनाम भारत संघ, (2004)4 SCC 311** में प्रकाशित मामला में निर्णय याची की सहायक नहीं है।

7. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में, मैं इस रिट याचिका में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ जिसे तद्नुसार खारिज किया जाता है।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

हरि शंकर पांडे

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 51 of 2007. Decided on 26th July, 2010.

(क) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 190 एवं 482—भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धाराएँ 302 एवं 201/34—हत्या—जहर द्वारा मृत्यु—संज्ञान—दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 190 के प्रावधान दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराएँ 200 एवं 202 के अधीन अधिकथित प्रक्रिया पर आश्रित नहीं है—मजिस्ट्रेट अन्वेषण अधिकारी की राय से बाध्य नहीं है एवं वह पुलिस की रिपोर्ट में इसके द्वारा

अभिव्यक्त दृष्टिकोण से निरपेक्ष रहते हुए अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने एवं यह निर्णय करने को स्वतंत्र है कि क्या अपराध निर्मित हुआ है या नहीं—यद्यपि याची एवं कुछ अन्य का नाम पुलिस रिपोर्ट में वर्णित था फिर भी अभियुक्त व्यक्तियों में से किसी के विरूद्ध अपराध के लिए विचारण की अनुशंसा करते हुए कोई आरोप-पत्र प्रस्तुत नहीं किया गया था—पुलिस अधिकारी की राय स्वीकार न करने में और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 190(1)(b) के तहत शक्तियों का प्रयोग करने में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने की कार्यवाही करने में मजिस्ट्रेट त्रुटि पर नहीं हो सकते हैं—लेकिन, याची प्राथमिकी में नामजद नहीं है—याची का नाम केवल केस डायरी में प्रकटित है—किसी भी स्रोत से यह इंगित करने का साक्ष्य नहीं कि या तो याची को अंतिम बार मृतक के साथ देखा गया था या यह कि याची ने किसी अन्य अभियुक्तों को मृतक को घर से लाने हेतु भेजा था—मजिस्ट्रेट ने इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग नहीं किया था कि याची के विरूद्ध कार्यवाही करने के पर्याप्त आधार है—आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 10 से 13 एवं 15, 16)

(ख) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अंतर्गत उच्च न्यायालय द्वारा धारित शक्तियों का प्रयोग काफी सावधानी एवं काफी सतर्कता के साथ किया जाना चाहिए ताकि एक विधिसम्मत अभियोजन बाधित न हो–लेकिन, जहाँ उच्च न्यायालय को यकीन है कि प्राथमिकी या परिवाद में लगाये गए आरोप या पुलिस रिपोर्ट में उपलब्ध सामग्री अगर इन्हें प्रकट मूल्य पर लिया जाए एवं सम्पूर्णता में स्वीकार किया जाय, तो भी ये कोई अपराध गठित नहीं करते हैं या अभियुक्त के विरूद्ध कोई केस निर्मित नहीं करते हैं, तो दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय की शक्तियों का प्रयोग किया जाना चाहिए। (पैरा 14)

निर्णयज विधि.–2000(4) Crimes 158 (SC); Cr. M.P. No. 886 of 2008—Distinguished; (2008)17 SCC 157—Relied upon.

अधिवक्तागण.–M/s A. K. Kashyap, Lina Shakti, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Devesh Krishna, For the Opposite Party No.2.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याचीगण ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन इस आवेदन में रंका पी॰ एस॰ केस सं॰ 88 वर्ष 2002 से उद्भूत जी॰ आर॰ केस सं॰ 923 वर्ष 2002 में मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, गढ़वा द्वारा पारित दिनांक 11.7.2006 के संज्ञान के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना की है जिसके द्वारा भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 और 201/34 के अधीन अपराधों का संज्ञान लेने के बाद याची को विचारण का सामना करने हेतु समन किया गया है।

3. इस आवेदन के निपटारे के लिए प्रासंगिक घटना का संक्षिप्त ब्योरा निम्नलिखित है:–

इस अभिकथन पर कि सूचक के पुत्र राजेश का अपहरण कुछ अज्ञात व्यक्तियों द्वारा किया गया था, दिनांक 29.11.2002 को पुलिस थाना में प्राथमिकी दर्ज की गयी थी जिसे भा० दं० सं० की धारा 364 के अधीन अपराध के लिए दर्ज किया गया था। यद्यपि प्राथमिकी अज्ञात लोगों के विरुद्ध दर्ज की गयी थी किन्तु इस बयान पर कि दिनांक 28.11.2002 के रात में पीड़ित और उक्त हनुमन्त बाबू के बीच झगड़ा हुआ था, किसी

हनुमन्त बाबू को प्राथमिकी में नामित किया गया था। तीन और व्यक्तियों अर्थात् चप्पू राम, अनवर और वर्तमान याची को भी यह कथन करते हुए कि दिनांक 28.11.2002 के रात्रि लगभग 9.30 बजे सूचक के पुत्र को खोजते हुए वे सूचक के घर गए थे, प्राथमिकी में नामित किया गया था।

अन्वेषण के दौरान, मृतक का शव पाया गया था और मृत शरीर पर किए गए शव परीक्षण रिपोर्ट ने उपदर्शित किया कि मृतक की मृत्यु जहर खाने से हुई थी। घटना स्थल से आत्महत्या नोट भी बरामद किया गया था, जहाँ शव पाया गया था।

अन्वेषण समाप्त करने के बाद पुलिस ने यह घोषणा करते हुए कि अभियुक्तगण अर्थात् चप्पू राम उर्फ रवि, अनवारुल हक उर्फ अनवर और हरि शंकर पांडे अर्थात् वर्तमान याची के विरुद्ध अपर्याप्त साक्ष्य थे, अंतिम रिपोर्ट दाखिल किया था।

तत्पश्चात्, सूचक ने यह अभिकथन करते हुए कि अन्वेषण अधिकारी ने अन्वेषण उपनिदेशित किया है यद्यपि अभियुक्तगण के विरुद्ध केस डायरी में पर्याप्त साक्ष्य थे, विरोध याचिका दाखिल किया था।

विरोध याचिका प्राप्त करने पर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने केस डायरी का परिशीलन किया और यह निष्कर्ष निकालते हुए कि पारिस्थितिक साक्ष्य है जो दर्शाते हैं कि अभियुक्तगण द्वारा आशयपूर्वक मृतक को जहर दिया गया था और मृतक के आत्महत्या नोट पर अविश्वास करते हुए और तात्पर्यित पारिस्थितिक साक्ष्य को प्रथम दृष्टया सामग्री के रूप में मानते हुए वर्तमान याची सहित छह अभियुक्तगण के विरुद्ध भा० दं० सं० की धाराओं 302 और 201/34 के अधीन अपराधों का संज्ञान लेने हेतु अग्रसर हुए।

4. संज्ञान के आक्षेपित आदेश की और याची के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही जारी रखने का विरोध करते हुए याची की ओर से तर्क करते हुए विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि केवल अटकलों और अनुमानों के आधार पर और संदेह पर याची के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान लेते हुए विद्वान अवर न्यायालय ने गंभीर गलती की है और विधि के प्रावधानों के विपरीत कार्रवाई की है क्योंकि याची को न तो प्राथमिकी में नामित किया गया है और न ही पुलिस द्वारा संचालित पूरे अन्वेषण ने मृतक की अभिकथित हत्या से याची को जोड़ने के लिए किसी भी अपराध में फँसाने वाले साक्ष्य को प्रकट किया है और न ही किसी भी अपराध के लिए याची का विचारण की अनुशंसा पुलिस ने की है।

विद्वान अधिवक्ता आगे तर्क करते हैं कि अपराध सत्र विचारण योग्य होने के कारण विरोध याचिका, भले ही ऐसी विरोध याचिका परिवाद के रूप में मानी गयी थी, के आधार पर परिवादी का परीक्षण किए बिना अपराधों का संज्ञान लेने के लिए विद्वान दंडाधिकारी अग्रसर नहीं हो सकते थे।

अपने तर्कों को पुख्ता करने के लिए विद्वान अधिवक्ता **किशोरी सिंह एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, 2000 (4) Crimes 158 (SC)** में प्रकाशित मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को और **दां॰ वि॰ सं॰ 886 वर्ष 2008** में **मो॰ मुनीफ उर्फ सरदार मनीफुद्दीन कुरैशी उर्फ मुनीफ कसाई बनाम झारखंड राज्य** मामले में इस न्यायालय के निर्णय को निर्दिष्ट करते हैं।

5. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता याची द्वारा दिए गए समस्त आधारों का खंडन करते हुए और यह घोषणा करते हुए कि पुलिस रिपोर्ट में अंतर्विष्ट अनुशंसाओं से भिन्नता रखना और अपराधों का

संज्ञान लेना, यदि अन्वेषण के क्रम में संग्रह किए गए साक्ष्यों से प्रथम दृष्टया सामग्री उपलब्ध है, दंडाधिकारी की सक्षमता के अंतर्गत था, आक्षेपित आदेश का समर्थन करते हैं।

6. परस्पर विरोधी निवेदनों से विनिश्चय हेतु बिन्दु निम्नलिखित हैं:–

(i) क्या अंतिम रिपोर्ट और विरोध याचिका प्राप्त करने पर सत्र न्यायालय द्वारा अनन्यतः विचारण योग्य किसी मामले में दंडाधिकारी दं० प्र० सं० की धारा 200 और 202 के अधीन प्रावधानित प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना आदेशिका जारी कर सकता है?

(ii) क्या वर्तमान मामले के तथ्यों में और अन्वेषण के क्रम में संग्रहित और केस डायरी में दर्ज साक्ष्य के आधार पर भी अभियुक्त के विरुद्ध अग्रसर होने के लिए पर्याप्त आधार है?

7. दंड प्रक्रिया संहिता अध्याय XIV में धारा 190 के अंतर्गत अपराधों का संज्ञान लेने के लिए दंडाधिकारी में शक्ति निहित करता है और यह कार्यवाही आरंभ करने के लिए अपेक्षित शर्तों को विनिर्दिष्ट करता है। बेहतर अधिमूल्यन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190 नीचे उद्धृत की जाती है:–

*"190. **मजिस्ट्रेटों द्वारा अपराधों का संज्ञान.**–(1) इस अध्याय के उपबंधों के अधीन रहते हुए, कोई प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट और उपधारा (2) के अधीन विशेषतया सशक्त किया गया कोई द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट, किसी भी अपराध का संज्ञान निम्नलिखित दशाओं में कर सकता है:–*

(a) उन तथ्यों का, जिनसे ऐसा अपराध बनता है परिवाद प्राप्त होने पर;

(b) ऐसे तथ्यों के बारे में पुलिस रिपोर्ट पर;

(c) पुलिस अधिकारी से भिन्न किसी व्यक्ति से प्राप्त इस इत्तिला पर या स्वयं अपनी इस जानकारी पर कि ऐसा अपराध किया गया है।

(2) मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट किसी द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट को ऐसे अपराधों का, जिनकी जांच या विचारण करना उसकी क्षमता के अन्दर है, उपधारा (1) के अधीन संज्ञान लेने के लिए सशक्त कर सकता है।"

8. उक्त प्रावधान के कोरे पठन से स्पष्ट है कि यह धारा किसी अन्य प्रावधान के अधीन नहीं है बल्कि स्वतंत्र प्रक्रिया अधिकथित करती है।

संहिता के अध्याय-XV में अंतर्विष्ट दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 200 उस प्रक्रिया को अधिकथित करता है जिसे परिवाद प्राप्त करने पर दंडाधिकारी द्वारा अपनाया जाना अपेक्षित है जबकि धारा 190 के प्रावधान ऐसी समग्र भाषा में लिखे गए है जिसमें यह विधायिका का आशय उपदर्शित करता है कि धारा 190 संहिता की धाराएँ 200 और 202 के प्रावधानों के अधीन नहीं है।

धारा 190 के अधीन, प्रकट किए गए तथ्यों के प्रति अपना विवेक इस्तेमाल करने और न्यायोचित रूप से यह विनिश्चय करने कि क्या किसी अपराध का संज्ञान लिया जाना चाहिए, की छूट दंडाधिकारी को है और यदि वह संतुष्ट है कि परिवादी द्वारा दाखिल की गयी विरोध याचिका यह उपधारित करने के लिए कि प्रथम दृष्टया अपराध प्रकट किए गए है, पर्याप्त सामग्री अंतर्विष्ट करती है; विचारण का सामना करने हेतु अभियुक्तगण को नोटिस जारी कर सकता है।

धारा 190 के प्रावधान केवल अध्याय-XIV के प्रावधानों के अधीन है और यह संहिता की धाराएँ 200 और 202 के अधीन अधिकथित प्रक्रिया पर निर्भर नहीं करता है।

संहिता की धारा 190 के खंड (1) का उपखंड (b) अधिकथित करता है कि दंडाधिकारी किसी अपराध से संबंधित ऐसे तथ्यों के पुलिस रिपोर्ट पर किसी अपराध का संज्ञान ले सकता है।

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) के अधीन पुलिस रिपोर्ट का उद्देश्य स्वयं को संतुष्ट करने के लिए है कि क्या रिपोर्ट और उसमें निर्दिष्ट सामग्रियों के आधार पर संज्ञान का मामला बनता है या नहीं, दंडाधिकारी को सक्षम बनाता है। दंडाधिकारी अन्वेषण अधिकारी के मत से बाध्य नहीं हैं और वह रिपोर्ट में पुलिस द्वारा अभिव्यक्त दृष्टिकोण को ध्यान में लिए बिना अपने स्वविवेक का प्रयोग करने के लिए और यह विनिश्चिय करने के लिए कि अपराध बनता है या नहीं, वह स्वतंत्र है। यह दृष्टिकोण दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190(1)(b) के अधीन दंडाधिकारी की शक्तियों के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय के संप्रेक्षणों से समर्थित होता है जैसा **फखरुद्दीन अहमद बनाम उत्तरांचल राज्य एवं एक अन्य, (2008)17 SCC 157** मामले निर्णय में दर्ज किया गया है।

9. उक्त कारणों से, इस आधार पर कि इसे दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 200 और 202 के प्रावधानों के अनुरुप परिवादी और परिवादी के गवाहों का परीक्षण किए बिना पारित किया गया है, संज्ञान के आक्षेपित आदेश में गलती पाता याची के विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

10. किशोरी सिंह एवं अन्य (ऊपर) और **मो॰ मुनीफ उर्फ सरदार मनीफुद्दीन कुरैशी उर्फ मुनीफ कसाई (ऊपर)** मामलों में याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होंगे। जैसा संप्रेक्षित किया जा सकता है, पूर्वोक्त दोनों मामलों में, प्राथमिकी में नामित अभियुक्तगण में से कुछ के विरुद्ध विचारण की अनुशंसा करते हुए और अन्य अभियुक्तगण के विचारण की अनुशंसा नहीं करते हुए पुलिस द्वारा आरोप पत्र दाखिल किया गया था। ऐसी परिस्थितियों के अधीन न्यायालय ने पूर्वोक्त दोनों मामलों में यह अभिनिर्धारित किया है कि आरोप पत्रित नहीं किए गए व्यक्तियों के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेना गैरकानूनी है और ऐसे व्यक्तियों को केवल दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 319 के अधीन शक्तियों के प्रयोग में ही अभियुक्तगण के रूप में पक्षकार बनाया जा सकता है।

वर्तमान मामले में, प्राथमिकी अज्ञात अपराधियों के विरुद्ध दर्ज की गयी थी और यद्यपि याची और कुछ अन्य का नाम पुलिस रिपोर्ट में उल्लिखित किया गया था किन्तु अभियुक्तगण में से किसी के विरुद्ध अपराधों के विचारण की अनुशंसा करते कोई आरोप पत्र दाखिल नहीं किया गया था। ऐसी परिस्थितियों के अधीन, पुलिस अधिकारी का मत स्वीकार नहीं करने के लिए और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 190 (1) (b) के अधीन शक्तियों के प्रयोग में अपने स्वविवेक का प्रयोग करने हेतु अग्रसर होने के लिए दंडाधिकारी को गलत करार नहीं दिया जा सकता है।

11. दूसरे आधार के संबंध में, भले ही दंडाधिकारी अन्वेषण अधिकारी के मत द्वारा बाध्य नहीं हैं और रिपोर्ट में पुलिस द्वारा अभिव्यक्त दृष्टिकोण को ध्यान में लिए बिना अपने स्वविवेक का प्रयोग करने के लिए सशक्त हैं, प्रासंगिक बिन्दु दंडाधिकारी द्वारा यह विनिश्चित करने के लिए कि अपराध बनाता है या नहीं, स्वविवेक के इस्तेमाल का है। ऐसा करते हुए दंडाधिकारी को यह भी विनिश्चित करना होगा कि प्राथमिकी में अथवा परिवाद में अथवा पुलिस रिपोर्ट में किए गए अभिकथनों, यदि उन्हें उनके प्रकट-मूल्य पर लिया जाता है और संपूर्णता में स्वीकार किया भी जाता है, के आलोक में क्या अभियुक्त के विरुद्ध मामला बनाने के लिए प्रथम दृष्टया सामग्री है और क्या अभियुक्त के विरुद्ध अग्रसर होने के लिए पर्याप्त आधार है।

12. वर्तमान मामला में, याची प्राथमिकी में नामित नहीं है। केस डायरी में याची का नाम इस बयान के साथ सामने आता है कि उसने मृतक से पैसा लिया था। यह वर्तमान याची के संबंध में किया गया एकमात्र बयान प्रतीत होता है। किसी भी स्रोत से कोई साक्ष्य यह उपदर्शित करने के लिए नहीं है कि या तो याची को मृतक के साथ आखिरी बार देखा गया था अथवा मृतक को उसके घर से लाने के लिए याची ने अन्य अभियुक्तगण में से किसी को भेजा था अथवा यह कि उन्होंने याची का नाम उस समय निर्दिष्ट तक किया था जब वे मृतक को खोजते हुए सूचक के घर गए थे। यदि यह कथन किया भी जाता है कि याची ने मृतक से पैसा लिया था, यह उपदर्शित नहीं किया गया है कि ऐसा पैसा मृतक की अभिकथित हत्या के ठीक पहले अथवा किसी पूर्वतर अन्य अवसर पर लिया गया था और न ही यह सुझाने का ऐसा कोई साक्ष्य है कि मृतक और याची के बीच मनमुटाव अथवा पुरानी दुश्मनी थी। यदि एकल बयान कि याची ने मृतक से पैसा लिया था, स्वीकार भी कर लिया जाता है, यह शायद ही हत्या के अपराध के लिए उसकी दोषसिद्धि सुरक्षित करने के उद्देश्य से मृतक की हत्या के साथ याची को जोड़ते हुए कोई फँसाने वाला साक्ष्य, यहाँ तक कि पारिस्थितिक प्रकृति का हो, गठित करता है।

13. विद्वान अवर न्यायालय के आक्षेपित आदेश के परिशीलन से प्रतीत होता है कि भले ही हत्या के अपराध का संज्ञान लेने के लिए दंडाधिकारी ने पर्याप्त सामग्री पाया हो किन्तु इस निष्कर्ष कि याची के विरुद्ध कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है, पर आने के लिए अपने न्यायिक विवेक का इस्तेमाल दंडाधिकारी ने नहीं किया था।

14. यह सुनिश्चित है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग अत्यन्त सावधानीपूर्वक और सतर्कतापूर्वक करना होगा ताकि वैध अभियोजन का दमन नहीं हो। किन्तु जहाँ उच्च न्यायालय आश्वस्त है कि प्राथमिकी अथवा परिवाद में किए गए अभिकथन अथवा पुलिस रिपोर्ट में उपलब्ध सामग्री, यदि उन्हें उनके प्रकट-मूल्य पर लिया जाता है और संपूर्णता में स्वीकार किया जाता है, प्रथम दृष्टया कोई अपराध गठित नहीं करते हैं अथवा अभियुक्त के विरुद्ध मामला नहीं बनाते है, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय की शक्तियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

15. वर्तमान मामले में, अभिलेख पर उपलब्ध समस्त सामग्रियों के परिशीलन के बाद मैं पाता हूँ कि अभियुक्त याची के विरुद्ध कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार नहीं है और इसलिए अभिकथित अपराधों के लिए लंबा विचारण की कठिनाई का सामना करने हेतु उसे मजबूर करना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।

16. उक्त तथ्यों और परिस्थितियों में, आक्षेपित आदेश, जिसके द्वारा याची को विचारण का सामना करने के लिए समन किया गया है, और रंका पी॰ एस॰ केस सं॰ 88 वर्ष 2002 से उद्भूत जी॰ आर॰ केस सं॰ 923 वर्ष 2002 में संज्ञान के आदेश के अनुसरण में याची हरिशंकर पांडे के विरुद्ध लंबित समस्त दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

माननीय डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्ति

अशरफ अंसारी एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. Appeal No. 159 of 2001. Decided on 23rd. July, 2010.

एस॰ टी॰ सं॰ 62 वर्ष 1996 में पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, डालटेनगंज, पलामू द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 30.4.2001 और 1.5.2001 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धाराएँ 304-B/34—दहेज मृत्यु—सामान्य आशय—10 वर्षों का सश्रम कारावास अधिनिर्णित—दहेज की बारम्बार मांग—दहेज की मांग केवल दामाद द्वारा की गयी थी—वह अभिकथित मांग का अंतिम हिताधिकारी था जो किसी अन्य तात्विक साक्षी द्वारा सम्पोषित नहीं किया जा सकता था—मृतका का गला घोंटा गया था एवं उसका शव लटका हुआ पाया गया था—मृतका के शव पर कोई बाह्य या आंतरिक उपहति नहीं पायी गयी थी—मृत्यु विवाह के सात वर्षों के भीतर हुई—अभियोजन साक्षियों का निरन्तर साक्ष्य है कि उसकी मृत्यु के पहले ससुरालवालों द्वारा दहेज की निरन्तर मांग की गई एवं उसके लिए उसे मानसिक प्रताड़ना दी गयी थी—धारा 304-B के अधीन आरोप केवल पति-अपीलार्थी सं॰ 1 के विरूद्ध ही प्रमाणित—अन्य अपीलार्थियों की सहअपराधिता के सम्बन्ध में युक्तियुक्त संदेह सृजित—उनलोगों की उनकी दोषसिद्धि एवं दण्डादेश से दोषमुक्त किया गया—लेकिन, अपीलार्थी-पति की अपील खारिज। (पैराएँ 11 से 13)

अधिवक्तागण.—M/s P.P.N. Roy, S.P. Sinha, A. Khan, For the Appellants; Miss. Anita Sinha, For the State.

डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्ति.—यह दांडिक अपील श्री अब्दुल समद, पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, डालटनगंज, पलामू द्वारा दर्ज दिनांक 30.4.2001 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 1.5.2001 के दंडादेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धारा 304B/34 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है। अपीलार्थी सं॰ 1 और 2 को दस वर्षों की अवधि के लिए कठोर कारावास भुगतने का दंड दिया गया है जबकि अपीलार्थी सं॰ 3 एवं 4 को सात वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंड अधिनिर्णीत किया गया है।

2. सूचक अली हुसैन के फर्दबयान में दर्ज अभियोजन कथन यह है कि उसकी पुत्री अंबिया बीबी का विवाह वर्ष 1991 में अपीलार्थी अशरफ अंसारी के साथ हुआ था और विवाह के अवसर पर सूचक ने अपने दामाद को अपनी हैसियत के मुताबिक अनेक वस्तुएँ उपहार में दिया था। किन्तु विवाह के कुछ समय बाद, उसे अपने 'समधी' उमर अंसारी (अभियुक्त जिसकी मृत्यु विचारण के दौरान हो गयी) द्वारा बुलाया गया था और जब वह अपनी पुत्री अंबिया बीबी के दाम्पत्य निवास गया, उसकी आमना-सामना उसके 'समधिन' मसीरा बीबी (एक अन्य अभियुक्त जिसकी मृत्यु विचारण के दौरान हो गयी), दामाद और दामाद के भाई से हुई जिन्होंने एकमत से रेडियो मांगा जिसमें विफल रहने पर, उसे धमकाया गया कि उसकी पुत्री का अभित्यजन कर दिया जाएगा। अभियुक्तगण की मांग का अनुपालन करते हुए, सूचक ने एक रेडियो दिया। कुछ समय बाद, उसे फिर बुलाया गया और इस बार सलेहा खातुन और साइदा बीबी सहित सारे अपीलार्थीगण ने कहा कि विवाह के अवसर पर उसकी पुत्री को कुछ खास नहीं दिया गया था और इस प्रकार उन्होंने 10,000/-रुपया, टी॰ वी॰ और अनेक वस्तुओं की मांग की और कहा कि तब ही सबिया बीबी को उसके दाम्पत्य गृह में रहने की अनुमति दी जाएगी अन्यथा उसकी हत्या के बाद उसके मृत शरीर को फेंक दिया जाएगा और अशरफ अंसारी का पुनर्विवाह कर दिया जाएगा। सूचक ने अपनी गरीबी के कारण इन मांगों की पूर्ति करने में अपनी अक्षमता जाहिर किया जिससे अपीलार्थीगण और अन्य अभियुक्त क्रोध में आए और उसको यह धमकाते हुए उसे अब अपनी पुत्री को भूल जाना चाहिए, उसको

जाने को कहा। दिनांक 14.6.1995 को प्रात: लगभग 6.30 बजे सूचक अभियुक्तगण के अत्याचार से भयभीत होने के कारण अपनी पुत्री के दाम्पत्य गृह गया और किसी भी रहने वाले को वहाँ नहीं पाया और घर के सारे दरवाजे खुले हुए थे। पूछताछ करने पर उसे पड़ोसियों से पता चला कि उसकी पुत्री की हत्या करने के बाद परिवार की सदस्य पहले ही घर छोड़कर चले गए थे। सूचक तुरन्त अन्दर गया और अपनी पुत्री को गले में बंधा हरे रंग की प्लास्टिक की रस्सी से झूलता पाया और उसकी मृत्यु हो चुकी थी। उसे किसी शैलेश मिस्त्री से ज्ञात हुआ कि दिनांक 13.6.1995 को लगभग 12 बजे वह उमर अंसारी के घर से सटे किसी इनायत अंसारी की दुकान पर गया था और अपीलार्थीगण और अन्य अभियुक्तों को लातों, घूसों, लाठियों से अंबिया बीबी को पीटते हुए देखा और जब उसने हस्तक्षेप किया तो उनके द्वारा उस पर भी प्रहार किया गया। अत: सूचक को यह विश्वास करने का कारण था कि दिनांक 13/14.6.1995 की रात में अपीलार्थीगण और अन्य ने केवल दहेज की मांग पूरी नहीं किए जाने के कारण उसकी पुत्री की हत्या कर दी थी और आत्महत्या का रंग देने के लिए उसे फाँसी पर लटका दिया गया था। इस बीच पुलिस आयी, मृतक के दाम्पत्य गृह में प्रात: लगभग 10 बजे सूचक का फर्दबयान दर्ज किया और तद्द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन अभिकथित अपराध के लिए चैनपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 55 वर्ष 1995 अपीलार्थीगण और अन्य सह-अभियुक्तगण के विरुद्ध दर्ज किया। किन्तु अन्वेषण के पश्चात् पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धारा 304B/120B के अधीन आरोप पत्र दाखिल किया। भारतीय दंड संहिता की धारा 304B/120B के अधीन आरोप विरचित करने के बाद और अभियोजन साक्ष्य समाप्त होने के बाद अपीलार्थीगण का परीक्षण किया गया और विचारण के क्रम में प्रस्तुत सामग्रियों से उनका सामना करवाते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन उनके बयानों को दर्ज किया गया। उनका प्रतिवाद झूठा फँसाया जाना और निर्दोषिता था और कि वर्तमान मामला केवल इसलिए संस्थापित किया गया था कि सूचक ने अपनी मृत पुत्री के गहनों को मांगा था जिन्हें उसे लौटाया नहीं गया था। कि उन्होंने न तो कभी दहेज मांगा था और न ही उसको यातना देकर मारा गया था। उनका प्रतिवाद था कि सूचक अपनी पुत्री का अपने दामाद से तलाक चाहता था जिससे वह सहमत नहीं हुई और कि ऐसी परिस्थितियों द्वारा उसे मजबूर किया गया था और उसके पास अपनी जिन्दगी की समस्याओं से पीछा छुड़ाने के लिए आत्महत्या के सिवा कोई रास्ता नहीं था।

3. अभियोजन ने 13 गवाहों का परीक्षण किया और उनमें से अ॰ सा॰ 2 मोहम्मदीन अंसारी और अ॰ सा॰ 12 धनी मियाँ अभियोजन द्वारा टेंडर किए गए थे। अन्य गवाह जैसे अ॰ सा॰ 1 सत्तार खलीफा, अ॰ सा॰ 3 इनायत हुसैन, अ॰ सा॰ 4 रहमुद्दीन अंसारी, अ॰ सा॰ 5 शैलेश मिस्त्री और अ॰ सा॰ 11 इमामुद्दीन अभियोजन के पक्ष में नहीं थे, अत: उन्हें पक्षद्रोही घोषित किया गया था। अ॰ सा॰ 9 डॉ॰ जॉन एफ॰ कैनेडी ने शैलेश मिस्त्री (अ॰ सा॰ 5) के शरीर पर उपहतियों का परीक्षण किया था जबकि अ॰ सा॰ 10 कृष्ण मुरारी साह ने अंबिया बीबी की मृत्यु समीक्षा की थी। अ॰ सा॰ 13 मनोहर राम अन्वेषण अधिकारी था जिसने आरोप-पत्र दाखिल किया था और अन्य तात्विक साक्ष्य अ॰ सा॰ 8 अली हुसैन (स्वयं सूचक), उसकी पत्नी अ॰ सा॰ 6 शहीदन बीबी और उसका पुत्र अ॰ सा॰ 7 मुबारक हुसैन था।

4. निर्णय दर्ज करते हुए, विचारण न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 304B के अधीन अपराध गठित करने वाले अवयवों पर चर्चा की, जैसे:-

> ***(i)*** *महिला की मृत्यु सामान्य परिस्थितियों के अधीन होनेवाली मृत्यु से भिन्न जलने से अथवा शारीरिक उपहति से अथवा अन्यथा कारित की जानी चाहिए।*

(ii) ऐसी मृत्यु विवाह के सात वर्षों के भीतर होनी चाहिए।

(iii) उसके पति अथवा उसके पति के संबंधी द्वारा उसके प्रति क्रूरता अथवा तंग किया जाना चाहिए।

(iv) ऐसी क्रूरता अथवा परेशानी दहेज की मांग के लिए अथवा इसके संबंध में होनी चाहिए।

(v) उसकी मृत्यु के ठीक पहले महिला के प्रति की गयी क्रूरता अथवा परेशानी दर्शायी गयी हो।

5. भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304B के अधीन आरोप का सामना करते अभियुक्त पर बोझ डालने के लिए अभियोजन से उक्त घटकों को संतुष्ट करने की अपेक्षा की जा सकती है और केवल तब ही साक्ष्य अधिनियम, की धारा 113B के अधीन कोई उपधारणा की जा सकती है।

6. अपना तर्क देते हुए विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री पी॰ पी॰ एन॰ राय ने निवेदन किया कि प्रहार और उसकी हत्या करने के बाद उसके गर्दन में प्लास्टिक की रस्सी लगा कर मृतक को फाँसी से लटकाने की अभिकथित घटना का कोई भी एक चश्मदीद गवाह नहीं था। अ॰ सा॰ 8 सूचक अली हुसैन अर्थात् मृतक का पिता ने भी चश्मदीद गवाह होने का दावा नहीं किया था। उसने अभिकथित प्रहार के बारे में अ॰ सा॰ 5 शैलेश मिस्त्री से सूचना मिलने की बात स्वीकार किया किन्तु शैलेश मिस्त्री अपने अभिसाक्ष्य में अभियोजन के पक्ष में नहीं था। अ॰ सा॰ 6 शहीदन बीबी मृतका की माता, अ॰ सा॰ 7, मुबारक हुसैन अर्थात् मृतका का भाई तथा सूचक और अ॰ सा॰ 8 अली हुसैन अर्थात् मृतका का पिता अभिलेख पर उपलब्ध तात्विक गवाह थे। अ॰ सा॰ 6 शहीदन बीबी अपने अभिसाक्ष्य में अपनी पुत्री अंबिया बीबी के विवाह की अवधि के बारे में निश्चित नहीं थी। उसने स्वीकार किया कि जब उसकी पुत्री को उसके ससुराल वालों द्वारा मायका आने की अनुमति नहीं दी गयी, यह गवाह उसके दाम्पत्य गृह गयी थी जहाँ उसके ससुराल वालों ने 10,000/- और अन्य वस्तुओं की मांग की थी। ऐसी ही मांग उसके पति द्वारा की गयी थी जब उसे वहाँ बुलाया गया था। उसने परिसाक्ष्य दिया कि उसे उसके पति द्वारा संसूचित किया गया था कि उनकी पुत्री के ससुरालवालों ने उसको 10,000/-रुपया और अन्य कई वस्तुओं को देने को कहा था अन्यथा उसे अपनी पुत्री गवानी पड़ेगी। उसका पति पुनः गया और अपनी पुत्री को उसकी हत्या के बाद रस्सी की मदद से छत से फाँसी पर लटका हुआ पाया था। उसके पति द्वारा मामला संस्थापित किया गया था और अस्पताल में उन्हें मृत शरीर दिया गया था और उन्होंने मृत शरीर को दफना दिया था। प्रति परीक्षण में उसने स्वीकार किया कि उसने पुलिस के समक्ष कथन नहीं किया था कि जब वह पहली बार अपनी पुत्री के ससुराल गयी थी, अभियुक्तगण ने दहेज मांगा था। उसने प्रति-परीक्षण में आगे स्वीकार किया कि अपने दामाद को छोड़कर अन्य अभियुक्तगण को वह नहीं जानती थी और उसने मामले के संस्थापन के अढ़ाई माह बाद ही अन्य अभियुक्तों को पहचाना था और उसके पति ने उसको उनलोगों से परिचय कराया था। न्यायालय द्वारा पूछे जाने पर उसने परिसाक्ष्य दिया कि उसकी पुत्री से उसके दाम्पत्य गृह में क्रूरतापूर्वक बर्ताव किया जाता था जिसके बारे में वह उसे संसूचित करती थी किन्तु उसकी उपस्थिति में ऐसी घटना नहीं हुई थी।

7. अ॰ सा॰ 7 मुबारक हुसैन अंबिया बीबी का भाई, ने परिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थीगण सहित अभियुक्तगण ने 10,000/- रुपया नकद, टी॰ वी॰ और अनेक वस्तुओं को मांगा था जब वह एकबार उसके दाम्पत्य गृह गया था। अभियुक्तगण ने धमकी दी थी कि अन्यथा वह अपनी बहन गँवा देगा। गवाह ने उनके समक्ष उनकी मांग पूरी करने में अपनी असमर्थता व्यक्त की थी किन्तु उसके पिता ने विवाह के

अवसर पर फिलिप्स कमान्डर रेडियो दिया था। गवाह ने आगे स्वीकार किया कि उसकी वेदना और दर्द को समझते हुए उसे अपने पति को तलाक देने की सलाह दी गयी थी किन्तु उसने यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया कि वह अपनी पीड़ा सहन कर लेगी और कहीं नहीं जाएगी। अभियुक्तगण द्वारा उसकी हत्या कर दी गयी थी। प्रति-परीक्षण में, गवाह ने स्वीकार किया कि अभियुक्तगण की दहेज मांग के विरुद्ध 'पंचायती' आयोजित की गयी थी जिसकी अध्यक्षता बुरी मीर गाँव के अंजुमन के सदर द्वारा की गयी थी और उक्त गाँव के अनेक व्यक्ति उपस्थित हुए थे। उसने आगे स्वीकार किया कि कोई लिखित संकल्प नहीं किया गया था। उसका पिता चाहता था कि अपने कल्याण के लिए 'तलाक' देने के बाद वह वापस आ जाए और इसके लिए भी पंचायती की गयी थी किन्तु इसका कोई लाभ नहीं हुआ।

8. विद्वान वरीय अधिवक्ता, श्री राय ने इसमें ऊपर निर्दिष्ट अ० सा० 6, अ० सा० 7 और अ० सा० 8 के बयान का निचोड़ निकालते हुए निवेदन किया कि उनमें से किसी ने उनको दी गयी धमकी के सिवाए क्रूरता किए जाने अथवा किसी प्रकार की यातना दिए जाने के बारे में अभिकथन नहीं किया था। फिर भी, उक्त गवाह के विरुद्ध अपीलार्थीगण में से किसी के द्वारा धमकी दिए जाने के अभिकथन का चश्मदीद गवाह नहीं है। अ० सा० 6 शहीदन बीबी ने मृतका के सास-श्वसुर सहित सारे अपीलार्थीगण, जो अभिकथित दहेज मांग रहे थे, के विरुद्ध अभिकथन किया था और अपीलार्थीगण और मुबारक हुसैन अर्थात् मृतका का भाई के साथ भी यही मामला था। यहाँ यह उल्लिखित करना प्रासंगिक होगा कि अ० सा० 8 अली हुसैन सूचक और मृतका का पिता ने प्रति परीक्षण में विनिर्दिष्टत: स्वीकार किया कि उसने 'बिदाई' के समय अपने दामाद को रेडियो दिया था। यह प्रसन्नतापूर्वक दिया गया था किन्तु उसने स्वीकार किया कि वह 10,000/- रुपयों और टी० वी० के अभिकथित मांग का माह अथवा तिथि प्रकट नहीं कर सका था और यह कि उक्त मांग उसके दामाद द्वारा की गयी थी जब वह घर में अकेला था। इसमें ऊपर निर्दिष्ट सूचक अ० सा० 8 के परिसाक्ष्य से यह निष्कर्षित किया जा सकता है कि इस गवाह के अनुसार दहेज की मांग केवल दामाद द्वारा की गयी थी और अंतत: वही अभिकथित मांग का लाभान्वित था जिसे किसी अन्यंसम्तात्विक गवाह द्वारा सम्पुष्ट नहीं किया जा सका था।

9. अपना तर्क देते हुए विद्वान वरीय अधिवक्ता, श्री राय ने निवेदन किया कि अंबिया बीबी की शव परीक्षा अ० सा० 10 डॉ० कृष्ण मुरारी साह द्वारा किया गया था जिन्होंने ठुड्डी और पेमिक्स के बीच 1.5 cm चौड़ा गर्दन में पूरी तरह ऊपर हिस्से में लिगेचर चिन्ह पाया था। ग्रूव कड़ा था। लिगेचर चिन्ह दाएं हिस्से में लगातार नहीं था और मुँह के बांये ओर से सलिवा निकल रहा था। लिगेचर चिन्ह के ग्रूव में मार्जिन में एकिमोसिस उपस्थित था, जैसा चीड़-फाड़ पर पाया गया था और डाक्टर के मत में मृत्यु लटकने के कारण दम घुटने से हुई थी। डाक्टर ने यह भी सुझाया कि गला घोंटा जाना भी उसकी मृत्यु का कारण हो सकता था। मृत्यु के बाद का बीता समय 6-48 घंटा के बीच आकलित किया गया था। गवाह ने आगे कथन किया कि उसके शरीर पर बाहरी अथवा अंदरूनी उपहति का कोई चिन्ह नहीं था।

10. विद्वान वरीय अधिवक्ता, श्री राय ने निवेदन किया कि शव परीक्षण रिपोर्ट पूरी तरह से अभियोजन के मामले कि उस पर पहले प्रहार किया गया था, हत्या कर दी गयी थी और रस्सी की मदद से छत से मृत शरीर लटका दिया गया था, को पूरी तरह नकारता है। अधिकाधिक यह आत्महत्या का मामला हो सकता है जिसका कारण केवल मृतका को ही ज्ञात है। यदि दहेज मांग का अभिकथन हो भी सकता था, ऐसा अभिकथन अपीलार्थी-पति के विरुद्ध था। इसी प्रकार, अभिलेख पर कोई साक्ष्य नहीं

था कि अपीलार्थीगण द्वारा अंबिया बीबी को शारीरिक अथवा मानसिक प्रताड़ना दी जाती थी। अभियोजन अपीलार्थीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 304B/34 के अधीन आरोप सिद्ध करने में बुरी तरह विफल रहा किन्तु विचारण न्यायालय ने इस तथ्य कि अपीलार्थीगण के विरुद्ध कोई सामग्री नहीं थी, का अधिमूल्यन किए बिना गलत अनुचिन्तनों पर उनको अभिकथित आरोप के लिए दोषसिद्ध किया जो अपील में इस न्यायालय के हस्तक्षेप की अपेक्षा करता है।

11. अपना तर्क समाप्त करते हुए विद्वान वरीय अधिवक्ता, श्री राय ने निवेदन किया कि यद्यपि चिकित्सा साक्ष्य ने किसी शव-परीक्षण पूर्ण उपहति के मृतका के शरीर पर होने को नकारा था किन्तु अपीलार्थीगण पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था क्योंकि उनका सामना ऐसी सामग्रियों से करवाया गया था जिन्हें विचारण के क्रम में अभिलेख पर कभी नहीं लाया गया था। अपीलार्थीगण को कहा गया था कि उन्होंने अंबिया बीबी की हत्या की थी और इसे आत्महत्या का रंग देने के लिए उसके मृत शरीर को छत से लटका दिया गया था। बचाव गवाह ब॰ सा॰ 1 इम्तियाज अहमद को अपीलार्थीगण की ओर से प्रस्तुत और परीक्षित किया गया था जिसने परिसाक्ष्य दिया कि उसने अन्य अभियुक्तगण के साथ फारुक अंसारी की पत्नी साईदा बीबी को दिनांक 11.6.1995 को प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, चैनपुर ले गया था और डॉ॰ अविनाश चन्द्र सिन्हा ने उसका उपचार किया था। उसी दिन शाम को उसको एक पुत्र हुआ था। और उसे चैनपुर अस्पताल में भीतरी रोगी के रूप में भर्ती किया गया था। अस्पताल में उसके साथ फारुक अंसारी की बहन सलेहा, स्वयं फारुक अंसारी और सलेहा का पति रफीक कुल चार व्यक्ति थे। संतान के जन्म के संबंध में डॉ॰ अविनाश चन्द्र सिन्हा द्वारा प्रमाण पत्र जारी किया गया था जिसे प्रदर्श 8 के रूप में चिन्हित और प्रमाणित किया गया था। नुक्सों को पृथक रूप से प्रदर्श B और B/1 चिन्हित और प्रमाणित किया गया था। इस तरीके से यह सिद्ध किया जा सकता था कि दिनांक 11.6.1995 को अपीलार्थी सईदा बीबी, अपीलार्थी फारुक अंसारी की पत्नी, को पुत्र हुआ था और वे रफीक मियां की पत्नी सलेहा खातुन और फारुक अंसारी के साथ अस्पताल में मौजूद थे। वर्तमान अपील में सलेहा खातुन भी अपीलार्थी है और वर्तमान मामले में समस्त अपीलार्थीगण को झूठा फँसाया गया है। अपीलार्थीगण अशरफ अंसारी और फारुक अंसारी 10 वर्षों की अपनी दोषसिद्धि के विरुद्ध न्यायिक अभिरक्षा में अपने कारावास का आठ वर्ष पहले ही भुगत चुके हैं और उनकी लंबी निरुद्धता पर विचार करते हुए इस अपील के लंबित रहने के दौरान उनको जमानत दी गयी थी और यदि उनके संपूर्ण निरुद्धता पर परिहार/छूट को लिया और आकलित किया जाए, अपीलार्थीगण अशरफ अंसारी और फारुक अंसारी व्यावहारिक रूप से दस वर्षों की सीमा तक दंड की समस्त अवधि भुगत चुके हैं और इसलिए वैकल्पिक प्रार्थना यह होगी कि अपील खारिज किए जाने की स्थिति में अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत दंड उनके द्वारा न्यायिक अभिरक्षा में पहले ही भुगत ली गयी अवधि तक के लिए माफ कर दिया जाए।

12. सुश्री अनिता सिन्हा, ए॰ पी॰ पी॰ ने अपीलार्थीगण की ओर से किए गए प्रतिवाद का विरोध किया और निवेदन किया कि अभियोजन अपीलार्थीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 303B/34 के अधीन आरोप गठित करने के लिए समस्त घटकों को सिद्ध करने में सक्षम हो सकता था। विचारण न्यायालय द्वारा दंड अधिनिर्णीत करने में अनियमितता के लिए कोई कारण नहीं दिया गया है क्योंकि चारों अपीलार्थीगण के विरुद्ध एक ही आरोप था जिसे युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध किया जा सकता था। अपीलार्थी अशरफ अंसारी और अंबिया बीबी के बीच विवाह अंबिया बीबी की मृत्यु के 7 वर्षों के भीतर हुआ था क्योंकि विवाह वर्ष 1991 में हुआ था और मृत शरीर दिनांक 13/14.6.1995 की रात को छत से लटका पाया गया था। मृतका के पिता का फर्दबयान दिनांक 14.6.1995 को चैनपुर पुलिस द्वारा मृतका के दाम्पत्य गृह पर दर्ज किया गया था। परिस्थितियों की कड़ी ने बिना किसी गलती के अपीलार्थीगण का

दोष इंगित किया है जिन्होंने सह-अभियुक्तगण के साथ सामान्य आशय को आगे बढ़ाने के लिए अंबिया बीबी की दहेज हत्या की। चिकित्सीय साक्ष्य ने आरोप को सिद्ध किया कि अपनी मृत्यु के पूर्व अंबिया बीबी के गला दबाए जाने की बात को खारिज नहीं किया जा सकता था और अपने दायित्व, जिसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 113B के अधीन उन पर डाला गया था, के निर्वहन में अपीलार्थीगण विफल रहे।

13. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और इसमें ऊपर चर्चा किए गए अभियोजन की ओर से प्रस्तुत साक्ष्य का अधिमूल्यन करके मैं पाता हूँ कि अंबिया बीबी की मृत्यु साधारण परिस्थितियों से अलग तरीके से कारित हुई थी क्योंकि सूचक अ० सा० 8 अली हुसैन द्वारा उसका मृत शरीर प्लास्टिक की रस्सी से छत से लटका पाया गया था और अ० सा० 10 डॉ० कृष्ण मुरारी साह जिन्होंने मृतक के शरीर की मृत्यु परीक्षा की थी, के मत में मृत्यु लटकाए जाने के कारण हुई थी और उन्होंने मृत्यु के पहले गला घोटे जाने की बात खारिज नहीं की थी। स्वीकृत रूप से, मृतक के शरीर पर कोई बाहरी अथवा भीतरी उपहति नहीं पायी गयी थी। अभियोजन सिद्ध कर सका है कि अंबिया बीबी का विवाह अपीलार्थी अशरफ अंसारी के साथ वर्ष 1991 में हुआ था और इस प्रकार मृत्यु विवाह के 7 वर्षों के भीतर हुई थी। तीनों तात्विक गवाह अ० सा० 6 शहीदन बीबी, अ० सा० 7 मुबारक हुसैन और अ० सा० 8 अली हुसैन संगति मे थे कि उसकी मृत्यु के ठीक पहले उसके ससुराल वालों द्वारा दहेज मांगा गया था और इसके लिए उसे मानसिक प्रताड़ना दी जाती थी। कई अवसरों पर पति-पत्नी के बीच विवादों और मतभेद के समाधान के लिए 'पंचायती' की गयी थी। अ० सा० 7 मुबारक हुसैन अर्थात् मृतका का भाई संगत था कि उसका पिता अ० सा० 8 अली हुसैन मौजूद विवादों के कारण अपनी पुत्री का अपीलार्थी पति अशरफ अंसारी के साथ 'तलाक' चाहता था किन्तु अंबिया बीबी इसकी इच्छुक नहीं थी क्योंकि वह अपनी स्थिति के साथ समझौता करना चाहती थी जो उसके लिए घातक सिद्ध हुआ। सूचक अ० सा० 8 अली हुसैन अधिक विनिर्दिष्ट था कि दामाद अशरफ अंसारी ने उससे दहेज मांगा था और उसने किसी अन्य अपीलार्थीगण को दहेज की अभिकथित मांग के लिए नहीं फँसाया था और इसलिए न्यायालय के पास विश्वास करने का कारण था कि लाभार्थी अंततः पति अशरफ अंसारी था जिसने अकेले दहेज मांग था। अन्य अपीलार्थीगण और सह-अभियुक्तगण, जिनकी मृत्यु विचारण के दौरान हो गयी थी, के विरुद्ध अभिकथन सामान्य थे और उनके प्रति कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं था। अ० सा० 6 शहीदन बीबी, मृतका की माता ने परिसाक्ष्य दिया कि सास-श्वसुर ने दहेज मांगा था किन्तु बाद में प्रति-परीक्षण के दौरान उसने स्वीकार किया कि वह अपनी मृत पुत्री के किसी ससुरालवालों को, अपने दामाद अशरफ अंसारी को छोड़ कर, नहीं पहचानती थी। मैं मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में पाता हूँ कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304B के अधीन आरोप केवल पति अशरफ अंसारी के विरुद्ध सिद्ध होता है और अन्य अपीलार्थीगण, जिनको भारतीय दंड संहिता की धारा 304/34 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है, की सह-अपराधिता के प्रति युक्तियुक्त संदेह सृजित होता है। इस अपील में गुणागुण केवल उस हद तक प्रतीत होता है जहाँ तक यह शेष अपीलार्थीगण, फारुक अंसारी, सलेहा खातुन और सईदा बीबी से संबंधित है और इसलिए, उन्हें उनकी दोषसिद्धि एवं दंडादेश से दोषमुक्त किया जाता है और उनका जमानत बंधपत्र उन्मोचित किया जाता है। तद्नुसार, यह अपील अंशतः अनुज्ञात की जाती है। किंतु जहाँ तक अपीलार्थी अशरफ अंसारी के संबंध में अपील का संबंध है, उसमें कोई सार प्रतीत नहीं होता है और तद्नुसार उसकी अपील खारिज की जाती

है। चैनपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 55 वर्ष 1995 तत्सम जी॰ आर॰ सं॰ 557 वर्ष 1995, से उद्भुत सत्र विचारण सं॰ 62 वर्ष 1996 में पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, डालटेनगंज, पलामू द्वारा उसके लिए अधिनिर्णीत दंड की शेष अवधि को भुगतने के लिए अपीलार्थी अशरफ अंसारी को निर्देश दिया जाता है जिसमें विफल रहने पर अपीलार्थी की गिरफ्तारी सुनिश्चित करने के लिए, ताकि वह अपना दंड भुगत सके, विचारण न्यायालय को प्रपीड़क कदम उठाने की छूट होगी।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

मेसर्स कमला कन्सट्रक्शन कम्पनी राजेन्द्र प्रसाद सिंह के माध्यम से एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 742 of 2005. Decided on 23rd. July, 2010.

ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970—धाराएँ 23 एवं 24—दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 82, 83 एवं 482—याचीगण फर्म के भागीदार हैं एवं कार्यस्थल पर अभिकथित अनियमितताओं के लिए दाण्डिक अभियोजना का सामना कर रहे हैं—सम्मनों की तामीला रिपोर्ट प्राप्त किए बगैर याचीगण के विरूद्ध गिरफ्तारी का वारंट निर्गत, जो प्रक्रियात्मक विधि के प्रतिकूल और अवैध है—मात्र इस कारण कि वे लोग फर्म के भागीदार हैं, उन्हें प्रतिनिहित दायित्व में धकेलकर ऐसी किसी अपराध के लिए विचारण का सामना करने को नहीं कहा जा सकता है जबतक कि इसे अभियोजन रिपोर्ट में विनिर्दिष्ट रूप से इंगित न किया जाय कि वे पार्टनरशीप फर्म के कार्य-कलापों के लिए उत्तरदायी थे—लेकिन, सक्रिय भागीदारों के विरूद्ध सम्मनों का निर्गतिकरण अविधिमान्य है—दो याचियों के विरूद्ध निर्गत सम्मनें अभिखंडित—याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 4, 6 से 9)

अधिवक्तागण.—Mr. A.K. Sahani, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता को सुना गया।

2. याचीगण ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन दाखिल इस आवेदन में केस सं॰ C III-47 वर्ष 2003 में मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची द्वारा पारित दिनांक 8.5.2003 के आदेश के अभिखंडन की प्रार्थना की है जिसके द्वारा याचीगण के विरुद्ध ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम की धारा 23/24 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया है।

3. कथन किए गए तथ्यों से प्रतीत होता है कि दिनांक 11.2.2003 को विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 सहायक श्रम कमिश्नर ने याची सं॰ 1 अर्थात् मेसर्स कमला कन्सट्रक्शन कम्पनी के कार्यस्थल का दौरा किया था और अनेक अनियमितताएँ पायी थी जो केवल ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम का बल्कि इसके अधीन विरचित नियमावली का भी उल्लंघन करती है। स्थापन के प्रभारी व्यक्ति को त्रुटियाँ इंगित करने के बाद सहायक श्रम कमिश्नर ने स्थापन के प्रभारी व्यक्ति और स्थापन/फर्म के प्रबंधन से जुड़े अन्य व्यक्तियों को उपस्थित होने और स्पष्ट करने कि ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम के प्रावधानों और इसके अधीन विरचित नियमावली का उल्लंघन करने के लिए क्यों नहीं उनके विरुद्ध कार्यवाही की जाए, का निर्देश देते हुए नोटिस जारी किया।

यह प्रतीत होता है कि जब नोटिस किए गए व्यक्तियों से कोई प्रत्युत्तर नहीं प्राप्त हुआ और इस अभिकथन पर कि इंगित की गयी त्रुटियों को दूर नहीं किया गया था, अभियोजन रिपोर्ट के रूप में एक परिवाद अवर न्यायालय के समक्ष सहायक श्रम कमिश्नर द्वारा दर्ज किया गया था और परिवाद/अभियोजन रिपोर्ट के आधार पर याचीगण के विरुद्ध पूर्वोल्लिखित अपराधों का संज्ञान लिया गया था।

4. संज्ञान के आक्षेपित आदेश का विरोध करते हुए, याचीगण के विद्वान अधिवक्ता इस आधार कि उन सबों, जो याची सं॰ 1 कम्पनी के स्थापन के प्रबंधन और दैनिक क्रियाकलापों से संबंधित नहीं हैं, सहित अनेक व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही शुरू नहीं की जानी चाहिए थी, सहित अनेक आधारों का अभिवाक करेंगे। केवल इस आधार कि वे फर्म के पार्टनर हैं पर याची सं॰ 4 से 6 के विरुद्ध कार्यवाही की शुरूआत गैरकानूनी है क्योंकि कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है कि ये दो महिलाएँ याची सं॰ 1 कम्पनी के प्रबंधन और क्रियाकलापों में किसी तरीके से सक्रियात्मक रूप से अंतर्ग्रस्त थी। विद्वान अधिवक्ता जोड़ते हैं कि परिवाद/अभियोजन रिपोर्ट के मुताबिक केवल अभियुक्त सं॰ 7 को सहायक श्रम कमिश्नर द्वारा कार्यस्थल पर उपस्थित पाया गया था और परिवाद के अनुसार भी प्रासंगिक समय पर वह कार्यस्थल का प्रभारी व्यक्ति था। याची सं॰ 7 अर्थात् अशोक कुमार चौधरी के विरुद्ध अभिकथन है कि उसने परिवादी द्वारा उस पर तामील की गयी नोटिस को प्राप्त करने से इंकार कर दिया था।

विद्वान अधिवक्ता आगे जोड़ते हैं कि समन जिन्हें तात्पर्यित रूप से याचीगण के विरुद्ध जारी किया गया था, के तामीला रिपोर्ट को प्राप्त किए बिना जमानती और गैरजमानती गिरफ्तारी का वारन्ट और धारा 82 और 83 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन आदेशिका जारी करके विद्वान अवर न्यायालय ने विधि में गंभीर गलती की है। इस प्रतिवाद के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता विद्वान अवर न्यायालय के आर्डर-शीट की प्रति की ओर ध्यान आकृष्ट करते है।

विद्वान अधिवक्ता आगे जोड़ते हैं कि याचीगण पर परिवादी द्वारा न तो कोई नोटिस तामील किया गया था और न ही समय के किसी बिन्दु पर कोई समन, यदि इसे अवर न्यायालय द्वारा जारी किया भी गया था, तामील किया गया था। तथ्य कि परिवादी द्वारा याचीगण पर कोई पूर्व नोटिस तामील नहीं की गयी थी, परिवाद/अभियोजन रिपोर्ट में की गयी स्वीकृति से प्रकट होगा जो उपदर्शित करेगा कि तात्पर्यित नोटिसें चपरासी के माध्यम से भेजी गयी थी जो इस पृष्ठांकन ''कि याची सं॰ 7 ने इसे स्वीकार करने से इंकार किया'' के साथ बिना तामील हुए वापस लौट गयीं थी। विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि तत्पश्चात प्रकटत: परिवादी ने यह सुनिश्चित करने का कोई अन्य रास्ता नहीं चुना कि उनके विरुद्ध अभियोजन शुरू किए जाने के पहले याचीगण पर नोटिसें तामील कर दी जाए।

5. राज्य के अधिवक्ता उपस्थित हैं और संज्ञान के आक्षेपित आदेश के समर्थन में निवेदन करते हैं।

राज्य सरकार की ओर से दाखिल प्रति शपथपत्र से प्रकट होता है कि दिनांक 11.2.2003 को निरीक्षण संचालित करने के बाद दिनांक 18.2.2003 को कार्यालय चपरासी के माध्यम से याचीगण को नोटिस जारी किए गए थे किन्तु इन्हें याचीगण द्वारा अथवा उनकी ओर से स्वीकार करने से इंकार कर दिया गया था। त्रुटियों, जिसे परिवादी ने निरीक्षण के दौरान खोजा था, के आधार पर उसने यह विश्वास करने का कारण पाया था कि स्थापन ने ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम के प्रावधानों

और इसके अधीन विरचित नियमावली का उल्लंघन किया था। मामला के उस दृष्टिकोण में, अपराधों के संज्ञान के आदेश में कोई दुर्बलता अथवा अवैधता नहीं है चूँकि इसे अभियोजन रिपोर्ट में अंतर्विष्ट बयानों के आधार पर लिया गया था। किंतु याची के विद्वान अधिवक्ता के तर्क के अन्य पहलूओं को अनदेखा नहीं किया जा सकता है।

6. विचारण न्यायालय के अभिलेख के आर्डर-शीट की प्रति के परिशीलन से यह वस्तुत: प्रतीत होता है कि यद्यपि याचीगण के विरुद्ध समन जारी करने का आदेश दिया गया था किन्तु जारी किए गए समन के संबंध में तत्पश्चात् समय के किसी बिन्दु पर तामीला रिपोर्ट प्राप्त नहीं किया गया था। फिर भी विद्वान अवर न्यायालय जमानती और गैरजमानती वारंट जारी करने हेतु अग्रसर हुआ था और दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराएँ 82 एवं 83 के अधीन आदेशिका जारी करने हेतु भी अग्रसर हुआ था। ऐसी प्रक्रिया जैसी अवर न्यायालय द्वारा अपनायी गयी है, प्रक्रियात्मक विधि के विपरीत है और इसलिए गैर-कानूनी है।

7. अगला उठाया गया विवाद्यक यह है कि अपराध का संज्ञान लेने के बाद भी दंडाधिकारी को यह आकलन करने के लिए कि क्या सभी अथवा अभियुक्तगण में से किसी को विचारण का सामना करने के लिए समन किया जाए, न्यायिक विवेक इस्तेमाल करना चाहिए था।

परिवाद/अभियोजन रिपोर्ट के परिशीलन से कोई विनिर्दिष्ट प्रकथन प्रतीत नहीं होता है कि अभिकथित उल्लंघन के लिए महिलाएँ अर्थात् कमला देवी और प्रभावती देवी (याची सं॰ 4 और 6 क्रमश:) किस तरह जिम्मेदार हैं। केवल इसलिए कि वे फर्म की पार्टनर है, उन पर प्रतिनिहित दायित्व लादते हुए ऐसे किसी अपराध के लिए विचारण का सामना करने हेतु उन्हें नहीं बुलाया जा सकता है जब तक अभियोजन रिपोर्ट में यह विनिर्दिष्टत: इंगित नहीं किया जाता है कि दोनों महिलाएँ अंतर्ग्रस्त हैं और पार्टनरशिप फर्म के क्रियाकलापों और व्यावसायिक संव्यवहार के प्रबंधन के लिए जिम्मेदार है।

8. उक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए, महिला अभियुक्तगण के विरुद्ध समन का जारी किया जाना भी अवर न्यायालय द्वारा न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना आदेशित प्रतीत होता है। किन्तु अन्य अभियुक्तगण के संबंध में, परिवाद/अभियोजन रिपोर्ट में बयान सामने आते है कि वे सक्रिय पार्टनर होने के नाते याची सं॰ 1 फर्म के प्रबंधन और क्रियाकलापों के लिए जिम्मेदार है और इसलिए उनको समन जारी किया जाना गैरकानूनी नहीं कहा जा सकता है।

9. उक्त तथ्यों के आलोक में, याची सं॰ 4 और 6 अर्थात् कमला देवी और प्रभावती देवी के विरुद्ध जारी किया गया समन एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है। अभियुक्त याचीगण के विरुद्ध धारा 82 और 83 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन जारी गिरफ्तारी का वारंट और आदेशिका भी अभिखंडित की जाती है। याची सं॰ 2, 3, 5 और 7 को आज से तीन सप्ताह के भीतर अवर न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने और समुचित कदम उठाने का निर्देश दिया जाता है।

माननीय प्रदीप कुमार, न्यायमूर्ति

कपिलदेव दूबे एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cr. M. P. No. 837 of 2009. Decided on 30th July, 2010.

भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धाराएँ 323, 307, 436, 498-A एवं 34 सह-पठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 का धारा 3/4—दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 320 एवं 482—अतिरिक्त दहेज की मांग एवं प्रताड़ना—संज्ञान—पक्षों ने मामले में सुलह कर लिया है—पीड़ित महिला खुशी-खुशी याचीगण के घर में रह रही है एवं याचीगण ने यह भी आश्वासन दिया है कि वे उसे सम्मान के साथ रखेंगे और वे उसे कभी प्रताड़ना या असुविधा कारित नहीं करेंगे—परिवादी को याचीगण के विरूद्ध कोई व्यथा नहीं है—यद्यपि अपराध अशमनीय है फिर भी जब दोषसिद्धि की कोई संभावना नहीं है एवं पक्षकारगण मामले का शमन चाहते हैं अतः न्यायालय कार्यवाही अभिखंडित कर सकता है—सम्पूर्ण दाण्डिक अभियोजन अभिखंडित।

(पैराएँ 3, 6 से 8)

निर्णयज विधि.—(1988) 1 SCC 692; 2003(2) East Cr. C 220 (SC)—Relied upon.

अधिवक्तागण.—Mr. P. P. N. Roy, For the Petitioners; M/s Neeraj Kumar, Niraj Kishore, For the Opp. Parties; A.P.P., For the State.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान अधिवक्ता और विपक्षी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि याची अरुण कुमार दूबे उर्फ अरुण कुमार द्विवेदी की पत्नी मीरा देवी के साथ कुछ गलतफहमी के कारण उसके श्वसुर रामदहीन तिवारी द्वारा परिवाद दाखिल किया गया था जिसमें अभिकथन किया गया था उसकी पुत्री मीरा देवी का विवाह याचीगण में से एक अरुण कुमार दूबे उर्फ अरुण कुमार द्विवेदी के साथ वर्ष 1994 में हुआ था। विवाह के बाद उसके पति ने 5000/- रुपया अतिरिक्त दहेज के रूप में मांगा और चूँकि वह उनकी मांग पूरा करने के लिए तैयार नहीं है, वे उसकी पुत्री को यातना दे रहे हैं और उसकी पुत्री की हत्या की धमकी दे रहे है। उसने यह अभिकथन भी किया कि जाँच करने पर उसे ज्ञात हुआ कि उसकी पुत्री पर उसके पति और ससुराल वालों द्वारा प्रहार किया गया है और तद्नुसार परिवाद दाखिल किया गया था जिसे बाद में प्राथमिकी के रूप में दर्ज करने के लिए पुलिस के पास भेजा गया था। तब इसे धाराएँ 323/307/436/498A/34 भा॰ दं॰ सं॰ और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन गढ़वा पी॰ एस॰ केस सं॰ 91 वर्ष 2008 के रूप में दर्ज किया गया था।

3. अन्वेषण के बाद प्रतीत होता है कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 306/494 के अधीन पति अरुण कुमार दूबे उर्फ अरुण कुमार द्विवेदी के विरुद्ध पुलिस ने आरोप पत्र दाखिल किया और बाद में भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 307/498A/306/494/120B के अधीन समस्त अभियुक्तगण के विरुद्ध विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने संज्ञान लिया। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि पक्षों ने मामले में सुलह कर लिया है और वर्तमान में पीड़ित महिला याचीगण के घर में रह रही है और उसने विवाह से एक संतान को भी जन्म दिया है। मामले के उस दृष्टिकोण में, **बी॰ एस॰ जोशी एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं एक अन्य, 2003 (2) East Cr. C. 220 (SC)** में प्रकाशित मामले में दिए गए निर्णय, जहाँ यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यद्यपि धारा 498 और 406 के अधीन अपराध गैर-शमनीय है किन्तु कतिपय दशा में अंततः जब दोषसिद्धि का अवसर नहीं है और पक्षगण मामला को शमनित करना चाहते है, न्यायालय कार्यवाही को अभिखंडित कर सकता है, के प्रकाश में अभियोजन, जो अवर न्यायालय में लंबित है, को अभिखंडित किया जा सकता है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि चूँकि अब पक्षों ने मामले में सुलह कर लिया है और जब पीड़ित महिला याचीगण के घर में रह रही है और सुखी दाम्पत्य जीवन व्यतीत कर रही है, न्यायालय द्वारा कार्यवाही को जारी रहने से रोका जा सकता है और यह अभिखंडित किए जाने योग्य है।

5. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है और निवेदन किया है कि सर्वोच्च न्यायालय ने परिस्थितियों में असाधारण शक्तियाँ प्रदान की है जिन्हें न्यायालय द्वारा संतुष्टि पर ही विचार में लिया जा सकता है।

6. दोनों पक्षों को सुनने के बाद और मामले की स्थिति पर विचार करने के बाद, मैं पाता हूँ कि पीड़ित महिला मीरा देवी अपने पति अरुण कुमार दूबे उर्फ अरुण कुमार द्विवेदी के साथ और सूचक परिवादी उसका पिता न्यायालय में उपस्थित है और उन्होंने निवेदन किया है कि अब उन्हें याचीगण से कोई शिकायत नहीं है और मीरा देवी याचीगण के घर में सुखी दाम्पत्य जीवन व्यतीत कर रही है और न्यायालय में उपस्थित याचीगण ने स्वीकार किया कि सुलह के मुताबिक अब वे अरुण कुमार दूबे उर्फ अरुण कुमार द्विवेदी की पत्नी को सम्मानपूर्वक रखेंगे और उसे कोई यातना अथवा असुविधा कारित नहीं करेंगे।

7. बी॰ एस॰ जोशी एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य (ऊपर) मामला में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपने निर्णय के पैरा-10 में **माधव राव जिवाजी राव सिंधिया एवं अन्य बनाम संभाजी राव चन्द्रोजी राव आंग्रे एवं अन्य, (1988)1 SCC 692** के मामला पर विचार करते हुए संप्रेक्षित किया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि:–

> *''धारा 482 के अधीन अभिखंडन की अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय किन्हीं विशेष लक्षणों, जो किसी खास मामले में उपस्थित हो सकते हैं, को यह विचार करने के लिए विचार में ले सकता है कि क्या अभियोजन को जारी रखने की अनुमति देना समीचीन और न्याय के हित में होगा। जहाँ, न्यायालय के मत में, अंतिम दोषसिद्धि का अवसर नगण्य है और इसलिए किसी दांडिक कार्यवाही को जारी रखने की अनुमति देकर कोई लाभदायी उद्देश्य प्राप्त नहीं किया जा सकता है, न्यायालय, मामले के विशेष तथ्यों को विचार में लेते हुए कार्यवाही को अभिखंडित कर सकता है।''*

और अंतत: पैरा 14 में इस निष्कर्ष पर आया कि–

> *''उक्त चर्चा की दृष्टि में, हम अभिनिर्धारित करते हैं कि अपनी अंतर्निहित शक्तियों के प्रयोग में उच्च न्यायालय दांडिक कार्यवाही अथवा प्राथमिकी अथवा परिवाद अभिखंडित कर सकता है और संहिता की धारा 320, संहिता की धारा 482 के अधीन शक्तियों को सीमित अथवा प्रभावित नहीं कर सकती है।''*

8. ऊपर चर्चा किए गए सिद्धांतों की दृष्टि में और वर्तमान मामले में दी गयी सूचना की दृष्टि में चूँकि पीड़ित महिला मीरा देवी, जो अपने पति के साथ न्यायालय में उपस्थित है, ने स्वीकार किया है कि वह याचीगण के घर में प्रसन्नतापूर्वक रह रही है और याचीगण ने भी आश्वासन दिया है कि वे उसको सम्मानपूर्वक रखेंगे और उसको कभी यातना अथवा असुविधा कारित नहीं करेंगे। मामले के उस दृष्टिकोण में, कार्यवाही जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा और न्यायालय का मूल्यवान समय व्यर्थ करेगा। तद्नुसार, गढ़वा पी॰ एस॰ केस सं॰ 91 वर्ष 2008 से उद्भूत समस्त दांडिक कार्यवाही और जी॰ आर॰ केस सं॰ 406 वर्ष 2008 वाले उक्त मामला में दिनांक 27.1.2009 का संज्ञान का आदेश अभिखंडित किया जाता है और यह दांडिक विविध याचिका अनुज्ञात की जाती है।

माननीय जे॰ सी॰ एस॰ रावत एवं डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्तिगण

जगेश्वर राय एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य

Criminal Appeal No. 271 of 1991P. Decided on 26th July, 2010.

सत्र विचारण सं॰ 274 वर्ष 1989 में श्री सुशील कुमार द्विवेदी, सत्र न्यायाधीश, दुमका, संथाल परगना द्वारा पारित दिनांक 31.5.1991 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दण्डादेश के विरुद्ध।

(क) दाण्डिक विधि–साक्ष्य का मूल्यांकन–जब कोई ग्रामीण या अशिक्षित साक्षी निपुण अधिवक्ता का सामना करता है, तो असंतुलन होना बाध्यकारी है एवं गौण विसंगतियों की उपेक्षा की जानी होती है–साक्ष्य में लोप सामान्य विसंगति है जो सम्प्रेक्षण की सामान्य त्रुटि के कारण, स्मरण की सामान्य त्रुटि के कारण, और घटना के समय आघात एवं भय के कारण मानसिक स्थिति में बदलाव के कारण होता है–वैसी विसंगतियाँ सदैव होंगी, साक्षी के ईमानदार एवं सच्चा होने पर भी। (पैरा 12)

(ख) दाण्डिक विधि–हेतुक–शत्रुता–शत्रुता एक दोधारी तलवार है जो दोनों ओर से काटता है–यह मिथ्या फंसाये जाने का एक अभिवाक् हो सकता था एवं यह प्रहार का एक आधार भी हो सकता था–मात्र इसलिए कि साक्षीगण मृतक से सम्बन्धित हैं, यह उनके परिसाक्ष्य को अविश्वसनीय बनाने का आधार नहीं होगा, अगर अन्यथा सम्बन्धित साक्षियों का साक्ष्य भरोसा उत्पन्न करता है। (पैरा 13)

(ग) दाण्डिक विधि–प्राथमिकी–विलम्ब हेतु स्पष्टीकरण अभियोजन द्वारा साक्ष्य के जरिए दिया जाना चाहिए या अभिलेख से परिलक्षित परिस्थितियों से विलम्ब को स्पष्ट किया जाना चाहिए। (पैरा 15)

(घ) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 464, 465 एवं 221—आरोप विरचित करने में मात्र लोप या त्रुटि अपराध के लिए अभियुक्त को दोष सिद्ध करने में दाण्डिक न्यायालय को असमर्थ नहीं बनाता है जो अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य से प्रमाणित पाया जाता है–न्यायालय अभियुक्त को एक ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध कर सकता है जिसके लिए वह आरोपित नहीं है–आरोपों का कुसंयोजन एक अवैधता नहीं है बल्कि एक अनियमितता है जो धारा 464 या धारा 465 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन दूर किए जाने योग्य है बशर्ते तद्द्वारा न्याय की विफलता का कोई अवसर नहीं आया हो। (पैराएँ 20 एवं 21)

(ङ) दाण्डिक विधि–साक्ष्य का मूल्यांकन–अगर पहले से ही परीक्षित साक्षीगण विश्वसनीय, भरोसेमंद हैं और उनके मुँह से निकलने वाला परिसाक्ष्य अविवादातीत है, न्यायालय इस पर अन्य साक्षियों की गैर-परीक्षा के तथ्य से अप्रभावित हुए बिना सुरक्षित रूप से कार्य कर सकता है। (पैरा 26)

(च) भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872—धारा 134—एक ही साक्ष्य पर साक्ष्य को गुणित करना सदैव अनिवार्य नहीं होता है–यह देखा जाना है कि साक्षी की गुणवता क्या है–यह गुणवत्ता है न कि मात्रा जो कि अपेक्षित है–अगर अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य अन्यथा संतोषजनक प्रकृति

का है एवं इसे विश्वसनीय कहा जा सकता है, तब अन्य साक्षियों द्वारा इस तथ्य का प्रमाण अपेक्षित नहीं हो सकता है–अगर प्राथमिकी दर्ज कराने वाला व्यक्ति एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं है, तो उसका न्यायालय के समक्ष पेश किया जाना अनिवार्य नहीं है। (पैराएँ 27 एवं 28)

(छ) दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 173—अन्वेषण–अगर अन्वेषण त्रुटिपूर्ण है, जो अमहत्वपूर्ण बातों पर प्रकाश डालता है जब चक्षुदर्शी साक्ष्य विश्वसनीय एवं तर्कपूर्ण पाया जाता है–मात्र रासायनिक परीक्षण हेतु रक्त रंजित मिट्टी का नहीं भेजा जाना किसी भी प्रकार से अभियोजन के मामले को विकृत नहीं करेगा। (पैरा 29)

निर्णयज विधि.–(2002) 6 SCC 81 : AIR 1965 SC 202; (2007) 8 SCC 578; (2006) 13 SCC 36; (2004) 3 SCC 654—Relied on; (2008) 8 SCC 339—Applied.

अधिवक्तागण.–M/s Jeetendra S. Singh, Arun Kumar Pandey, Nisa Murmu, For the Appellants; Addl. P.P., For the Respondents.

आदेश

यह अपील सत्र विचारण सं॰ 274 वर्ष 1989 में सत्र विचारण न्यायाधीश, संथाल परगना, दुमका द्वारा पारित दिनांक 31.5.1991 के दोषसिद्धि एवं दंड के निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा अपीलार्थी सं॰ 1 से 3 अर्थात् जगेश्वर राय, रासो राय और शंकर राय को भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 323, 147, 302 के अधीन दोषसिद्धि किया गया है और आजीवन कारावास का दंड दिया गया है, आगे, उक्त आक्षेपित आदेश और निर्णय द्वारा विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी सं॰ 4 कार्तिक राय को प्रत्येक समान राशि की दो प्रतिभूतियों के साथ 2000/- रुपयों का बंध निष्पादित करने पर उसको निर्मुक्त करते हुए भारतीय दंड संहिता की धारा 302/147 के अधीन दो वर्षों के लिए परिवीक्षा अधिकारी, दुमका के निरीक्षण के अधीन उसको रखने के निर्देश के साथ दोषसिद्धि निर्देशित किया।

2. संक्षेप में, मामले के तथ्य ये हैं कि दिनांक 2.5.1986 को अ॰ सा॰ 3 सूचक गणेश राय अकेला धावाटांड गाँव गया, जहां उसका बहनोई/साला अमीरलाल रहता है। जब सूचक रूप सागर गाँव पहुँचा, उसका बहनोई/साला अमीरलाल रास्ते में उससे मिला। तत्पश्चात्, दोनों धावाटांड स्थित अमीर लाल के घर जाने लगे। जब वे रंगाबंध गाँव पहुँचे, अपीलार्थीगण जगेश्वर राय और शंकर राय ने इंगित किया कि अमीर लाल ने पुलिस को किसी घटना के बारे में सूचना देकर अपने भाई उदय राय को दांडिक मामला में फँसाया था। इसपर अमीर लाल राय (मृतक) और अपीलार्थी जगेश्वर राय के बीच झगड़ा हुआ। तत्पश्चात् अभियुक्तगण लूटन राय, कार्तिक राय, रासो राय अपने घर से लाठी लिए आए। लूटन, जिसकी मृत्यु विचारण के अनुक्रम में हो गई, ने अपने बेटों कार्तिक राय और रासो राय को अमीरलाल राय की हत्या करने को कहा। इसपर सभी सह-अभियुक्तगण ने अपने-अपने हाथों में पकड़े हथियारों से मृतक पर प्रहार करने लगे। सूचक अ॰ सा॰ 3 ने अपने मृतक बहनोई/साला अमीरलाल राय को बचाने के लिए झगड़ा में हस्तक्षेप करने का प्रयास किया। अपीलार्थी जगेश्वर ने उसको दो लाठी मारी और गंभीर परिणामों की उसे धमकी दी गयी। उस पर, मृतक घटनास्थल से भागने का प्रयास किया और ग्राम प्रधान के घर की ओर दौड़ा। सभी अपीलार्थीगण और सह-अभियुक्तों ने उसका पीछा किया और उनके द्वारा मृतक अमीरलाल राय को पकड़ लिया गया और वे फिर से उसपर लाठी बरसाने लगाने। जब उसने पुनः ग्राम प्रधान के खेतों की ओर भागने की कोशिश की, अपीलार्थीगण और सह-अभियुक्तों ने पुनः उसके पैर

पर लाठी बरसायी। उस पर, मृतक जमीन पर गिर गया। अपीलार्थीगण ने उसके अंडकोषों पर कूदकर कुचल दिया। मृतक के अंडकोषो से खून आने लगा। अपीलार्थीगण घटनास्थल से भाग गए। हल्ला सुनकर गाँववाले घटना स्थल पर आ गए। उस समय तक घटना स्थल पर ही मृतक की मृत्यु हो चुकी थी। गाँव के चौकीदार को पुलिस थाना जाकर घटना के बारे में सूचना देने को कहा गया। दिनांक 3.5.1986 को पुलिस चौकीदार के साथ घटनास्थल पर आयी और पुलिस द्वारा सूचक का फर्दबयान घटनास्थल पर दर्ज किया गया। तत्पश्चात्, अन्वेषण शुरू किया गया था और मृत्यु-समीक्षा रिपोर्ट तैयार की गयी थी। मृत शरीर को शव-परीक्षण के लिए भेजा गया था। गवाहों के बयानों को दर्ज किया गया था। घटना स्थल पर तात्विक प्रदर्श लेते हुए अभिग्रहण मेमो तैयार किए गए थे। अन्वेषण अधिकारी ने अन्वेषण पूरा करने के बाद न्यायालय में आरोप-पत्र दाखिल किया। मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया और विद्वान सत्र न्यायाधीश ने अपीलार्थीगण और सह-अभियुक्तों के विरुद्ध आरोपों को विरचित किया। अपीलार्थीगण ने अभिवाक् किया कि दुश्मनी के कारण उन्हें झूठा फँसाया गया है उन्होंने आरोपों से इंकार किया और विचारण का दावा किया।

3. अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में अ॰ सा॰ 3 सूचक गणेश राय और मृतक के साला/बहनोई, जो उसके साथ रूप सागर गाँव से घटनास्थल तक आया था, का परीक्षण किया। अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन, जो मृतक की पत्नी है, घटना का चश्मदीद गवाह होने का दावा करती है। अ॰ सा॰ 1 अनन्तलाल राय ग्राम प्रधान है जो घटना के तुरन्त बाद घटना स्थल पर आया था। अ॰ सा॰ 2 सोहन राय और अ॰ सा॰ 5 झकसू राय को न्यायालय के समक्ष पेश किया गया है। अ॰ सा॰ 4 डॉ॰ चन्द्रशेखर झा है जिन्होंने दिनांक 3.5.1986 को दोपहर लगभग 2 बजे मृतक अमीरलाल राय के मृत शरीर की मृत्यु समीक्षा की। अ॰ सा॰ 6 बाहा मूरमू है जिसने अभियोजन के विवरण का समर्थन नहीं किया और उसे पक्षद्रोही घोषित किया गया था। अ॰ सा॰ 8 सिंघेश्वर राय मृतक का पुत्र है। वह घटना स्थल पर उपस्थित नहीं था। वह सायं लगभग 7 बजे बेलदाहा से अपने घर आया। तब उसकी माता ने उसे पूरी घटना बतायी। अ॰ सा॰ 9 रविन्द्र कुमार मामले का अन्वेषण अधिकारी है।

4. अभियोजन का साक्ष्य दर्ज करने के बाद, धारा 313 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन अपीलार्थीगण का परीक्षण किया गया था और उन सबों ने साक्ष्य में उनके विरुद्ध किए गए प्रकथनों से इंकार किया है और आगे कथन किया है कि उन्हें मामले में झूठा फँसाया गया है और उन्होंने विचारण का दावा किया।

5. अपीलार्थीगण की ओर से विचारण न्यायालय के समक्ष कोई मौखिक अथवा दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था। पक्षों को सुनने के बाद विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध किया जैसा ऊपर उपदर्शित किया गया है।

6. यह उल्लिखित करना आवश्यक है कि घटना के समय, स्थान और तिथि तथा मृतक की मृत्यु के बारे में विवाद नहीं है। मृतक की मृत्यु को अपीलार्थीगण द्वारा विवादित नहीं किया गया है। इसके अतिरिक्त अभियोजन ने अ॰ सा॰ 4 डॉ॰ सी॰ एस॰ झा का भी परीक्षण किया है। उन्होंने दिनांक 3.5.1986 को दोपहर 2 बजे सदर अस्पताल दुमका में मृतक के मृत शरीर की मृत्यु परीक्षा संचालित की और मृतक के शरीर पर निम्नलिखित मृत्यु पूर्व उपहतियाँ पायी।

(i) रीगर मोर्टिस मौजूद था। उसके मुँह एवं नाक से रक्त टपक रहा था। उन्होंने उसके शरीर पर निम्नलिखित मृत्यु पूर्व, उपहतियाँ पायीं। दायें पेरियेटल क्षेत्र पर 1½" x ½" x हड्डी की गहराई तक का एक विदीर्ण जख्म था। इस उपहति का विच्छेदन करने पर, उन्होंने जोड़ने वाली fossa की विदीर्णता पाई। बायें पेरियेटल हड्डी टूटा हुआ था। मष्तिष्क के नीचे का मेम्ब्रेन विदीर्ण था। क्रेनियम में रक्त के थक्के मौजूद थे। आगे अ० स० 4 ने मृतक के सम्पूर्ण छाती पर सूजन पायी। इन उपहतियों का विच्छेदन करने

पर उन्होंने छाती के बायीं ओर तीसरी से छठी पसली और छाती के दायीं ओर चौथी से सातवीं पसलियों का अस्थिभंग पाया। जोड़ने वाला pleurd एवं दोनों फफड़े विदीर्ण थे। चेस्ट कैविटी में रक्त के थक्के मौजूद थे। उदर का विच्छेदन करने पर यह पाया गया था कि यकृत विदीर्ण था। उदर के कैविटी में रक्त के थक्के मॉजूद थे। अ० सा० 4 ने मृतक के लीबीया और फीबुला में अस्थिभंग सहित इसके मध्य भाग में बायीं ओर 1½" x ½" x अस्थि की गहरायी तक का विदीर्ण जख्म पाया। उन्होंने लीबीया एवं फिबुला के अस्थिभंग सहित निचले भाग में दायें भाग पर 1" x ½" x हड्डी की गहरायी का विदीर्ण जख्म भी पाया।

डॉक्टर ने मत दिया कि मृतक की मृत्यु दायें पेरियेटल क्षेत्र के उपहति सं० 21 के परिणामस्परूप सदमा एवं रक्तस्राव एवं छाती पर उपहति सं० 2 से या दोनों में से किसी एक से हुई। इन उपहतियों में से एक ही मृत्यु की मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी। अ० सा० 4 ने आगे कहा है कि उपहतियों को कठोर भोथरे पदार्थ जैसे लाठी द्वारा कारित किया गया था और मृत्यु होने से लेकर पोस्ट मार्टम परीक्षण होने तक व्यतीत समय 48 घंटे का था।

उन्होंने शव-परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श-1) प्रमाणित किया। उन्होंने आगे मत दिया कि मृतक की मृत्यु, मृत्यु पूर्व उपहतियों के परिणामस्वरुप आघात और हेमरेज के कारण कारित हुई थी। उपहतियाँ कड़े और भोंथरे वस्तुओं जैसे लाठी द्वारा कारित की गयी थी। आगे मत दिया गया था कि मृत्यु की अवधि शव परीक्षण के समय से 48 घंटा आकलित की गयी थी। अभियोजन ने घटना के चश्मदीद गवाहों का विवरण भी प्रस्तुत किया है और अ॰ सा॰ 3 एवं अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन का परीक्षण किया है। यह कथन किया गया है कि अपीलार्थीगण द्वारा कारित उपहतियों से मृतक की मृत्यु हो गयी। यह अ॰ सा॰ 1 अनन्तलाल राय के साक्ष्य से भी स्थापित होता है कि वह घटना के तुरन्त बाद स्थल पर आया और पाया कि मृतक जमीन पर मृत पड़ा था और खून बह रहा था। पक्षद्रोही होने के बावजूद अ॰ सा॰ 6 बाहा मूरमू ने कथन किया है कि उसने घटना के तुरन्त बाद मृतक का शरीर खेतों में पड़ा देखा था। अ॰ सा॰ 8 सिंघेश्वर राय ने भी देखा कि घटना के बाद उसके पिता की मृत्यु स्थल पर ही हो गयी थी। बचाव पक्ष ने प्रति परीक्षण के दौरान सूचक अ॰ सा॰ 3 गणेश राय को आगे सुझाया है कि दिनांक 3.5.1986 की सुबह, घटना स्थल पर कुछ हल्ला हुआ था। तब अ॰ सा॰ 3 घटना स्थल पर आया और मृतक को घटना स्थल पर मृत पड़ा पाया। ऐसा ही सुझाव मृतक की पत्नी अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन को भी प्रतिपरीक्षण के दौरान दिया गया था। यह भी सुझाया गया था कि मृतक की मृत्यु मानव वध थी। यह स्थापित किया गया है कि मृतक की मृत्यु मानव वध के चलते हुई। इस प्रकार, साक्ष्य से भी, यह पूरी तरह स्थापित होता है कि मृतक की मानववध मृत्यु अभियोजन द्वारा बताए गए घटना के स्थान, समय और तिथि पर कारित हुई थी।

7. अब, विनिश्चित यह करना है कि मृतक के शरीर को उपहतियाँ पहुँचाने वाला कौन था? अभियोजन का मामला चश्मदीद गवाहों के प्रत्यक्ष साक्ष्य पर आधारित है। अभियोजन ने अ॰ सा॰ 3 गणेश राय (सूचक) और अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन जो मृतक की पत्नी है का साक्ष्य दिया है। अ॰ सा॰ 3 गणेश राय ने प्राथमिकी के विषय वस्तु को सम्पुष्ट करते हुए बयान दिया है। उसने अपने अभिसाक्ष्य में कथन किया है कि दिनांक 2.5.1986 को वह धावाटांड गाँव जा रहा था। जब वह रूप सागर गाँव पहुँचा, उसे उसका बहनोई अमीरलाल वहाँ मिला। तत्पश्चात्, उसने धावाटांड स्थित उसके घर अमीर लाल के साथ जा रहा था। जब वे रंगाबाध गाँव पहुँचे,

अपीलार्थीगण जागेश्वर राय और शंकर राय ने मृतक से कहा कि उसने (मृतक) ने पुलिस को सूचना दी थी और उनके भाई को मामला में फँसाया था। तत्पश्चात्, सह-अभियुक्त लोटन राय (जिसकी मृत्यु विचारण के दौरान हो गयी) ने अपने पुत्रों अपीलार्थीगण कार्तिक राय और रासो राय को उकसाया और इसके अनुसरण में वे हाथ में लाठी लिए हुए घटना स्थल पर आए। तत्पश्चात, सारे अपीलार्थीगण और सह-अभियुक्तों ने अमीरलाल (मृतक) पर ताबड़तोड़ लाठियाँ बरसायी। जब उसने अपने बहनोई को बचाना चाहा, जगेश्वर राय ने उस पर दो लाठियाँ बरसायी। जब मृतक ने ग्राम प्रधान के घर की ओर भागना चाहा, उन्होंने उसका पीछा किया, उसे पकड़ लिया और उस पर ताबड़तोड़ लाठियाँ बरसायी। परिणामस्वरुप, मृतक का पाँव टूट गया और अपीलार्थीगण ने उसका अंडकोष कुचल दिया जिससे घटना स्थल पर खून बहने लगा। तत्पश्चात्, अपीलार्थीगण और सह-अभियुक्त घटना स्थल से भाग गए। मृतक अमीरलाल की मृत्यु घटना स्थल पर हो गयी। चौकीदार को घटना के बारे में सूचित किया गया। पुलिस आयी और उसने पुलिस को फर्दबयान दिया। उसने उक्त फर्दबयान को प्रमाणित भी किया।

8. अभियोजन ने अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन जो मृतक की पत्नी है का साक्ष्य भी दिया है। वह भी घटना का चश्मदीद गवाह होने का दावा करती है। उसने अपने साक्ष्य में कथन किया है कि वह गाय चरा रही थी। उसने रंगबांध की ओर से हल्ला आते हुए सुना। वह घटना स्थल पर आयी, जहाँ उसने पाया कि अपीलार्थीगण और सह-अभियुक्त उसके पति अमीरलाल पर प्रहार कर रहे थे। उसने सारे अपीलार्थीगण और सह-अभियुक्त को नामित किया और आगे कथन किया कि अपीलार्थीगण लाठी लिए हुए थे। इसके अतिरिक्त, कार्तिक के पास छूरा था, जबकि अपीलार्थीगण रासो राय और शंकर राय के हाथों में फरसा था। ग्राम प्रधान का घर घटनास्थल के पाए अवस्थित है। मृतक, अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन का पति, की मृत्यु घटना स्थल पर हो गयी थी। जब उसने भगदड़ में हस्तक्षेप करना चाहा, उसे धमकाया गया और वह घटना स्थल छोड़कर चली गयी। मृतक पर प्रहार करने के बाद, अपीलार्थीगण घटनास्थल से भाग गए। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि भूमि विवाद के संबंध में अपीलार्थीगण उसके पिता के साथ लड़ा करते थे। इन दोनों गवाहों (अ॰ सा॰ 3 एवं 7) को घटना का चश्मदीद गवाह बताया जाता है।

9. अ॰ सा॰ 1 अनन्त लाल राय ग्राम प्रधान है जिसने कथन किया है कि घटना की तिथि पर वह घटना के तुरन्त बाद वह घटना स्थल पर गया और देखा कि मृतक की पत्नी घटना स्थल पर रो रही थी और उसने उसको अपीलार्थीगण और सह-अभियुक्तों का नाम बताया जिन्होंने उसके पति की हत्या कर दी है। अ॰ सा॰ 8 सिंघेश्वर राय मृतक का पुत्र है। उसने अभिसाक्ष्य दिया है कि घटना की तिथि पर वह अपने घर पर उपस्थित नहीं था। वह बेलदाहा गया हुआ था। वह लगभग 7.00 बजे शाम में बेलदाहा से घर लौटा। उसकी माता ने उसे बताया कि अपीलार्थीगण और सह-अभियुक्त लूटन ने उसके पिता की हत्या कर दी थी और सारी घटना बतायी। तत्पश्चात्, उसने चौकीदार को बुलाया और उसे मामला की सूचना पुलिस थाना को देने को कहा गया था।

10. साक्ष्य और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों के परिशीलन के बाद, विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन, मृतक की पत्नी का साक्ष्य तर्कपूर्ण एवं विश्वसनीय नहीं है। अपने निर्णय के पैरा-15 पर विचारण न्यायालय में निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:-

''रधिया घटवारिन (अ० सा० 7), मृतक की पत्नी, ने अपने साक्ष्य में स्वयं को चश्मदीद गवाह बताने का प्रयास किया है। वह कहती है कि जब वह घटनास्थल पर आयी, अभियुक्त जगेश्वर राय, रासो राय और कार्तिक राय घटनास्थल पर खड़े थे। वे सभी लाठी से लैस थे। तब वह कहती है कि अभियुक्त कार्तिक राय के हाथ में छुरा था, रासो राय और शंकर राय फरसा से लैस थे। उस समय, उसके पति की मृत्यु पहले ही हो चुकी थी। किन्तु सूचक गणेश राय (अ० सा० 3) ने कथन किया है और यह अ० सा० 7 के साक्ष्य में भी आया है कि उसे घटना की जानकारी सूचक (अ० सा० 3) से मिली। जब वह घटना स्थल पर पहुँची तो उसने पाया कि उसके पति की मृत्यु हो चुकी थी। सूचक को छोड़कर गाँव का कोई व्यक्ति घटना स्थल पर नहीं था। अतः उसके साक्ष्य में असंगति हुई है कि उसके पति की हत्या, फरसा और छुरे और मृतक पर बरसायी गयी लाठियों से भी की गयी थी। यह असंगति उसके साक्ष्य में इसलिए आयी है क्योंकि उसने घटना का चश्मदीद गवाह होने का प्रयास किया यद्यपि उसने स्वयं घटना नहीं देखी थी। अतः इस बिन्दु पर उसका साक्ष्य अनदेखा करना होगा।''

11. अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन के प्रति-परीक्षण के पैरा-6 के परिशीलन से यह प्रकट है कि उसके पति की हत्या के बारे में उसके भाई गणेश राय अ॰ सा॰ 3 द्वारा उसे सूचित किया गया था। अ॰ सा॰ 3 ने अपने प्रति-परीक्षण के पैरा 9 के अंत में कथन किया है कि उसने अपनी बहन को घटना के बारे में बताया था और वह रोने लगी थी। तत्पश्चात् अ॰ सा॰ 3 गणेश राय और उसकी बहन घटना स्थल पर पुनः गए। यह साक्ष्य स्पष्टतः प्रकट करता है कि घटना के समय वह घटना स्थल पर उपस्थित नहीं थी। हम विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों के साथ पूर्णतः सहमत हैं कि अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन घटना का चश्मदीद गवाह नहीं थी।

12. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया कि कारित उपहतियों के तरीके और घटना में प्रयुक्त हथियारों के बारे में चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य में विरोधाभास और असंगतियाँ है। जैसा हमने पहले ही इंगित किया है, अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन का साक्ष्य तर्कपूर्ण और विश्वसनीय नहीं है। इस प्रकार, हमें घटना के तरीके के बारे में सूचक अ॰ सा॰ 3 गणेश राय के साक्ष्य का अधिमूल्यन करना होगा। अ॰ सा॰ 3 ने अपने साक्ष्य में घटना का विस्तारपूर्वक विवरण दिया है। उन्होंने आगे इंगित किया कि घटना स्थल पर अ॰ सा॰ 3 गणेश राय की उपस्थिति भी संदेहास्पद है क्योंकि अ॰ सा॰ 1 अनन्त लाल राय ग्राम प्रधान घटना के तुरन्त बाद घटना स्थल पर आया और उसने उसको घटना स्थल पर उपस्थित नहीं पाया। उसने अपने साक्ष्य में पक्के तौर पर कथन किया है कि वह मृतक का साला है। घटना की तिथि पर, अ॰ सा॰ 3 गणेश राय अपने गाँव से धावाटांड गाँव, उसके बहनोई अमीरलाल का गाँव, की ओर गया था। रुपसागर गाँव में उसकी मुलाकात अपने बहनोई (मृतक) के साथ हुई और वे दोनों धावाटांड गाँव जाने लगे। जब वे रंगबंध गाँव पहुँचे, अभियुक्त अपीलार्थीगण वहाँ आए और अपीलार्थीगण द्वारा मृतक पर निर्ममतापूर्वक प्रहार किया गया था जिसके परिणामतः उसकी मृत्यु हुई। इस प्रकार, इस गवाह ने पक्के तौर पर कथन किया है कि वह मृतक के साथ कैसे था। प्रतिवादी ने सूचक (अ॰ सा॰ 3) को सुझाव दिया है कि उसने दिनांक 3.5.1986 को प्रातः अपने बहनोई का चिल्लाना सुना और वह घटना स्थल पर गया। इस प्रकार, अगली सुबह अपीलार्थीगण की उपस्थिति स्वीकार की गयी है। प्रति-परीक्षण के दौरान, उक्त साक्ष्य संगति में, विश्वसनीय और तर्कपूर्ण है। अभियोजन साक्ष्य (अ॰ सा॰ 3) का साक्ष्य

तर्कपूर्ण और विश्वसनीय है। गवाह का प्रति-परीक्षण विस्तारपूर्वक किया गया है किन्तु उसके साक्ष्य को गलत साबित करने और त्याग देने के लिए उसके प्रति-परीक्षण में कुछ भी नहीं पाया गया है। इस प्रकार गवाह गणेश राय (अ॰ सा॰ 3) की मृतक के साथ उपस्थिति सुस्थापित है और इस पर संदेह नहीं किया जा सकता है। जहाँ तक अ॰ सा॰ 1 अनन्तलाल राय का साक्ष्य कि क्या उसने अ॰ सा॰ 3 को घटना स्थल पर देखा था या नहीं, का संबंध है, उसका प्रति-परीक्षण स्वयं ही स्पष्टीकरण देता है। अ॰ सा॰ 1 ने कथन किया है कि जब उसने हल्ला सुना, वह और उसका पुत्र घटनास्थल पर गए और कोई अन्य व्यक्ति वहाँ नहीं गया। जब वह घटना स्थल पर पहुँचा, कोई गाँव वाला घटना स्थल पर उपस्थित नहीं पाया गया। अ॰ सा॰ 3 गणेश राय गाँववाला नहीं है; वह बाहरी व्यक्ति है। इस प्रकार, प्रति-परीक्षण में आगे कोई स्पष्टीकरण ईप्सित नहीं किया गया है। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे इस तथ्य कि किसने चौकीदार को बुलाया और किसने उसे मामले की सूचना थाना को देने भेजा, के संबंध में गवाह के परिसाक्ष्य में अन्य लघु विरोधाभासों को इंगित किया। यह असंगति अथवा लोप प्रतिवाद का सहायक नहीं है। जब ऐसी घटना होती है, हर कोई पुलिस थाना उसे भेजने के लिए गाँव के चौकीदार को बुलाएगा। साक्ष्य में यह लोप सामान्य विसंगति है जो संप्रेक्षण की सामान्य गलती, समय बीत जाने के चलते याददाश्त की सामान्य गलती और घटना के समय आघात और भय के चलते मानसिक स्थिति में बदलाव के कारण हैं और ये अंतर हमेशा रहेंगे भले ही गवाह कितना भी ईमानदार और विश्वसनीय क्यों न हो। हमने समस्त साक्ष्य और अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इंगित विरोधाभासों का परिशीलन किया है। जब गवाह न्यायालय के समक्ष उपस्थित होता है, कभी-कभी वह अपने विस्तारपूर्वक प्रति-परीक्षण की परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हो सकता है जो कभी-कभी इसलिए हो सकता है कि वह एक ग्रामीण है और किसी दक्ष प्रति परीक्षक द्वारा पूछे गए प्रश्नों को समझने में सक्षम नहीं है और कभी-कभी, प्रति-परीक्षण के दबाव के अधीन, उससे कुछ उत्तर उगलवाए जा सकते हैं। जब कोई देहाती अथवा अनपढ़ गवाह किसी बुद्धिमान अधिवक्ता का सामना करता है, असंतुलन होना ही है और इसलिए लघु अंतरों को अनदेखा करना ही होगा। (देखें **कृष्ण मोची बनाम बिहार राज्य, 2002 (6) SCC 81** में प्रकाशित)। अत: हम इस प्रतिवाद में कोई बल नहीं पाते हैं कि उसके साक्ष्य को गलत साबित करने हेतु गवाह के परिसाक्ष्य में बड़े विरोधाभास हैं। इस प्रकार, प्रति-परीक्षण में सूचक (अ॰ सा॰ 3) का परिसाक्ष्य पूर्णत संगत है। उसने घटना का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है और बचाव पक्ष ने गवाह का विस्तारपूर्वक प्रति-परीक्षण किया है किन्तु उसके परिसाक्ष्य को गलत साबित करने के लिए उसके प्रति-परीक्षण में से कुछ भी निकाल नहीं पाया। हमने अभिलेख पर मौजूद सम्पूर्ण साक्ष्य का परिशीलन किया है। साक्ष्य के परिशीलन के बाद, हम विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्षों के साथ पूर्णत: सहमत हैं कि अ॰ सा॰ 3 का साक्ष्य नि:संदेह तर्कपूर्ण, विश्वसनीय है और अ॰ सा॰ 3 गणेश राय के साक्ष्य की विश्वसनीयता नकारी अथवा ठुकरायी नहीं जा सकती है। हम विचारण न्यायालय द्वारा अ॰ सा॰ 3 के साक्ष्य के अधिमूल्यन में गलती नहीं पाते हैं।

13. विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया कि मृतक का संबंधी होने के नाते अ॰ सा॰ 3 गणेश राय एक हितबद्ध और सपक्षी गवाह है और उसके परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता है; दुश्मनी के कारण अभियुक्त अपीलार्थीगण को मामले में झूठा फँसाया गया है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने अपीलार्थीगण की ओर से उठाए गए प्रतिवाद का खंडन किया। विवेक का ऐसा कोई नियम नहीं है जो अपेक्षा करता हो कि निकट सम्बन्धियों का साक्ष्य अस्वीकार या गलत साबित किया जाना चाहिए कि वे एक दूसरे के रिश्तेदार हैं। अब तक, यह सुनिश्चित है कि दुश्मनी दुधारी तलवार है जो दोनों ओर से काटती है। यह झूठा फँसाने का आधार हो सकता है और यह प्रहार का आधार भी हो सकता है। मात्र इसलिए

कि गवाह मृतक से संबंधित है, यह उसके परिसाक्ष्य को गलत साबित करने का आधार नहीं होगा यदि संबंधित गवाहों का परिसाक्ष्य विश्वास उत्पन्न करता है। वर्तमान मामले में, अ॰ सा॰ 3 गणेश राय सूचक जो गवाह के साथ था, स्वाभाविक गवाह है। साक्ष्य से यह भी पता चलता है कि घटना स्थल के निकट कोई आवासीय गृह नहीं है। अ॰ सा॰ 3 के स्वाभाविक गवाह होने के नाते, हम उसके परिसाक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं पाते हैं। इसी प्रकार, उसका मृतक का साला होने के नाते, उसकी कोशिश होगी कि वास्तविक अपराधियों को दंडित किया जाय और सामान्यत: वे वास्तविक अपराधी को बच निकलने देने के लिए किसी निर्दोष व्यक्ति को नहीं फँसाएँगे।

14. क्लेश मंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2007 (8) SCC 578) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

पैरा 11 : "10. हम यह भी सम्प्रेक्षित कर सकते हैं कि साक्षीगण नजदीकी रिश्तेदार हैं और परिणामस्परूप सपक्षी गवाह है; अतः उन पर विश्वास नहीं किया जाना चाहिए, में कोई सार नहीं है। इस सिद्धान्त को इस न्यायालय द्वारा बहुत पहले दलीप सिंह बनाम पंजाब राज्य में ठुकरा दिया गया था जिसमें इस धारणा पर आश्चर्य व्यक्त किया गया था जो बार के सदस्यगण के बीच प्रचलित है कि संबंधी स्वतंत्र गवाह नहीं है। विवियन बोस, न्यायमूर्ति के माध्यम से कहते हुए यह संप्रेक्षित किया गया था: (AIR p. 366, Para 25)

"25. हम उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों से सहमत होने में अक्षम हैं कि दो चश्मदीद गवाहों का परिसाक्ष्य पुष्टिकरण की अपेक्षा करता है। यदि ऐसे संप्रेक्षण की नींव इस तथ्य पर आधारित है कि गवाह महिलाएँ हैं और सात पुरुषों का भाग्य उनके परिसाक्ष्य पर टिका है, हम ऐसे किसी नियम को नहीं जानते है। यदि यह इस कारण पर आधारित है कि वे मृतक के निकट संबंधी है, हम सहमत होने में अक्षम है। यह अनेक दांडिक मामलों में सामान्य एक भ्रांति है जिसे इस न्यायालय की एक अन्य पीठ ने रामेश्वर बनाम राजस्थान राज्य (AIR, P. 59) में दूर करने का प्रयास किया था। किन्तु हम पाते हैं कि यह भ्रांति दुर्भाग्यवश अभी भी बनी हुई है, यदि न्यायालयों के निर्णयों में नहीं तो कम से कम अधिवक्ता के तर्क में तो निश्चय ही।''

मसालती बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (AIR 1965 SCC 202) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

14. श्री साहनी ने तर्क किया है कि जहाँ वर्तमान मामला जैसे हत्या के विचारण में साक्ष्य देते गवाहों को पीड़ितों के समूह से आता दर्शाया जाता है, उनके साक्ष्य को स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि उनका झुकाव दुश्मनी और पक्षगत भावनाओं के कारण प्रतिद्वंदी समूह के सदस्यगण को झूठा अंतर्ग्रस्त करने की ओर होता है। नि:संदेह जब दांडिक न्यायालय को गवाहों, जो पक्षधर अथवा हितबद्ध हैं, द्वारा दिए गए साक्ष्य को अधिमूल्यन करना होता है, उसे ऐसे साक्ष्य को तौलने में बहुत सतर्क रहना चाहिए। साक्ष्यों में विसंगतियाँ है या नहीं; न्यायालय को साक्ष्य वास्तविक लगता है या नहीं; साक्ष्य द्वारा प्रकट की गयी कथा संभाव्य है या नहीं, ये सब ऐसे मामले हैं जिन्हें विचार में लेना होगा। किन्तु, हम सोचते हैं, यह प्रतिवाद करना अयुक्तिसंगत होगा कि गवाहों द्वारा दिए गए साक्ष्य को केवल इस आधार पर त्याग देना चाहिए क्योंकि यह पक्षधर या हितबद्ध गवाहों का साक्ष्य है। प्रायः जहाँ गाँव में गुट प्रचलित है और ऐसे गुटों के बीच दुश्मनी के कारण हत्या की जाती है, दांडिक न्यायालय को पक्षधर प्रकार के साक्ष्य पर विचार करना होता है। एकमात्र इस आधार पर ऐसे साक्ष्य को यांत्रिक

रूप से अस्वीकार किया जाना अपरिहार्य रूप से न्याय की विफलता की ओर ले जाएगा। कोई कठोर विधि अधिकथित नहीं की जा सकती है कि कितना सारा साक्ष्य का अधिमूल्यन किया जाना चाहिए। ऐसे साक्ष्य पर विचार करते हुए न्यायाधीशों को सतर्क/सावधान होना होगा; किन्तु यह अभिवाक कि ऐसे साक्ष्य को अस्वीकार कर देना चाहिए क्योंकि यह पक्षधर है, को सही स्वीकार नहीं किया जा सकता है।''

15. विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया कि प्राथमिकी दर्ज करने में सूचक अ॰ सा॰ 3 द्वारा 16 घंटों से अधिक का विलम्ब किया गया है। उन्होंने आगे कथन किया कि प्राथमिकी दर्ज करने में हुए विलम्ब का परिणाम पश्चातवर्ती विचार के जरिए अतिशयोक्ति अथवा समृद्ध करने में होता है और अभियुक्त अपीलार्थीगण को इस मामले में झूठा फँसाया गया है। उन्होंने आगे कथन किया कि प्राथमिकी दर्ज करने में हुए विलम्ब का परिणाम पश्चातवर्ती विचार के जरिए सजाने-सँवारने अथवा समृद्ध करने में होता है और अभियुक्त अपीलार्थीगण को इस मामले में झूठा फँसाया गया है। अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि घटना दिनांक 2.5.1986 को सांय लगभग 4 बजे हुई थी। प्राथमिकी दिनांक 3.5.1986 को प्रात: लगभग 10 बजे दर्ज की गयी थी। घटना स्थल और पुलिस थाना के बीच की दूरी लगभग 26 किलोमीटर है। अभियोजन का मामला यह है कि सूचक अ॰ सा॰ 3 गणेश राय का बहनोई मृतक के साथ घटना स्थल पर था; केवल एक महिला सदस्य अर्थात् मृतक की पत्नी (अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन) भी घटना स्थल के निकट उपस्थित थी। अ॰ सा॰ 7 रधिया घटवारिन का पुत्र अपने घर सांय लगभग 7 बजे पहुँचा। उसने गाँव के चौकीदार को बुलाया और तब उसने चौकीदार को पुलिस थाना भेजा। वे तथ्य प्रति-परीक्षण के दौरान संगति में बने रहते हैं कि सूचना चौकीदार के माध्यम से पुलिस थाना को भेजी गयी थी, तत्पश्चात् अगली तिथि पर पुलिस सुबह में आयी। घटना स्थल और पुलिस थाना के बीच की दूरी लगभग 26 कि॰ मी॰ है। घटना सांयकाल में हुई थी और स्पष्टत: रात में कोई भी पुलिस थाना जाने में सक्षम नहीं होगा। यह भी विधि का सुनिश्चित सिद्धान्त है कि विलम्ब का स्पष्टीकरण अभियोजन द्वारा साक्ष्य दिया जाना चाहिए अथवा अभिलेख से पता लगती परिस्थितियों द्वारा विलम्ब स्पष्ट किया जाना चाहिए। अभिलेख प्रकट करते हैं कि अभियोजन गवाहों द्वारा विलम्ब का पर्याप्त स्पष्टीकरण दिया गया है। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाए गए प्रतिवाद में कोई बल नहीं है।

16. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि विचारण न्यायालय का रवैया गलत था, अभियुक्त अपीलार्थीगण को धारा 302 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था। सत्र न्यायाधीश ने धारा 302/149 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन आरोप विरचित नहीं किया था क्योंकि अभियोजन द्वारा कोई विनिर्दिष्ट भूमिका सिद्ध नहीं की गयी है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद का खंडन किया।

17. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के उक्त प्रतिवादों का अधिमूल्यन करने के पहले हम आरोपों को उद्धृत करना चाहेंगे:-

मैं, एस॰ के॰ द्विवेदी, सत्र न्यायाधीश, दुमका आपको (1) लूटन राय, (2) जगेश्वर राय, (3) शंकर राय, (4) कार्तिक राय एवं रासो राय उर्फ रासनन्दन राय को एतद् द्वारा निम्नलिखित आरोपित करता हूँ:-

आरोप (1) : कि आप, दिनांक 2 मई, 1986 को अथवा इसके आसपास ग्रा० रंगाबंद थाना जरमुंडी में गैर-कानूनी सभा के सदस्य थे और ऐसे जनसमूह के सामान्य लक्ष्य अर्थात् अमीरलाल राय की हत्या करने के अनुसरण/निष्पादन में दंगा का अपराध किया और तद्द्वारा मेरे संज्ञान के भीतर भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन दंडनीय अपराध को किया; आरोप (2) : कि आपने उसी दिन, उसी स्थान पर अथवा

इसके आसपास आशयपूर्वक और जानबूझकर उसकी मृत्यु कारित करते हुए अमीरलाल राय की हत्या की और तद्द्वारा मेरे संज्ञान के भीतर और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध को किया।

अपीलार्थी जगेश्वर राय को भी गणेश राय (अ॰ सा॰ 3) को चोट कारित करने और भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन दंडनीय अपराध करने का आरोपित किया गया।

18. आरोप (1) और आरोप (2) को एक साथ पठन करने पर यह स्पष्ट होता है कि आरोप विरचित करते हुए विचारण न्यायालय ने विनिर्दिष्ट किया कि अभियुक्त अपीलार्थीगण विधि विरूद्ध जमाव के सदस्य थे और वे एक सामान्य लक्ष्य के साथ एकत्रित हुए थे जो मृतक की हत्या करना था। दूसरा आरोप धारा 302 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन विरचित किया गया है। अतः हमें यह न्यायनिर्णयन करना है कि क्या अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इंगित गलती दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अधीन उपचार योग्य अनियमितता है।

19. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 464 निम्नलिखित प्रावधानित करती है:–

*464. **आरोप विरचित न करने या उसके अभाव या उसमें गलती का प्रभाव.**–(1) किसी सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय का कोई निष्कर्ष, दण्डादेश या आदेश केवल इस आधार पर कि कोई आरोप विरचित नहीं किया गया अथवा इस आधार पर कि आरोप में कोई गलती, लोप या अनियमितता थी, जिसके अन्तर्गत आरोपों का कुसंयोजन भी है, उस दशा में ही अविधिमान्य समझा जाएगा जब अपील, पुष्टीकरण या पुनरीक्षण न्यायालय की राय में उसके कारण वस्तुतः न्याय नहीं हो पाया है।*

(2) यदि अपील, पुष्टीकरण या पुरीक्षण न्यायालय की राय है कि वस्तुतः न्याय नहीं हो पाया है तो वह–

(a) आरोप विरचित न किए जाने की दशा में यह आदेश कर सकता है कि आरोप विचारण की विरचना के ठीक पश्चात् विरचित किया जाए और आरोप पुनः प्रारम्भ किया जाए;

(b) आरोप में किसी गलती, लोप या अनियमितता वाली दशा में यह निदेश दे सकता है कि किसी ऐसी रीति से, जिसे वह ठीक समझे, विरचित आरोप पर नया विचारण किया जाए:

परन्तु यदि न्यायालय की यह राय है कि मामले के तथ्य ऐसे हैं कि साबित तथ्यों की बाबत अभियुक्त के विरुद्ध कोई विधिमान्य आरोप नहीं लगाया जा सकता तो वह दोषसिद्धि को अभिखंडित कर देगा।''

20. आरोप विरचित करने में लोप अथवा त्रुटि मात्र दांडिक न्यायालय को अपराध, जिसे अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य द्वारा सिद्ध पाया गया है, के लिए अभियुक्त को दंडित करने से अक्षम नहीं बनाता है। दंड प्रक्रिया संहिता में ऐसी स्थिति, जैसी स्थिति हमारे समक्ष है, का सामना करने के लिए पर्याप्त प्रावधान है। धारा 302 और धारा 148 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन विरचित आरोप के कथन से यह स्पष्ट है कि धारा 302/149 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपराध का आरोप विरचित करने के लिए मामले में सारे तथ्य और घटक विद्यमान थे। विचारण न्यायालय द्वारा धारा 302/149 भा॰ दं॰ सं॰ के उल्लेख का लोप मात्र न्यायालय को उक्त सिद्ध किए जाने पर अपराध के लिए अभियुक्त को दोषसिद्ध करने से अपवर्जित नहीं करता है। धारा 147 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन विरचित आरोप में यह स्पष्टतः उल्लिखित किया गया है कि अभियुक्त गैर–कानूनी समूह का सदस्य था और ऐसे जनसमूह के सामान्य लक्ष्य के निष्पादन में अर्थात् अमीरलाल राय की हत्या करने में दंगा का अपराध किया था। धारा 221 दं॰ प्र॰ सं॰ के प्रावधान ऐसी

स्थिति का संरक्षण करते हैं और किसी अभियुक्त को किसी अपराध, जिसके लिए उसे आरोपित नहीं किया गया है यद्यपि साक्ष्य में प्राप्त तथ्यों पर उसे ऐसे अपराध के लिए आरोपित किया जा सकता था, के लिए दोष सिद्ध करने की दांडिक न्यायालय की शक्तियों की सुरक्षा करते हैं। विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि मृतक पर उपहतियाँ कारित करने के लिए सारे अभियुक्तों को धारा 302 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोपित किया गया था। इसके विरुद्ध, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि यद्यपि धारा 302 सह-पठित धारा 149 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन आरोपित विरचित नहीं करने में अपर सत्र न्यायाधीश की ओर से गलती हुई है, अभियुक्तों पर प्रतिकूल प्रभाव कारित नहीं हुआ है क्योंकि न्यायालय के समक्ष प्रासंगिक तथ्यों को रखा गया था और अभियुक्तों का ध्यान आरोप सं॰ 1 की ओर आकृष्ट किया गया था। अत: सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश न्यायोचित और वैध है।

21. मुख्य प्रश्न जिसपर विचार किए जाने की आवश्यकता है, वह यह है कि क्या अभियुक्त अपीलार्थीगण को धारा 302/149 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन दोषसिद्ध करना संभव है यदि उक्त अपराध के लिए उनके विरुद्ध आरोप विरचित नहीं किया गया है। **लखजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य [(1994 Suppl.) (1) SCC 173)]** में अभियुक्त को धारा 302 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन आरोपित किया गया था और उक्त अपराध के लिए विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों द्वारा दोषसिद्ध और दंडित किया गया था। अपील में यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया कि धारा 302 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन विरचित आरोप को स्थापित नहीं किया गया था। तब न्यायालय ने इस प्रश्न का परीक्षण किया कि क्या अभियुक्त को धारा 306 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन दोष सिद्ध किया जा सकता था और उस संबंध में उक्त अपराध के लिए आरोप विरचित नहीं किए जाने के प्रभाव पर विचार किया। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अभियोजन द्वारा दिए गए साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए यह स्थापित किया गया था कि अभियुक्त को अभिकथनों का पर्याप्त ध्यान था जो धारा 306 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन दोषसिद्धि का आधार विरचित कर सकती थी। मामले के इस दृष्टिकोण में आरोपों का कुसंयोजन कोई अवैधता नहीं है। बल्कि धारा 464 अथवा धारा 465 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन उपचार योग्य अनियमितता है बशर्ते कि तद्द्वारा न्याय की विफलता नहीं हो। तद्द्वारा न्याय की विफलता होती है या नहीं, यह न्यायालय का कर्तव्य है कि देखे कि क्या अभियुक्त का निष्पक्ष विचारण हुआ था, क्या वह जानता था कि उसका विचारण क्यों किया जा रहा था, क्या उसके विरुद्ध स्थापित किए जाने के लिए ईप्सित तथ्यों को उसको निष्पक्षत: स्पष्ट किया गया था और क्या उसे अपने बचाव का पूरा और उचित मौका दिया गया था।

22. दमपाला चन्द्र रेड्डी बनाम निमाकायला बालीरेड्डी, (2008 (8) SCC 339) में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:-

> *"18. इस न्यायालय ने बार-बार दोहराए गए विल्ली (विलियम) स्लेनी बनाम राज्य (AIR 1956 SC 116) मामला में प्रतिकूलता/पूर्वाग्रह के पहलू को उभारा था। इस निर्णय को पश्चातवर्ती मामलों की वृहत संख्या में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 464 की पृष्ठभूमि ने प्रतिकूलता के प्रश्न पर विचार करते हुए निर्दिष्ट किया गया है। रामकिशन बनाम राजस्थान राज्य [1997 (7)SCC 518 : 1997 SCC (Cri) 1106) में निम्नलिखित कहा गया था। (SCC PP 512-22, Para 8)*
>
> *"8. विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा दर्ज निष्कर्षों और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों की दृष्टि में, हम इस निष्कर्ष से सहमत होने में अक्षम हैं कि अपीलार्थीगण का आशय मृतक भूरा की मृत्यु कारित करना था। निष्कर्ष विचारण न्यायालय के संप्रेक्षण के विरुद्ध जाता है जैसा ऊपर ध्यान में लिया गया है। चिकित्सीय साक्ष्य भी विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज अंतिम निष्कर्ष का समर्थन नहीं करता है। मामले के स्थापित तथ्यों और परिस्थितियों में, अपीलार्थीगण के मामले में अपराध केवल धारा 304 भाग-II भा० दं० सं० सह-पठित धारा 149 भा० दं० सं० के अधीन, और न कि धारा 302 भा०*

दं० सं० के अधीन होगा। वस्तुतः धारा 149 भा० दं० सं० को लागू करने की जरूरत उपदर्शित करता कोई विनिर्दिष्ट आरोप विरचित नहीं किया गया था किन्तु अपीलार्थीगण के विरुद्ध विरचित आरोप में धारा 149 भा० दं० सं० के सारे घटकों को स्पष्टतः उपदर्शित किया गया था और जैसा विली (विलियम) स्लेनी बनाम म० प्र० राज्य में इस न्यायालय की संवैधानिक पीठ द्वारा अभिनिर्धारित किया गया था, आरोप में धारा 149 भा० दं० सं० के विनिर्दिष्ट उल्लेख का लोप केवल एक अनियमितता है और चूँकि उस लोप द्वारा अपीलार्थीगण पर कोई प्रतिकूल प्रभाव कारित हुआ नहीं दर्शाया गया है, यह उनकी दोषसिद्धि को प्रभावित नहीं कर सकता है।''

19. ऐसा ही दृष्टिकोण बी० एन० श्रीकान्तिया बनाम मैसूर राज्य, (AIR 1958 SC 672) धारा 34 की तुलना में धारा 149 की पृष्ठभूमि में लिया गया है। दलबीर सिंह बनाम उ० प्र० राज्य (2004 (5) SCC 334), में निम्नवत् उल्लेख किया गया थाः–

विली (विलियम) स्लाने बनाम म० प्र० राज्य (AIR 1956 SC 116) में आरोप की अनुपस्थिति के प्रश्न पर संवैधानिक पीठ ने विस्तारपूर्वक विचार किया। पैरा 6 और 7 में किए गए संप्रेक्षणों को जो सामान्य रूप से लागू होते हैं, नीचे उद्धृत किया जा रहा है:

"6. इसके पहले कि हम अपना उत्तर देने को अग्रसर हों और संहिता के प्रावधानों का परीक्षण करें, हम यह संप्रेक्षण करने के लिए ठहरेंगे कि संहिता प्रक्रिया की संहिता है और सभी प्रक्रियात्मक विधि की तरह न्याय के उद्देश्य को अग्रसर करने के लिए, और न कि अंतहीन बारीकियाँ जोड़ कर उनको निष्फल करने के लिए, डिजाइन किया गया है। संहिता का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि कतिपय सुस्थापित और सुविचारित आधार, जो हमारे नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्त के अनुरुप है, पर अभियुक्त का पूर्ण और निष्पक्ष विचारण किया जाए।

यदि वह करता है, यदि सक्षम न्यायालय द्वारा उसका विचारण किया जाता है; यदि अपराध जिसके लिए उसका विचारण किया जा रहा है, की प्रकृति के बारे में उसे बताया जाता है और इसकी स्पष्ट समझ है, यदि उसके विरुद्ध मामले उसको पूर्णतः और निष्पक्षतः स्पष्ट किया गया है और यदि उसे अपने बचाव का पूरा और निष्पक्ष अवसर दिया जाता है, तब बशर्ते विधि के बाध्य रूपों का 'सारवान' पालन किया गया है, प्रक्रिया में मात्र गलती और विचारण में परिणामविहीन गलती अथवा लोप मात्र संहिता द्वारा अनैतिक मानी जाती है और विचारण तब तक दूषित नहीं होता है जबतक अभियुक्त निश्चित प्रतिकूलता नहीं दर्शाता है। व्यापक रूप से कहते हुए, यह मूल सिद्धान्त है जिस पर संहिता आधारित है।

7. अब यहाँ, जैसा समस्त प्रक्रियात्मक विधियों में है, कतिपय चीजें महत्वपूर्ण मानी जाती है। उस प्रकृति के प्रावधान की उपेक्षा विचारण के लिए घातक है और तुरन्त दोषसिद्धि को अविधिमान्य करता है। अन्य बातें महत्वपूर्ण नहीं है और जो भी अनियमितता है, उन्हें दूर किया जा सकता है; वैसी स्थिति में, दोषसिद्धि बनी रहेगी जब तक कि न्यायालय संतुष्ट न हो कि प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था। इन मामलों में से कुछ पर संहिता द्वारा विचार किया गया है और जब कभी ऐसा मामला होता है, इसके प्रावधानों को पूरा प्रभाव देना ही होगा।''

15.1. दंड प्रक्रिया संहिता 1998 की धाराएँ 225, 232, 535 और 537 के प्रावधानों, जो 1973 संहिता की धाराओं 215, 464 (2), 464 और 465 के तत्सम है, का विश्लेषण करने के बाद न्यायालय ने रिपोर्टः (AIR P. 128) के पैरा 44 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया।

"44. अब, जैसा हम कह चुके हैं, धाराएँ 225, 232, 535 और 537 (a) अपने बीच, ऐसे मामलों जिनमें शुरू से अंत तक कोई आरोप नहीं है फिर भी दोषसिद्धि की गयी है, से ऐसे मामलों जिनमें आरोप तो है किन्तु इसमें गलतियाँ, अनियमितताएँ एवं

लोप है, तक आरोप के प्रति निर्दिष्ट योग्य प्रत्येक कल्पित प्रकार की गलती और अनियमितता जो संभवतः उद्‌भुत हो सकती है को आच्छादित करती हैं। संहिता जोर देता है कि 'जो भी' अनियमितता है, इसे घातक तब तक नहीं माना जा सकता है जब तक प्रतिकूल प्रभाव नहीं है।

हमें सदैव सार ईप्सित करना चाहिए। न्यायालयों को न्याय प्रदान करना है और न्याय दोष का दंड भी उस हद तक सम्मिलित करता है जितना निर्दोष की सुरक्षा। दोनों में कोई भी नहीं किया जा सकता है यदि छाया को सार माना जाता है और लक्ष्य सारहीन बारीकियों के जाल में लुप्त हो जाता है। व्यापक दृष्टि, राज्य के अधिकारों और किसी व्यक्ति की परेशानी से सुरक्षा के विरुद्ध समाज की सुरक्षा और अन्यायोचित दोषसिद्धि के जोखिम के सही संतुलन की आवश्यकता है।

अभियुक्त के पक्ष में प्रत्येक युक्तियुक्त उपधारणा की जानी चाहिए; उसे प्रत्येक युक्तियुक्त संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए। दोष के न्याय निर्णयन में प्रतिकूलता का मामला विनिश्चित करते हुए न्याय और निष्पक्षता के इन्हीं मुख्य सिद्धांतों का प्रयोग करना होगा। लेकिन सब कुछ कहने-करने के बाद, हमें यह देखने से सरोकार है कि क्या अभियुक्त का निष्पक्ष विचारण हुआ था, क्या वह जानता था कि उसका विचारण क्यों किया जा रहा था, क्या उसके विरुद्ध स्थापित किए जाने वाले ईप्सित मुख्य तथ्यों को उसे निष्पक्षतः और स्पष्टतः बताया गया था और क्या उसे अपने बचाव का पूरा और निष्पक्ष मौका दिया गया था।

यदि ये सारे तत्व हैं और कोई प्रतिकूलता नहीं दर्शायी जाती है, दोषसिद्धि बनी रहेगी चाहे जो भी अनियमितताएँ हो, आरोप के होने या न होने को दिखाते हुए।''

16. यह प्रश्न पुनः तीन न्यायाधीश पीठ द्वारा गुरवचन सिंह बनाम पंजाब राज्य (AIR 1957 SCC 623) में परीक्षित किया गया था जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया था। (AIR पृष्ठ 626 पैरा 7)

"7. .....प्रतिकूलता, और दोष का भी, का प्रश्न निर्णीत करते हुए न्यायालयों को व्यापक दृष्टि के साथ कार्य करना चाहिए और सार, न कि बारीकियों, को देखना चाहिए, और उनका मुख्य सरोकार यह देखना होना चाहिए कि क्या अभियुक्त का निष्पक्ष विचारण हुआ है, क्या वह जानता था कि उसका विचारण क्यों किया जा रहा था, उसके विरुद्ध स्थापित किए जाने हेतु ईप्सित मुख्य तथ्यों को उसे निष्पक्षतः और स्पष्टतः बताया गया था और क्या उसे अपने बचाव का पूरा और निष्पक्ष अवसर दिया गया था।''

17. इन्हीं पंक्तियों पर इस न्यायालय के निर्णयों की एक श्रृंखला है और उनमें से प्रत्येक को निर्दिष्ट करके इस निर्णय को बोझिल बनाना आवश्यक नहीं है। अतः धारा 464 दं० प्र० सं० की दृष्टि में, किसी भी अपराध, जिसके लिए आरोप विरचित नहीं किया गया था, के लिए किसी अभियुक्त को दोष सिद्ध करना अपीलीय अथवा पुनरीक्षण न्यायालय के लिए तब तक संभव है जब तक न्यायालय का मत यह न हो कि ऐसा न करने से न्याय की विफलता वस्तुतः होगी। यह निर्णय करने के लिए कि न्याय की विफलता हुई है या नहीं, यह परीक्षण करना प्रासंगिक होगा कि क्या अभियुक्त अपराध, जिसके लिए उसे दोषसिद्ध किया जाता है, के मूल घटकों के प्रति जागरूक था और क्या उसके विरुद्ध स्थापित किए जाने हेतु ईप्सित मुख्य तथ्य उसको स्पष्टतः स्पष्ट किए गए थे और क्या उसे अपने बचाव का निष्पक्ष मौका मिला था।

20. जैसा अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा सही इंगित किया गया है, उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को अनदेखा कर दिया कि यदि धारा 149 भा० दं० सं० के अधीन आरोप की अनुपस्थिति में इसके दृष्टिकोण को स्वीकार किया जाता है, धारा 326 भा० दं० सं० के निबंधनानुसार दोषसिद्धि नहीं की जा सकती थी।''

21. रेवा राम बनाम तेजा [2008 (8) SCC 346] में इस न्यायालय के निर्णय का उच्च न्यायालय गलत अर्थ लगाता प्रतीत होता है। उस मामले में, उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्तगण को केवल धारा 326 भा० दं० सं० के अधीन दोषी अभिनिर्धारित किया जा सकता है, विशेषतः जब यह कथन किया गया था कि उनका सामान्य लक्ष्य मृतक पर प्रहार करना और घातक हथियारों के साथ दंगा करना था। यहाँ स्थिति बिलकुल भिन्न है। वस्तुतः आरोप विरचित करते हुए, और आरोप (1) और आरोप (3) का इकट्ठा पठन इसे स्पष्ट करता है, न्यायालय ने विनिर्दिष्ट किया कि अभियुक्तगण गैरकानूनी जनसमूह के सदस्य थे और ऐसे जनसमूह के सामान्य लक्ष्य के निष्पादन में अर्थात मृतक की हत्या करने में अपराध किया और उस समय वे छुरा, आदि से लैस थे जो धारा 148 भा० दं० सं० की प्रयोज्यता को आकृष्ट करता है। आरोप (3) में, संव्यवहारों और छुरा से मृतक का शरीर क्षत-विक्षत करते हुए और उसका आशयपूर्वक मृत्यु कारित करते हुए और तद्द्वारा धारा 302 भा० दं० सं० के अधीन दंडनीय अपराध करते हुए हत्या करने के लक्ष्य के प्रति विनिर्दिष्ट आरोप है जैसा प्रथम आरोप में उल्लिखित किया गया है। अतः धारा 149 भा० दं० सं० के अधीन दंडनीय अपराध के संबंध में आरोप न केवल अंतर्निहित है बल्कि आरोप में स्पष्ट भी है।''

23. धारा 149 भा० दं० सं० की प्रयोज्यता उपदर्शित करते हुए कोई विनिर्दिष्ट आरोप विरचित नहीं किया गया था। किन्तु अपीलार्थीगण के विरुद्ध विरचित आरोप में भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के अवयवों को पहले ही उपदर्शित किया गया था। इस प्रकार, आरोप जिसे ऊपर उद्धृत किया गया है स्पष्टतः उपदर्शित करता है कि अपीलार्थीगण ने गैरकानूनी जनसमूह गठित किया और अपने सामान्य लक्ष्य के निष्पादन में मृतक की हत्या की। इस प्रकार, आरोप स्वयं भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के घटकों को उपदर्शित करता है और भारतीय दंड संहिता की धारा 149 को उपदर्शित करते हुए आरोप का विरचित नहीं किया जाना अपीलार्थीगण पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालता है।

24. आरोप (1) और आरोप (2) का संयुक्त-पठन स्पष्ट करता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने विनिर्दिष्ट किया कि अभियुक्त अपीलार्थीगण गैरकानूनी जनसमूह के सदस्य थे और मृतक की हत्या करने के लिए ऐसे जनसमूह के सामान्य लक्ष्य के निष्पादन में अपराध किया। दूसरे आरोप में संव्यवहार, जैसा कि पहले आरोप में है, और मृतक की हत्या करने के लक्ष्य के प्रति विनिर्दिष्ट निर्देश है। यह मामला पूर्णतः **दम्पाला चन्द्र रेड्डी बनाम निमाकयाला बालीरेड्डी एवं अन्य, 2008 (8) SCC 339 (ऊपर)** मामला द्वारा आच्छादित है।

25. जैसा हमने पहले के पैराग्राफों में साक्ष्य पर पहले ही चर्चा की है, साक्ष्य से यह सिद्ध होता है कि अभियुक्त अपीलार्थीगण के बीच हाथापाई हुई। तत्पश्चात् सह अभियुक्त लूटन राय, अपीलार्थीगण 2 और 4 का पिता ने उनको मृतक की हत्या करने को कहा। अपने-अपने हाथों में लाठियाँ लिए हुए सारे अपीलार्थीगण ने ताबड़तोड़ लाठियाँ बरसायी और घटना स्थल पर उसकी हत्या कर दी। अतः विचारण न्यायालय ने धारा 148 और 302 भा० दं० सं० के अधीन आरोप विरचित किया है। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि अपीलार्थीगण का प्रमुख आशय मृतक पर उपहतियाँ कारित करना नहीं था बल्कि लाठी से मारकर उसकी हत्या करना था। उसकी हत्या करने के आशय से उसका पीछा करते हुए मृतक पर अपीलार्थीगण ने लाठी से प्रहार किया। चिकित्सीय साक्ष्य भी अभियोजन के विवरण का समर्थन करता है। मामला के स्थापित तथ्य और परिस्थितियों में अपराध के लिए अपीलार्थीगण निश्चय ही धारा 302 सह-पठित धारा 149 भा० दं० सं० के अधीन और न कि मात्र धारा 302 भा० दं० सं० के अधीन दंडित होने के जिम्मेवार होंगे।

उक्त की दृष्टि में, हम अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के प्रतिवाद में कोई बल नहीं पाते हैं।

26. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया कि अभियोजन ने स्वीकार किया है कि घटना के तुरन्त बाद अन्य गाँव वाले घटना स्थल पर आ गए। अभियोजन द्वारा किसी ग्रामीण को प्रस्तुत नहीं किया गया है और इसलिए अभियोजन के विरुद्ध विपरीत निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद का खंडन किया। यह सत्य है कि यदि तात्विक गवाहों, जो घटना की उत्पत्ति अथवा अभियोजन मामले के प्रमुख अंश को सामने लाएँगे, को अन्यथा पूरे विश्वास के साथ न्यायालय नहीं लाया गया था अथवा जहाँ अभियोजन में अंतर अथवा दुर्बलता है जिसे गवाहों, जो उपलब्ध तो थे पर परीक्षित नहीं किए गए थे, का परीक्षण करके अथवा कम किया जा सकता था, अभियोजन मामला को त्रुटिपूर्ण/खामी भरा कहा जा सकता है और ऐसे तात्विक गवाहों को रोके रखना, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि यदि गवाहों का परीक्षण किया जाता, वे अभियोजन मामला का समर्थन नहीं करेंगे, अभियोजन के विरुद्ध विपरीत निष्कर्ष निकालने के लिए न्यायालय को बाध्य करेगा। यदि जबरदस्त साक्ष्य पहले ही उपलब्ध है और अन्य गवाहों का परीक्षण पहले ही दिए गए साक्ष्य को दोहराना होगा, ऐसे गवाहों का अपरीक्षण तात्विक नहीं हो सकता है। यह विनिश्चिय करने में कि क्या कोई गवाह आवश्यक है या नहीं, न्यायालय को स्वयं से पूछना चाहिए कि क्या मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में ऐसे अन्य गवाह का परीक्षण करना आवश्यक था। यदि क्या ऐसा गवाह परीक्षण के लिए उपलब्ध था और इसे न्यायालय से रोक कर रखा गया था। यदि उत्तर सकारात्मक है, केवल तभी विपरीत निष्कर्ष निकालने का प्रश्न उद्भूत हो सकता है। यदि पहले परीक्षित किए गए गवाह, विश्वसनीय और भरोसेमंद हैं और उनका परिसाक्ष्य अविवादित है, न्यायालय अन्य गवाहों के अपरीक्षण के तथ्य से प्रभावित हुए बिना इस पर सुरक्षापूर्वक कार्रवाई कर सकता है।

27. वर्तमान मामले में, हम पाते हैं कि गवाहों, जिनकी उपस्थिति पर संदेह किया ही नहीं जा सकता है, द्वारा घटना का प्रत्यक्ष साक्ष्य भी है। उक्त गवाहों द्वारा घटना की उत्पत्ति पर प्रकाश डाला गया है। अभियोजन ने अ० सा० 3 गणेश राय सूचक को प्रस्तुत किया जो घटना का चश्मदीद गवाह है और अभियोजन ने अ० सा० 1 अनन्तलाल राय का साक्ष्य भी प्रस्तुत किया है जो घटना के तुरन्त बाद घटना स्थल पर आया और मृतक का मृत शरीर जमीन पर पड़ा देखा और मृतक की पत्नी घटना स्थल पर रो रही थी और उसने उसे घटना के बारे में बताया। इन गवाहों द्वारा घटना की उत्पत्ति सामने लायी गयी है। विद्वान विचारण न्यायालय ने, साक्ष्य के अधिमूल्यन पर, अभिनिर्धारित किया कि मृतक अमीरलाल की हत्या अपीलार्थीगण द्वारा की गयी थी और विचारण न्यायालय ने सारे गवाहों के साक्ष्य का सूक्ष्मता से संवीक्षण किया है और उन्हें संगत और विश्वसनीय पाया है। हमने चश्मदीद गवाहों और अन्य अभियोजन गवाहों के समस्त साक्ष्य का परिशीलन किया है। हम विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्षों में कोई दुर्बलता नहीं पाते हैं। अभियोजन द्वारा दिए गए समस्त साक्ष्य के परिशीलन के बाद और साक्ष्यों के स्वतंत्र अधिमूल्यन पर हम पाते हैं कि सूचक अ० सा० 3, जो चश्मदीद गवाह है, घटना के अपने विवरण में संगति में और विश्वसनीय है। इसके अतिरिक्त, यह विधि की सुनिश्चित अवस्था है कि एक ही बिन्दु पर साक्ष्य को गुणित करने की आवश्यकता सदैव नहीं होती है। यह देखा जाना होगा कि गवाह की गुणवता क्या है; गुणवता, न कि मात्रा अपेक्षित है। यदि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य अन्यथा संतोषजनक प्रकृति

के है और विश्वसनीय कहे जा सकते हैं, तब मामले में अन्य गवाहों द्वारा इसी तथ्य को प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं हो सकती है। अब यह फैशन हो गया है कि आम जनता अनेक कारणों से विशेषत: दांडिक मामलों में न्यायालय के समक्ष अभिसाक्ष्य देने से हिचकिचाते हैं। उक्त की दृष्टि में हम पाते हैं कि अन्य ग्रामीण, जिन्हें घटना के बाद स्थल पर आया बताया जाता है, तात्विक गवाह नहीं हैं जो घटना की उत्पत्ति अथवा अभियोजन मामला के मुख्य अंश को प्रकट कर सकते थे। इस प्रकार, हम अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाए गए प्रतिवाद में कोई बल नहीं पाते हैं।

28. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि अपीलार्थीगण को दोष सिद्ध करने में विचारण न्यायालय में गलती की है क्योंकि किसी जगदीश प्रसाद यादव उर्फ सरदार, जिसकी उपस्थिति में फर्दबयान दर्ज किया गया था और जिसने प्राथमिकी पर अपना हस्ताक्षर किया था, को विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है और यह अभियोजन मामला को झूठा ठहराता है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद का खंडन किया। उन्होंने प्रतिवाद किया कि जगदीश प्रसाद यादव उर्फ सरदार का हस्ताक्षर फर्दबयान में दर्ज किया गया है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि वह घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है। अ, सा० 3 गणेश लाल ने कथन किया है कि वह उन व्यक्तियों में से एक था जो घटना के बाद स्थल पर आए थे। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि विधि सुनिश्चित है कि यदि प्राथमिकी लिखवानेवाला घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है, न्यायालय के समक्ष उसको प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं है। (देखें **अनिल बनाम दमन एवं दियू प्रशासन, 2006 (13) SCC 36)**। यह सत्य है कि जगदीश प्रसाद यादव उर्फ सरदार घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है। उसने केवल फर्दबयान पर हस्ताक्षर किया है जिसे अ० सा० 3 गणेश राय के कहने पर अन्वेषण अधिकारी द्वारा अगली तिथि पर दर्ज किया गया था। जगदीश प्रसाद यादव उर्फ सरदार घटना का चश्मदीद गवाह नहीं था और इसलिए उसका परीक्षण करने की आवश्यकता नहीं थी और न ही वह घटना के विवरणों पर प्रकाश डाल सकता था और न ही वह यह कह सकता था कि घटना के समय अपीलार्थीगण उपस्थित थे या नहीं। अत: अपीलार्थीगण पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है। हम अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के प्रतिवाद में बल नहीं पाते हैं।

29. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया कि रक्त रंजित मिट्टी, जिसे घटना स्थल से अन्वेषण अधिकारी द्वारा बरामद किया गया था, को रासायनिक परीक्षा के लिए नहीं भेजा गया था। यदि रक्त रंजित मिट्टी एफ० एस० एल० नहीं भेजी गयी थी, अभियोजन के विरुद्ध विपरीत निष्कर्ष निकाला जा सकता है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद का खंडन किया और प्रतिवाद किया कि केवल अन्वेषण अधिकारी द्वारा रक्त रंजित मिट्टी को न्यायिक प्रयोगशाला नहीं भेजा जाना अभियोजन मामले को प्रभावित नहीं करेगा अथवा उसमें सेंध नहीं लगाएगा। यह अन्वेषण अधिकारी की ओर से परिहार मात्र है। यह त्रुटि, जैसा अन्वेषण के दौरान इंगित किया गया है, विश्वसनीय आँखों देखी परिसाक्ष्य को अविश्वसनीय नहीं बनाएगी। केवल रक्त रंजित मिट्टी को रासायनिक परीक्षा के लिए न भेजा जाना अभियोजन के मामला को दुर्बल नहीं करेगा। यद्यपि रक्त रंजित मिट्टी को परीक्षण हेतु न्यायालिक प्रयोगशाला भेजने में हुई विफलता को अन्वेषण अधिकारी की ओर से किया गया परिहार माना जा सकता है किन्तु अभियोजन का साक्ष्य किसी भी तरीके से दुर्बल नहीं होता है यदि आँखों देखी परिसाक्ष्य तर्कपूर्ण, विश्वसनीय और निर्णायक हो। जैसा **धनज सिंह बनाम पंजाब राज्य, 2004 (3) SCC 654** में प्रकाशित मामला में अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि अन्वेषण त्रुटिपूर्ण हो तो भी, यह महत्वहीन हो जाता है, जब आँखों देखी परिसाक्ष्य विश्वसनीय और तर्कपूर्ण पाया जाता है। त्रुटिपूर्ण अन्वेषण के मामला में, न्यायालय को साक्ष्य का मूल्यांकन करने में चौकस होना चाहिए। किन्तु केवल त्रुटि के आधार पर अभियुक्त को दोषमुक्त करना सही नहीं होगा; ऐसा करना अन्वेषण अधिकारी के हाथों में खेलना होगा यदि अन्वेषण जानबुझकर त्रुटिपूर्ण किया गया हो। अपीलार्थीगण की ओर से किसी अन्य बिन्दु का आग्रह नहीं किया गया था।

30. विद्वान सत्र न्यायाधीश ने पाया है कि अपीलार्थीगण धाराओं 147 और 302 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपराधों के लिए दोषी है। उन्होंने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि ऊपर उपदर्शित आरोपों को युक्ति-युक्त संदेह के परे सिद्ध किया गया है। उन्होंने यह कथन भी किया है कि धारा 302 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अभियुक्त अपीलार्थी जगेश्वर राय के विरुद्ध आरोप सिद्ध किये गए है। दंड अधिनिर्णीत करते समय, विद्वान विचारण न्यायालय ने मृतक अमीरलाल राय की मृत्यु आशयपूर्वक अथवा जानबूझकर कारित करने के लिए धारा 302 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन सारे अपीलार्थीगण को आजीवन कारावास का दंड दिया है। विचारण न्यायालय ने धारा 147 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन भी दंड अधिनिर्णीत नहीं किया है। उन्होंने आगे अभिनिर्धारित किया है कि अ॰ सा॰ 3 गणेश राय को स्वेच्छापूर्वक चोट कारित करने के लिए धारा 323 के अधीन अपीलार्थी जगेश्वर राय के विरुद्ध पृथक दंड पारित करने की आवश्यकता नहीं है। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने कोई कारण नहीं बताया है कि क्यों उन्होंने सूचक अ॰ सा॰ 3 को स्वेच्छापूर्वक चोट कारित करने के लिए धारा 323 के अधीन अपीलार्थी जगेश्वर राय को दोषसिद्ध किया है।

31. वस्तुत: विद्वान सत्र न्यायाधीश अभियुक्त अपीलार्थीगण के विरुद्ध आरोपित पृथक अपराधों के संबंध में दंडों को पारित कर सकते थे और वह निर्देश दे सकते थे कि दंडों को साथ-साथ चलाया जाएगा। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने धारा 147 और 323 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन पृथक दंड अधिनिर्णीत नहीं करके और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आजीवन कारावास का समेकित दंड पारित करके स्पष्ट गलती की है। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने आगे अपीलार्थी सं॰ 4 कार्तिक राय को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 147 के अधीन दोषसिद्ध किया है। दंड अधिनिर्णीत करते हुए उन्होंने अभिनिर्धारित किया है कि अभियुक्त अपीलार्थी कार्तिक राय घटना के समय 15 वर्ष की आयु का था। अब वह बीस वर्ष का हो चुका है और किशोर न्याय अधिनियम, 1986 की धारा 2 के खंड (h) के अधीन, जो वर्ष 1987 से प्रभाव में आया था, 'किशोर' की परिभाषा दी गयी है जिसमें प्रावधानित किया गया है कि जो व्यक्ति अपराध किए जाते समय 16 वर्ष की आयु प्राप्त नहीं किया हो, उसके मामले पर किशोर न्यायालय द्वारा विचार किया जाना चाहिए। उन्होंने आगे अभिनिर्धारित किया है कि उक्त जजशिप में सरकार द्वारा कोई किशोर न्यायालय गठित नहीं किया गया है और आक्षेपित आदेश द्वारा उन्होंने दो समान राशि की प्रतिभूतियों के साथ 2000/-रुपयों का बंध पत्र निष्पादन करने पर अपीलार्थी कार्तिक राय की दोषसिद्धि निर्देशित की और उसे परिवीक्षा अधिकारी, दुमका के निरीक्षण के अधीन दो वर्षों के लिए रखा गया था। राज्य ने विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज उक्त निष्कर्षों के विरुद्ध कोई अपील दाखिल नहीं किया है और इस प्रकार, निष्कर्ष अंतिमता प्राप्त कर चुके हैं। अत: हम इस मामले में विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित दंडादेश विधिसम्यतता और वैधता पर विचार नहीं कर रहे हैं। चूँकि हमारा दृष्टिकोण है कि अपीलार्थीगण भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित धारा 149 के अधीन दोषी है, इसके लिए दंड जिसे सत्र न्यायाधीश द्वारा दिया गया है आजीवन कारावास है।

32. पूर्वोक्त तथ्यों की दृष्टि में, हमारा दृष्टिकोण है कि अभियुक्त अपीलार्थीगण सं॰ 1 से 3 अर्थात् जगेश्वर राय, रासो राय और शंकर राय क्रमश: धारा 302 भा॰ दं॰ सं॰ के बजाए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित धारा 149 के अधीन दोषसिद्धि के जिम्मेवार हैं। अपीलार्थी सं॰ 4 कार्तिक राय की दोषसिद्धि और दंड, जैसा विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत किया गया है, भी कायम रखी जाती है।

पूर्वोक्त कारणों से, अपीलार्थीगण 1 से 4 (शंकर राय, रासो राय एवं जगेश्वर राय एवं कार्तिक राय) द्वारा दाखिल अपील एतद् द्वारा खारिज की जाती है। तद्नुसार उन्हें ऊपर उपदर्शित दंड दिया जाता है।

डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

मो॰ ताजखान

बनाम

झारखंड राज्य

Cr.M.P. No. 56 of 2009. Decided on 5th August, 2010.

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 190 एवं 319—जहाँ आरोप पत्र केवल कुछ अभियुक्त व्यक्तियों के विरूद्ध पेश किया गया हो और ऐसे व्यक्तियों के विरूद्ध नहीं, जो यद्यपि प्राथमिकी में नामजद हैं और अपराध का संज्ञान अगर उन व्यक्तियों के विरूद्ध लिया भी गया है जिनकी विचारण किए जाने की अनुशंसा अन्वेषण अधिकारी द्वारा नहीं की गयी है तब भी उनसे संज्ञान लेने के प्रक्रम पर विचारण का सामना करने की अपेक्षा नहीं की जा सकती है—लेकिन, ऐसी शक्ति केवल धारा 319 के प्रावधानों के अंतर्गत ही विचारण न्यायालय को उपलब्ध है—एक ऐसे मामले में जहाँ अन्वेषण अधिकारी अभियुक्त व्यक्तियों में से कुछ के विरूद्ध विचारण की अनुशंसा करते हुए आरोप-पत्र पेश करते हैं, पर याची के विरूद्ध नहीं, तो ऐसे अन्य व्यक्तियों को, अगर पुलिस रिपोर्ट में विचारण की अनुशंसा नहीं की गई हो, तो उन्हें समन या संज्ञान के चरण पर विचारण का सामना करने एवं उपस्थित होने की अपेक्षा नहीं की जा सकती है—संज्ञान का आक्षेपित आदेश एवं सम्पूर्ण दाण्डिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 6 एवं 7)

निर्णयज विधि.—AIR 2000 SC 2735;2006 (1) JLJR 186; 2009 (2) JLJR 579—Applied; (2003) 12 SCC 129—Referred to.

अधिवक्तागण.—Mr. R.P. Gupta, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के अधिवक्ता, राज्य के अधिवक्ता और विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के अधिवक्ता को सुना गया।

2. याची ने वर्तमान याचिका में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा पारित संज्ञान के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना की है जिसके द्वारा भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 406/409/467/468/109/120B और आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराधों का संज्ञान लेने के बाद विद्वान अवर न्यायालय ने याची और अनेक अन्य व्यक्तियों को विचारण का सामना करने का निर्देश देते हुए समनों को जारी किया था।

3. याची के अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश, जिसके द्वारा याची को उपस्थित होने और विचारण का सामना करने का निर्देश दिया गया था, का इस आधार पर विरोध करते हैं कि ऐसा आदेश दोषपूर्ण है और प्रक्रियात्मक विधि के साथ असंगत है।

अपने तर्कों का विस्तार देते हुए विद्वान अधिवक्ता स्पष्ट करते हैं कि यद्यपि प्राथमिकी, जिसे सूचक/पुलिस निरीक्षक (खाद्य) द्वारा दर्ज प्राथमिकी के आधार पर दर्ज किया गया था, में याची और अनेक अन्य व्यक्तियों को नामित किया गया था, किन्तु अन्वेषण समाप्त करने के बाद यद्यपि अन्वेषण अधिकारी ने अभियुक्तगण में से कुछ के विरुद्ध आरोप पत्र दाखिल किया था, किन्तु याची और अन्य व्यक्तियों के विचारण की अनुशंसा नहीं की थी। विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि विधि की प्रक्रिया के अनुसार, यह उपदर्शित करते हुए कि याची के विरुद्ध अग्रसर होने हेतु पर्याप्त सामग्री नहीं है, अन्वेषण अधिकारी द्वारा दाखिल रिपोर्ट के आलोक में विद्वान अवर न्यायालय मामला में उपस्थित होने और विचारण का सामना

करने का निर्देश उसको देते हुए याची के विरुद्ध समन जारी नहीं कर सकता था। अपने तर्कों को पुख्ता बनाने के लिए विद्वान अधिवक्ता **मो॰ मुनीफ उर्फ सरदार मनीफुद्दीन कुरैशी उर्फ मुनीफ कसाई बनाम झारखंड राज्य,** JLJR 2 (2009)579 में इस न्यायालय के निर्णय और **घिसू एस॰ के॰ बनाम झारखंड राज्य,** JLJR 1 (2006)186 में प्रकाशित मामलों में अन्य निर्णय और **किशोरी सिंह एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, AIR 2000 SC 3725** में प्रकाशित मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को भी निर्दिष्ट किएं।

4. दूसरी ओर, राज्य के अधिवक्ता तर्क दिए कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 190 के प्रावधानों के अधीन अपराध का संज्ञान लेने के लिए दंडाधिकारी और पुलिस रिपोर्ट में अन्वेषण अधिकारी द्वारा अभिव्यक्त किए गए मत से भिन्नता रखते हुए अभियुक्तगण के विरुद्ध आदेशिका जारी करने के लिए दंडाधिकारी सशक्त है। अपने तर्कों के लिए समर्थन पाने हेतु विद्वान अधिवक्ता **उड़ीसा राज्य बनाम मो॰ हबीबुल्ला खान, (2003)12 SCC 129** में प्रकाशित मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को निर्दिष्ट करते है।

5. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों के परिशीलन के बाद निर्विवादित तथ्य, जैसा प्रतीत होगा, यह है कि पूर्वोल्लिखित अपराधों के लिए अनेक नामित अभियुक्तगण के विरुद्ध पुलिस निरीक्षक (खाद्य) द्वारा दर्ज प्राथमिकी के आधार पर मामला दर्ज किया गया था। अन्वेषण समाप्त करने के बाद, अन्वेषण अधिकारी ने अभियुक्तगण में से कुछ के विचारण की अनुशंसा करते हुए याची और कुछ अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध ऐसे विचारण की अनुशंसा नहीं की थी। किन्तु विद्वान अवर न्यायालय न केवल उन अभियुक्तगण, जिनको विचारण हेतु अनुशंसित किया गया था, के विरुद्ध बल्कि उनके विरुद्ध भी जिन्हें विचारण के लिए अनुशंसित नहीं किया गया था, अपराध का संज्ञान लेने के लिए अग्रसर हुआ था।

6. समरुप तथ्यों पर, दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराएँ 173, 190 और 319 के प्रावधानों की प्रकृति और विस्तार पर विचार करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने **किशोरी सिंह (ऊपर)** मामले में, आरोप पत्र में अनामित किन्तु प्राथमिकी में नामित अभियुक्तगण के विरुद्ध अपराधों के संज्ञान के आदेश के संदर्भ में, अभिनिर्धारित किया कि दंडाधिकारी उन व्यक्तियों जिन्हें आरोप पत्रित नहीं किया गया था के विरुद्ध आदेशिका जारी नहीं कर सकता था और उन्हें धारा 319 के अधीन शक्ति के प्रयोग में अथवा सुपुर्दगी का आदेश पारित करते हुए दंडाधिकारी द्वारा अथवा उच्च न्यायालय को सत्र न्यायाधीश द्वारा किए गए संदर्भ के अनुसरण में ही अभियुक्तगण के रूप में लाया जा सकता था। नारायण प्रसाद झा उर्फ नारायण झा बनाम झारखंड राज्य, दां॰ वि॰ या॰ सं॰ 1296 वर्ष 2009 के तहत मामला और **घिसू एस॰ के॰ (ऊपर)** और **मो॰ मुनीफ उर्फ सरदार मनीफुद्दीन कुरैशी बनाम मुनीफ कसाई (ऊपर)** मामला सहित अनेक मामलों में इस न्यायालय द्वारा इस निर्णयाधार पर विश्वास किया गया था और लागू किया गया था। इस प्रकार, निर्णयों की एक श्रृंखला द्वारा यह सुनिश्चित है कि ऐसे मामलों में जहाँ केवल अभियुक्तगण में से कुछ के विरुद्ध ही आरोप पत्र दाखिल किए गए थे, जो यद्यपि प्राथमिकी में नामजद हैं और अगर अपराध का संज्ञान उनके विरूद्ध लिया भी गया है जिनकी विचारण किए जाने की अनुशंसा अन्वेषण अधिकारी द्वारा नहीं की गई है तब भी संज्ञान लिए जाने के चरण पर उन व्यक्तियों को विचारण का सामना करने के लिए नहीं बुलाया जा सकता है। किन्तु विचारण का संचालन करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के प्रावधानों के अधीन विचारण न्यायालय को ऐसी शक्तियाँ फिर भी उपलब्ध रहेंगी।

वर्तमान मामले में तथ्य पूर्णत: प्रदर्शित करेंगे कि भले ही आरोपित व्यक्ति प्राथमिकी में नामित है किन्तु आरोप पत्र दाखिल करते हुए अन्वेषण अधिकारी ने केवल व्यक्तियों में से कुछ के विरुद्ध अपराधों के लिए विचारण की अनुशंसा की थी, न कि याची और कुछ अन्य के विरुद्ध। दंडाधिकारी ने संज्ञान लेते हुए याची के विरुद्ध समन जारी नहीं कर सकता था और विचारण का सामना करने के लिए निर्देश नहीं दे सकता था। विधि के प्रावधानों के संबंध में कोई विवाद नहीं है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 190 के अधीन और धारा 173 (2) के अधीन भी दंडाधिकारी पुलिस रिपोर्ट में अन्वेषण अधिकारी द्वारा अभिव्यक्त किए गए मत को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है। दंडाधिकारी को अन्वेषण अधिकारी के मत से भिन्नता रखने और केस डायरी में उपलब्ध सामग्रियों पर संतुष्ट होने पर किसी अभियुक्त के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने की आजादी है। किन्तु ऐसी विधि जैसा **किशोरी सिंह (ऊपर)** मामला में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्पष्ट किया गया है, केवल तभी लागू की जा सकती है जब प्राथमिकी में नामित अथवा अनामित अभियुक्तगण में से किसी के विरुद्ध विचारण की अनुशंसा नहीं करते हुए अन्वेषण अधिकारी अंतिम रिपोर्ट दाखिल करता है। ऐसी परिस्थितियों के अधीन दंडाधिकारी अन्वेषण अधिकारी द्वारा अभिव्यक्त मत से भिन्नता रख सकता है और समुचित आदेश पारित कर सकता है। दूसरी ओर, ऐसे मामले में जहाँ अभियुक्तगण में से कुछ के विरुद्ध न कि याची के विरुद्ध विचारण की अनुशंसा करते हुए अन्वेषण अधिकारी आरोप पत्र दाखिल करता है, तब **किशोरी सिंह (ऊपर)** मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सुनिश्चित विधि की अवस्था यह है कि ऐसे अन्य व्यक्ति जो यदि पुलिस रिपोर्ट में विचारण के लिए अनुशंसित नहीं किए गए है, को समन नहीं किया जा सकता है और संज्ञान के चरण पर उपस्थित होने और विचारण का सामना करने के लिए नहीं बुलाया जा सकता है।

7. इन तथ्यों एवं परिस्थितियों और ऊपर की गयी चर्चाओं के प्रकाश में, मैं पाता हूँ कि **किशोरी सिंह (ऊपर)** के मामले में और **घिसू एस॰ के॰ (ऊपर)** के मामले में एवं **मो॰ मुनीफ उर्फ सरदार मनीफुद्दीन कुरैशी उर्फ मुनीफ कसाई (ऊपर)** के मामले सहित अनेक अन्य मामलों में विनिश्चित निर्णयाधार वर्तमान मामला के तथ्यों पर भी लागू होता है। अत: दिनांक 3.11.2008 का संज्ञान का आदेश और चाईबासा, सदर पी॰ एस॰ केस सं॰ 30 वर्ष 2000 से उद्भूत जी॰ आर॰ सं॰ 2 वर्ष 2000 के तहत अवर न्यायालय द्वारा पारित समस्त दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है। किन्तु यह विचारण के क्रम में धारा 319 दं॰ प्र॰ सं॰ के प्रावधानों के अधीन अपने स्वविवेक का प्रयोग करने से विचारण न्यायालय को नहीं रोकेगा।

माननीय अमरेश्वर सहाय, न्यायमूर्ति

डॉ॰ शंभु शरण लाल

बनाम

कोल इंडिया लि॰ एवं अन्य

W.P. (S) No. 5779 of 2009. Decided on 3rd August, 2010.

सेवा विधि—पुनर्बहाली—याची को सेवा से हटाया गया था मात्र इस आधार पर कि वह एक दाण्डिक मामले में दोषसिद्ध था जो गम्भीर अवचार की कोटि का था—विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश अपास्त और याची दोषमुक्त—जिस आधार पर उसे सेवा

से हटाया गया था वह अब विद्यमान नहीं रहा—सेवा से हटाये जाने का आदेश वापस लिया जाना है एवं पुनर्बहाली का आदेश उस तिथि से दिया जाना है जिस तिथि को उसे सेवा से हटाया गया था न कि किसी अन्य तिथि से—याची सेवा से हटाये जाने से लेकर पुनर्बहाली पर उसके पदग्रहण की तिथि तक सभी धनीय लाभों का हकदार है। (पैराएँ 11 से 13)

अधिवक्तागण.—Mr. Rajiv Sinha, For the Petitioner; None, For the Respondents.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता श्री राजीव सिन्हा को सुना गया।

2. प्रत्यर्थीगण को पर्याप्त अवसर दिए जाने के बावजूद प्रत्यर्थी-कोल इंडिया लिमिटेड की ओर से न तो कोई उपस्थित हुआ और न ही प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है।

3. याची परिशिष्ट-6 में अंतर्विष्ट दिनांक 9.7.2009 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा कोल इंडिया लिमिटेड ने दिनांक 7.11.2007 के प्रभाव से अर्थात् उच्च न्यायालय के निर्णय की तिथि से जिसके द्वारा याची के विरुद्ध पारित दोषसिद्धि एवं दंड को अपास्त कर दिया गया था, कम्पनी की सेवा में उसको पुनर्बहाल करने का आदेश पारित किया है।

4. जैसा प्रतीत होता है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 161 के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 5 (1) (d) सह-पठित धारा 5 (2) के अधीन अपराध करने के लिए याची को अभियोजित किया गया था। विचारण न्यायालय ने उसे दोषी पाया और तद्द्वारा उसे प्रत्येक आधार पर एक वर्ष की अवधि के लिए कठोर कारावास भुगतने का दंड दिया। इसके अतिरिक्त, उस पर 500/- रुपयों का जुर्माना भी लगाया गया और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में एक माह का कठोर कारावास भुगतने का आगे निर्देश उसे दिया गया था। दंडों को साथ-साथ चलने का आदेश दिया गया था।

5. इस तथ्य की दृष्टि में कि याची को विधि के न्यायालय द्वारा दोषी सिद्ध किया गया था, इसलिए कारण बताओ नोटिस के बाद और उसपर विचार करके तुरन्त के प्रभाव से सेवा से याची को हटाने के लिए दिनांक 2.7.2007 (परिशिष्ट-3) का आदेश पारित किया।

6. विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंड के निर्णय के विरुद्ध याची ने इस न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील सं॰ 1443 वर्ष 2006 दाखिल किया जिसे अंतत: सुना गया और परिशिष्ट-4 में अंतर्विष्ट दिनांक 7.11.2007 के निर्णय के तहत अनुज्ञात किया गया जिसके द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि लगाए गए आरोप के प्रति अपीलार्थी का दोष सिद्ध करने में अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर्याप्त नहीं थे। परिणामस्वरुप, अपील अनुज्ञात की गयी और विचारण न्यायालय द्वारा उसके विरुद्ध दर्ज दोषसिद्धि और दंडादेश अपास्त कर दिया गया था।

7. तत्पश्चात् याची ने सेवा में अपनी पुनर्बहाली के लिए अपने नियोजक कोल इंडिया लिमिटेड को मामले का अभ्यावेदन दिया जिसे कोल इंडिया लिमिटेड के निदेशक बोर्ड के समक्ष रखा गया और अंतत: परिशिष्ट-6 में अंतर्विष्ट दिनांक 9.7.2009 के आक्षेपित आदेश द्वारा याची को दिनांक 7.11.2007 अर्थात् दांडिक अपील सं॰ 1443 वर्ष 2006 में पारित उच्च न्यायालय के निर्णय की तिथि के प्रभाव से सेवा में पुनर्बहाल करने का आदेश दिया। आगे निर्देश दिया गया है कि याची सेवा से हटाए जाने की तिथि से पुनर्बहाली पर पदग्रहण करने की तिथि तक के मध्यवर्ती अवधि के लिए किसी धनीय लाभ का हकदार नहीं होगा।

8. याची की ओर से निवेदन किया गया है वस्तुत: याची को उसकी सेवा से हटाए जाने की तिथि से, और न कि दांडिक अपील सं॰ 1443 वर्ष 2006 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय की तिथि से, सेवा में पुनर्बहाल किया जाना चाहिए था और वह सारी पूर्व सेवा अर्थात् मध्यवर्ती अवधि के लिए सेवा में निरंतरता का हकदार है। यह निवेदन भी किया गया है कि परिशिष्ट-6 में अंतर्विष्ट आदेश का अंश जिसके द्वारा उसका सेवा से हटाए जाने की तिथि से पुनर्बहाली पर पदग्रहण करने की तिथि तक के मध्यवर्ती अवधि के लिए धनीय लाभ का हकदार नहीं होना अभिनिर्धारित किया गया है और क्यों याची को सेवा से हटाए जाने की तिथि से सेवा में पुनर्बहाली से वंचित किया गया है।

9. प्रत्यर्थीगण को प्रति शपथपत्र दाखिल करने का अवसर दिए जाने के बावजूद कोई प्रति शपथपत्र दाखिल नहीं किया गया है। अत: न्यायालय के पास रिट याचिका में किए गए प्रकथनों और इसमें उपाबद्ध दस्तावेजों के आधार पर रिट याचिका निपटाने के अतिरिक्त कोई अन्य विकल्प नहीं है।

10. विनिश्चित किए जाने वाला प्रश्न यह है कि क्या याची को न्यायालय द्वारा पारित निर्णय की तिथि अर्थात दिनांक 7.11.2007 से अथवा उस तिथि अर्थात् दिनांक 2.7.2007 से जब उसे सेवा से हटाया गया है, सेवा में पुनर्बहाल करना चाहिए?

11. जैसा प्रतीत होता है कि याची को केवल इस आधार पर सेवा से हटाया गया था कि उसे दांडिक मामला में दोष सिद्ध किया गया था जो गंभीर अवचार की कोटि का है। किन्तु जब विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंड को अपास्त कर दिया गया है और याची को दोषमुक्त कर दिया गया है, तब उस स्थिति में आधार, जिस पर उसे दिनांक 2.7.2007 को सेवा से हटाया गया था, अविद्यमान/अस्तित्वहीन हो जाता है और इसलिए सेवा से हटाए जाने का आदेश वापस लिया जाना होगा और पुनर्बहाली का आदेश उस तिथि से देना होगा जब उसे सेवा से हटाया गया था और न कि किसी अन्य तिथि से।

12. मामले के इस दृष्टिकोण में, मैं अभिनिर्धारित करता हूँ कि परिशिष्ट-6 में अंतर्विष्ट आदेश का अंश जिसके द्वारा याची को दिनांक 7.11.2007 अर्थात् दांडिक अपील सं॰ 1443 वर्ष 2006 में इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय की तिथि से सेवा में पुनर्बहाल करने का निर्देश दिया गया है, विधि की दृष्टि में असंपोषणीय है। तद्नुसार, आदेश का पूर्वोक्त अंश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

13. परिणामस्वरुप, याची को सेवा से हटाए जाने की तिथि से सेवा में पुनर्बहाल होने का हकदार अभिनिर्धारित किया जाता है और परिणामस्वरुप वह सेवा से उसके हटाए जाने की तिथि से पुनर्बहाली पर उसके पद ग्रहण की तिथि तक के सारे धनीय लाभों का हकदार है। इस आदेश की प्रति की प्राप्ति पर प्रत्यर्थीगण को तुरन्त पारिणामिक आदेश जारी करना होगा।

14. याची के विद्वान अधिवक्ता आगे कथन करते हैं कि अब चूँकि याची दिनांक 31.7.2009 को सेवा से पहले ही सेवानिवृत्त हो चुका है, किन्तु आज की तिथि तक उसके सेवानिवृत्ति देयों के भुगतान के लिए प्रत्यर्थीगण कोल इंडिया लिमिटेड द्वारा कोई कार्रवाई नहीं की गयी है।

15. ऐसी स्थिति में, इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से छह सप्ताह की अवधि के भीतर सारे सेवानिवृत्ति देयों के साथ-साथ सारे पारिणामिक लाभों का भुगतान करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को दिया जाता है।

16. इस प्रकार, यह रिट याचिका पूर्वोक्त निर्देशों और संप्रेक्षणों के साथ अनुज्ञात की जाती है।

माननीय सुशील हरकौली, कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश एवं डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति

श्रावणी एवं एक अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(PIL) No. 333 of 2010. Decided on 21st July, 2010.

भारत का संविधान, 1950—अनुच्छेद 226—न्यायालय के समक्ष व्यथा उठाते हुए लोकहित वाद दाखिल किया गया कि बहुधा अ॰ जा॰/अ॰ ज॰ जा॰ अधिनियम एवं डायन प्रथा निवारण अधिनियम के अंतर्गत सम्बन्धित अपराधों के प्राथमिकी तक दर्ज नहीं किए जाते हैं—मात्र प्रतिकर पाने अथवा पुनर्वास योजना या प्रावधानों के तहत लाभ पाने के लिए बहुधा झूठे प्राथमिकी दर्ज किए जाते हैं—ऐसे मामलों की जाँच लोकहित वादों पर विचार कर रहे एक एकल पीठ द्वारा नहीं की जा सकती है क्योंकि प्रत्येक मामले के विवरणों को अलग-अलग जाँचा जाना होता है—अगर किसी विशिष्ट मामले का उचित रूप से अन्वेषण नहीं किया जाता है या अभियुक्त को गलत प्रकार से दोषमुक्त किया गया है, तो अपील या पुनरीक्षण में अलग-अलग मामले की जाँच की जा सकती है—गैर सरकारी संगठन मामले की पड़ताल कर सकते हैं—सामान्य अनुतोष पाने के लिए लोकहित वाद ग्रहण नहीं किया जा सकता है कि विधि का अनुसरण या पालन किया जाना चाहिए—न्यायालय तब हस्तक्षेप कर सकता है जब बड़े पैमाने पर विधि का उल्लंघन हुआ हो—याचिका खारिज। (पैराएँ 3, 4, 6 से 10)

अधिवक्तागण.—Ms. Rajni Soren, For the Petitioners; J.C. to A.G., For the State.

आदेश

हमने याची के विद्वान अधिवक्ता को सुना है।

2. यह PIL प्रकटत: एक त्रुटि के विरुद्ध शिकायत करते हुए दाखिल की गयी है जिसमें वस्तुत: सरोकार और सहानुभूति की जरूरत है। किन्तु विस्तृत परीक्षण पर यह स्पष्ट होता है कि न्यायालय से अपेक्षित टास्क इतने व्यापक और विस्तारवाले हैं कि उनका प्रबंधन व्यवहारिक रूप से संभव नहीं है। अत: हम भावावेगों द्वारा प्रभावित होने और स्वयं के ऊपर ऐसा टास्क जो इस न्यायालय की क्षमता के परे है, विशेषत: जब इस उद्देश्य हेतु कार्यपालिका और अधीनस्थ न्यायपालिका की सामान्य मशीनरी उपलब्ध है, लेने के प्रलोभन का प्रतिरोध करते है।

3. PIL में की गयी अनेक प्रार्थनाएँ सारभूत रूप से ईप्सित करती है कि यह न्यायालय झारखंड राज्य के सभी मामलों/अपराधों से संबंधित रिपोर्ट/चार्ट को मंगवाए और परीक्षण करें और यदि आवश्यक हो तो मॉनिटर करे कि क्या अन्वेषण और अभियोजन किया जा रहा है/समुचित रूप से किया गया है और क्या पीड़ितों को समुचित और पर्याप्त मुआवजा का भुगतान किया गया है और क्या पीड़ितों के पुनर्वास के संबंध में समुचित प्रयास किए गए है। शीघ्रतिशीघ्र, विधि के अनुरुप समुचित अभियोजन सुनिश्चित करने के लिए पुलिस और लोक अभियोजकों को आवश्यक निर्देश जारी करने की प्रार्थना भी इस न्यायालय से की गयी है। इन अनुतोषों को अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 और डायन प्रथा निवारण अधिनियम, 2001 द्वारा आच्छादित व्यक्तियों के संबंध में इप्सित किया गया है।

4. परिवाद यह है कि प्राय: प्राथमिकी दर्ज नहीं की जाती है और जहाँ प्राथमिकी दर्ज की भी जाती

है, वे समुचित धाराओं के अधीन नहीं होती है और किसी भी हालत में दोषसिद्धि अत्यन्त कम है। अभिकथन किया गया है कि यह बदले में ऐसे अपराधों की संख्या में वृद्धि करता है।

5. यह रिट याचिका PIL मामला सुनते हुए एकमात्र पीठ की क्षमता सीमा पर पर्याप्त रूप से विचार किए बिना दाखिल किया गया प्रतीत होता है जो अपेक्षा करता है कि वह यह पाने के लिए कि प्रत्येक प्राथमिकी में किए गए अभिकथन सही है या नहीं कि प्रत्येक मामला का समुचित अन्वेषण किया गया है या नहीं और कि प्रत्येक विचारण में उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर प्रत्येक मामला में दोषमुक्ति सही है या नहीं, संपूर्ण राज्य के सारे मामलों की जाँच करें।

6. सामान्यत: जब कोई अपराध किया जाता है, प्राथमिकी दर्ज करनी होती है। यदि पुलिस थाना प्राथमिकी दर्ज नहीं करता है, धारा 156 दं० प्र० सं० न्यायिक दंडाधिकारी के समक्ष उपाय प्रावधानित करती है। यह वरीय पुलिस अधिकारी का कर्तव्य है कि वह अन्वेषण अधिकारी द्वारा समुचित अन्वेषण सुनिश्चित करें और अन्वेषण की खामियों के संबंध में न केवल जारी अन्वेषण के दौरान बल्कि अन्वेषण के बाद भी और न्यायालय में आरोप पत्र दाखिल किए जाने के पहले, परिवादों की जाँच पड़ताल करें। आरोप पत्र दाखिल किए जाने के बाद भी धारा 173 (8) दं० प्र० सं० के अधीन आगे अन्वेषण जारी रहता है। धारा 319 दं० प्र० सं० के अधीन अभियुक्त के अलावा व्यक्तियों को समन करने की शक्ति विचारण न्यायालय को है। यदि किसी खास मामला का अन्वेषण समुचित रूप से नहीं किया गया है अथवा अभियुक्त को गलत रूप से दोषमुक्त कर दिया गया है, दोषमुक्ति के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन अपील/पुनरीक्षण में प्रत्येक मामले का परीक्षण किया जा सकता है।

7. पुनर्वास जिसे ईप्सित किया गया है, रिट अधिकारिता में इस पर विचार करना मुश्किल है क्योंकि यहाँ तथ्य के प्रश्नों का परीक्षण नहीं किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, ऐसे मामले कम नहीं है जहाँ पुनर्वास योजनाओं अथवा प्रावधानों के अधीन लाभ अथवा मुआवजा पाने के उद्देश्य से ही गलत प्राथमिकी दर्ज की जाती है।

8. जैसा ऊपर कहा गया है, यह वैसे मामले नहीं है जिनका परीक्षण पी० आइ० एल० पर विचार करते एकमात्र पीठ द्वारा किया जा सकता है क्योंकि प्रत्येक मामले के विवरण का परीक्षण एक-एक करके करना होगा।

9. इसके अलावा एन० जी० ओ० सहित अनेक संगठन है जो इन मामलों की देखभाल कर रहे हैं और जो समुचित कार्रवाई के लिए संबंधित पदधारियों के ध्यान में किसी व्यक्ति का मामला सामने लाने में सक्षम है।

10. हम यहाँ यह भी इंगित कर सकते हैं कि आम रूप से अनुतोष प्रदान करने के लिए, कि विधि का अनुसरण अथवा पालन किया जाना चाहिए, पी० आइ० एल० ग्रहण नहीं किया जा सकता है। संभवत: जहाँ यह प्रदर्शित किया जाता है कि किसी विधि का व्यापक उल्लंघन हुआ है अथवा किसी विधि का राज्य प्रायोजित उल्लंघन है, न्यायालय पी० आइ० एल० में हस्तक्षेप करने का इच्छुक हो सकता है।

11. अत: हम इस प्रकार के अव्यवहारिक मुकदमा में अपना समय नष्ट करने से इंकार करते हैं। तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

माननीय सुशील हरकौली एवं डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्तिगण

आयकर कमिश्नर, राँची

बनाम

छिन्नमस्तिका कोक इंडस्ट्रीज (प्रा॰) लि॰, राँची

Tax Case No. 09 of 1999(R). Decided on 1st September, 2010.

आर॰ ए॰ सं॰ 70 (Pat)/97 में, आयकर अपीलीय अधिकरण, केंद्रीय राजस्व भवन, पटना के दिनांक 7 मई, 1999 के रेफरेन्स के मामले में।

आयकर अधिनियम, 1961—धारा 68—शेयर आवेदन का विलोपन–निर्धारण अधिकारी आवेदकों की उधार विश्वसनीयता के प्रति संतुष्ट नहीं थे और आवेदकों द्वारा जमा की गयी, 1,35,000/- रुपयों की राशि को कम्पनी के अप्रकट आय में जोड़ दिया गया था–शेयर आवेदकों के स्रोत एवं उधार देने हेतु विश्वसनीयता का पता लगाने का बोझ निर्धारित कम्पनी पर डालना विशेषत: विशाल शेयर पूँजी वाली विशाल कम्पनियों के लिए लगभग असंभव कार्य होगा–किन्तु जहाँ शेयर आवेदक जाली अथवा बोगस व्यक्ति है जिसकी पहचान का पता नहीं लगाया जा सकता है, ऐसी स्थिति में आवेदन धन की राशि को कम्पनी के अप्रकट आय में जोड़ा जा सकता है, विशेषत: जहाँ ऐसा निवेश नगद में किया गया है–वर्तमान में, शेयर आवेदकों के अस्तित्व पर अविश्वास नहीं किया गया था, केवल उनकी वित्तीय विश्वसनीयता संदेहास्पद थी और कम्पनी के अभिकथित अप्रकट आय से जोड़ी गयी राशि का विलोपन सही है। (पैराएँ 10 से 12)

निर्णयज विधि.–(1991) 192 ITR 287; 205 ITR 98—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Deepak Roshan, For the Petitioner.

न्यायालय द्वारा.–हमने आयकर विभाग के विद्वान अधिवक्ता को सुना है। निर्धारिती की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ है।

2. प्रश्नगत निर्धारण वर्ष 1990-91 है।

3. निम्नलिखित दो प्रश्नों को इस न्यायालय के मत के लिए अधिकरण द्वारा निर्दिष्ट किया गया है:–

"1. क्या मामले के तथ्यों पर और परिस्थितियों में विद्वान अधिकरण आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 68 के अधीन दी गयी छह व्यक्तियों से अभिकथित रूप से प्राप्त 1,35,000/- राशि, शेयर जमा धन होने के नाते, के जोड़े जाने का विलोपन करने में न्यायोचित था क्योंकि निर्धारिती अभिकथित शेयर आवेदकों के संव्यवहार और उधार देने हेतु विश्वसनीयता की वास्तविकता सिद्ध करने में विफल रहे?

2. क्या मामले के तथ्यों पर एवं परिस्थितियों में विद्वान अधिकरण यह अभिनिर्धारित करने में विधि में न्यायोचित था कि शेयर पूंजी को नगद उधार का समतुल्य नहीं माना जा सकता है और यदि शेयर धारक वास्तविक व्यक्ति है, शेयर पूंजी में उनके द्वारा योगदान की गयी राशि को कम्पनी के हाथ में नगद उधार नहीं माना जा सकता है?''

4. तथ्य यह है कि विभिन्न तिथियों पर विभिन्न व्यक्तियों द्वारा निर्धारिती कम्पनी को नगद में कतिपय शेयर आवेदन धन का भुगतान किया गया था।

5. निर्धारण अधिकारी ऐसे आवेदकों में से छह की उधार विश्वसनीयता से संतुष्ट नहीं था और इसलिए छह आवेदकों द्वारा योगदान की गयी 1,35,000/-रुपयों (एक लाख पैंतीस हजार रुपये) की कुल राशि कम्पनी के अप्रकट आय में जोड़ दी गयी थी।

6. सी॰ आई॰ टी॰ बनाम स्टेलर इन्वेस्टमेन्ट लि॰, (1991)192 ITR 287 में प्रकाशित मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करते हुए जोड़ को विलोपित कर दिया गया था।

7. याची-विभाग के विद्वान अधिवक्ता ने आयकर अधिनियम की धारा 68 और **सी॰ आई॰ टी॰ बनाम सोफिया फाइनेन्स लि॰, 205 ITR 98** में प्रकाशित मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है।

8. दोनों निर्णय अर्थात् **स्टेलर इन्वेस्टमेट लि॰ (ऊपर)** एवं **सोफिया फाइनेन्स लि॰ (ऊपर)** दिल्ली उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा दिए गए हैं। **स्टेलर इन्वेस्टमेन्ट लि॰ (ऊपर)** के मामले पर **सोफिया फाइनेन्स लि॰ (ऊपर)** मामले में विचार किया गया है।

9. आयकर अधिनियम की धारा 68 जो यहाँ प्रासंगिक है, नीचे उद्धृत की जाती है:–

> *"68. यदि किसी पूर्व वर्ष के लिए अनुरक्षित निर्धारिती के पुस्तिका में कोई राशि जमा की गयी पायी जाती है, और निर्धारिती उसकी प्रकृति और स्रोत के बारे में कोई स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं करता है अथवा उसके द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण निर्धारण अधिकारी के मत में संतोषजनक जानकारी नहीं है इस तरह जमा राशि को उस पूर्व वर्ष के लिए निर्धारिती की आय के रूप में आयकर में प्रभारित किया जा सकता है।''*

10. उक्त प्रावधान और विश्वास किए गए दोनों निर्णयों के पठन पर हम पाते हैं कि शेयर आवेदकों के स्रोत और उधार विश्वसनीयता का पता लगाने का बोझ निर्धारित कम्पनी पर डालना विशेषत: विशाल पूंजी वाली विशाल कम्पनियों के लिए, एक असंभव टास्क होगा। सामान्यत: न्यायालय किसी व्यक्ति पर अव्यवहारिक अथवा असंभव बोझ डालने के विरुद्ध है।

11. किन्तु, ये दोनों निर्णय दर्शाते हैं कि जहाँ शेयर आवेदक वास्तव में एक विद्यमान व्यक्ति है, न कि बोगस व्यक्ति, और वहाँ, यदि शेयर में निवेश करने की उधार विश्वसनीयता अथवा क्षमता स्थापित नहीं की गयी है, विभाग को ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध अग्रसर होना होगा, जिसने बिना ऐसी क्षमता के शेयर जमा किया था। किन्तु, जहाँ शेयर आवेदक एक जाली अथवा बोगस व्यक्ति है जिसकी पहचान का पता नहीं लगाया जा सकता है, ऐसी स्थिति में, जमा धन की राशि को कम्पनी की अप्रकट आय में जोड़ा जा सकता है जहाँ ऐसा निवेश नगद में किया गया है।

12. इस मामले में, शेयर आवेदकों के अस्तित्व पर अविश्वास नहीं किया गया था, केवल उनकी उधार विश्वसनीयता संदेहास्पद थी और इसलिए कम्पनी की अभिकथित अप्रकट आय से जोड़ी गयी राशि का विलोपन करना सही है।

13. निर्दिष्ट प्रश्नों का तद्नुसार उत्तर दे दिया गया है।

माननीय अमरेश्वर सहाय, न्यायमूर्ति

बिश्वनाथ रॉय

बनाम

सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लि॰ सी॰ एम॰ डी॰, राँची के माध्यम से एवं अन्य

W.P. (S) No. 1962 of 2009. Decided on 7th September, 2010.

श्रम और औद्योगिक विधि–सेवानिवृत्ति देय–उपदान, अर्जित अवकाश और रोग अवकाश भुनाई, अवकाश यात्रा भत्ता, भूमिगत भत्ता, भविष्य निधि, कोयला खान भविष्य निधि और पेंशन बकाया का कटौती आधिक्य के भुगतान के साथ पेंशन के समुचित नियतिकरण का दावा–सी॰ एम॰ डी॰ और भविष्य निधि कमिश्नर द्वारा पारित आक्षेपित आदेश याची द्वारा दाखिल पूर्व रिट याचिका में उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों और निर्देशों के साथ संगति में नहीं था–प्रत्यर्थीगण ने याची को सुनवाई का अवसर नहीं दिया था और न ही याची के एक अथवा अन्य दावें की अस्वीकार करने का कारण दिया था–रिट अधिकारिता की सुनवाई करने वाला उच्च न्यायालय याची के सेवानिवृत्ति देयों की राशि की संगणना नहीं कर सकता है जिसे विस्तृत रूप से करना संबंधित प्रत्यर्थीगण से अपेक्षित है–नए आदेश के लिए मामला प्रत्यर्थीगण को वापस भेजा गया। (पैराएँ 2, 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. A. R. Choudhary, For the Petitioner; Mr. Ananda Sen, For the C.C.L.; Mr. Ratnesh Kumar, For C.M.P.F.

आदेश

पक्षों को सुना गया।

2. याची, जो सी॰ सी॰ एल॰ के बरकाकाना क्षेत्र से उप मुख्य खनन अभियन्ता के पद से सेवानिवृत्त हुआ, ने अपने सेवानिवृत्ति देयों अर्थात् उपदान, अर्जित अवकाश एवं रोग अवकाश भुनाई, अवकाश यात्रा भत्ता, भूमिगत भत्ता, भविष्य निधि, कोयला खान भविष्य निधि और पेंशन बकायों के कटौती आधिक्य का भुगतान करने के लिए और पेंशन के समुचित नियतिकरण, जो याची के अनुसार सही रूप से नियत नहीं किया गया था, के लिए प्रत्यर्थीगण सी॰ सी॰ एल॰ को निर्देश देने के लिए इस न्यायालय में डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ 6187 वर्ष 2007 दाखिल किया था।

उक्त रिट याचिका याची को अपने दावों का विस्तृत विवरण देते हुए नया अभ्यावेदन दाखिल करने की स्वतंत्रता देते हुए दिनांक 17.9.2008 के आदेश (परिशिष्ट-16) द्वारा निपटायी गयी थी और प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ और सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰ को याची के दावा पर विचार करने का और विधि के अनुरूप समुचित आदेश पारित करने का और, तत्पश्चात, दो माह की अवधि के भीतर सांविधिक ब्याज के साथ याची के विधिक देयों का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था। पूर्वोक्त आदेश का प्रवर्तित अंश यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *''उक्त निवेदनों पर विचार करते हुए, याची को अपने दावों का विस्तृत विवरण सी० सी० एल० और सी० एम० पी० एफ० के संबंधित प्राधिकारीगण के समक्ष नया अभ्यावेदन दाखिल करने की छूट देते हुए यह रिट याचिका निपटायी जाती है। अभ्यावेदन की प्राप्ति पर प्रत्यर्थी सं० 1 और 3, जिन्हें क्रमशः सी० सी० एल० और सी० एम० पी० एफ० का संबंधित प्राधिकारीगण बताया जाता है, प्रत्येक याची सरोकार रखने वाले दावे पर विचार करेंगे और अभ्यावेदन की प्राप्ति की तिथि से छह सप्ताह*

की अवधि के भीतर विधि के अनुरुप समुचित आदेश पारित करेंगे। यदि याची का दावा अथवा एक अथवा अन्य दावा वास्तविक पाया जाता है, इसके धनीय लाभों का भुगतान याची को दो माह की अवधि के भीतर सांविधिक ब्याज के साथ किया जाना होगा और तत्पश्चात् यदि उक्त अवधि के भीतर याची को देय राशि का भुगतान नहीं किया जाता है, तब अंतिम भुगतान तक सांविधिक ब्याज की राशि के अतिरिक्त 10 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर से करना होगा। यदि प्रत्यर्थीगण दावा अस्वीकार करने का आशय रखते हैं, उन्हें, यदि आवश्यक हो तो याची को सुनने के बाद, सकारण आदेश पारित करना होगा और इसे लिखित में याची को संसूचित करना होगा।''

3. पूर्वोक्त आदेश के अनुसरण में, याची ने सी॰ सी॰ एल॰ के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक और क्षेत्रीय भविष्य निधि कमिश्नर, सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰, राँची के समक्ष अभ्यावेदन दिया। याची के अनुसार, उसने उक्त दावा के संबंध में समर्थन के दस्तावेजों के साथ विभिन्न शीर्षों के अधीन राशि का दावा दर्शाते हुए एक चार्ट दाखिल किया। याची की शिकायत यह है कि यद्यपि उसका अभ्यावेदन अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा परिशिष्ट-18 में अंतर्विष्ट, दिनांक 2.2.2009 के आदेश के तहत निपटाया गया था किंतु उक्त आदेश में निम्नलिखित गंभीर दुर्बलताएँ है:-

(a) आक्षेपित आदेश में, ब्याज के दावा को गलत रूप से 18% उल्लिखित किया गया है यद्यपि याची ने 10% की दर से सांविधिक ब्याज का दावा किया था।

(b) अवकाश यात्रा भत्ता, सेवानिवृत्ति यात्रा भत्ता, भूमिगत भत्ता और सी० सी० एल० द्वारा भविष्य निधि का कटौती आधिक्य के दावा पर विचार नहीं किया गया है और अर्जित अवकाश एवं रोग अवकाश भुनाई के विरुद्ध दावे को गलत रूप से अंशतः अनुज्ञात किया गया है।

(c) 1,79,068.40/- रु० की राशि के भुगतान के लिए आदेश पारित नहीं किया गया है।

(d) ब्याज के बिन्दु पर आदेश पारित नहीं किया गया है और 1,79,068.40% रुपयों की राशि को दांडिक किराए की गैर-कानूनी मांग के विरुद्ध समायोजित करना गलत रूप से ईप्सित किया गया है और 7,97,568.48/- रुपयों की राशि जमा करने का निर्देश याची को गलत रूप से दिया गया है।

4. परिशिष्ट-19 में अंतर्विष्ट क्षेत्रीय भविष्य निधि कमिश्नर, राँची द्वारा पारित आदेश के संबंध में भी याची की यही शिकायत है कि याची का संपूर्ण दावा अस्वीकार करने के बाद कोई विवरण कि किस शीर्ष के अधीन उक्त राशि का भुगतान किया गया है, दिए बिना केवल 1,47,334/-रुपयों की राशि का भुगतान किया गया है। यह कथन भी किया गया है कि कुल पेंशन योग्य सेवा को भी सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰ द्वारा वास्तविक 18 वर्षों की जगह 17 वर्ष गलत रूप से संगणित किया गया है। प्रत्यर्थीगण द्वारा की गई संगणना में गलतियाँ है और, तद्नुसार, याची के पेंशन की संपूर्ण संगणना गलत रूप से 1655/- रुपयों पर नियत की गयी है जिसे 1715/-रु॰ प्रतिमाह पर नियत किया जाना चाहिए था।

5. परिशिष्ट-18 और 19 में अंतर्विष्ट अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, सी॰ सी॰ एल॰ और क्षेत्रीय भविष्य निधि कमिश्नर, C.M.P.F., राँची द्वारा पारित आक्षेपित आदेश के कोरे परिशीलन से प्रतीत होता है कि याची द्वारा दाखिल पूर्व रिट याचिका में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों और निर्देशों के साथ यह सुसंगत नहीं है जिसमें विनिर्दिष्टत: कथन किया गया था कि यदि याची का दावा अथवा एक या अन्य

दावा वास्तविक पाया जाता है, उसके धनीय लाभों का भुगतान याची को दो माह की अवधि के भीतर सांविधिक ब्याज के साथ किया जाना होगा, तत्पश्चात् और यदि प्रत्यर्थीगण का आशय किसी दावा से इंकार करने का है, उन्हें, यदि आवश्यक हो, याची को सुनने के बाद, सकारण आदेश पारित करना होगा और इसे लिखित में याची को संसूचित करना होगा।

जैसा परिशिष्ट-18 और 19 से प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थीगण ने न तो याची को सुनवाई का अवसर दिया है और न ही याची के एक अथवा अन्य दावा को अस्वीकार करने का कोई कारण दिया है।''

6. रिट अधिकारिता में सुनवाई करते हुए यह न्यायालय याची के सेवानिवृत्ति देयों की संगणना नहीं कर सकता है, जिसे विस्तार से करने की अपेक्षा संबंधित प्रत्यर्थीगण से की जाती है और उन्हें ही याची के प्रत्येक दावा पर विचार करना है और निर्णय लेना है। चूँकि मैंने पहले ही ऊपर पाया है कि परिशिष्ट 18 और 19 में अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश पूर्व में डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 6187 वर्ष 2007 में इस न्यायालय के आदेशों और निर्देशों के साथ सुसंगत नहीं है और इसलिए अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, सी॰ सी॰ एल॰ और क्षेत्रीय भविष्य निधि कमिश्नर, सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰, राँची द्वारा पारित क्रमशः परिशिष्ट 18 और 19 में अंतर्विष्ट दिनांक 2.2.2009 और 15.1.2009 के आदेशों को अपास्त करने के बाद मामले को उसके द्वारा पहले ही दाखिल किए गए अभ्यावेदन में उल्लिखित याची के प्रत्येक दावा पर विचार करने के लिए और इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से दो माह की अवधि के भीतर विधि के अनुरुप सकारण आदेश पारित करने के लिए उनको वापस भेजा जाता है।

इन निर्देशों और संप्रेक्षणों के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

माननीय डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति

सरिता देवी

बनाम

झारखंड राज्य, सचिव, समाज कल्याण विभाग, राँची के माध्यम से एवं अन्य

W.P. (S) No. 2184 of 2010. Decided on 6th September, 2010.

सेवा विधि–सेवा समाप्ति–याची वर्ष 2004 से आंगनबाड़ी सेविका के रूप में काम कर रही थी–वह निष्कपटतापूर्वक, ईमानदारीपूर्वक और लगन से और प्रत्यर्थीगण के संतुष्टि के मुताबिक काम कर रही थी–आंगनबाड़ी सेविका के रूप में उसके चयन एवं नियुक्ति के बारे में प्रत्यर्थीगण द्वारा कभी कोई आपत्ति नहीं की गयी थी–याची को सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया था–विधि के अनुरूप कार्रवाई करने की स्वतंत्रता प्रत्यर्थीगण को देते हुए आक्षेपित आदेश अभिखंडित–याचिका व्यय के साथ अनुज्ञात। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Krishna Shanker, For the Petitioner; J.C. to G.P.-III, For the Respondents.

आदेश

वर्तमान याचिका मुख्यतः इस कारण से दाखिल की गयी है कि कोई भी कारण दिए बिना याची की सेवाएँ दिनांक 27 अप्रैल, 2010 के परिशिष्ट-4 पर मौजूद आदेश के तहत समाप्त कर दी गयी है। दिनांक 2 अगस्त, 2004 के प्रभाव से याची आंगनबाड़ी सेविका के रूप में काम कर रही थी और

तत्पश्चात्, वह निष्कपटतापूर्वक, ईमानदारीपूर्वक और लगन से और प्रत्यर्थीगण के संतोषानुसार काम कर रही थी। आंगनबाड़ी सेविका के रूप में उसके चयन और नियुक्ति के बारे में प्रत्यर्थीगण द्वारा कभी कोई आपत्ति नहीं की गयी थी। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि कोई नोटिस दिए बिना और सुनवाई का अवसर दिए बिना याची की सेवाएँ अचानक, एकपक्षीय और मनमाने रूप से समाप्त कर दी गयी है। दिनांक 27 अप्रैल, 2010 का आक्षेपित आदेश पारित करते हुए प्रत्यर्थीगण द्वारा कुछ रिपोर्ट पर विश्वास किया गया है, जिसकी एक प्रति याची को कभी नहीं दी गयी है और याची को कोई जानकारी नहीं है कि उक्त रिपोर्ट क्या है और क्या इसे भी मनमाना ढंग से दिया गया है या नहीं और, इसलिए, परिशिष्ट-4 पर आदेश अभिखंडित एवं अपास्त करने योग्य है।

2. मैंने प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि याची का चयन आक्षेपित आदेश के मुताबिक अनियमित था और आक्षेपित आदेश जिला सामाजिक कल्याण अधिकारी, धनबाद द्वारा दिए गए दिनांक 13 अप्रैल, 2010 के रिपोर्ट पर पारित किया गया था।

3. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए, मैं याचिका के मेमो के परिशिष्ट-4 पर दिनांक 27 अप्रैल, 2010 को प्रत्यर्थीगण द्वारा पारित आदेश को अभिखंडित और अपास्त, मुख्यतः निम्नलिखित तथ्यों और कारणों से करता हूँ:-

(i) याची को दिनांक 2 अगस्त, 2004 के प्रभाव से आंगनबाड़ी सेविका के रूप में नियुक्त किया गया था। तत्पश्चात वह निष्कपट रूप से और ईमानदारीपूर्वक एवं लगन से प्रत्यर्थीगण के संपुष्टि के मुताबिक काम कर रही थी।

(ii) यह प्रतीत होता है कि यह अभिकथन करते हुए कि उसका चयन अनियमित था, याची पर कभी कोई नोटिस तामील नहीं की गयी थी। प्रत्यर्थीगण द्वारा याची को सुनवाई का अवसर कभी नहीं दिया गया था और अचानक उसकी सेवाएँ दिनांक 27 अप्रैल, 2010 के आदेश (परिशिष्ट-4) के तहत समाप्त कर दी गयी है। इस प्रकार, नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्त का घोर उल्लंघन हुआ है।

(iii) आगे प्रतीत होता है कि आक्षेपित आदेश में जिला सामाजिक कल्याण अधिकारी, धनबाद द्वारा दिए गए दिनांक 13 अप्रैल, 2010 के किसी रिपोर्ट पर विश्वास किया गया है। उक्त रिपोर्टों में क्या कहा गया है, इसकी जानकारी याची को नहीं है। इस दस्तावेज की प्रति की आपूर्त्ति याची को कभी नहीं की गयी है। राज्य प्राधिकारी को यह ध्यान में रखना चाहिए था कि जब कभी किसी रिपोर्ट के आधार पर कर्मचारी की सेवाएँ समाप्त की जाती है, तब उक्त रिपोर्ट की आपूर्त्ति राज्य के कर्मचारी को की जानी चाहिए, यदि यह अत्यधिक गोपनीय नहीं है। वर्तमान मामले के तथ्यों को देखते हुए प्रतीत होता है कि रिपोर्ट, जिसे जिला सामाजिक कल्याण अधिकारी, धनबाद द्वारा दिनांक 13 अप्रैल, 2010 को दिया गया था, की आपूर्त्ति याची को की जानी चाहिए थी और इसलिए भी, नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का घोर उल्लंघन हुआ है।

4. पूर्वोक्त तथ्यों और कारणों के संचित प्रभाव से मैं एतद् द्वारा प्रत्यर्थीगण द्वारा पारित किए गए दिनांक 27 अप्रैल, 2010 के आदेश, जो वर्तमान याचिका के मेमो के परिशिष्ट-4 पर है, को अभिखंडित और अपास्त करता हूँ। याची पर लागू करने योग्य विधि, नियमों, विनियमनों और नीतियों के अनुरुप और कम से कम नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का अनुसरण करते हुए प्रत्यर्थीगण को कार्रवाई करने की स्वतंत्रता है।

5. याचिका को एतद् द्वारा 500/- रुपयों (पाँच सौ रुपये मात्र) के व्यय के साथ अनुज्ञात किया जाता है और निपटाया जाता है। इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से चार सप्ताह के भीतर प्रत्यर्थी सं॰ 2 याची को इस व्यय का भुगतान करेगा।

माननीया जया रॉय, न्यायमूर्ति

मो॰ तौहीद आलम उर्फ तौहीद आलम

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 262 of 2010. Decided on 29th July, 2010.

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—भरण-पोषण—याची को अपनी पत्नी-विपक्षी पक्षकार को अधिशेषों सहित 1500/- रु॰ का भरण-पोषण भुगतान करने का निर्देश दिया गया—याची एक राज मिस्त्री है एवं 10-15 हजार रुपये प्रति माह कमा रहा है एवं कुछ भूमि भी है जिससे उसके 1,00,000/- रु॰ प्रति वर्ष कमाने की बात बताई गई है—याची ने एक अन्य महिला से विवाह रचा लिया है एवं विपक्षी पक्षकार का भरण-पोषण नहीं कर रहा है—विपक्षी पक्षकार कुछ भी उपार्जन नहीं करती है एवं उसने अभी भी पुनर्विवाह नहीं किया है—आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं—पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 6 से 10)

निर्णयज विधि.—(2010) 1 SCC 666 : **2010 (2) BLJ & JLJ 51 (SC)**—Relied upon.

अधिवक्तागण.—M/s Lina Shakti, Shailesh Kumar, For the Petitioner; Mr. S.K. Srivastava, For the Opp. Party.

आदेश

जया रॉय, न्यायमूर्ति.—याची के विद्वान अधिवक्ता और विपक्षी पक्षकार के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याची ने वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन विविध केस सं॰ 76 वर्ष 2007 में श्री हरिकेश चंद, प्रधान न्यायाधीश, कुटम्ब न्यायालय, पलामू द्वारा पारित दिनांक 24.2.2010 के आदेश के विरुद्ध दाखिल किया है जिसके द्वारा मामला दाखिल किए जाने की तिथि अर्थात् दिनांक 30.7.2007 से विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 मोनिमा खातून को 1500/-रुपयों की राशि बतौर भरण-पोषण भत्ता के रूप में भुगतान करने का निर्देश दिया है। उसे प्रत्येक माह को 10 तारीख पर या इससे पहले उक्त निर्वाह भत्ता का भुगतान करने का आगे निर्देश दिया गया है। निर्वाह भत्ता का बकाया याची द्वारा विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 को छह बराबर किस्तों में इस आदेश की तिथि से छह माह की अवधि के भीतर दिया जाएगा।

3. संक्षेप में, तथ्य ये हैं कि आवेदक विपक्षी पक्षकार, जो याची की पत्नी है, ने निर्वाह भत्ता प्रदान करने हेतु अपने पति के विरुद्ध धारा 125 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, डालटेनगंज, पलामू के समक्ष एक आवेदन दाखिल किया, जिसे विविध केस सं॰ 76 वर्ष 2007 के रूप में दर्ज किया गया था। आवेदक विपक्षी पक्षकार का मामला यह है कि मुस्लिम धर्म के रीति-रिवाजों के अनुसार दिनांक 5 मई 2002 को वर्तमान याची के साथ उसका विवाह हुआ था और विवाह के बाद वह अपने ससुराल गयी और अपना दाम्पत्य जीवन शांतिपूर्वक शुरू किया। किन्तु उनके विवाह के छह माह बाद उसके पति (याची) ने अपने परिवार के सदस्यों के साथ एक लाख रुपया नगद और हीरो होण्डा

मोटरसाइकिल दहेज के रूप में मांगने लगे। चूँकि मांग पूरी नहीं की गयी थी, उन्होंने आवेदक विपक्षी पक्षकार को यातना देना शुरू किया और अंततः उसे अपने घर से निकाल दिया। उसका आगे मामला है कि विगत कुछ वर्षों से वह अपनी माता के घर में रह रही है और उसका आय का कोई स्रोत नहीं है। यद्यपि उसके पति ने तलाक देने का दावा किया है किन्तु उसकी उपस्थिति में उसे तलाक नहीं दिया गया था। उसका आगे मामला यह है कि इस संबंध में पंचायती भी की गयी थी किन्तु याची ने पंचायत के निर्णय का अनुसरण नहीं किया। उसका पति राज मिस्त्री है और 10-15 हजार रुपया प्रतिमाह कमाता है। इसके अतिरिक्त, उसके पास भूसंपत्ति है जिससे वह एक लाख रुपया सालाना कमाता है।

4. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि नोटिस पाने के बाद याची-विपक्षी पक्षकार उपस्थित हुआ और अपना कारण-पृच्छा दाखिल किया जिसमें कथन किया कि आवेदक/विपक्षी पक्षकार ने स्वयं याची का घर छोड़ दिया है और उसके साथ सारा संबंध तोड़ लिया है और इस कारण से याची ने उसे 'तलाक' दे दिया है। इन परिस्थितियों में याची केवल 'देन मोहर' के भुगतान और इद्दत की अवधि तक निर्वाह राशि देने का जिम्मेदार है। वह अपनी तलाक शुदा पत्नी को इद्दत की अवधि के परे निर्वाह भत्ता प्रदान करने के लिए बाध्य नहीं है भले ही वह स्वयं की देखभाल करने में अक्षम हो।

5. याची के अधिवक्ता द्वारा आगे प्रतिवाद किया गया है कि याची दैनिक मजदूर है और 1000/- रुपया मासिक कमाता है। उसको कोई भूसपंत्ति अथवा आय का अन्य स्रोत नहीं है। वह अपने वृद्ध माता-पिता के साथ रह रहा है जिनकी देखभाल उसी को करनी पड़ती है। अतः इन परिस्थितियों में, वह विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 को पृथक भरण-पोषण करने की स्थिति में नहीं है।

6. आक्षेपित आदेश से, मैं पाती हूँ कि याची ने आवेदन/विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के साथ अपने विवाह को विवादित नहीं किया है। उसने अपना मामला सिद्ध करने के लिए स्वयं सहित अपनी ओर से चार गवाहों का परीक्षण किया है। उन सबों ने कथन किया है कि विवाह के बाद याची/विपक्षी पक्षकार ने नगद राशि मांगना शुरू कर दिया और जब उसकी मांग पूरी नहीं की गयी थी, उसने आवेदक को यातना देना शुरू किया और अंततः उसे अपने घर से बाहर निकाल दिया। इस संबंध में पंचायती की गयी थी किन्तु याची/विपक्षी पक्षकार ने पंचायत का निर्णय का पालन नहीं किया। आगे कथन किया गया है कि धारा 498A भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन याची को दोषसिद्ध किया गया है। उसके आय के संबंध में आवेदक विपक्षी पक्षकार ने कथन किया है कि याची राज मिस्त्री है और वह 10-15 हजार रुपया मासिक कमाता है। इसके अतिरिक्त, उसके पास लगभग छह बीघा जमीन है और उक्त जमीन से वह 1,00,000 (एक लाख रुपया) प्रतिवर्ष कमाता है। उसने इंकार किया कि उसकी उपस्थिति में उसके पति ने उसे कोई तलाक दिया है। व्यवहारतः उसने अपना मामला संदेह के परे सिद्ध किया है।

7. याची विपक्षी पक्षकार ने स्वयं सहित अपनी ओर से तीन गवाहों का परीक्षण किया है। दोनों गवाहों वि॰ प॰ सा॰ 1 और वि॰ प॰ सा॰ 2 ने स्वीकार किया है कि याची को धारा 498A भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन दोषी पाया गया था। वि॰ प॰ सा॰ 2 ने अपने प्रति-परीक्षण में यह भी स्वीकार किया है कि याची के पिता के पास भूसंपत्ति है और वे संयुक्त रूप से रह रहे हैं जो स्पष्टतः सिद्ध करता है कि उक्त भूमि से याची कुछ राशि कमाता है।

8. सामग्रियों और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के बाद विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया कि याची और आवेदक विपक्षी पक्षकार विधिवत शादी शुदा थे और कुछ समय से पति-पत्नी के रूप में रह रहे थे और वर्तमान आवेदक विपक्षी पक्षकार ने याची द्वारा यातना दिए जाने

के कारण उसको छोड़ दिया और अपने माता-पिता के घर में रहने लगी। याची विपक्षी पक्षकार उसका भरण-पोषण नहीं कर रहा है। स्वीकृत रूप से याची ने एक अन्य महिला के साथ विवाह कर लिया है। आवेदक विपक्षी पक्षकार कुछ नहीं कमाती है और उसने अब तक पुनर्विवाह नहीं किया है।

9. शोभना बानो बनाम इमरान खान, 2010 (1) SCC 666 : 2010 (2) BLJ & JLJ 51 (SC) में प्रकाशित मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:–

"21. धारा 125 दं० प्र० सं० के अधीन अपीलार्थी की याचिका कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष तब तक पोषणीय होगी जब तक अपीलार्थी पुनर्विवाह नहीं कर लेती है। धारा 125 दं० प्र० सं० के अधीन अधिनिर्णीत निर्वाह राशि को केवल इद्दत अवधि के लिए निर्बंधित नहीं किया जा सकता है।''

10. पूर्वोक्त निर्णय पर विचार करते हुए और ऊपर चर्चा किए गए समस्त मामला पर विचार करने पर मैं आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप का कोई कारण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया जाता है।

माननीय भगवती प्रसाद, मुख्य न्यायाधीश एवं सुशील हरकौली, न्यायमूर्ति

एस॰ एम॰ महफूज आलम

बनाम

यूनाइटेड इंडिया इन्श्योरेंस कम्पनी लिमिटेड, धनबाद एवं अन्य

M.A. No. 319 of 2008. Decided on 26th August, 2010.

मोटर यान अधिनियम, 1988—धाराएँ 168 एवं 173—दुर्घटना–मुआवजा–बीमा कम्पनी को विमुक्त करते हुए वाहन के स्वामी अपीलार्थी को मुआवजा भुगतान करने का दायी अभिनिर्धारित किया गया–बीमा आच्छादन की अधिप्रमाणीकरण संदेहास्पद है–अपीलार्थीगण का दावा ऐसे दस्तावेज पर आधारित है जिसका प्रक्षेप किए जाने के चरित्र का है–दुर्घटना बीमा आच्छादन दिए जाने से पहले हुई थी–अधिकरण के निष्कर्ष, हस्तक्षेप किए जाने योग्य नहीं है–अपील खारिज। (पैराएँ 6 से 12)

अधिवक्तागण.–Mr. Ritesh Kumar Bobby, For the Appellant; Mr. B. Chatterjee, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. यह अपील टाइटल (एम॰ वी॰) वाद सं॰ 101/97 में श्री इंद्र देव मिश्रा, विद्वान षष्ठम अपर जिला न्यायाधीश-सह-मोटर वाहन दुर्घटना दावा अधिकरण, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 18.7.2008 के अधिनिर्णय के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा दावेदारों का दावा अधिकरण द्वारा स्वीकार किया गया था। किन्तु बीमा कम्पनी को विमुक्त कर दिया गया था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि दावेदारों को मुआवजा देने का दायी वाहन का स्वामी है। वर्तमान अपील, जिसे अधिनिर्णय को चुनौती देने के लिए वाहन के स्वामी द्वारा दाखिल किया गया था, के पूर्व बीमा कम्पनी द्वारा एक अन्य अपील दाखिल की गयी थी जिसमें अधिकरण ने बीमा कम्पनी को दायी अभिनिर्धारित किया था। एम॰ ए॰ सं॰ 49 वर्ष 2004 में अधिकरण के आदेश को अपास्त करते हुए इस न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

''स्वीकृत रूप से मामले में अंतर्ग्रस्त गंभीर विवाद यह था कि क्या दिनांक 23.6.1997 को जारी कवर नोट में प्रक्षेप करके तिथि बदलकर 22.6.97 कर दी गयी

थी। यदि प्रक्षेप का अभिकथन सिद्ध किया जाता है, तब निश्चय ही बीमा कम्पनी मुआवजा भुगतान का दायी नहीं होगी। हमारा दृष्टिकोण है कि यह एक सुयोग्य मामला है जहाँ इस विवाद्यक कि क्या कवर नोट में प्रक्षेप किया गया है, का विनिश्चिय करने और तत्पश्चात् दावा मामला को पुनः विनिश्चित करने के लिए मामला अधिकरण को वापस भेज दिया जाना चाहिए।

पूर्वोक्त कारणों से, यह अपील अनुज्ञात की जाती है। आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है और विनिर्दिष्ट विवाद्यक विरचित करके और उस विवाद्यक कि क्या कवर नोट (प्रदर्श A-1) में प्रक्षेप प्रतीत होता है, पर अपना निष्कर्ष देते हुए मामले को पुनः विनिश्चित करने के लिए मामला अधिकरण को वापस भेजा जाता है।''

3. अधिकरण का वर्तमान निर्णय बीमा कम्पनी की प्रेरणा पर दाखिल अपील में निर्णय, जिसमें पूर्वोक्त संप्रेक्षण किया गया था, के बाद आया है।

4. हमारे समक्ष अपीलार्थी द्वारा आग्रह किया गया बिन्दु यह है कि बीमा कम्पनी ने लिखित कथन में असंदिग्ध रूप से स्वीकार किया है कि उन्होंने वाहन को बीमाकृत किया है किन्तु बाद में वे इससे मुकर गये थे। यद्यपि इस संबंध में दाखिल अतिरिक्त लिखित कथन को अधिकरण द्वारा स्वीकार किया गया था किन्तु इस न्यायालय ने पुनरीक्षण, सी॰ आर॰ सं॰ 176 वर्ष 2003, में उक्त आदेश आरक्षित कर दिया था।

5. चाहे जो भी हो, खंडपीठ ने अभिनिर्धारित किया है कि इस संबंध में विवाद्यक विरचित किया जाना चाहिए। यहाँ ऊपर उद्धृत इस न्यायालय के खंडपीठ के निर्देशानुसार, जब एक बार इस विवाद्यक पर कि क्या बीमा कवर नोट में प्रक्षेप है या नहीं, विवाद्यक विरचित कर लिया जाता है, तो अधिकरण दावा मामले को पुन: विनिश्चित करेगा। मामले के उस दृष्टिकोण में अधिकरण ने मामले को पुन: विनिश्चित किया है।

6. हम अभिलेख से पाते हैं कि यद्यपि बीमा कवर, जो अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के तर्क का आधार है, की अभिकथित रूप से दिनांक 21.6.1997 को जारी किया गया था, दिनांक 22.6.1997 को बीमा का अवसान हो गया था। अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत किया गया दस्तावेज प्रदर्श-A/1 है। हमने दस्तावेज का परीक्षण किया है। तिथियों में प्रक्षेप है। यह दिनांक 23.6.1997 से शुरू होता है और 22.6.97 से होते हुए 21.6.1997 तक जाता है। हम अपने साथ उपलब्ध चेक से पाते हैं कि बीमा कवर, जो एक वर्ष का बीमा करता है, में अवसान की तिथि 22.6.98 दी गयी है। तब स्पष्टत: बीमा कवर पर बीमा की तिथि को दिनांक 23.6.1997 उपधारित किया जा सकता है। यह निष्कर्ष इस तथ्य द्वारा भी समर्थित है कि बीमा प्रीमियम के धन की रसीद पर तिथि दिनांक 23.6.97 है जो प्रदर्श- A/4 है। जब एक बार यह स्थापित मामला है कि इस दस्तावेज को आपत्ति के साथ स्वीकार किया गया था किन्तु अभिलेख पर इस दस्तावेज के संबंध में कोई खंडन अथवा साक्ष्य उपलब्ध नहीं है कि धन की रसीद दिनांक 23.6.1997 को जारी नहीं की गयी थी, हमारे दृढ़ दृष्टिकोण में यह स्थापित करता है कि दिनांक 23.6.1997 को धन का भुगतान किया गया था। यह उस निष्कर्ष को सम्पुष्ट करता है कि बीमा कवर दिनांक 23.6.1997 को जारी किया गया था।

7. आगे अभिलेख पर बीमा पॉलिसी की कार्बन प्रति दर्शाती है कि बीमा दिनांक 23.6.1997 से किया गया था और यह पुन: इस निष्कर्ष को दृढ़ करता है कि बीमा कवर दिनांक 23.6.1997 को तैयार किया गया था।

8. बीमा कवर नोट, जो अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के तर्क का आधार है, पर प्राधिकृत बीमाकर्ता पॉल एक्का का हस्ताक्षर था। यह व्यक्ति कटघरे में उपस्थित हुआ है और उसका प्रति-परीक्षण किया गया है और उसने कहा है कि वहाँ किया गया प्रक्षेप उसके द्वारा नहीं किया गया है।

9. यह वह व्यक्ति है जिसने बीमा कवर तैयार किया था और उसके द्वारा शुद्धिकरण, जो अपीलार्थी का दावा का आधार है, से इंकार किया गया है। अपीलार्थीगण ने इस प्रभाव का कोई साक्ष्य नहीं दिया है कि पॉल एक्का वह व्यक्ति नहीं है जिसने बीमा कवर तैयार किया था। यदि ये शुद्धियाँ इस व्यक्ति द्वारा नहीं की गयी है, तब किसी अन्य व्यक्ति को वह व्यक्ति नहीं माना जा सकता है जो इन शुद्धियों को करने के लिए प्राधिकृत है।

10. चाहे जो भी हो, यह प्रक्षेप की श्रेणी में आएगा और इस तथ्य की दृष्टि में अपीलार्थीगण का दावा एक ऐसे दस्तावेज पर आधारित है जिसका प्रक्षेप किए जाने का चरित्र है। कोई अन्य साक्ष्य नहीं है जो प्रत्यर्थी कम्पनी के मामले का खंडन करे कि बीमा कवर दिनांक 23.6.1997 को जारी किया गया था। यह उस पृष्ठभूमि में भी है कि दुर्घटना दिनांक 22.6.1997 को हुई थी और ऐसी संभावना है कि उस तिथि पर कुछ छल किया गया था और उसी आधार पर बीमा कवर खरीदा गया होगा और शुद्धियाँ की गई होगी। किन्तु ये सब उपधारणा की प्रकृति का है और हम इस नाते कोई अटकलबाजी का खतरा नहीं लेंगे।

11. चाहे जो भी हो, बीमा कवर नोट, जो अपीलार्थी के दावा का आधार कागज का टुकड़ा है, संदेह के अधीन है।

12. अत: हम मोटर वाहन दुर्घटना दावा अधिकरण के निष्कर्षों को हस्तक्षेप के योग्य नहीं पाते हैं। हम इसे छेड़ने का कोई कारण नहीं देखते हैं और तद्नुसार, यह अपील खारिज की जाती है।

13. अपीलार्थी द्वारा जमा की गयी राशि विचारण न्यायालय अर्थात् अधिकरण को विधि के अनुरूप दावेदारों को वितरित करने के लिए प्रेषित की जाएगी।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

सुनील कुमार सिन्हा उर्फ सुनील कुमार

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 1576 of 2009. Decided on 6th September, 2010.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 419, 420, 467, 468 और 120B—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—छल एवं कूटरचना–अभिखंडन के लिए आवेदन–कालाबाजार में बेचने के लिए कोयला उठाया जाना–याची के विरुद्ध किसी विनिर्दिष्ट अभिकथन की अनुपस्थिति में कि उसी ने कम्पनी की ओर से झूठी घोषणाएँ कर कोलियरी से कोयला उठाया था, किसी अपराध, जिसके लिए मामला दर्ज किया गया था, के लिए संभवत: याची को अभियोजित नहीं किया जा सकता है–ऐसी प्राथमिकी के आधार पर याची के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा–दांडिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 7 और 8)

अधिवक्तागण.–Mr. P.C. Tripathy, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

वर्तमान आवेदन याची द्वारा प्राथमिकी, जिसे भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 419/420/467/468 एवं 120B के अधीन अपराध के लिए उसके विरुद्ध दर्ज किया गया था, के अभिखंडन की प्रार्थना करते हुए दाखिल की गयी है।

2. याची के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता को सुना गया।

3. इस मामले के निपटारे के लिए प्रासंगिक तथ्य निम्नलिखित है:–

इस गोपनीय सूचना कि अनेक कोयला खदानों से मेसर्स सुशीला केमिकल्स प्रा॰ लि॰ सहित तीन पृथक फर्मों के नाम से कोयला प्राप्त किया गया था और इसे रेलवे साइड के बगल में रखा गया था, प्राप्त करने पर रेलवे साइडिंग पर रखे कोयला की भारी मात्रा सूचक–पुलिस अधिकारी द्वारा 30.1.2000 को अभिग्रहित की गयी थी। यह अभिकथन किया गया है कि अन्वेषण के क्रम में यह पाया गया था कि ऐसा कोई भी फर्म, जिनके नामों पर कोयला, कोयला खानों से खरीदा गया था, विद्यमान नहीं है और प्रकटत: बेईमान व्यक्ति जाली फर्मों के नामों पर कालाबाजार में बेचने के उद्देश्य से कोयला खानों से कोयला प्राप्त कर रहे हैं।

4. याची को मामले में इस आधार पर अभियुक्त बनाया गया है कि वह मेसर्स सुशीला केमिकल्स प्रा॰ लि॰ का निदेशक है।

5. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची के विरुद्ध मामला पूर्णत: भ्रामक है और वस्तुत: प्राथमिकी दर्ज करने के पहले अथवा अन्वेषण के क्रम में भी अन्वेषण अधिकारी ने वाणिज्य कर विभाग के आधिकारिक अभिलेखों से सत्यापित करने का कष्ट नहीं उठाया था जहाँ याची का पत्र और कम्पनी अधिनियम के अधीन फॉर्म–32 की प्रमाणित प्रति दाखिल की गयी थी। विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यद्यपि याची मेसर्स सुशीला केमिकल्स प्रा॰ लि॰, जो कम्पनी अधिनियम के अधीन एक पंजीकृत कम्पनी थी, का अध्यक्ष–सह–प्रबंध निदेशक था, किन्तु निदेशक बोर्ड के गठन में दिनांक 30.8.1997 के प्रभाव से परिवर्तन किया गया था जिसके बाद, याची कम्पनी के निदेशक बोर्ड का सदस्य नहीं रहा था। पश्चातवर्ती व्यक्तियों जिन्हें निदेशक बोर्ड के सदस्यों के रूप में पदासीन किया गया था, के नामों का कथन करते हुए इस संबंध में सूचना, कम्पनी अधिनियम के अधीन फॉर्म 32 की प्रति के साथ, सूचना एवं आवश्यक कार्यवाही के लिए उप–कमिश्नर, वाणिज्य कर को दे दी गयी थी। विद्वान अधिवक्ता जोड़ते हैं कि उक्त कम्पनी के साथ संबंध–विच्छेद होने पर याची को तीन वर्ष बाद हुए अभिकथित अपराध के लिए दायी नहीं बनाया जा सकता है।

विद्वान अधिवक्ता आगे जोड़ते हैं कि पूरी केस डायरी में भी, यह सम्पुष्ट करने का तात्विक साक्ष्य नहीं है कि मेसर्स सुशीला केमिकल्स प्रा॰ लि॰ के नाम पर अभिग्रहित कोयला उठाने के मामले में याची की कोई भूमिका नहीं थी और, इसलिए, याची के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही पूर्णत: भ्रामक है और इसका जारी रहना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है।

6. दूसरी ओर, राज्य के अधिवक्ता राज्य/विपक्षी पक्षकार की ओर से दाखिल किए गए प्रतिशपथ पत्र की ओर ध्यान आकृष्ट करते हैं और सूचित करते हैं कि मामले के अन्वेषण ने प्रकट किया है कि फर्म मेसर्स सुशीला केमिकल्स प्रा॰ लि॰ अस्तित्व में नहीं थी। बल्कि मेसर्स सुशीला केमिकल्स प्रा॰ लि॰ का कारखाना बहुत पहले ही बंद कर दिया गया था, उस तिथि से भी काफी पहले जब उक्त फर्म के नाम पर कोयला खानों से अभिग्रहित कोयला प्राप्त किया गया था। विद्वान अधिवक्ता सूचित करते हैं कि अन्वेषण ने यह भी प्रकट किया है कि याची पूर्वोक्त कम्पनी का निदेशक था।

7. मैंने पक्षों के अधिवक्तागण को सुना है तथा याची द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत दस्तावेजों और राज्य/विपक्षी पक्षकार के प्रति शपथ पत्र का परिशीलन किया है। प्राथमिकी में किए गए अभिकथन यद्यपि उपदर्शित करते हैं कि अन्वेषण पर यह पाया गया था कि अभिग्रहित कोयला मेसर्स सुशीला केमिकल्स

प्रा॰ लि॰ सहित अनेक कम्पनियों के नाम पर प्राप्त किया गया था और कि मेसर्स सुशीला केमिकल्स प्रा॰ लि॰ का कारखाना बहुत पहले ही बन्द किया जा चुका था, किन्तु कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं था कि उस तिथि पर जब कोयला प्राप्त किया गया था, मेसर्स सुशीला केमिकल्स प्रा॰ लि॰ का कारखाना वास्तविक रूप से बन्द पाया गया था। इसके अतिरिक्त, याची द्वारा दाखिल दस्तावेजों, जो सम्पुष्ट करते हैं कि उसने वर्ष 1997 में ही पूर्वोक्त कम्पनी के प्रबंधन बोर्ड से स्वयं को अलग कर लिया था, के संबंध में राज्य के प्रतिशपथ पत्र में कोई स्पष्टीकरण नहीं है। ये दस्तावेज वस्तुत: सम्पुष्ट करते हैं कि दिनांक 30.8.1997 के बाद पूर्वोक्त कम्पनी से याची का कोई भी सरोकार नहीं था। इस प्रकार, यदि पूर्वोक्त कम्पनी की ओर से कोई भी गैर-कानूनी संव्यवहार अभिकथित रूप से किया गया बताया जाता है, तब ऐसे कृत्यों को स्पष्ट करने की जिम्मेदारी उनपर होगी जिन्हें बाद में प्रबंधन बोर्ड के सदस्यों के रूप में कम्पनी के साथ जोड़ा गया था। याची के विरुद्ध किसी विनिर्दिष्ट अभिकथन की अनुपस्थिति में कि मेसर्स सुशीला केमिकल्स प्रा॰ लि॰ की ओर से झूठी घोषणाएँ करते हुए कोयला खानों से कोयला उसी ने प्राप्त किया था, याची को किसी अपराध, जिसके लिए मामला दर्ज किया गया था, के लिए संभवत: अभियोजित नहीं किया जा सकता है। ऐसी प्राथमिकी के आधार पर याची के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही जारी रखना निश्चय ही न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।

8. उक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों और ऊपर की गयी चर्चा के प्रकाश में, मैं इस आवेदन में गुणागुण पाता हूँ। तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है। याची के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही जो प्राथमिकी के आधार पर आरंभ की गयी थी, और चिरकुण्डा पी॰ एस॰ केस सं॰ 15 वर्ष 2000 से उद्भूत जी॰ आर॰ सं॰ 310 वर्ष 2000 के तहत मामले में पारित दिनांक 9.10.2009 का संज्ञान का आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

माननीय आर॰ के॰ मेराठिया, न्यायमूर्ति

काँके प्रखंड मत्स्यजीवी सहयोग समिति लिमिटेड (1738 में)

सुकुरहुतू मत्स्यजीवी स्वावलम्बी सहयोग समिति लिमिटेड (5405 में)

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य (दोनों में)

W.P. (C) Nos. 1738 of 2010 with 5405 of 2008. Decided on 6th August, 2010.

झारखंड सहकारी समिति अधिनियम, 1935—धारा 26—तालाबों की बन्दोबस्ती—रजिस्ट्रार को-ऑपरेटिव सोसाईटी द्वारा दो समितियों के बीच प्रवर्तन क्षेत्र को विभाजित करते हुए पत्र निर्गत—तालाबों की बन्दोबस्ती के संबंध में दोनों समितियों के बीच गम्भीर विवाद एवं मुकदमा चल रहा है जिससे उनका कार्य-कलाप और वित्त प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो रहा है—1935 अधिनियम के अधीन निबंधित समितियों को 1996 अधिनियम के अधीन निबंधित समिति पर अधिमान देने का प्रावधान करने वाले आक्षेपित पत्र में कुछ भी नहीं है—समिति के हित को समिति के स्वयं के परिप्रेक्ष्य में नहीं देखा जा सकता है—याचिकाएँ खारिज। (पैराएँ 7 से 10)

अधिवक्तागण.—M/s Anil Kumar Sinha, Sameer Saurabh (in 1738), Mr. Sumeet Gadodia (in 5405), For the Petitioner; Mr. Sumeet Gadodia (in 1738), For the Respondent No. 4; Mr. S. Choudhary (in both), For the State; M/s Anil Kumar Sinha (in 5405), For the Respondent No. 7.

आर० के० मेराठिया, न्यायमूर्ति.–ये संबंधित दोनों रिट याचिकाएँ विस्तारपूर्वक साथ सुनी जा रही है।

2. डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 1738 वर्ष 2010 में याची और डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 5405 वर्ष 2008 में प्रत्यर्थी काँके प्रखंड मत्स्यजीवी सहयोग समिति लिमिटेड, राँची झारखंड सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1935 (संक्षेप में 1935 अधिनियम) के अधीन पंजीकृत सोसाइटी, इसके बाद '1935 के अधिनियम के अंतर्गत सोसाइटी के रूप में निर्दिष्ट है। डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 1738 वर्ष 2010 में प्रत्यर्थी सं० 4 और डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 5405 वर्ष 2008 में याची सुकुरहुतु, मत्स्यजीवी स्वाबलंबी सहयोग समिति लिमिटेड, सुकुरहुतु, राँची झारखंड स्वाबलंबी सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1996 (संक्षेप में 1996 अधिनियम) के अधीन पंजीकृत सोसाइटी है, जो इसमें इसके पश्चात् '1996 अधिनियम सोसाइटी के रूप में निर्दिष्ट है।

3. '1935 अधिनियम सोसाइटी' ने दो सोसाइटियों के बीच कार्यक्षेत्र विभक्त करते हुए रजिस्ट्रार, सहकारी सोसाइटी द्वारा जारी दिनांक 1.7.2009 के पत्र के विरूद्ध W.P.(C) No. 1738 वर्ष 2010 दाखिल की है।

1935 अधिनियम की सोसाइटी के अनुसार, उक्त पत्र द्वारा इसके कार्यक्षेत्र को काटा जाना इप्सित किया गया है जो सोसाइटी के हित के विरुद्ध है और इस प्रकार 1935 अधिनियम की धारा 26 के प्रावधानों के विरुद्ध है। आगे प्रतिवाद किया गया है कि उक्त पत्र जारी करने के पहले इसे कोई नोटिस/सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया था, और इसके अतिरिक्त उक्त पत्र दिनांक 25.4.2000 के पत्र में अंतर्विष्ट सहकारिता विभाग के निर्णय के विरुद्ध है।

4. दूसरी ओर, '1996 अधिनियम की सोसाइटी' के अनुसार, 1935 अधिनियम के अधीन पंजीकृत सोसाइटी और 1996 अधिनियम के अधीन पंजीकृत अन्य सोसाइटी के बीच कार्यक्षेत्र का विभाजन प्रतिबंधित करता हुआ 1935 अधिनियम अथवा 1996 अधिनियम में कुछ भी नहीं है। आगे निवेदन किया गया है कि दो सोसाइटीयों के बीच विवादों के समाधान के लिए दोनों सोसाइटीयों के हित को दृष्टि में रखते हुए दिनांक 1.7.2009 का पत्र सही जारी किया गया था। इसके अतिरिक्त, 1935 अधिनियम की धारा 26 की प्रक्रिया का अनुसरण किया गया है।

5. इस प्रकार प्रश्न उद्भुत होते हैं कि क्या दिनांक 25.4.2000 का विभागीय पत्र याची–1935 अधिनियम की सोसाइटी का सहायक है; और क्या 1935 अधिनियम की धारा 26 में प्रावधानित प्रक्रिया का अनुसरण प्रत्यर्थी–राज्य द्वारा किया गया है?

6. प्रथम प्रश्न का उतर नकारात्मक और द्वितीय प्रश्न का उत्तर सकारात्मक होगा। कारण निम्नलिखित है।

7. प्रथम प्रश्न के संबंध में, यह ध्यान में लिया जा सकता है कि '1996 अधिनियम की सोसाइटी' दिनांक 25.4.2000 के विभागीय पत्र के जारी होने के पहले पंजीकृत की गयी थी। यह प्रतीत होता है कि 1935 अधिनियम और 1996 अधिनियम के अधीन पंजीकृत सोसाइटियों के बीच विवाद की दृष्टि में, सहकारिता विभाग द्वारा उक्त पत्र जारी किया गया था। पैराग्राफ–5, अन्य बातों के साथ–साथ, प्रावधानित करता है कि स्थानीय स्तर पर तालाबों के बंदोबस्ती में 1935 अधिनियम के अधीन पंजीकृत सोसाइटी को प्राथमिकता दी जा सकती है किन्तु 1935 अधिनियम और 1996 अधिनियम के अधीन पंजीकृत सोसाइटियों के बीच बंदोबस्ती उनके सदस्यों के अनुपात में की जा सकती है। 1996 अधिनियम के अधीन पंजीकृत सोसाइटी के ऊपर 1935 अधिनियम के अधीन पंजीकृत सोसाइटी को प्राथमिकता प्रावधानित करता हुआ दिनांक 25.4.2000 के पत्र में कुछ भी नहीं है। आगे, 1935 अधिनियम में अथवा 1996 अधिनियम में ऐसा कुछ भी नहीं है जिसके अधीन ऐसी प्राथमिकता अनुध्यात की गयी है। इन परिस्थितियों में, यह अभिनिर्धारित करना ही होगा कि दिनांक 25.4.2000 का विभागीय पत्र याची–1935 अधिनियम की सोसाइटी का सहायक नहीं है।

8. द्वितीय प्रश्न के संबंध में, यह प्रतीत होता है कि अप्रैल, 2002 से आगे, '1996 अधिनियम सोसाइटी' सुकुरहुतु गाँव के तीन तालाबों की बंदोबस्ती नियमित रूप से प्राप्त कर रहा है। अन्य 34 तालाब

'1935 अधिनियम की सोसाइटी' के साथ बंदोबस्त किए गए हैं। उनके बीच गंभीर विवादों और मुकदमों, जो उनके क्रियाकलापों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहे थे और उन पर वित्तीय बोझ भी कारित कर रहे थे, से बचने के लिए '1996 अधिनियम की सोसाइटी ने दोनों सोसाइटियों के बीच कार्यक्षेत्र के विभाजन की प्रार्थना दिनांक 26.8.2008 के पत्र द्वारा की थी। दोनों सोसाइटियों के हित को दृष्टि में रखते हुए रजिस्ट्रार, सहकारी सोसाइटी, ने 1935 अधिनियम की धारा 26 के अधीन प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए उनके बीच कार्यक्षेत्र को विभाजित करना समुचित समझा। तद्नुसार, विभाजित कार्यक्षेत्र के संबंध में उपविधि में संशोधन के संबंध में जेनरल बॉडी के संकल्प को भेजने के लिए '1935 अधिनियम की सोसाइटी' को दिनांक 3.7.2009 और 4.8.2009 को नोटिस जारी किए गए थे। '1935 अधिनियम की सोसाइटी' ने ऐसे संशोधन पर आपत्ति करते हुए दिनांक 6.8.2009 के पत्र के अधीन जेरनल बॉडी का संकल्प भेजा। मामले पर विचार करने के बाद दिनांक 1.7.2009 का पत्र (1935 अधिनियम की सोसाइटी द्वारा आक्षेपित) जारी किया गया था और 1935 अधिनियम की धारा 26 (2) के अधीन कार्यवाही शुरू की गयी थी। उनके बीच विवादों को रोकने के लिए, क्योंकि ऐसे विवाद सोसाइटियों के क्रिया कलाप पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहे थे, दोनों सोसाइटियों के बीच क्षेत्र विभाजन की अनुशंसा करते हुए जिला सहकारी अधिकारिता द्वारा रजिस्ट्रार, सहकारी समिति, को दिनांक 30.4.2010 की जाँच रिपोर्ट भेजी गयी थी। यह भी पाया गया था कि '1935 अधिनियम के सोसाइटी' के सदस्यों की वृहद संख्या या तो मृत व्यक्ति थे अथवा अपात्र व्यक्ति थे।

9. 1935 अधिनियम की धारा 26 (1) के मुताबिक, यदि रजिस्टार, संतुष्ट हैं कि पंजीकृत सोसाइटियों की उपविधि का संशोधन ऐसे सोसाइटी के हित में आवश्यक अथवा वांछनीय है, वह सोसाइटी को जारी किए जाने वाले लिखित आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट समय के भीतर ऐसा संशोधन करने की अपेक्षा कर सकता है। रजिस्ट्रार को संतुष्ट होना है कि क्या उपविधि में संशोधन सोसाइटी के हित में आवश्यक अथवा वांछनीय है। सोसाइटी के हित को सोसाइटी के ही परिप्रेक्ष्य से नहीं देखा जा सकता है। अभिलेख पर यह आया है कि दोनों सोसाइटियों के बीच उनके बीच तालाबों की बंदोबस्ती के संबंध में गंभीर विवाद और मुकदमा जारी है जो उनके क्रिया-कलापों और वित्त पर प्रतिकूल प्रभाव डाला रहा था। अतः 1935 अधिनियम की धारा 26 की सहायता लेने में रजिस्ट्रार पूरी तरह न्यायोचित है। यह भी स्पष्ट है कि इस मामले में 1935 अधिनियम की धारा 26 के अधीन प्रावधानित प्रक्रियाओं का अनुसरण किया गया है।

10. इन परिस्थितियों में, '1935 अधिनियम की सोसाइटी' द्वारा दाखिल रिट याचिका अर्थात् डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1738 वर्ष 2000 खारिज किया जाता है। दिनांक 1.7.2009 के पत्र/आदेश को मान्य ठहराया जाता है। '1996 अधिनियम की सोसाइटी' द्वारा दाखिल रिट याचिका अर्थात् डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5405 वर्ष 2008 अनुज्ञात की जाती है। सचिव, पशुपालन एवं मत्स्य विभाग द्वारा पारित दिनांक 13.8.2008 का आदेश अपास्त किया जाता है। किन्तु व्यय को लेकर आदेश नहीं है।

माननीय नरेन्द्र नाथ तिवारी, न्यायमूर्ति

जगनारायण उपाध्याय एवं अन्य

बनाम

श्रीमती यदुवंशी देवी एवं अन्य

Appeal from Appellate Decree No. 393 of 2004. Decided on 4th May, 2010.

टाइटल अपील सं॰ 10 वर्ष 1999 में तृतीय अपर जिला न्यायाधीश, डालटेनगंज, पलामू द्वारा पारित दिनांक 23.4.2004 के निर्णय के विरुद्ध।

हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956—धारा 14—वादीगण-प्रत्यर्थीगण मूल स्वामी के नातिनियाँ हैं–पूर्ण रक्त को अर्द्धरक्त की तुलना में प्राथमिकता दी जाएगी–प्रथम विधवा की पुत्रियाँ उत्तराधिकारिणी हैं और उत्तराधिकार के जरिए संपत्ति पर उनका अधिकार और अभिधान है–मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य देकर वादीगण अपना निरन्तर कब्जा सिद्ध करने में सक्षम रहे हैं–प्रतिवादीगण को वादीगण, जिन्होंने उत्तराधिकार द्वारा और वर्ष 1953 से प्रतिकूल कब्जा द्वारा भी अधिकार और अभिधान अर्जित किया है, के अभिधान और कब्जा में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है–कब्जे की वापसी के लिए प्रतिवादीगण द्वारा तब से कोई कदम नहीं उठाया गया है–वादीगण, जिन्होंने अपनी माता की मृत्यु के बाद संपत्ति विरासत में पायी, उनका अभिधान और अधिकार धारा 14 के फलस्वरूप संपूर्ण बन जाता है–अपील खारिज।

(पैराएँ 6, 10 एवं 11)

अधिवक्तागण.–Mr. P.C. Roy, For the Appellants; Mr. T. N. Jha, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–मूल वाद में प्रतिवादी सं० 1 और 2 इस अपील में अपीलार्थीगण हैं। वादीगण–यदुवंशी देवी और मनमति कुंअर ने अधीनस्थ जज सं० III, और डालटेनगंज, पलामू के न्यायालय में वाद भूमि पर उनके अभिधान और कब्जा के पुष्टिकरण की घोषणा के लिए प्रार्थना करते हुए टाइटल वाद सं० 34 वर्ष 1980 दाखिल किया था। वादीगण ने उत्तराधिकार की हिन्दु विधि (संशोधन अधिनियम, 1929) के अधिनियम सं० 2 वर्ष 1929 के प्रावधानों के फलस्वरूप उत्तराधिकार का दावा किया था।

2. संक्षेप में, वादीगण का मामला यह है कि वे मूल स्वामी शिव करण पांडे की नतिनियाँ है। उक्त शिव करण पांडे अपने पीछे दो विधवाओं अर्थात् मोस्मात लखपति कुंअर और मोस्मात जसमति कुंअर को छोड़कर वर्ष 1945 में मृत हो गया। मोस्मात लखपति कुंअर और शिव करण पांडे की एक पुत्री अर्थात् माहेश्वरी देवी जो वादीगण यदुवंशी देवी और मनमति कुंअर को अपने पीछे छोड़ते हुए अपनी माता–मोस्मात लखपति कुंअर के पहले मृत हो गयी। शिव करण पांडे को पुत्र नहीं था। उसने महेश्वरी देवी के पति–वादीगण का पिता–को घर दामाद के रूप में रखा था। शिव करण पांडे की मृत्यु के बाद उसकी दोनों विधवाओं ने इस करार के साथ कि वे एक-दूसरे की खेती में हस्तक्षेप नहीं करेंगे, संपत्तियों का सौहार्द्रपूर्ण बँटवारा कर लिया था। तब से दोनों विधवाएँ पृथक रह रही थी और उनकी खेती भी अलग-अलग थी। वर्ष 1950-51 में मोस्मात लखपति देवी ने उनके पक्ष में वाद भूमि अंतरित करते हुए वादीगण के पक्ष में दिनांक 22.8.1952 को विक्रय विलेख पंजीकृत किया था। वादीगण को उक्त भूमि का कब्जा भी दिया गया था। वादीगण ने दावा किया कि वाद भूमि पहले ही मोस्मात लखपति देवी और मोस्मात जसमति कुंअर के बीच बाँटी जा चुकी थी। मोस्मात लखपति देवी की मृत्यु के बाद उन्होंने मोस्मात लखपति देवी के उत्तराधिकारियों के रूप में संपत्तियों को विरासत में पाया। वादीगण ने आगे दावा किया कि वे प्रतिवादीगण की पूरी जानकारी में वाद भूमि के निरन्तर कब्जा में बनी हुई हैं। मोस्मात जसमति कौर ने यह घोषणा किया कि वादीगण के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख अकृत और शून्य है, इप्सित करते हुए अभिधान वाद दाखिल किया था। उक्त वाद मोस्मात लखपति देवी के विरुद्ध था जिनकी मृत्यु वाद के लंबित रहने के दौरान हो गयी थी और उसके उत्तराधिकारियों को प्रतिस्थापित नहीं किया गया था और पक्ष नहीं बनाया गया था और इस प्रकार उक्त अभिधान वाद में निर्णय उनपर बाध्यकारी नहीं था। वे बिना किसी बाधा के कब्जा में बने रहे और प्रतिकूल कब्जा द्वारा अपने अभिधान को पूरा किया। इसके बावजूद वाद भूमि से वादीगण को बेदखल करने की धमकी प्रतिवादीगण देते थे जिसने वाद के लिए हेतुक उद्भुत किया।

3. प्रतिवादी सं० 1 और 2 ने वाद का प्रतिवाद किया। यह प्रतिवाद किया गया था कि शिव करण पांडे की मृत्यु वर्ष 1945 में अपने पीछे अपनी दो विधवाओं और दो पुत्रियों–लखपति कुंअर से माहेश्वरी देवी और जसमति कुंअर से उछन्ति देवी को छोड़कर हो गयी। शिव करण पांडे की मृत्यु के बाद संपूर्ण संपत्ति दोनों विधवाओं–लखपति कुंअर और जसमति कुंअर के कब्जे में आयी। वर्ष 1953 में लखपति कुंअर की मृत्यु तक संपत्ति संयुक्त बनी रही और उसकी मृत्यु के बाद वाद भूमि सहित शिव करण पांडे की संपूर्ण संपत्ति जीवित रहने के कारण जसमति कुंअर के अनन्य कब्जे में आयी। मोस्मात जसमति कुंअर संपूर्ण संपत्ति के कब्जा में आयी और हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के आरंभ होने के बाद मोस्मात जसमति कुंअर शिव करण पांडे द्वारा पीछे छोड़ी गयी संपत्ति की संपूर्ण स्वामिनी बन गयी। वादीगण के पक्ष में मोस्मात लखपति कुंअर द्वारा निष्पादित दिनांक 22.8.1952 का विक्रय विलेख कोई अधिकार अथवा अभिधान प्रदान नहीं करता है क्योंकि मोस्मात लखपति कुंअर को संपत्ति अन्य संक्रांत करने का अधिकार नहीं था। विक्रय विलेख की उक्त वैधता को अभिधान वाद सं० 36/53 में चुनौती दी गयी थी।

4. किन्तु विद्वान मुंसिफ ने वाद खारिज कर दिया। प्रतिवादीगण ने अपील दाखिल किया जिसे अनुज्ञात किया गया और यह घोषणा कि उक्त विक्रय विलेख अवैध था और प्रतिवादीगण पर बाध्यकारी नहीं था, करते हुए वाद डिक्री किया गया था। अपीलीय न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि दोनों विधवाओं के बीच स्व० शिव करण पांडे की संपत्तियों का सौहार्द्रपूर्ण बँटवारा हो चुका था, जसमति कुंअर ने मोस्मात लखपति कुंअर के हिस्से में अपना अधिकार त्याग नहीं दिया था। अपीलीय न्यायालय की उक्त डिक्री द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय द्वारा सम्पुष्ट की गयी थी। शिव करण पांडे की संपूर्ण संपत्ति मोस्मात जसमति कुंअर के कब्जे में आयी। हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के फलस्वरुप वह उक्त संपत्ति की संपूर्ण स्वामिनी बन गयी।

5. अपने–अपने मामलों को सिद्ध करने के लिए, पक्षों ने विचारण न्यायालय में साक्ष्य दिया। विद्वान विचारण न्यायालय ने वाद खारिज कर दिया। अन्य बातों के साथ यह अभिनिर्धारित किया गया कि वादीगण ने कोई अधिकार अथवा टाइटल अर्जित नहीं किया था और न ही वे वादभूमि के कब्जा में थे। पूर्वोक्त अधिनियम सं० 2 वर्ष 1929 के अधीन अधिकार का वादीगण का दावा टिकने योग्य नहीं है क्योंकि हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 द्वारा उक्त अधिनियम निरसित कर दिया गया था। अत:, उक्त प्रावधान के अधीन उत्तराधिकार का प्रश्न ही नहीं था। मोस्मात लखपति कुंअर, शिव करण पांडे की प्रथम पत्नी, को अपने पति की संपत्ति को वादीगण के पक्ष में अन्य संक्रांत करने का अधिकार नहीं था। शिव करन पांडे की मृत्यु वर्ष 1945 में हो गयी थी और उसकी पहली विधवा मोस्मात लखपति कुंअर की मृत्यु वर्ष 1953 में हुई। अपने पति की संपत्ति विरासत में पाने का हकदार मोस्मात लखपति कुंअर नहीं थी। दूसरी विधवा जसमति कुंअर अपने पति की उत्तराधिकारिणी हुई और जीवित रहने के कारण भूमि की स्वामिनी बन गयी। हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के आरंभ होने के बाद उसके सीमित अधिकार संपूर्ण हो गए। अत: विद्वान विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उक्त निष्कर्ष की दृष्टि में वादीगण का मामला पोषणीय नहीं है और वाद के लिए उनके पास वैध वाद हेतुक नहीं है और वे प्रार्थित अनुतोषों के हकदार नहीं है।

6. वादीगण ने जिला न्यायाधीश, डालटेनगंज, पलामू के समक्ष टाइटल अपील सं० 10/99 में उक्त निर्णय और डिक्री को चुनौती दी। उक्त अपील अंत में तृतीय अपर जिला न्यायाधीश, पलामू द्वारा सुना और निपटाया गया था। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अपील अनुज्ञात किया और विद्वान विचारण न्यायालय का निर्णय और डिक्री अपास्त कर दिया। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय अभिवाकों, साक्ष्यों और विधि के प्रावधानों पर सम्यक चर्चा के बाद इस निष्कर्ष पर आया कि वर्ष 1945 में शिव करण पांडे की मृत्यु के बाद दोनों विधवाएँ अपने जीवनकाल तक अपने पति की संपत्ति की उत्तराधिकारिणी

बनने की हकदार थी। अपने पति की उत्तराधिकारिणी बन कर दोनों विधवाओं ने संपत्ति का बँटवारा कर लिया। दोनों विधवाओं को एक-एक पुत्री होने से वे उनकी शाखाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं। अधिनियम सं० 2 वर्ष 1929 संपत्ति को विरासत में पाने के लिए पुत्री को उत्तराधिकारिणी मानता था। चूँकि संपत्तियाँ पहले ही बराबर रूप से बाँट दी गयी थी, विधवा की एक शाखा की संपत्ति केवल उसी शाखा के कब्जा में बनी रही। पुत्रों की अनुपस्थिति में पुत्रियाँ भी उत्तराधिकारिणी है। हिन्दू विधि के अधीन उत्तराधिकार का अधिकार वह अधिकार है जो संपत्ति के स्वामी की मृत्यु पर तुरन्त निहित होता है। यह प्रास्थगन में नहीं रहेगा। यह भी सुनिश्चित सिद्धान्त है कि पूर्ण रक्त को अर्द्धरक्त की तुलना में प्राथमिकता दी जाएगी। दोनों पृथक विधवाओं के अधिकार सुस्पष्ट रूप से उनकी पृथक शाखा के महिला उत्तराधिकारियों पर न्यागत हुए। दोनों विधवाओं द्वारा संपत्तियों के बँटवारा के बाद, जीवित रहने के कारण मोस्मात जसमति कुंअर के उत्तराधिकार का प्रश्न ही नहीं था जैसा विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया था। प्रथम विधवा की पुत्रियाँ उत्तराधिकारिणी है और उन्हें उत्तराधिकार के जरिए संपत्ति पर अधिकार और अभिधान है। मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य देकर वादीगण अपना निरन्तर कब्जा सिद्ध करने में सक्षम रहे है। वादीगण के अभिधान और कब्जा में हस्तक्षेप करने का प्रतिवादीगण को अधिकार नहीं है। जिन्होंने उत्तराधिकार द्वारा और प्रतिकूल कब्जा द्वारा भी अधिकार और अभिधान अर्जित किया है।

7. इस द्वितीय अपील में, अपीलार्थीगण ने अन्य बातों के साथ अवर अपीलीय न्यायालय के आक्षेपित निर्णय का इस आधार पर विरोध किया है कि विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज कारणों पर विचार किए बिना विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने विचारण न्यायालय का निर्णय अपास्त कर दिया है जो विधि में अनुज्ञेय नहीं है।

8. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री पी० सी० रॉय ने निवेदन किया कि विद्वान अपीलीय न्यायालय ने अन्य बातों के साथ अभिलेख पर ऐसे किसी अभिवाक् और साक्ष्य के बिना वाद भूमि पर वादीगण का प्रतिकूल कब्जा अभिनिर्धारित किया है। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय का निर्णय और डिक्री अनुचित है और उस आधार पर संपोषणीय नहीं है।

9. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री टी० एन० झा ने पक्षों के मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों पर चर्चा करते हुए और विद्वान विचारण न्यायालय के निर्णय को पलटने के लिए दर्ज कारणों की ओर आक्षेपित निर्णय के अनेक पैराग्राफों पर इस न्यायालय का ध्यान आकृष्ट किया है।

10. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और विद्वान अवर न्यायालयों के निर्णय के परिशीलन पर मैं पाता हूँ कि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्यों पर पूरी चर्चा की है और इनके सम्यक् संवीक्षण पर इस निष्कर्ष पर आए हैं कि वादीगण प्रतिवादीगण सहित समस्त संबंधितों के प्रति खुले रूप से और प्रतिकूल रूप से सांविधिक अवधि से अधिक के लिए वाद संपत्ति के निरन्तर कब्जा में बने हुए है। वादीगण ने वर्ष 1953 से प्रतिकूल कब्जा द्वारा भी वाद भूमि पर अपना अधिकार और अभिधान पुख्ता किया है। तत्पश्चात, कब्जा की वापसी के लिए प्रतिवादीगण द्वारा कोई कदम नहीं उठाया गया है। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने भी विधि के सिद्धान्त पर विस्तारपूर्वक चर्चा की है और निष्कर्षित किया है कि अंतिम स्वामी शिव करण पांडे की मृत्यु के बाद दोनों विधवाओं के बीच बँटवारा के बाद जीवित रहने के कारण मोस्मात जसमति कुंअर द्वारा विरासत में पाए जाने के लिए संपत्ति उपलब्ध नहीं थी। चूँकि बँटवारा हुआ था और मोस्मात लखपति कुंअर ने अपना हिस्सा अलग कर लिया था, वादीगण नातिन होने के नाते अधिनियम सं० 2 वर्ष 1929 अर्थात् उत्तराधिकार की हिन्दू विधि (संशोधन अधिनियम, 1929) के प्रावधानों के अधीन संपत्ति विरासत में पाने का हकदार थी जिसने पुत्री के पुत्री

को उत्तराधिकारिणी बना दिया है यदि पिता के पिता के बाद और पिता के भाई के पहले कोई पुरुष उत्तराधिकारी नहीं है। विद्वान विचारण न्यायालय ने गलत रूप से अभिनिर्धारित किया कि उक्त विधि लागू किए जाने योग्य नहीं है क्योंकि इसे हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 द्वारा निरसित कर दिया गया था। चूँकि मोस्मात लखपति कुंअर की मृत्यु हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के प्रभाव में आने से पहले वर्ष 1953 में हो गयी थी, अधिनियम 2 वर्ष 1929 के प्रावधान पूरी तरह लागू किए जाने योग्य है और विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने सही अभिनिर्धारित किया है कि उक्त अधिनियम के प्रावधानों के अधीन उत्तराधिकार का अधिकार होने पर वादीगण ने मोस्मात लखपति कुंअर की मृत्यु के बाद वैध अधिकार और अभिधान अर्जित किया था। विद्वान विचारण न्यायालय ने राजस्व अभिलेखों, मोस्मात लखपति कुंअर के नाम का नामान्तरण और उसके नाम पर पृथक किराया रसीद को विचार में लिया है और सही निष्कर्षित किया है कि दोनों विधवाओं के बीच बँटवारा और पृथक कब्जा के बाद जसमति कुंअर अथवा उसके माध्यम से दावा करते किसी व्यक्ति को वादीगण-यदुवंशी देवी और मनमति कुंअर के अधिकार और अभिधान से इंकार करने का अधिकार नहीं है जिन्होंने मोस्मात लखपति कुंअर की मृत्यु के बाद संपत्ति विरासत में पायी थी और हिन्दु उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14 के फलस्वरुप उनका अधिकार और अभिधान संपूर्ण हो गया।

11. उक्त चर्चा की दृष्टि में, मैं द्वितीय अपील में विनिश्चित करने हेतु विधि का कोई सारवान प्रश्न उद्भुत करने वाले विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय के निष्कर्षों और निर्णय में कोई गलती नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, यह अपील खारिज की जाती है।

माननीय प्रदीप कुमार, न्यायमूर्ति

रेवा साव उर्फ रेवा साह

बनाम

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (SJ) No. 424 of 2002. Decided on 1st September, 2010.

एस॰ टी॰ सं॰ 211 वर्ष 1992 में श्री संजय कुमार चंधारियावी, अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰-II, हजारीबाग द्वारा पारित क्रमशः 8.7.2002 के दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दिनांक 9.7.2002 की दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 304-B—दहेज मृत्यु–10 वर्षों का कठोर कारावास अधिनिर्णीत–कोई अभिकथन नहीं है कि दहेज के लिए उसके ससुराल वालों द्वारा पीड़ित महिला को यातना दी गयी थी–सभी गवाह कह रहे हैं कि दहेज की मांग नहीं की गई थी और न ही यातना दी गयी थी–चिकित्सीय रिपोर्ट की अनुपस्थिति में यह नहीं कहा जा सकता है कि यह जहर देने अथवा प्रहार करने से हुई अप्राकृतिक मृत्यु थी–कोई अभिकथन नहीं है कि जलाने अथवा शारीरिक उपहति के कारण उसकी मृत्यु हुई और न ही कोई साक्ष्य है कि पति द्वारा अथवा पति के संबंधियों द्वारा उसके साथ क्रूरता की गयी थी अथवा तंग किया गया था और ऐसी क्रूरता अथवा यातना दहेज के लिए अथवा दहेज की मांग से संबंधित होनी चाहिए–दोष सिद्धि और दंडादेश अपास्त–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 7 से 9)

निर्णयज विधि.–2001 SAR (Cri.) 856—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s A. K. Kashyap, Pradip Kr. Prasad, For the Appellant; Mr. Mukesh Kumar, For the Respondent (State).

न्यायालय द्वारा.–अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. वर्तमान अपील एस॰ टी॰ सं॰ 211 वर्ष 1992 में श्री संजय कुमार चंधारियावी, अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰–II, हजारीबाग द्वारा पारित क्रमश: दिनांक 8.7.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 9.7.2002 के दंडादेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिस निर्णय के द्वारा उन्होंने अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304B के अधीन दोषी पाया था और दस वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंड दिया था।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि कोई अभिकथन नहीं है कि दहेज की किसी मांग के लिए पीड़ित महिला को यातना दी गयी थी। गवाहों ने यह कथन नहीं किया है कि विवाह के समय अथवा तत्पश्चात दहेज की कोई मांग की गयी थी। सूचक ने कहा है कि कर्मा त्योहार के पहले वे बकरी (खस्सी) और बैल चाहते थे। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इसे दहेज से जोड़ा नहीं जा सकता है क्योंकि यह प्रथागत मांग थी और कोई अभिकथन भी नहीं था कि उसे यातना दी जा रही थी। मामले के उस दृष्टिकोण में, वह **2001 SAR (दांडिक) 856** में प्रकाशित **सुनील बजाज बनाम मध्य प्रदेश राज्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास कर रहे हैं जिसमें यह कथन किया गया है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304B के अधीन दोषसिद्धि के लिए भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304B की अपेक्षाओं की परिपूर्ति करनी होगी। तद्नुसार, वह निवेदन करते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304B के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि विधि में दोषपूर्ण है और अपास्त किए जाने योग्य है।

4. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने अभियोजन मामले का समर्थन किया है और निवेदन किया है कि पीड़ित महिला की मृत्यु विवाह के सात वर्षों के भीतर हो गयी और दहेज के रूप में बकरी और बैल की मांग का अभिकथन है और उसे अपने नैहर जाने की अनुमति नहीं दी जाती थी, जो यातना है और बाद में उसकी अप्राकृतिक मृत्यु हो गयी और इस प्रकार निष्कर्ष सुआधारित है।

5. दोनों पक्षों को सुनने और अभिलेख का परिशीलन करने के बाद, मैं पाता हूँ कि अभियोजन मामला दिनांक 20.11.1990 को अ॰ सा॰ 4 विशेश्वर साव (सूचक) द्वारा दिए गए लिखित रिपोर्ट के आधार पर शुरू किया गया था, उसमें अभिकथन किया गया था कि उसकी बहन का विवाह दो वर्ष पूर्व रेवा साव उर्फ रेवा साह, पुत्र श्री खुशी साव के साथ हुआ था और विवाह के बाद उसकी बहन अपने ससुराल (नापोजाला) में रह रही थी। एक वर्ष बाद उसका देवर उनके घर तेलिया बेन्गवानी आया और उनसे बकरी मांगा। कर्मा त्योहार में वह (सूचक) अपनी बहन के ससुराल गया और उसको वापस ले जाना चाहा, किन्तु उसे वापस नहीं जाने दिया गया, बाद में उसने अपनी बहन के घर बकरी भेजी। दिनांक 20.11.1990 को सुबह में उसे पता चला कि उसकी बहन की मृत्यु हो गयी थी। उसे संदेह था कि उसके पति और ससुर के बीच किसी षडयन्त्र में उसकी हत्या कर दी गई है, क्योंकि अभियुक्त बकरी और बैल मांग रहा था और चूँकि इन्हें उनको नहीं दिया गया, उन्होंने उसे जहर दे दिया।

6. उक्त फर्दबयान के आधार पर, पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धारा 304B के अधीन मामला दर्ज किया और अन्वेषण के बाद मामले में आरोप पत्र दाखिल किया। चूँकि मामला अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य था, अत: संज्ञान लेने के बाद विद्वान दंडाधिकारी ने मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द कर दिया और तत्पश्चात विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ II, हजारीबाग द्वारा मामले का विचारण किया गया जिन्होंने भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304B के अधीन अपीलार्थी को दोषी पाया और पूर्वोक्तानुसार दंडित किया।

7. यह प्रतीत होता है कि विचारण के क्रम में, अभियोजन ने पाँच गवाहों का परीक्षण किया।

अ० सा० 1 लाल बिहारी साव,

अ० सा० 2 रामदेव साव,

अ० सा० 3 कैलाश साव,

अ० सा० 4 विशेश्वर साव, मामले का सूचक और

अ० सा० 5 त्रिवेणीराम, एक औपचारिक गवाह।

अ॰ सा॰ 1, लाल बिहारी साव, मृतका का चाचा है, जिसने कथन किया कि उसकी भतीजी (नगिया देवी) का विवाह अभियुक्त के साथ सात वर्ष पहले हुआ था और वह अपने पति के साथ उसके घर में एक वर्ष रही और उन्होंने उसके साथ अच्छा व्यवहार किया। तत्पश्चात्, एक वर्ष बाद उसके दामाद रेवा साव ने कर्मा पूजा में उसके भतीजा से बैल और बकरी मांगा जब उसका भतीजा अपनी बहन को लाने गया था, किन्तु उसे वापस जाने की अनुमति नहीं दी गयी थी। कर्मा पूजा के बाद उसके भतीजे ने अपनी बहन के घर बकरी भेजा और कहा कि वह बैल देने में सक्षम नहीं है। दो माह बाद उन्हें सूचना मिली कि नगिया देवी की मृत्यु हो गयी है, तत्पश्चात् वह अन्य के साथ उसके घर गया जहाँ उसने उसका शव पाया तथा उसके नाक और कान से रक्त टपक रहा था, किन्तु वह नहीं कह सका कि उसकी मृत्यु कैसे हुई थी। अपने प्रति-परीक्षण में उसने कथन किया कि उसे विवाह के एक वर्ष बाद भी उसको ससुराल में मारा-पीटा नहीं गया था और न ही कभी कोई नगद मांगा गया था।

अ॰ सा॰ 2, रामदेव साव मृतका का चाचा है, जिसने न्यायालय में कथन किया कि नगिया देवी उसकी भतीजी थी और सात वर्ष पहले उसका विवाह अभियुक्त के साथ हुआ था और उन्होंने उसे एक वर्ष तक अच्छे से रखा था। तत्पश्चात्, बैल और बकरी की मांग की गयी थी। उसकी मृत्यु के दो तीन माह पहले विशेश्वर साव अपनी बहन को लेने गया था किन्तु रेवा साव ने इंकार कर दिया क्योंकि घर में काफी काम अधूरा पड़ा था। तत्पश्चात् दिनांक 20.11.1990 को उन्हें सूचना मिली की उसकी भतीजी की मृत्यु हो गयी है। तत्पश्चात वे उसके घर गए जहाँ उन्होंने उसका मृत शरीर पाया और मुँह से झाग और नाक से खून निकल रहा था किन्तु वह नहीं कह सकता है कि उसकी मृत्यु कैसे हुई किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उसे जहर दिया गया था। यद्यपि अपने प्रति-परीक्षण में उसने कथन किया कि यदि बैल नहीं दिया जाता है, उसकी भतीजी पर प्रहार किया जाएगा और उसकी हत्या कर दी जाएगी किन्तु उसने स्वीकार किया उनके द्वारा दी गयी धमकी और किए गए प्रहार के बारे में कोई प्राथमिकी नहीं की गयी थी। अपने प्रतिपरीक्षण में उसने यह कथन भी किया कि जब हम अभियुक्त के घर पहुँचे तब मुखिया और सरपंच की प्रार्थना पर मृत शरीर पुलिस थाना ले जाया गया, तत्पश्चात शव परीक्षण के लिए मृत शरीर को पुलिस द्वारा हजारीबाग भेजा गया था और शव परीक्षण के बाद उन्हें शव दिया गया था तब उन्होंने उसका दाह-संस्कार किया किन्तु वह नहीं कह सकता है कि उसकी मृत्यु कैसे हुई।

अ॰ सा॰ 3, कैलाश साव मृतका का चाचा है जिसने कथन किया कि उसका विवाह सात वर्ष पूर्व हुआ था और कहा कि उसके विवाह के एक वर्ष तक अभियुक्त और उसकी भतीजी के बीच कोई झगड़ा नहीं हुआ था। किन्तु एक वर्ष बाद बकरी और बैल मांगा गया था और कर्मा त्योहार के अवसर पर सूचक अपनी बहन को लाने गया था, पर उसे जाने की अनुमति नहीं दी गयी थी और दो माह बाद उन्हें सूचना मिली कि उसकी मृत्यु हो गयी थी। उसने भी स्वीकार किया कि मृतका का शरीर पुलिस द्वारा शव परीक्षण के लिए भेजा गया था।

अ॰ सा॰ 4, विशेश्वर साव, मामले का सूचक, ने प्राथमिकी में दिए गए बयान का समर्थन किया है और कथन किया है कि एक वर्ष तक उसे अभियुक्तगण द्वारा अच्छे से रखा गया था, किन्तु एक वर्ष बाद एक गाय और एक बकरी मांगा गया था। बाद में उसने बकरी दी थी किन्तु वह तुरन्त गाय देने में अक्षम था और इसलिए उसने गाय के लिए आश्वासन दिया था कि दो वर्ष बाद मैं गाय दूंगा। एक माह

बाद उसे सूचना मिली की उसकी बहन अस्पताल में भर्ती है और वह अच्छी नहीं है किन्तु जब वह उसके ससुराल पहुँचा तो उसने उसका मृत शरीर पाया और उसके मुँह से झाग और नाक से खून निकल रहा था। उसे गाँव वालों से मालूम हुआ कि उन्होंने उसे तीन दिन तक भोजन नहीं दिया था और उसको मारा-पीटा था और उसे जहर दिया था, उसने प्रदर्श 1/1 के रूप में प्राथमिकी पर अपना हस्ताक्षर प्रमाणित किया, अपने प्रति-परीक्षण में फर्दबयान में स्वीकार किया कि उसने कहा था कि वे बैल और बकरी के लिए उसपर दबाव डाल रहे थे।

अ॰ सा॰ 5, त्रिवेणी राम, एक औपचारिक गवाह है, जिसने प्राथमिकी और फर्दबयान प्रमाणित किया है।

8. अत: गवाहों के साक्ष्य से प्रकट है कि कोई अभिकथन नहीं है कि किसी दहेज के लिए पीड़ित महिला को उसके ससुराल वालों द्वारा यातना दी जाती थी बल्कि सारे गवाहों ने कथन किया है कि एक वर्ष तक कुछ भी नहीं मांगा गया था और न ही एक वर्ष बाद भी ससुराल वालों द्वारा उसे यातना दी गयी थी यद्यपि बैल और बकरी मांगा गया था किन्तु यह नहीं कहा जा सकता है कि यह दहेज से संबंधित था। सूचक ने कथन किया कि कर्मा त्योहार के पहले वह अपनी बहन को लाने गया था किन्तु उसे वापस आने की अनुमति नहीं दी गयी थी क्योंकि बैल नहीं दिया गया था किन्तु एक चाचा (अ॰ सा॰ 2, रामदेव साव) ने कथन किया कि उसे वापस आने की अनुमति इसलिए नहीं दी गयी क्योंकि ससुराल में काफी काम था यद्यपि अभियोजन ने अभिकथित किया है कि उसे जहर दिया गया था अथवा उस पर प्रहार किया गया था किन्तु चिकित्सीय रिपोर्ट की अनुपस्थिति में अथवा शव परीक्षण रिपोर्ट की अनुपस्थिति में यह पता लगाना मुश्किल है कि क्या यह जहर देने से अथवा प्रहार से हुई अप्राकृतिक मृत्यु थी और यह कहना मुश्किल है कि पीड़िता की अप्राकृतिक मृत्यु जहर देने से अथवा प्रहार से हुई। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सुनिश्चित विधि है कि अभियुक्त को दोषसिद्ध करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 304B के अधीन मामला बनाने के लिए अभियोजन को निम्नलिखित आवश्यक घटकों को सिद्ध करना होगा जैसा **सुनील बजाज बनाम मध्य प्रदेश राज्य, 2001 SAR (दांडिक) 856** में प्रकाशित मामले में अभिनिर्धारित किया गया है:-

"(1) महिला की मृत्यु जलने से अथवा शारीरिक उपहति से अथवा सामान्य परिस्थितियों से भिन्न किसी परिस्थिति में कारित होनी चाहिए।

(2) ऐसी मृत्यु उसके विवाह के सात वर्षों के भीतर होनी चाहिए।

(3) मृत्यु के ठीक पहले महिला को उसके पति द्वारा अथवा उसके पति के संबंधियों द्वारा क्रूरता अथवा यातना के अधीन होना चाहिए।

(4) ऐसी क्रूरता अथवा परेशानी दहेज के लिए अथवा दहेज की मांग से संबंधित होनी चाहिए।''

वर्तमान मामले में, कोई अभिकथन नहीं है कि उसकी मृत्यु जलने से अथवा शारीरिक उपहति से हुई और न ही कोई साक्ष्य है कि उसके पति द्वारा अथवा उसके पति के संबंधियों द्वारा उसके साथ क्रूरता की गयी थी अथवा यातना दिया गया था और ऐसी क्रूरता अथवा यातना दहेज के लिए अथवा दहेज की मांग से संबंधित होनी चाहिए, बल्कि अ॰ सा॰ 1, लाल बिहारी साव ने कहा कि कोई नगद नहीं मांगा गया था। मामले के उस दृष्टिकोण में, भारतीय दंड संहिता की धारा 304B के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि विधि में दोषपूर्ण है और अपास्त किए जाने योग्य है। परिणामस्वरुप, अपीलार्थी को आरोपों से मुक्त किया जाता है।

9. तद्नुसार, यह अपील अनुज्ञात की जाती है और एस॰ टी॰ सं॰ 211 वर्ष 1992 में पारित दिनांक 8.7.2002 का दोषसिद्धि का निर्णय और दिनांक 9.7.2002 का दंडादेश अपास्त किया जाता है। चूँकि अपीलार्थी जमानत पर है, उसे जमानत के बंधन से निर्मुक्त किया जाता है।

माननीय डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति

गरजू उपाध्याय

बनाम

सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड, अपने मुख्य प्रबंध निदेशक, राँची के माध्यम से एवं अन्य

W.P. (S) No. 6171 of 2008. Decided on 30th August, 2010.

सेवा विधि–सेवानिवृत्ति–जन्मतिथि–याची का मैट्रिक प्रमाण पत्र वर्ष 1971 का है और यह याची की जन्मतिथि 4 जनवरी, 1953 प्रकट करता है–सत्यापन करने पर प्रमाण पत्र और इसमें उल्लिखित जन्मतिथि भी सही और शुद्ध पायी गयी–मैट्रिक प्रमाण पत्र में उल्लिखित सही जन्मतिथि को प्रत्यर्थीगण द्वारा यथा अनुरक्षित याची के सेवा अभिलेख में अंत:स्थापित किया जाना चाहिए था–सेवा अभिलेखों में याची की सही जन्मतिथि उल्लिखित करने के निर्देश के साथ याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 4 एवं 5)

निर्णयज विधि.–2007(3) JCR 681 (Jhr) (FB)—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Krishna Murari, For the Petitioner; M/s Ananda Sen, Kaustav Panda, For the Respondent Nos. 1 to 4; Mr. S. P. Roy, For the Respondent No.5.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका जन्मतिथि के शुद्धिकरण के लिए दाखिल की गयी है।

2. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची के मुताबिक, मैट्रिक परीक्षा के लिए जारी प्रमाण पत्र के आधार पर उसकी सही जन्मतिथि 4 जनवरी, 1953 है। यह प्रमाण पत्र याचिका के मेमो के परिशिष्ट-1 पर उपाबद्ध है। यह प्रमाण पत्र वर्ष 1971 में निर्गत किया गया था। याची ने वर्ष 1973 में प्रत्यर्थीगण को सेवा देना शुरू किया था और सेवा अभिलेखों में याची की गलत जन्मतिथि 1 जनवरी, 1951 के रूप में सम्मिलित की गयी थी। इस प्रकार, याची की सेवानिवृत्ति की सही जन्मतिथि वस्तुत: 4 जनवरी, 2013 है, जबकि गलत जन्मतिथि के मुताबिक याची की सेवानिवृत्ति तिथि 1 जनवरी, 2011 होगी। याची के विद्वान अधिवक्ता **कामता पांडे बनाम मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, धनबाद के माध्यम से एवं अन्य, 2007 (3) JCR 681 (Jhr.) (FB)** में प्रकाशित मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णय और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 401 वर्ष 2009 में दिनांक 18 अगस्त, 2010 के इस न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय पर भी विश्वास कर रहे हैं। इन निर्णयों की प्रतियाँ प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं को भी दी गयी है और याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पूर्वोक्त निर्णयों के आधार पर, मैट्रिक प्रमाण पत्र के आधार पर याची की सही जन्मतिथि याची के सेवा अभिलेखों में प्रत्यर्थीगण को सम्मिलित करना चाहिए और इसलिए याची की सही सेवानिवृत्ति तिथि 4 जनवरी, 2013 है।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 4 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि एक विस्तृत प्रतिशपथ पत्र पहले ही दाखिल किया जा चुका है जिसमें यह कथन किया गया है कि याची के सेवा अभिलेखों में उसकी जन्मतिथि 1 जनवरी, 1951 उल्लिखित की गयी है। याची द्वारा कभी भी कोई आपत्ति नहीं उठायी गयी थी और अत्यन्त विलम्बित चरण पर यह याचिका दाखिल की गयी है और, इसलिए, वर्तमान याचिका खारिज किए जाने योग्य है।

4. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने पर और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए:–

(i) मामले के तथ्यों से प्रकट होता है कि वर्ष 1973 में वर्तमान याची को प्रत्यर्थीगण द्वारा पम्प ऑपरेटर नियुक्त किया गया था।

(ii) याचिका के मेमो के परिशिष्ट–1 से यह भी प्रतीत होता है कि याची का मैट्रिक प्रमाण पत्र वर्ष 1971 का है और यह याची की जन्मतिथि 4 जनवरी, 1953 प्रकट करता है।

(iii) यह भी प्रतीत होता है कि संबंधित बिहार विद्यालय परीक्षा बोर्ड, पटना, बिहार से प्रत्यर्थीगण द्वारा इस प्रमाण पत्र का सत्यापन करवाया गया है और प्रत्यर्थीगण के मुताबिक याचिका के मेमो के परिशिष्ट–3 पर मौजूद प्रमाण पत्र में याची की उल्लिखित जन्मतिथि सत्य और सही है और मैट्रिक प्रमाण पत्र, जो याचिका के मेमो के परिशिष्ट–1 पर है, भी सत्य और सही है।

(iv) इस न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय, जैसा 2007 (3) JCR 681 (Jhr) (FB) में प्रकाशित है, के पैराग्राफ 27 से 29 का पठन निम्नलिखित है:

"27. इन निर्णयों में, यद्यपि यह संप्रेक्षित किया गया है कि सामान्यतः अपने सेवाकाल के अंतिम समय में अपनी जन्म तिथि बदलने के लिए आवेदन देने की अनुमति कर्मचारी को नहीं दी जाएगी, सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्टतः अभिनिर्धारित किया कि यदि न्यायालय पूर्णतः संतुष्ट है कि संबंधित व्यक्ति के साथ वस्तुतः अन्याय हुआ है और जन्मतिथि के शुद्धिकरण का उसका दावा विहित प्रक्रिया के अनुरूप किया गया है और जब निर्णायक सामग्रियों के आधार पर जन्मतिथि से संबंधित स्पष्ट मामला बनाया गया है, तब उक्त जन्मतिथि की घोषणा करने के लिए आवश्यक निर्देश दिया जा सकता है।

28. इस मामले में, जैसा ऊपर उपदर्शित किया गया है, यह नहीं कहा जा सकता है कि दावा सेवा के अंतिम समय में किया गया है। दूसरी ओर, कम्पनी के कुछ अभिलेख, पहचान पत्र और सेवा अभिलेख, जिन्हें नियुक्ति के तुरन्त बाद जारी किया गया है दर्शाएँगे कि उसकी जन्मतिथि 1.7.1951 उल्लिखित की गयी है जैसा मैट्रिक प्रमाण पत्र में परिलक्षित है। अतः अंतिम समय में दावा से सरोकार रखने वाले प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता द्वारा उद्धृत किए गए उक्त निर्णयों से प्रत्यर्थीगण को कोई सहायता नहीं मिलेगी।

29. उक्त चर्चा की दृष्टि में, इस मामले में उद्भुत प्रश्न का हमारा उत्तर निम्नलिखित है:

''शिक्षा बोर्ड द्वारा सम्यक् रूप से अधिप्रमाणित मैट्रिक प्रमाण पत्र में दर्ज जन्मतिथि न कि सेवा अभिलेख सहित अन्य अभिलेख, आयु का निश्चायक प्रमाण है क्योंकि दोनों पक्ष राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार–III क्रियान्वयन अनुदेश सं० 76 द्वारा शासित होते हैं।''

इस निर्णय की दृष्टि में और एल० पी० ए० सं० 401 वर्ष 2009 में इस न्यायालय की खंडपीठ के दिनांक 18 अगस्त, 2010 के निर्णय को ध्यान में रखते हुए यह भी प्रतीत होता है कि याची की सही जन्मतिथि दिनांक 1 जनवरी, 1951 के बजाय दिनांक 4 जनवरी, 1953 है और इसलिए सेवानिवृत्ति की सही तिथि दिनांक 1 जनवरी, 2011 के बजाए दिनांक 4 जनवरी, 2013 होगी।

(v) दिनांक 24 मई, 1988 के राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार-III के खंड अनुदेश सं० 76 के मुताबिक, जो कम्पनी और यूनियन के बीच हुआ द्विपक्षीय करार है और कर्मचारी के आयु के सत्यापन की प्रक्रिया पर विचार करता है का पठन निम्नलिखित है:-

''कार्यान्वयन अनुदेश सं० 76

कर्मचारियों की आयु के अवधारण/सत्यापन की प्रक्रिया

(A) नियुक्ति के समय आयु का अवधारण

(i) मैट्रिकुलेट

नियुक्त व्यक्तियों के मामले में जो मैट्रिक अथवा समतुल्य परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं, उक्त प्रमाण पत्र में दर्ज जन्म तिथि सही जन्मतिथि के रूप में मानी जाएगी और किसी भी परिस्थिति के अधीन इसे परिवर्तित नहीं किया जाएगा।''

और उक्त अनुदेश के खंड 76 (B) के मुताबिक जो जन्मतिथि के अवधारण के पुनर्विलोकन का प्रावधान करता है। खंड 76 (B) का पठन निम्नलिखित है:-

(B) विद्यमान कर्मचारियों के संबंध में जन्मतिथि का पुनर्विलोकन अवधारण

(i) (a) विद्यमान कर्मचारियों के संबंध में मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय अथवा बोर्ड द्वारा जारी मैट्रिक प्रमाण पत्र अथवा उच्चतर माध्यमिक प्रमाण पत्र अथवा शिक्षा बोर्ड और/अथवा लोक अनुदेश विभाग द्वारा जारी मिडिल स्कूल उत्तीर्ण प्रमाणपत्र और उक्त बोर्डों द्वारा जारी प्रवेश पत्र को सही माना जाएगा बशर्ते कि वे नियोजन की तिथि के पहले उक्त विश्वविद्यालयों/बोर्ड/संस्थानों द्वारा जारी किए गए थे।''

इस खंड की दृष्टि में, यदि मैट्रिक प्रमाण पत्र में सही जन्मतिथि उल्लिखित है, परिशिष्ट-3 पर मौजूद सत्यापन रिपोर्ट के मुताबिक भी इसे याची के सेवा अभिलेखों, जिसे प्रत्यर्थीगण द्वारा रखा गया है, में अंत:स्थापित किया जाना चाहिए था।

5. पूर्वोक्त तथ्यों, कारणों और न्यायिक उद्घोषणाओं के संचित प्रभाव के कारण, मैं एतद् द्वारा इस रिट याचिका को अनुज्ञात करता हूँ और प्रत्यर्थीगण द्वारा यथा अनुरक्षित सेवा अभिलेखों में याची की सही जन्मतिथि अब दिनांक 4 जनवरी, 1953 उल्लिखित की जाएगी और सेवानिवृत्ति की तत्सम तिथि प्रत्यर्थीगण द्वारा संगणित की जाएगी।

6. रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और निपटायी जाती है।

माननीय जे॰ सी॰ एस॰ रावत, न्यायमूर्ति

एन॰ रॉय चौधरी

बनाम

स्टील ऑथोरिटी ऑफ इंडिया लि॰, नयी दिल्ली एवं अन्य

W.P. (S) No. 4236 of 2003. Decided on 20th August, 2010.

सेवा विधि–हटाया जाना–अनुशासनिक प्राधिकारी, जिसने याची को हटाने का आदेश पारित किया, ने भी बैठक, जिसमें याची की अपील सुनी गयी थी और आक्षेपित आदेश पारित

किया गया था, में भाग लिया और इसकी अध्यक्षता की थी–जब न्यायालय के समक्ष विभागीय कार्यवाही को चुनौती दी जाती है, न्यायालय को मामले के न्यायिक पुनर्विलोकन की सीमित अधिकारिता होती है–रिट याचिका सुनते हुए न्यायालय से अपीलीय न्यायालय की तरह कार्य करना अपेक्षित नहीं है और अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा दर्ज तथ्यपरक निष्कर्षों का पुनर्अधिमूल्यन नहीं करना होगा यद्यपि ताथ्यिक निष्कर्ष गलत हो सकते हैं–न्यायालय द्वारा दंड केवल तब ही घटाया जा सकता है यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर आता है कि अनुशासनिक प्राधिकारी का निष्कर्ष स्तब्धकारी था–लेकिन, जहाँ ऐसे दोहरे कार्य का निर्वहन एक ही प्राधिकारी द्वारा किया गया है, यह पूर्वाग्रह नियम विरूद्ध और विपरीत होगा–आक्षेपित आदेश अपास्त–मामला अपीलीय प्राधिकारी को वापस भेजा गया। (पैराएँ 5 से 8)

निर्णयज विधि.–2002(2) SCC 290; 2010(3) SCC 732—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s S. B. Gadodia, Sumeet Gadodia, For the Petitioners; Mr. G. M. Mishra, For the Respondents.

आदेश

पक्षों को सुना गया।

2. याची को लेखा कार्यकारी के रूप में नियुक्त किया गया था और दिनांक 16 अगस्त, 1997 के आदेश द्वारा मुख्य वित्त प्रबंधक (एफ॰ एण्ड ए॰) के पद पर प्रोन्नत किया गया था। दिनांक 31.12.2002 के आक्षेपित आदेश द्वारा उसे सेवा से अनुशासनिक प्राधिकारी अर्थात् सेल के अध्यक्ष द्वारा हटाया गया था। याची ने निदेशक बोर्ड के समक्ष अपील दाखिल किया और अपीलीय प्राधिकारी द्वारा दिनांक 20.6.2003 (परिशिष्ट-10) को उक्त अपील खारिज कर दी गयी थी जो भी इस रिट आवेदन में आक्षेपित किया गया है।

3. याचीगण की ओर से उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि स्वयं सेल के अध्यक्ष श्री वी॰ एस॰ जैन अनुशासनिक प्राधिकारी थे जिनके आदेश के विरुद्ध कम्पनी के निदेशक बोर्ड में अपील पड़ी है जिसके अध्यक्ष सेल के अध्यक्ष श्री बी॰ एस॰ जैन हैं और दिनांक 31.12.2002 का दंड का आक्षेपित आदेश श्री जैन, सेल के अध्यक्ष, द्वारा पारित किया गया था। अपील सुनते हुए श्री वी॰ एस॰ जैन निदेशक बोर्ड के अध्यक्ष थे और अपील खारिज कर दी गयी थी। उन्होंने आगे प्रतिवाद किया कि हटाए जाने का आदेश अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित किए जाने के चलते, श्री वी॰ एस॰ जैन जो सेल के तत्कालीन अध्यक्ष थे, बोर्ड जिसने अपील सुनी और इसे खारिज किया, की बैठक की अध्यक्षता करने और चर्चाओं में भाग लाने के लिए अनर्हित थे और इसलिए विधिक पूर्वाग्रह के आधार पर अपीलीय प्राधिकारी का आक्षेपित आदेश दूषित था।

4. प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि अपीलीय प्राधिकारी ने सकाराण आदेश पारित किया है और आदेश स्वयं में स्पष्ट है और वस्तुपरकता अथवा टेकनिकेलिटी द्वारा विषयपरकता को कार्यवाही दूषित करता नहीं माना जा सकता है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया कि न्यायालय अपीलीय चरण में पारित अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है जबतक कि प्राधिकारीगण द्वारा पारित आदेश प्रक्रियात्मक अनियमितताओं की अवैधताओं अथवा सामग्रियों से पीड़ित न हो। उन्होंने आगे प्रतिवाद किया कि ''बोर्ड'' जिसकी

अध्यक्षता अध्यक्ष श्री वी॰ एस॰ जैन द्वारा की गयी थी, द्वारा अपील खारिज किए जाने से याची पर प्रतिकूल प्रभाव कारित नहीं हुआ है।

5. अभिलेख के परिशीलन से यह स्पष्ट पता चलता है कि अनुशासनिक प्राधिकारी, जिसने याची को हटाने का आदेश पारित किया, सेल के अध्यक्ष श्री वी॰ एस॰ जैन है और श्री वी॰ एस॰ जैन ने बोर्ड की बैठक में भाग लिया और बोर्ड द्वारा की गयी चर्चाओं की अध्यक्षता की जिसमें याची की अपील को सुना गया था और तत्पश्चात आक्षेपित आदेश पारित किया गया था। यह विवादित नहीं है कि वी॰ एस॰ जैन अनुशासनिक प्राधिकारी और बोर्ड के अध्यक्ष नहीं थे। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **अमरनाथ चौधरी बनाम ब्रेथवेट एण्ड कं॰ लि॰ एवं अन्य [2002 (2) SCC 290** में प्रकाशित मामले के पैरा 6, 7, और 8 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:

''पैरा 6 : नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों में से एक है कि कोई व्यक्ति स्वयं अपने मामले में न्यायाधीश नहीं होगा अथवा न्याय निर्णयन करने वाला प्राधिकारी निष्पक्ष होना चाहिए और उसे किसी पूर्वाग्रह के बिना कार्य करना चाहिए। पूर्वाग्रह के विरुद्ध उक्त नियम की उत्पत्ति इस सूक्ति में है कि कोई व्यक्ति स्वयं अपने मामले का निर्णायक नहीं हो सकता है जो इस सिद्धांत पर आधारित है कि न्याय केवल किया ही नहीं जाना चाहिए बल्कि स्पष्टतः किया जाता हुआ दिखना भी चाहिए। यह केवल तभी संभव है जब कोई न्यायाधीश अथवा न्यायनिर्णायक प्राधिकारी निष्पक्षतः और किसी पूर्वाग्रह के बिना मामला विनिश्चित करता है। पूर्वाग्रह विभिन्न प्रकारों और रूपों के हो सकते है। यह धन संबंधी, व्यक्तिगत हो सकता है अथवा विषयवस्तु, आदि को लेकर हो सकता है। वर्तमान मामले में, हम पूर्वाग्रह के किसी पूर्वोक्त रूपों से सरोकार नहीं रखते हैं। वर्तमान मामले में हमारा सरोकार केवल यह है कि क्या अनुशासनिक प्राधिकारी की हैसियत से पारित स्वयं अपने आदेश के विरुद्ध अपील में बैठ सकता है। वित्तीय कमिश्नर (टैक्सेशन), पंजाब बनाम हरभजन सिंह, 1996 (9) SCC 281 में प्रकाशित मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि व्यवस्थापन अधिकारी को अपने द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध अनुशासनिक प्राधिकारी के रूप में बैठने की अधिकारिता नहीं है। वर्तमान मामले में बोर्ड के समक्ष अपील की विषयवस्तु यह थी कि क्या अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित हटाए जाने का आदेश विधि के साथ संगत था। यह विवादित नहीं किया गया है कि श्री एस० कृष्णास्वामी, कम्पनी के तत्कालीन अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, ने अनुशासनिक प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी के रूप में कार्य किया था जब उन्होंने अपीलार्थी की अपील विनिश्चित करते हुए बोर्ड की बैठक की अध्यक्षता की थी और इसकी चर्चाओं में भाग लिया था। पूर्वाग्रह के विरुद्ध स्थापित नियम के कारण ऐसा दोहरा कार्य अनुज्ञेय नहीं है। ऐसी स्थिति में जब एक और उसी प्राधिकारी द्वारा ऐसा दोहरा कार्य निर्वहित किया जाता है, जबतक कि विधान के अधिनियम अथवा सांविधिक प्रावधान द्वारा इसकी अनुमति नहीं दी जाती है, यह पूर्वाग्रह के विरुद्ध नियम के विपरीत होगा। जब किसी प्राधिकारी ने पहले एक निर्णय ले लिया था, स्वयं अपने निर्णय के विरुद्ध अपील की सुनवाई करने से वह अनर्हित है क्योंकि उसने पहले ही मामला को पूर्व निर्णित कर दिया था अन्यथा ऐसी अपील सीजर से सीजर को अपील कही जाएगी और ऐसा अपील दाखिल करना निरर्थक प्रयास होगा। मामले के उस दृष्टिकोण में, वर्तमान मामले में निष्पक्षता की मांग थी कि श्री कृष्णास्वामी, कम्पनी के तत्कालीन अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक को बोर्ड की बैठक की चर्चाओं में भाग नहीं लेना चाहिए था जब बोर्ड ने अपीलार्थी की अपील को सुना था और विनिश्चित किया था।

पैरा 7 : किन्तु प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने अपने प्रतिवाद के समर्थन में ''आवश्यकता का सिद्धान्त'' का सहारा लिया। उन्होंने प्रतिवाद किया कि

पूर्वाग्रह के विरुद्ध नियम उपलब्ध नहीं है जब, कम्पनी द्वारा विरचित विनियमनों के अधीन, अनुशासनिक प्राधिकारी, जो कम्पनी का अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक था, से बोर्ड की बैठक की अध्यक्षता करने की अपेक्षा की जाती थी और इसलिए तत्कालीन अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक बोर्ड की बैठक की अध्यक्षता करने और उसमें भाग लेने से अनर्हित नहीं था जिसने अपीलार्थी की अपील को खारिज कर दिया था। हम इस तर्क में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं। कम्पनी का आचरण, अनुशासन और अपील नियमावली (संक्षेप में सी॰ डी॰ ए॰ आर॰) का नियम 3 (d) ''बोर्ड'' को निम्नलिखित शब्दों में पारिभाषित करता है।

''बोर्ड का अर्थ है कम्पनी के स्वत्वधारी और शक्तियों के प्रयोग के संबंध में बोर्ड/प्रबंधन की कोई कमिटी अथवा कम्पनी का कोई अधिकारी जिसे बोर्ड ने अपनी शक्तियों में से किसी शक्ति को प्रत्यायोजित किया है, को सम्मिलित करता है।''

पैरा 8 : अभिव्यक्ति ''बोर्ड'' की पूर्वोक्त परिभाषा की दृष्टि में, बोर्ड कम्पनी के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक को अपवर्जित करते हुए बोर्ड/प्रबंधन की कोई कमिटि अथवा कम्पनी के किसी अधिकारी को गठित कर सकता था और ऐसे अपीलीय प्राधिकारी के विरुद्ध पूर्वाग्रह के अभिकथन को समाप्त करने के लिए अपीलीय शक्ति सहित अपनी शक्तियों में से किसी भी शक्ति को प्रत्यायोजित कर सकता था। अतः यह प्रतिवाद करना सही नहीं है कि ''आवश्यकता के सिद्धान्त'' की दृष्टि में वर्तमान मामले में पूर्वाग्रह के विरुद्ध नियम उपलब्ध नहीं है। अतः हमारा दृष्टिकोण है कि वर्तमान मामले में आवश्यकता के सिद्धान्त पर किया गया विश्वास भ्रामक है।''

6. यह विधि की सुनिश्चित अवस्था है कि जब न्यायालय के समक्ष विभागीय कार्यवाही को चुनौती दी जाती है, तब न्यायालय को मामले में न्यायिक पुनरीक्षण की सीमित अधिकारिता है। रिट याचिका को सुनते हुए न्यायालय से अपीलीय न्यायालय की तरह व्यवहार करने की अपेक्षा नहीं की जाती है और अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा दर्ज ताथ्यिक निष्कर्षों का पुनर्अधिमूल्यन नहीं करना होगा यद्यपि ताथ्यिक निष्कर्ष गलत हो सकते हैं। घरेलू जाँच कार्यवाही केवल तब ही दूषित होती है यदि अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा कोई प्रक्रियात्मक गलती की गयी है। विधि का यह भी सुनिश्चित सिद्धान्त है कि न्यायालय द्वारा दंड तब ही घटया जा सकता है जब न्यायालय इस निष्कर्ष पर आता है कि अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा अधिनिर्णीत दंड स्तब्धकारी है और मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों के साथ संगत नहीं है। वर्तमान मामले में, यह विवादित नहीं किया गया है कि कम्पनी के अध्यक्ष श्री वी॰ एस॰ जैन ने अनुशासनिक प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी दोनों के रूप में कार्य किया। जब उन्होंने अपीलार्थी की अपील को विनिश्चित करते हुए बोर्ड की बैठकों की अध्यक्षता की और उनमें भाग लिया और पूर्वाग्रह के विरुद्ध स्थापित नियम के आधार पर ऐसा दोहरा कार्य अनुज्ञेय नहीं है। विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद कि कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है, मान्य नहीं है, यदि अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पूर्वाग्रह के सिद्धान्त का उल्लंघन किया गया है। यह विधि का सुनिश्चित सिद्धान्त है कि जब ऐसा दोहरा कार्य एक और उसी प्राधिकारी द्वारा निर्वहित किया जाता है, यह पूर्वाग्रह के विरुद्ध नियम के विपरीत होगा। जब अनुशासनिक प्राधिकारी, सेल के अध्यक्ष ने निर्णय ले लिया है और उसने पहले ही याची का मामला विनिश्चित कर दिया है और पुनः वह अपील में बैठता है और इसे खारिज करता है, याची द्वारा अपील दाखिल करना निरर्थक प्रयास होगा।

7. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने **सचिव एवं क्यूरेटर, विक्टोरिया मेमोरियल हॉल बनाम हावड़ा गणतांत्रिक नागरिक समिति एवं अन्य, 2010 (3) SCC 732** में प्रकाशित मामले में माननीय

सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया है कि प्रत्येक निष्कर्ष का महत्वपूर्ण भाग कारण है। यह आदेश में स्पष्टता लाता है और इसके बिना यह जीवनरहित हो जाता है। कारण विषयपरकता को वस्तुपरकता से प्रतिस्थापित करता है। कारणों की अनुपस्थिति आदेश को अरक्षणीय/असंपोषणीय बनाता है विशेषत: तब जब आदेश उच्चतर फोरम के समक्ष चुनौती के अधीन है। विद्वान अधिवक्ता प्रदर्शित नहीं कर सके थे कि यदि सकारण आदेश होता, न्यायालय विधिक पूर्वाग्रह के पहलू पर विचार नहीं करता। सकारण आदेश पारित करना और विधिक पूर्वाग्रह के सिद्धान्त का अनुसरण करना मामले के दो भिन्न पहलू हैं। उक्त निर्णय इस मामले के तथ्यों पर लागू नहीं है।

8. यहाँ ऊपर दिए गए कारणों से, मैं पाता हूँ कि वर्तमान रिट याचिका अपील में पारित दिनांक 20.6.2003 के आदेश (परिशिष्ट- 10) को अभिखंडित किए जाने की सीमा तक अनुज्ञात करने योग्य है। दिनांक 20.6.2003 का आदेश (परिशिष्ट-10)एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है। मामला अपीलीय प्राधिकारी को वापस भेजा जाता है और ऊपर किए गए संप्रेक्षणों के प्रकाश में अपील का शीघ्रातिशीघ्र विनिश्चय करने का निर्देश निदेशक बोर्ड को दिया जाता है।

माननीय नरेन्द्र नाथ तिवारी, न्यायमूर्ति

संतोष कुमार

बनाम

पूर्णिमा कुमारी एवं अन्य

S. A. No. 428 of 2003. Decided on 20th May, 2010.

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872—धारा 61—रजिस्टर्ड-विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति साक्ष्य में ग्राह्य है और गवाहों का परीक्षण करके इसे सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है–रजिस्ट्रार के कार्यालय में रखा विक्रय विलेख लोक अभिलेख है और ऐसे दस्तावेज की प्रमाणित प्रति साक्ष्य में सिद्ध की जा सकती है–यदि रजिस्टर्ड दस्तावेज की प्रमाणित प्रति न्यायालय में लायी जाती है, ऐसे दस्तावेज के निष्पादन का आगे प्रमाण देना जरूरी नहीं है।
(पैराएँ 11 एवं 13)

निर्णयज विधि.–2001(2) JLJR 527 (SC); 2006(2) JCR 330(Jhr)—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s Himanshu Kumar Mehta, Manjusri Patra, Pankaj Kumar, For the Appellant; None, For the Respondent.

आदेश

यह द्वितीय अपील प्रतिवादी सं॰ 2-अपीलार्थी-अपीलार्थी द्वारा दाखिल की गयी है जिसके विरुद्ध विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा डिक्री पारित किया गया था। उसने उक्त डिक्री के विरुद्ध अपील दाखिल किया था। इसे भी खारिज कर दिया गया और इसे (डिक्री) को मान्य ठहराया गया था।

2. वादीगण ने वाद भूमि पर अपने अधिकार, टाइटल और हित की घोषणा के लिए और इस घोषणा के लिए भी कि सं॰ 10658/1998 के विक्रय विलेख के रद्दकरण का विलेख और सं॰ 10659/1998 के उपहार विलेख ने उक्त भूमि में वादीगण के अधिकार, टाइटल और हित को प्रभावित नहीं किया है, वाद दाखिल किया था।

3. वादीगण का मामला है कि ग्राम सुदना, पी॰ एस॰ डालटेनगंज, जिला पलामू से संबंधित खाता सं॰ 26 की भूमि अंतिम सर्वे और बंदोबस्ती अभिलेख में रतन महतो के पुत्रों, ठाकुर दयाल महतो, भरोसा

महतो और रुनन महतो के नामों में दर्ज की गयी थी। तीनों अभिलिखित अभिधारियों ने खाता सं॰ 26 की भूमि बराबर हिस्सों में बाँट लिया था। भूखंड सं॰ 376 का कुल क्षेत्र 14 डिसमिल था और इसे ठाकुर दयाल महतो के हिस्सा में आबंटित किया गया था। ठाकुर दयाल महतों अपने पीछे अपने एक मात्र पुत्र फालू महतो को छोड़ कर मृत हो गया। वह भूखंड सं॰ 376 की उक्त भूमि के शांतिमय अनन्य कब्जा में आया। अपने पीछे अपने दो पुत्रों तुलसी महतो और पाँचू महतो को छोड़ कर फालू महतो भी मृत हो गया। पारिवारिक संपत्ति तुलसी और पाँचू के बीच बाँट दी गयी और उक्त भूमि तुलसी महतो के हिस्से में आयी। उक्त भूमि के संबंध में उसका नाम नामान्तरित किया गया था और मांग जारी था। तुलसी महतो ने 28,500/-रुपयों के प्रतिफलार्थ वादीगण के पक्ष में रजिस्टर्ड विक्रय विलेख निष्पादित किया और भूमि अंतरित की। वादीगण उक्त भूमि के कब्जा में आए और वाद भूमि पर पक्का आवासीय गृह का निर्माण किया। वादीगण और उनके परिवार के सदस्यगण उक्त गृह में रह रहे है। उक्त प्रतिवादी सं॰ 2 संतोष कुमार ने द्वेषपूर्वक और कपटपूर्वक प्रतिवादी सं॰ 1 के नाम में विक्रय विलेख का दिनांक 13.10.1998 का रद्दकरण विलेख तैयार करवाया और इसे रजिस्टर्ड भी करवा लिया। उसी दिन जब उक्त कपटपूर्ण दस्तावेजों के आधार पर उसने अपने नाम पर विक्रय विलेख तैयार करवाया, प्रतिवादी सं॰ 2 ने वाद भूमि पर दावा किया और वादी को बेदखल करने की धमकी दी। विक्रेता-प्रतिवादी सं॰ 1 ने वादी का समर्थन किया और उसका दावा स्वीकार किया।

4. विक्रेता-प्रतिवादी सं॰ 1 ने वादी का समर्थन किया और उसके दावे को स्वीकार किया।

5. प्रतिवादी सं॰ 2 ने वाद का प्रतिवाद किया। अपने लिखित कथन में उसने अन्य बातों के साथ कथन किया कि प्रतिवादी सं॰ 1 ने वादीगण के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख को स्वेच्छापूर्वक रद्द कर दिया था। उसने प्रतिवादी सं॰ 2 के पक्ष में स्वेच्छापूर्वक उपहार विलेख निष्पादित किया था। प्रतिवादी सं॰ 2 द्वारा कोई दुर्व्यपदेशन अथवा कपट नहीं किया गया था जैसा अभिकथित किया गया है और उसने भूमि में वैध अधिकार और अभिधान अर्जित किया है।

6. प्रतिवादी सं॰ 1 ने अपने लिखित कथन में स्पष्टत: कथन किया है कि उसने सम्यक् रूप से निष्पादित और रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के माध्यम से मूल्यवान प्रतिफल के लिए वादीगण को पक्ष में वाद भूमि अंतरित की है और वे वाद भूमि के कब्जा में भी बने हुए है। उन्होंने भूमि पर आवास का निर्माण किया है और अपने परिवार के सदस्यों के साथ शांतिपूर्वक रह रहे हैं।

7. अपने मामले के समर्थन में वादीगण ने साक्ष्य दिया है। प्रतिवादी सं॰ 2 ने लिखित बयान दाखिल करने के बाद विचारण में भाग नहीं लिया और कोई साक्ष्य नहीं दिया था। अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और साक्ष्यों पर विचार करते हुए विद्वान विचारण न्यायालय ने वादीगण के मामले में एक पक्षीय डिक्री दिया।

8. प्रतिवादी सं॰ 2 ने जिला न्यायाधीश, डालटेनगंज, पलामू के न्यायालय में अपील दाखिल किया। अपील को अपर जिला न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक न्यायालय सं॰ II को हस्तांतरित कर दिया गया।

9. पक्षों को सुनने के बाद विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अपील खारिज कर दिया और विद्वान विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री को अभिपुष्ट किया।

10. विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय के आक्षेपित निर्णय का विरोध इस आधार पर किया गया है कि विद्वान अवर न्यायालय के निष्कर्ष अग्राह्य साक्ष्य पर आधारित हैं। वादीगण विधि के अनुरुप रजिस्टर्ड विक्रय विलेख और रद्दकरण विलेख सिद्ध करने में विफल रहे थे। उक्त रजिस्टर्ड दस्तावेजों की प्रमाणित प्रतियाँ साक्ष्य के रूप में ग्रहण की गयी है। रजिस्ट्रार का मूल रजिस्टर मांगा और सिद्ध नहीं किया गया था और प्रमाणित प्रतियों को प्रदर्श के रूप में चिन्हित किया गया था। विद्वान अवर न्यायालयों द्वारा निष्कर्ष पर आने के लिए एवं निष्कर्षों को दर्ज करने के लिए उक्त अग्राह्य दस्तावेजों पर विश्वास किया गया था।

11. मैंने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और सामग्रियों पर विचार किया है। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय के निर्णय के परिशीलन पर मैं पाता हूँ कि उक्त न्यायालय के समक्ष विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति की अग्राह्यता का आधार भी लिया गया था। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने उक्त बिन्दु पर विचार किया है और **हरियाणा राज्य बनाम राम सिंह,** [2001 (2) JLJR 527 (SC)] में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के आधार पर अभिनिर्धारित किया है कि रजिस्टर्ड विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति साक्ष्य में ग्राह्य है और गवाहों का परीक्षण कर विक्रय विलेख को सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है यदि इसे रजिस्टर्ड किया गया है और इसकी प्रमाणित प्रति न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गयी है।

12. मैं उक्त निष्कर्ष में कोई अशक्तता नहीं पाता हूँ।

13. इस न्यायालय को भी यह विचार करने का अवसर प्राप्त हुआ था कि क्या रजिस्टर्ड विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति साक्ष्य मूं ग्राह्य है। **हुसैनी महतो एवं अन्य बनाम हुलास महतो, 2006 (2) JCR 330 (Jhr.)** में प्रकाशित मामले में उक्त प्रश्न विचारार्थ उद्भुत हुआ था। इस न्यायालय ने विधि के प्रासंगिक प्रावधानों पर विचार किया और अभिनिर्धारित किया कि रजिस्ट्रार के कार्यालय में रखे गए विक्रय विलेख लोक अभिलेख हैं और ऐसे दस्तावेज की प्रमाणित प्रति को साक्ष्य में सिद्ध किया जा सकता है। यदि रजिस्टर्ड दस्तावेज की प्रमाणित प्रति न्यायालय के समक्ष लायी जाती है, उक्त दस्तावेज के निष्पादन का आगे प्रमाण देना आवश्यक नहीं है। **हरियाणा राज्य बनाम रामसिंह मामला (ऊपर)** में भी सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय बिल्कुल स्पष्ट है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि रजिस्टर्ड विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति साक्ष्य में ग्राह्य है और गवाह को बुलाकर ऐसे विक्रय विलेख को सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है।

14. उक्त की दृष्टि में मैं आक्षेपित निर्णय में कोई गलती नहीं पाता हूँ जो इस न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील में विनिश्चित किए जाने के लिए विधि का सारभूत प्रश्न उद्भुत करता है।

15. तद्नुसार, यह अपील खारिज की जाती है।

माननीय डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति

सुकान्ति कुमार राणा

बनाम

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, कुलपति के माध्यम से एवं अन्य

W.P. (S) No. 7645 of 2006. Decided on 30th August, 2010.

सेवा विधि–वेतनमान–घटाया जाना–याची सहायक कृषि अभियन्ता के रूप में कार्यरत–वेतनमान को कनीय अभियन्ता के वेतनमान तक घटाया गया–आरंभ से ही याची को सहायक कृषि अभियन्ता के रूप में और न कि कनीय अभियन्ता के रूप में, नियुक्त किया गया था–सहायक कृषि अभियन्ता के पद पर याची का वेतनमान बढ़ाया/पुनरीक्षित किया गया है–आक्षेपित निर्णय अचानक और एकपक्षीय रूप से किया गया था–याची का वेतनमान घटाने के पहले कोई नोटिस नहीं दिया गया था–प्रत्यर्थीगण को विधि के अनुरूप कार्रवाई करने की स्वतंत्रता के साथ आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Binod Kumar Dubey, For the Petitioner; M/s A. Allam, N. Sharmin, For the Respondents.

आदेश

वर्तमान याचिका मुख्यत: इन कारणों से दाखिल की गयी है कि वर्तमान याची, जो सहायक कृषि अभियन्ता के रूप में कार्यरत है, का वेतनमान दिनांक 1.1.1996 के प्रभाव से 6500-10500/-रुपयों से 5000-8000/-रु॰ अर्थात् कनीय अभियन्ता के वेतनमान तक घटा दिया गया है। परिशिष्ट-7 पर आक्षेपित आदेश दिनांक 16 सितम्बर, 2006 का है।

2. याची के अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि याची को सुनवाई का अवसर दिए बिना, एक पक्षीय और मनमाने रूप से याचिका के मेमों के परिशिष्ट-7 और 8 पर आक्षेपित आदेशों को प्रत्यर्थीगण द्वारा पारित किया गया है, जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के उल्लंघन में है और इसलिए, अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है। वस्तुत:, सहायक अभियन्ता के पद के लिए याची को दिया गया वेतनमान पूर्णत: सत्य और सही और विधि के अनुरुप है और अनावश्यकत: जो याची को पहले ही दिया जा चुका है, वर्ष 2006 में भूतलक्षी प्रभाव से वापस ले लिया गया है और परिशिष्ट-8 के तहत वर्ष 2004 के प्रभाव से वसूली का आदेश भी पारित किया गया है।

3. मैंने प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि याची को गलत रूप से उच्चतर वेतनमान दिया गया था क्योंकि यह अभियांत्रिकी में डिप्लोमा है और इसलिए वह कनीय अभियन्ता के वेतनमान का हकदार है और उसे गलत प्रकार से सहायक अभियंता का वेतनमान दिया गया था और इसलिए परिशिष्ट-7 पर आदेश को पारित किया गया है क्योंकि याची दिनांक 1.1.1996 के प्रभाव से 5000-8000/-रुपयों का वेतनमान पाने का हकदार है और परिणामस्वरूप याची को भुगतान किए गए राशि आधिक्य की वसूली के लिए परिशिष्ट-8 पर आदेश को पारित किया गया है।

4. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए मैं निम्नलिखित तथ्यों और कारणों से परिशिष्ट-7 पर दिनांक 16 सितम्बर, 2006 के आदेश को एतद द्वारा अभिखंडित और अपास्त करता हूँ जिसके द्वारा याची के वेतनमान को दिनांक 1.1.1996 के प्रभाव से घटा दिया गया है:–

(i) वर्तमान याची वर्ष 1991 में सहायक कृषि अभियन्ता के रूप में नियुक्त किया गया था। नियुक्ति का आदेश वर्तमान याचिका के मेमो के परिशिष्ट-1 पर है। यह प्रतीत होता है कि आरम्भ से ही याची को सहायक कृषि अभियन्ता, न कि कनीय अभियन्ता के रूप में नियुक्त किया गया था।

(ii) परिशिष्ट-2 पर मौजूदा कार्यालय आदेश से प्रतीत होता है कि वर्तमान याची को दिनांक 19 अगस्त, 1991 के प्रभाव से सहायक कृषि अभियन्ता के पद पर आमेलित कर लिया गया था और इस प्रकार प्रत्यर्थीगण द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण कि याची कनीय अभियन्ता है, इस परिशिष्ट-2 के विपरीत है।

(iii) आगे के दस्तावेजों अर्थात् परिशिष्ट-3 से यह भी प्रतीत होता है कि याची सहायक कृषि अभियन्ता है और उसे एक नया सामान्य भविष्य निधि खाता संख्या आबंटित की गयी थी। यह पत्र 8.9.1992 का है।

(iv) परिशिष्ट-4 से आगे प्रतीत होता है कि वर्तमान याची का वेतनमान सहायक कृषि अभियन्ता के पद पर नियत किया गया था। इस परिशिष्ट से यह भी प्रतीत होता है कि याची को कभी भी कनीय अभियन्ता के पद पर नियुक्त अथवा आमेलित नहीं किया गया था अथवा वेतनमान नहीं दिया गया था। अतः प्रत्यर्थीगण द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण इस परिशिष्ट के भी विरुद्ध है।

(v) दिनांक 18 मार्च, 2004 के कार्यालय आदेश से यह भी प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थीगण द्वारा याची की सेवाओं को 6,500-10,500/- रु० के वेतनमान में सहायक अभियन्ता के पद पर पुनः अभिपुष्ट किया गया है। यह कार्यालय आदेश फिटमेन्ट कमिटी अधिसूचना बिहार गजट (असाधारण) दिनांक 13 फरवरी, 1999 की अनुशंसा पर जारी किया गया है जिस पहले ही याचिका के मेमो के परिशिष्ट-5 पर निर्दिष्ट किया गया है।

(vi) तत्पश्चात् यह भी प्रतीत होता है कि सहायक कृषि अभियन्ता के पद पर वर्तमान याची का वेतनमान बढ़ाया गया है/पुनरीक्षित किया गया है और वेतनमान का पुनरीक्षण विस्तारपूर्वक परिशिष्ट-6 में वर्णित किया गया है। इस प्रकार सहायक कृषि अभियन्ता के पद पर वर्तमान याची का वेतनमान बढ़ाया/पुनरीक्षित किया गया है।

(vii) यह प्रतीत होता है कि अचानक और एक पक्षीय रूप से प्रत्यर्थीगण द्वारा निर्णय लिया गया है कि याची को दिनांक 1.1.1996 के प्रभाव से कनीय अभियन्ता का वेतनमान 5000-8000/-रुपया दिया जाना चाहिए। यह निर्णय वर्ष 2006 में लिया गया था जो वर्तमान याचिका के मेमो के परिशिष्ट-7 पर है और परिणामस्वरुप, याचिका के मेमो के परिशिष्ट-8 पर दिए गए आदेश के तहत वसूली का आदेश भी पारित किया गया है। इन आदेशों को याची को नोटिस दिए बिना पारित किया गया है। प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता यह इंगित करने में अक्षम हैं कि परिशिष्ट-7 पर मौजूद आदेश पारित करने के पहले याची को कोई नोटिस दिया गया था। अतः स्वीकृतरूप से वेतनमान घटाने के पहले वर्तमान याची को कोई नोटिस नहीं दिया गया था।

(viii) अतः जैसा ऊपर कहा गया है, सहायक कृषि अभियन्ता के रूप में याची के पदनाम को निर्दिष्ट करते हुए अनेक कार्यालय आदेशों को वर्ष 1991 से पारित किया गया है और उसे सहायक कृषि अभियन्ता का वेतनमान और इसमें पुनरीक्षण भी किया गया है और सुनवाई का अवसर दिए बिना और कोई नोटिस दिए बिना दिनांक 16 सितम्बर, 2006 को याची का वेतनमान कनीय अभियन्ता के 5000-8000/-रुपयों के वेतनमान तक घटा दिया गया है।

(ix) इसके अतिरिक्त प्रतीत होता है कि परिशिष्ट-7 पर दिए गए आदेश में कोई उल्लेखनीय कारण नहीं दिया गया है। अतः परिशिष्ट-7 पर दिया गया आदेश पूर्णतः अ-कारण आदेश है। जब एकबार आदेश पारित किया जाता है जो कारण रहित आदेश है और वह भी प्रभावित पक्ष को कोई नोटिस दिए बिना और सुनवाई का अवसर दिए बिना, तो शपथ पत्र में कोई कारण नहीं दिया जा सकता है। स्वयं आदेश में कारणों को उल्लिखित करना चाहिए था अन्यथा समस्त कारण रहित और अवैध आदेशों को समय बीत जाने के बाद शपथपत्रों की सहायता से सकारण और वैध आदेशों में परिवर्तित कर दिया जाएगा और इसलिए, वस्तुतः, प्रतिशपथ पत्र में दिए गए कारण कारण-रहित आदेश को मजबूत नहीं कर सकते है। न्यायालय में प्रत्यर्थीगण द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्रों और/अथवा पूरक प्रति शपथ पत्रों में दिए गए कारणों के बावजूद कारणरहित आदेश कारण रहित आदेश बना रहता है। आक्षेपित आदेश पारित करते समय संबंधित अधिकारी के दिमाग में क्या कारण थे, इस न्यायालय को ज्ञात नहीं है। बाद में आपूर्त्ति की गयी सोच का विधि में कोई मूल्य नहीं है और इस प्रकार प्रत्यर्थीगण द्वारा दाखिल प्रतिशपथपत्रों के जरिए कारणों को बताकर कारण रहित आदेश को वैध सकारण आदेश में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है और इसलिए भी परिशिष्ट-7 पर का आक्षेपित आदेश अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है।

5. परिशिष्ट–8 एक पारिणामिक आदेश है और इसलिए जब एक बार यह आदेश परिशिष्ट–7 पर मौजूद आदेश अभिखंडित कर रहा है, परिशिष्ट–8 पर का आदेश भी अभिखंडित किए जाने योग्य है।

6. पूर्वोक्त तथ्यों और कारणों के संचित प्रभाव से मैं एतद् द्वारा परिशिष्ट–7 पर दिनांक 16 सितम्बर, 2006 के आदेश को और परिशिष्ट–8 पर दिनांक 13 दिसम्बर, 2006 के आदेश को अभिखंडित और अपास्त करता हूँ। कम से कम नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का अनुसरण करने के बाद विधि के अनुरुप कार्रवाई करने की स्वतंत्रता प्रत्यर्थीगण को दी जाती है।

7. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों की दृष्टि में, तद्नुसार यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और निपटायी जाती है।

8. मुख्य रिट याचिका को निपटाए जाने के परिणामस्वरुप आई॰ सं॰ 303 वर्ष 2010, 513 वर्ष 2010 और 3178 वर्ष 2010-2009 भी एतद् द्वारा निपटायी जाती है।

माननीय प्रदीप कुमार, न्यायमूर्ति

सुदर्शन पाल उर्फ अजय

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. Appeal No. 564 of 2002. Decided on 1st September, 2010.

सत्र विचारण सं॰ 211 वर्ष 2001 में श्री अरुण कुमार रॉय, तृतीय अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 29 अगस्त, 2002 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 30 अगस्त, 2002 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 366-A और 376—अपहरण और बलात्संग–दोषसिद्धि और दंडादेश–पीड़ित युवती 18 वर्ष की आयु से कम आयु की अवयस्क युवती थी–सारे गवाहों ने इस तथ्य का समर्थन किया कि पीड़ित युवती का अपहरण किया गया था–धारा 366(A) के अन्तर्गत अपीलार्थी की दोषसिद्धि सुआधृत है–किन्तु स्वयं पीड़ित युवती ने कथन किया कि उसके साथ बलात्कार नहीं हुआ था–गवाहों ने भी कथन नहीं किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा उसका बलात्कार किया गया था–बलात्कार का अभिकथन डाक्टर के बयान द्वारा भी पुष्ट नहीं किया गया–धारा 376 के अधीन दोषसिद्धि एवं दंड अपास्त–अपील अंशतः अनुज्ञात।

(पैराएँ 10, 13 से 15)

अधिवक्तागण.–Mr. Purnendu Sharan, For the Appellant; Mr. Awani Kant Prasad, For the State.

न्यायालय द्वारा.–यह अपील सत्र विचारण सं॰ 211 वर्ष 2001 में श्री अरुण कुमार रॉय, तृतीय अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 29 अगस्त, 2002 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 30 अगस्त 2002 के दंडादेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिस निर्णय के द्वारा उन्होंने एकमात्र अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 366A और 376 के अधीन दोषी पाया और भारतीय दंड संहिता की धारा 366A के अधीन अपराध के लिए पाँच वर्षो का कठोर कारावास और भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध के लिए सात वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंड दिया।

2. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 1 और 2 के साक्ष्यों से यह प्रकट होगा कि पीड़ित बालिका स्वेच्छा से अभियुक्त के साथ जा रही थी और जब उसकी बरामदगी

के बाद उसे दंडाधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया गया था तब उसने धारा 164 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन बयान, प्रदर्श-3, दिया कि उसके साथ बलात्कार नहीं किया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि धारा 164 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन बयान से यह भी प्रतीत होगा कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने उसे बेहोश करने के लिए कोई दवा दी थी किन्तु उसने न्यायालय में बयान दिया कि उसे कोई दवा नहीं दी गयी थी बल्कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने 26 जनवरी के प्रसाद के रूप में लड्डू खिलाया था और इसको खाने के बाद वह बेहोश हो गयी थी। जब उसे होश आया, उसने स्वयं को राजगंज जाने वाले एक ट्रेकर पर पाया और इस प्रकार पीड़ित बालिका का बयान विश्वसनीय नहीं है और अपीलार्थी को दोषमुक्त कर देना चाहिए।

3. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया और निवेदन किया कि मामले में कोई विरोधाभास नहीं है। गवाहों अर्थात् अ॰ सा॰ 1 एवं 2 जिन्होंने पीड़ित बालिका को अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ जाते देखा था और उन्होंने कभी कथन नहीं किया कि उन्होंने उसे बेहोशी की हालत में देखा, स्वभाविक रूप से वह अभियुक्त के साथ अपने पिता के घर वापस जा रही थी। इसके अतिरिक्त, धारा 164 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन बयान में और न्यायालय में भी अपने बयान में पीड़ित बालिका, जिसे न्यायालय में अ॰ सा॰ 4 के रूप में परीक्षित किया गया था, ने स्पष्ट रूप से कथन किया है कि जब वह अपनी मौसी के घर से अपने घर जा रही थी, अभियुक्त-अपीलार्थी उसे रास्ते में मिला था और उसका पीछा करने लगा था। अभियुक्त-अपीलार्थी ने उसे लड्डू दिया जिसे खाने पर वह बेहोश हो गयी और तत्पश्चात् वह उसे राजगंज स्थित अपने मामा के घर ले गया था और इस तरह उसे सही दोषसिद्ध किया गया है और इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

4. दोनों पक्षों को सुनने के बाद और अभिलेख के परिशीलन के बाद, मैं पाता हूँ कि अभियोजन मामला पीड़िता के पिता हरि सिंह द्वारा दिए गए फर्दबयान के आधार पर शुरू किया गया था जिसमें उसने कथन किया कि दिनांक 26.1.2001 को सांय लगभग 5 बजे उसकी 11 वर्षीय पुत्री अपनी मौसी के घर भोवरा जाने के लिए अपने घर से निकली किन्तु रात में वापस नहीं आयी, तब वह अपने साला सागर सिंह के घर गया और भोवरा में पूछताछ के बाद उसे जानकारी हुई कि उसकी पुत्री भोवरा से अपने घर जाने के लिए रात्रि 7 बजे निकली थी। तत्पश्चात्, उसने उसे खोजना शुरू किया और खोजने के क्रम में उसे अ॰ सा॰ 1 कोयला खाने द्वारा पता चला कि उसकी पुत्री अपीलार्थी के साथ देखी गयी थी। उन्होंने प्राथमिकी में संदेह जताया कि उक्त अभियुक्त-अपीलार्थी ने बुरी नीयत से उसकी पुत्री को फुसलाया था।

5. उक्त लिखित रिपोर्ट के आधार पर पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धारा 366A के अधीन मामला जोरापोखर पी॰ एस॰ केस सं॰ 26/2001 दर्ज किया और अन्वेषण के बाद मामले में आरोप पत्र दाखिल किया।

6. चूँकि मामला अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय था, बाद में मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने मामले का संज्ञान लिया और इसे सत्र न्यायालय को सुपुर्द कर दिया और अंत में मामले का विचारण पूर्वोक्तानुसार तृतीय अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश द्वारा किया गया जिन्होंने अपीलार्थी को दोषी पाया।

7. यह प्रतीत होता है कि विचारण के क्रम में अभियोजन ने छह गवाहों का परीक्षण किया है। अ॰ सा॰ 1, कोयला खाने, अ॰ सा॰ 2, मो॰ हैदर अंसारी, अ॰ सा॰ 3, हरि सिंह, सूचक, अ॰ सा॰ 4, मीना कुमारी, पीड़ित बालिका अ॰ सा॰ 5, डॉ॰ लालीपान और अ॰ सा॰ 6, कंसारी मंडल है।

8. अ॰ सा॰ 1, कोयला खाने और अ॰ सा॰ 2 मो॰ हैदर अंसारी दोनों ने कथन किया कि दिनांक 26.1.2001 को उन्होंने पीड़ित बालिका मीना कुमारी को अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ देखा था।

9. अ॰ सा॰ 3, हरि सिंह, जो सूचक है, ने भी कथन किया कि बाद में उसे अ॰ सा॰ 1 कोयला खाने द्वारा सूचित किया गया था कि उसने उसकी पुत्री को अभियुक्त-अपीलार्थी सुदर्शन पाल उर्फ अजय के साथ जाते देखा था। तब उसने प्राथमिकी दर्ज की और बाद में पीड़ित बालिका को बरामद किया गया था। तब उसने कथन किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी सुदर्शन पाल उर्फ अजय उसकी पुत्री को ले गया था। उसने प्रदर्श-2 के रूप में प्राथमिकी को प्रमाणित किया। अपने प्रति-परीक्षण में उसने इंकार किया कि उसकी पुत्री की आयु लगभग 19 वर्ष है।

10. अ॰ सा॰ 4, मीना कुमारी, पीड़ित बालिका ने न्यायालय में कथन किया कि संध्या लगभग 7 बजे जब वह अपने मौसी के घर से अपने घर लौट रही थी, तब अभियुक्त-अपीलार्थी सुदर्शन पाल उर्फ अजय उसे रास्ते में मिला था और उसका पीछा करने लगा था। अभियुक्त-अपीलार्थी ने उसे 26 जनवरी के प्रसाद के रूप में लड्डू दिया था जिसको खाने पर वह बेहोश हो गयी। जब उसे होश आया उसने स्वयं को ट्रेकर पर पाया। वह अपने घर जाना चाहती थी किन्तु अभियुक्त-अपीलार्थी उसे ट्रेकर से राजगंज स्थित अपने मामा के घर ले गया जहाँ वह उसके साथ रात भर रही और उसके मामा ने उसे अपनी बहन के घर जाने की अनुमति दी थी। तत्पश्चात् अभियुक्त अपीलार्थी उसे बोकारो स्थित अपनी बड़ी बहन के घर ले गया जहाँ वह एक रात रही। अभियुक्त-अपीलार्थी बोकारो से उसे बाँकुड़ा ले गया जहाँ वह होटल में 7-8 दिन रही और उक्त अवधि के दौरान उसके साथ बलात्कार किया गया। उसने आगे कथन किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने उससे जबरदस्ती 8-10 पत्रों को लिखवाया और सादा कागज पर उसका हस्ताक्षर लिया। तत्पश्चात् अभियुक्त-अपीलार्थी उसे अपने घर ले गया जहाँ सारे दरवाजे बंद थे और कोई भी मौजूद नहीं था, वे घर के बाहर प्रतीक्षा कर रहे थे और इस बीच पुलिस आयी और उसे बरामद किया। उसने पुलिस को अपना बयान दिया। उसने प्रदर्श-3 के रूप में अपना हस्ताक्षर प्रमाणित किया। दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन दिए गए अपने बयान में पैरा 8 पर उसने यह नहीं कहा था कि जब वह बोकारो में उसके साथ ठहरी हुई थी तब अभियुक्त-अपीलार्थी ने उससे बालात्कार कारित किया था। दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन दिए गए अपने बयान के उसी पैराग्राफ में उसने यह भी कहा कि अभियुक्त-अपीलार्थी ने उसे कुछ नशीला पदार्थ खाने को दिया था जिसे खाकर वह अचेत हो गई।

11. अ॰ सा॰ 5, डॉ॰ लाली पान जिन्होंने प्रदर्श-4 के रूप में चिकित्सा रिपोर्ट प्रमाणित किया ने कथन किया कि बालिका की आयु 17 वर्ष थी।

12. अ॰ सा॰ 6, कंसारी मंडल औपचारिक गवाह है जिन्होंने औपचारिक प्राथमिकी प्रमाणित किया है।

13. अत:, साक्ष्यों से स्पष्ट है कि सारे गवाहों ने इस तथ्य का समर्थन किया कि पीड़ित बालिका का अपहरण हुआ था किन्तु चिकित्सा रिपोर्ट और उसके पिता अ॰ सा॰ 3 के साक्ष्य से प्रकट है कि पीड़ित बालिका 18 वर्ष की आयु से कम अवयस्क थी। मामले के उस दृष्टिकोण में, भारतीय दंड संहिता की धारा 366A के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि सुआधारित है।

14. किन्तु, चूँकि पीड़ित बालिका ने धारा 164 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन अपने बयान में कभी अभिकथन नहीं किया कि उसके साथ बलात्कार किया गया था और न ही अन्य गवाहों ने कथन किया कि अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा उसका बलात्कार किया गया था। डॉक्टर ने भी पीड़ित बालिका के साथ बलात्कार किए जाने के बारे में कुछ भी कथन नहीं किया है। मामले के उस दृष्टिकोण में भारतीय दंड

संहिता की धारा 376 के अधीन अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि और भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दंडादेश अपास्त किया जाता है।

15. परिणामस्वरुप, अपील अंशत: अनुज्ञात की जाती है।

16. अभिलेख से प्रतीत होता है कि अपीलार्थी को जमानत प्रदान नहीं किया गया था और संभवत: वह पाँच वर्षों से अधिक अभिरक्षा में बना हुआ है।

17. मामले के उस दृष्टिकोण में, विचारण न्यायालय को इसे सत्यापित करने का और निर्मुक्ति आदेश, यदि वह अभिरक्षा में है, जारी करने का निर्देश दिया जाता है।

माननीय आर॰ के॰ मेराठिया, न्यायमूर्ति

खासजामदा माइनिंग कम्पनी एवं एक अन्य

बनाम

मेसर्स सिंहभूम मिनरल कम्पनी एवं एक अन्य

W.P.C. No. 2225 of 2010. Decided on 3rd Septebmer, 2010.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश VI, नियम 17—वाद पत्र का संशोधन–आवेदन की खारिजी–अस्थायी व्यादेश के लिए याचिका के साथ स्थायी व्यादेश के लिए याचीगण द्वारा वाद दाखिल किया गया–व्यादेश की प्रार्थना की अस्वीकृति के बाद याचीगण को बेदखल कर दिया गया था–कब्जा की डिक्री इप्सित करते हुए वाद पत्र में संशोधन किया जाना आवश्यक बन गया–वाद के लंबित रहने के दौरान याची की बेदखली की दृष्टि में संशोधन इप्सित किया गया है–अंतर्ग्रस्त विवादों के समुचित न्याय-निर्णयन के लिए और कार्यवाहियों की बहुलता से बचने के लिए और न्याय के हित में इप्सित संशोधन को अनुज्ञात किया जाना चाहिए–आक्षेपित आदेश अपास्त–संशोधन हेतु प्रार्थना अनुज्ञात। (पैराएँ 3, 6 से 8)

निर्णयज विधि.–(2009) 2 SCC 409; (2009) 10 SCC 84 **: 2010(1) BLJ & JLJ 244 (SC)**—Distinguished; (2002) 7 SCC 559; (2002) 2 SCC 256; (2003) 7 SCC 219; (2006) 6 SCC 498—Referred to.

अधिवक्तागण.–M/s Aparesh Kumar Singh, Vikash Agrawal, For the Petitioners; Mr. Indrajit Sinha, For the Respondent No.1; M/s Amit S. Chadda, V. K. Srivastava, Ananda Sen, For the Respondent No.2.

आदेश

यह रिट याचिका टाइटल वाद सं॰ 12 वर्ष 2008 में वादीगण–याचीगण की ओर से सिविल प्रक्रिया संहिता (सी॰ पी॰ सी॰) के आदेश 6, नियम 17 के अधीन वाद पत्र के संशोधन के लिए दाखिल आवेदन को खारिज करते हुए विद्वान सब-जज-1 चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 23.4.2010 के आदेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है।

2. संक्षेप में प्रासंगिक तथ्य निम्नलिखित है। याचीगण ने आदेश 39, नियम 1 और 2 के अधीन अस्थायी व्यादेश के लिए याचिका के साथ स्थायी व्यादेश के लिए दिनांक 25.11.2008 को उक्त वाद दाखिल किया। प्रतिवादी सं॰ 2 ने दिनांक 30.4.2009 को व्यादेश याचिका के प्रति प्रत्युत्तर के साथ लिखित कथन दाखिल किया। दिनांक 14.5.2009 को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा व्यादेश की प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी थी। याचीगण के अनुसार, इसके पहले कि वे व्यादेश प्रदान करने से इंकार करने वाले उक्त आदेश के विरुद्ध अपील दाखिल करते, याचीगण को जून, 2009 के अंतिम सप्ताह में बेदखल कर दिया गया था। किन्तु दिनांक 21.7.2009 को धारा 144 सी॰ पी॰ सी॰ के अधीन कब्जा की पुनर्स्थापना के लिए

याचिका के साथ अपील एम॰ ए॰ सं॰ 187 वर्ष 2009 इस न्यायालय में दाखिल किया गया था। दिनांक 5.9.2009 को विचारण न्यायालय द्वारा विवाद्यकों को विरचित किया गया था। दिनांक 27.11.2009 को उक्त अपील खारिज कर दी गयी थी जिसके विरुद्ध याचीगण ने दिनांक 9.3.2010 को सर्वोच्च न्यायालय में एस॰ एल॰ पी॰ दाखिल किया। याचीगण के अनुसार, चूँकि अपील खारिज कर दी गयी थी और पुनर्स्थापना का आदेश पारित नहीं किया गया था, दिनांक 20.3.2010 को याचीगण द्वारा प्रश्नगत संशोधन याचिका दाखिल की गयी थी जिसे दिनांक 23.4.2010 को खारिज कर दिया गया था जिसके विरुद्ध यह रिट याचिका दाखिल की गयी है। याचीगण ने दिनांक 27.11.2009 के उक्त आदेश के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में सिविल अपील सं॰ 4424-4425 वर्ष 2010 दाखिल किया जिसे दिनांक 11.5.2010 को खारिज कर दिया गया था।

3. याचीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री विकास अग्रवाल ने निवेदन किया कि चूँकि व्यादेश के लिए प्रार्थना की अस्वीकृति के बाद याचीगण को बेदखल कर दिया गया था, कब्जा की डिक्री, कब्जा की पुनर्स्थापना, लेखा देने के लिए डिक्री और इस घोषणा कि दिनांक 25.9.2002 के करार के निबंधन एवं शर्त प्रत्यर्थी सं॰ 2 पर बाध्यकारी है, की डिक्री इप्सित करने वाले वाद पत्र का संशोधन आवश्यक हो गया। उन्होंने आगे निवेदन किया कि व्यादेश मामले में पारित आदेशों में याचीगण को कब्जा में पाया गया था और यह भी पाया गया था कि वे खनन कार्य कर रहे थे। किन्तु व्यादेश की प्रार्थना को अस्वीकार किए जाने का लाभ लेते हुए उन्हें बेदखल कर दिया गया था। उन्होंने यह निवेदन भी किया कि याचीगण ने वाद पत्र के संशोधन के लिए तुरन्त याचिका दाखिल नहीं की थी जब उन्हें जून, 2009 के अंतिम सप्ताह में बेदखल कर दिया गया था क्योंकि उन्हें व्यादेश अस्वीकार करने वाले आदेश के विरुद्ध अपील दाखिल करने की सलाह दी गयी थी जो वे केवल दिनांक 21.7.2009 को ही दाखिल कर सकते थे। तब, जब इस न्यायालय द्वारा अपील खारिज कर दिया गया था और पुनर्स्थापना के लिए की गयी प्रार्थना पर कोई आदेश पारित नहीं किया गया था, बाद में होने वाले घटनाओं, जो वाद के लंबित रहने के दौरान हुई थी, की दृष्टि में प्रश्नगत संशोधन याचिका दाखिल की गयी थी। उन्होंने यह निवेदन भी किया कि वाद पत्र और व्यादेश याचिका में, बेदखली की धमकी का अभिवाक् पहले ही किया गया था। अत: उन्होंने प्रार्थना की कि न्याय के हित में और कार्यवाहियों की बहुलता से बचने के लिए वाद पत्र के संशोधन की प्रार्थना अनुज्ञात की जा सकती है। उन्होंने **बलदेव सिंह बनाम मनोहर सिंह, (2006)6 SCC 498, राजेश डी॰ दरबार बनाम नरसिंग राव कृष्णाजी कुलकर्णी, (2003)7 SCC 219, ओम प्रकाश गुप्ता बनाम रणबीर बी॰ गोयल, (2002)2 SCC 256** और **संपत कुमार बनाम अय्याकन्नू, (2002)7 SCC 559** में प्रकाशित मामलों में निर्णयों पर विश्वास व्यक्त किया।

4. आक्षेपित आदेश का समर्थन करते हुए प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री चड्डा ने निवेदन किया कि विचारण दिनांक 5.9.2009 को आरंभ हुआ था जब विवाद्यकों को विरचित किया गया था और तत्पश्चात् संशोधन इप्सित किया गया था। उन्होंने आगे निवेदन किया कि इप्सित संशोधन वाद की प्रकृति और चरित्र को मौलिक रूप से बदल देगा और विधि के अधीन विहित परिसीमा को पराजित करते हुए नए वाद हेतुक जन्म देगा। अंत में उन्होंने निवेदन किया कि अधिक से अधिक याचीगण एक नया वाद दाखिल कर सकते हैं यदि परिसीमा द्वारा हेतुक वर्जित नहीं है। उन्होंने **विद्याबाई बनाम पद्मलता, (2009)2 SCC 409** और **रेवाजीतू बिल्डर्स एण्ड डेवलपर्स बनाम नारायण स्वामी एवं पुत्र (2009)10 SCC 84 : 2010(1) BLJ & JLJ 244 (SC)** में प्रकाशित मामलों में निर्णयों पर विश्वास व्यक्त किया।

5. आक्षेपित आदेश से प्रतीत होता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अन्य बातों के साथ अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि विचारण आरंभ होने के बाद भी संशोधन अनुज्ञात किया जा सकता है यदि सम्यक तत्परता के बावजूद याचीगण विचारण आरंभ होने के पहले मामला पेश नहीं कर सके थे; और कि वर्तमान मामले में विवाद्यकों को दिनांक 5.9.2009 को विरचित किया गया था जबकि संशोधन के

लिए आवेदन दिनांक 20.3.2010 को दाखिल किया गया था। इसने आगे अभिनिर्धारित किया कि वादीगण ने यह दावा करते हुए कि वे वाद संपत्ति पर काबिज थे और दिनांक 25.9.2002 के करार के आधार पर खनन कार्य कर रहे थे, स्थायी व्यादेश के लिए वाद दाखिल किया किन्तु यह घोषणा इप्सित नहीं की कि उक्त करार पक्षों पर बाध्यकारी है और इसलिए संशोधन द्वारा वे ऐसी घोषणा इप्सित नहीं कर सकते है क्योंकि यह बाद में हुई घटना नहीं है। केवल यही संप्रेक्षित किया गया था कि प्रस्तावित संशोधन वाद की प्रकृति को बदल देगा।

6. यह प्रतीत होता है कि बेदखली से आशंकित होकर अस्थायी व्यादेश के लिए याचिका के साथ स्थायी व्यादेश के लिए वाद दाखिल किया गया था। विचारण न्यायालय द्वारा व्यादेश की प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी थी और इस न्यायालय में अपील दाखिल करने के पहले याचीगण को बेदखल कर दिया गया था। अपील के साथ याचीगण ने कब्जा की पुनर्स्थापना के लिए धारा 144 सी॰ पी॰ सी॰ के अधीन भी याचिका दाखिल किया था। इस न्यायालय में अपील के लंबित रहने के दौरान विवाद्यकों को विरचित किया गया था। अपील खारिज कर दी गयी थी और पुनर्स्थापना की याचिका पर कोई आदेश पारित नहीं किया गया था। याचीगण सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष गए और कब्जा, लेखा दिये जाने और यह घोषणा कि दिनांक 25.9.2002 का करार प्रत्यर्थी सं॰ 2 पर बाध्यकारी है, इप्सित करते हुए प्रश्नगत संशोधन याचिका दाखिल किया था। लेखा दिए जाने के संबंध में प्रस्तावित संशोधन सर्वोच्च न्यायालय के निम्नलिखित निर्देश/संप्रेक्षण के साथ संगति में है जिसे संशोधन याचिका दाखिल किए जाने के बाद किया गया था।

> *''हम केवल पक्षों के अभिवाकों के पूरा होने से छह माह के भीतर शीघ्रातिशीघ्र वाद निपटाने का निर्देश विचारण न्यायालय को देते है। इस बीच, प्रत्यर्थीगण को उनके द्वारा संचालित खनन संव्यवहारों के मासिक लेखा को रखना होगा और प्रत्येक माह इसकी प्रति अपीलार्थीगण को देनी होगी।*
>
> *उक्त संप्रेक्षण के साथ अपील खारिज की जाती है।''*

7. वाद के लंबित रहने के दौरान याचीगण की बेदखली की दृष्टि में संशोधन इप्सित किया गया है।

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अन्य बातों के साथ साथ यह संप्रेक्षित किया गया था कि ''संशोधन के जरिए सम्मिलित किए जाने के लिए इप्सित प्रकथनों में गुणागुणों पर संशोधन के लिए याचिका अनुज्ञात करने के चरण पर निर्णय नहीं करना होगा।'' **(संपत कुमार (ऊपर)** का पैरा 11)

विद्याबाई (ऊपर) मामले में तथ्य और परिस्थितियाँ जिसपर प्रत्यर्थीगण द्वारा विश्वास व्यक्त किया गया है, वर्तमान मामले से भिन्न थी क्योंकि उस मामले में, एक बिल्कुल ही नया मामला निर्मित करना इप्सित किया गया था जो अवस्था इस मामले में नहीं है।

प्रत्यर्थीगण द्वारा विश्वास किए गए **रेवाजीतू (ऊपर)** मामले में, प्रस्तावित संशोधन द्वारा वादी एक नया मामला लाने का प्रयास कर रहा था और की गई स्वीकृतियों को अन्य पक्ष पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हुए वापस लेना इप्सित किया गया था।

8. यह सत्य है कि विवाद्यकों को विरचित किए जाने के बाद संशोधन याचिका दाखिल की गयी थी किन्तु इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में और पक्षों द्वारा विश्वास किए गए निर्णयों की दृष्टि में, मेरी राय में, अंतर्ग्रस्त विवादों के समुचित न्यायनिर्णयन के लिए और कार्यवाहियों की बहुलता से बचने के लिए और न्याय के हित में इप्सित किए गए संशोधन को अनुज्ञात किया जाना चाहिए। वाद आरंभिक चरण पर है। प्रत्यर्थीगण पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

इन परिस्थितियों में, आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। संशोधन की प्रार्थना अनुज्ञात की जाती है। तथ्यों के सारे अभिवाकों और उनको उपलब्ध विधि को उठाते हुए प्रत्यर्थीगण, दो सप्ताह के भीतर अपना अतिरिक्त लिखित कथन यदि हो, दाखिल कर सकते है। किन्तु, यह आदेश दो सप्ताह के भीतर अवर न्यायालय में 10,000/-रुपयों का वाद व्यय जमा करने के अधीन है जिसे वापस लेने के लिए प्रत्यर्थीगण हकदार होंगे।

इस संप्रेक्षणों और निर्देशों के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

महादेव राम मेहता

बनाम

झारखंड राज्य, निगरानी के माध्यम से

Cr. M.P. No. 1711 of 2009. Decided on 7th September, 2010.

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धाराएँ 7, 13(2), 13(1)(d) सह-पठित धारा 19—अवैध परितोषण–अभियोजन के लिए मंजूरी–याची एक पुलिस अधिकारी है और विवाद का न्यायालय के बाहर समाधान के लिए अभिकथित रूप से अवैध परितोषण मांगा था–मंजूरी का आदेश पुलिस के डी॰ आई॰ जी॰ द्वारा पारित किया गया था जो सक्षम प्राधिकारी नहीं है–मंजूरी की वैधता प्रासंगिक तथ्यों, सामग्रियों और साक्ष्य पर विचार करने के लिए सक्षम मंजूरीकर्ता प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत सामग्री पर निर्भर करती है और मंजूरी देनेवाले प्राधिकारी को मामले के प्रासंगिक तथ्यों के प्रति अपने स्वतंत्र विवेक का इस्तेमाल करना चाहिए–राज्य सरकार याची का नियोक्ता प्राधिकारी और उसको सेवा से हटाने का भी प्राधिकारी है–पुलिस का डी॰ आई॰ जी॰ नियोक्ता प्राधिकारी नहीं है–ऐसी मंजूरी को अवैध और अकृत घोषित करना ही होगा–याची को आगे अनिश्चित अवधि के लिए दीर्घकालिक विचारण के अधीन करना निरर्थक प्रयास होगा–संज्ञान का आक्षेपित आदेश अपास्त। (पैराएँ 4, 8, 9, 11, 13, 14, 17 एवं 18)

निर्णयज विधि.–(1991) 3 SCC 655; (2005) 8 SCC 370; (2006) 7 SCC 172; AIR 2005 SC 3606; (2002) 10 SCC 688; AIR 2006 SC 3077; (2009) 3 SCC 355—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Kailash Prasad Deo, For the Petitioner; Mr. A.K. Kashyap, For the State.

आदेश

याची के अधिवक्ता और राज्य निगरानी विभाग/विपक्षी पक्षकार के अधिवक्ता को सुना गया।

2. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन इस न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का अवलंब लेते हुए सतर्कता थाना केस सं॰ 44 वर्ष 2002 के संबंध में विशेष न्यायाधीश, निगरानी, राँची द्वारा पारित दिनांक 11.9.2002 के संज्ञान के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7, 13(2) सह-पठित धारा 13(1)(d) और भारतीय दंड संहिता की धारा 201 के अधीन अपराधों के लिए याची के विरुद्ध संज्ञान लिया गया था, सहित उसके विरुद्ध लंबित समस्त दांडिक कार्यवाहियों के अभिखंडन की प्रार्थना याची ने की है।

3. इस मामले के निपटारे के लिए प्रासंगिक तथ्य निम्नलिखित हैं:–

किसी संतोष कुमार द्वारा राज्य निगरानी विभाग के अधिकारी के समक्ष परिवाद दाखिल किया गया था जिसमें अभिकथन किया गया था कि परिवादी और किसी ट्रेकर चालक के बीच झगड़ा हुआ था जिसकी परिणति हाथापाई में हुई। अभिकथित घटना के लिए ट्रेकर के स्वामी ने लालपुर पुलिस थाना में परिवाद दाखिल किया।

परिवादी ने अभिकथन किया है कि वर्तमान याची ने लालपुर पुलिस थाना का तत्कालीन प्रभारी–अधिकारी होने के नाते परिवादी को कांस्टेबल के माध्यम से पुलिस थाना बुलाया और परिवादी और ट्रेकर स्वामी के बीच विवाद का समाधान न्यायालय से बाहर करने के लिए 1500/-रुपया अवैध परितोषण मांगा।

ऐसे परिवाद के आधार पर निगरानी विभाग ने सत्यापन के बाद निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 44 वर्ष 2002 दिनांक 13.7.2002 के तहत मामला दर्ज किया।

तत्पश्चात, एक जाल बिछाया गया। फेनोपथेलिन पाउडर छिड़का हुआ 1500/-रुपए राशि के करेंसी नोट परिवादी संतोष कुमार को इस अनुदेश के साथ दिए गए थे कि याची द्वारा मांगे जाने पर उसे धन दे दिया जाना चाहिए।

औपचारिक रिहर्सल के बाद, ट्रैप टीम परिवादी के मार्गदर्शन में लालपुर चौक गयी। यह अभिकथन किया गया है कि परिवादी को देखने पर याची, जो चौक पर उपस्थित था, ने परिवादी से पैसा मांगा और प्रत्युत्तर में परिवादी ने 1500/-रुपयों के दागदार करेंसी नोटों को याची को दे दिया जिसने इसे अपने चालक अर्थात् सह–अभियुक्त कुँवर सिंह को दे दिया। संकेत पाने पर, ट्रैप टीम के समस्त सदस्य, जो आस–पास छिपे हुए थे, आए और याची और ड्राइवर को पकड़ लिया। कुँवर सिंह के पैंट की जेब से दागदार करेंसी नोट बरामद किए गए थे। तत्पश्चात्, याची और ड्राइवर को पुलिस थाना लाया गया था। वहाँ दोनों अभियुक्तगण के हाथों को रासायनिक घोल में डुबाया गया था और पहचान के विनिर्दिष्ट चिन्हों के साथ घोल को चार विभिन्न बोतलों में सील किया गया था। हाथ डुबाए घोल के सीलबंद बोतलों को न्यायालयिक प्रयोगशाला में भेजा गया था और बाद में न्यायालयिक प्रयोगशाला का रिपोर्ट प्राप्त किया गया था। अपराधों के लिए याची के अभियोजन की मंजूरी भी ले ली गयी थी।

अन्वेषण समाप्त करने के बाद, निगरानी विभाग के अन्वेषण अधिकारी ने दोनों अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप–पत्र दाखिल किया और आरोप–पत्र के आधार पर विशेष न्यायाधीश (निगरानी) ने आक्षेपित आदेश के तहत अभियुक्तगण के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान लिया।

4. याची ने निम्नलिखित आधारों पर संज्ञान के आक्षेपित आदेश का और याची के विरुद्ध दांडिक अभियोजन को जारी रखने का भी विरोध किया है:–

(I) याची को अभियोजित करने के लिए धारा 197 (2) दं० प्र० सं० के प्रावधानों के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के प्रावधानों के अधीन विधिक मंजूरी प्राप्त नहीं की गयी थी। तात्पर्यित मंजूरी, जिसके आधार पर अभियोजन ने विश्वास इप्सित किया है, यह देखते हुए विधि में गंभीर गलती से पीड़ित है कि ऐसी मंजूरी सक्षम प्राधिकारी द्वारा नहीं दी गयी थी। याची स्वीकृत रूप से राजपत्रित पद

धारित करता पुलिस के सब-इंस्पेक्टर की श्रेणी का पुलिस विभाग का अधिकारी है और केवल राज्य सरकार की मंजूरी से वह पद से हटाए जाने योग्य है। यह तथ्य कि धारा 197 (2) दं० प्र० सं० के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अधीन याची के अभियोजन की मंजूरी देने के लिए राज्य सरकार सक्षम प्राधिकारी है, राज्य सरकार द्वारा अपने दिनांक 16.3.1980 की अधिसूचना (परिशिष्ट-7) के तहत घोषित किया गया है।

अधिसूचना में अंतर्विष्ट निर्देशों के अनुरुप, पुलिस के सब-इंस्पेक्टर के श्रेणी के पुलिस अधिकारियों के मामलों में पुलिस अधिकारियों के अभियोजन के लिए मंजूरी राज्य सरकार द्वारा दी जाती है और अधीनस्थ पुलिस अधिकारियों, जैसा परिशिष्ट-A श्रृंखला में उपदर्शित किया गया है, के मामलों में मंजूरी पुलिस महानिदेशक द्वारा दी जाती है। वर्तमान मामले में, अभियोजन की मंजूरी डी० आई० जी० पुलिस, दक्षिणी छोटानागपुर रेंज, राँची द्वारा दी गयी है जो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 19(1)(b) के अधीन याची को अभियोजित करने के लिए ऐसी मंजूरी अनुदत्त करने वाला सक्षम प्राधिकारी नहीं है।

(II) याची पर इस तथ्य के कारण गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है कि मंजूरी प्राप्त करने के लिए मामले के संपूर्ण तथ्यों को सक्षम प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है। यदि इसे प्रस्तुत किया जाता, अभियोजन मामले में प्रत्यक्ष त्रुटियों पर विचार करते हुए सक्षम प्राधिकार पूर्वोक्त अपराधों के लिए याची के अभियोजन के लिए मंजूरी नहीं देता।

(III) अभियोजन के संपूर्ण स्वीकृत मामले के मुताबिक भी, अपराधों जिनके लिए भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के प्रावधानों के अधीन संज्ञान लिया गया था, में से कोई भी निम्नलिखित कारणों से निर्मित नहीं होता है।

(i) यह सुझाने के लिए दूर-दूर तक कोई साक्ष्य नहीं है कि परिवादी संतोष कुमार से अवैध परितोषण की कोई मांग करने के लिए याची के पास कोई अवसर था। परिवादी का प्रतिवाद कि परिवादी संतोष कुमार के विरुद्ध ट्रेकर स्वामी द्वारा पुलिस थाना में (जहाँ याची प्रभारी-अधिकारी के रूप में पदस्थापित था) रिपोर्ट दर्ज किया गया था, बिल्कुल झूठा, काल्पनिक और मनगढ़ंत है क्योंकि निगरानी अधिकारी द्वारा सत्यापन कराए जाने पर भी याची के विरुद्ध ऐसा कोई परिवाद अथवा रिपोर्ट किसी ट्रेकर का स्वामी होने का दावा करते हुए किसी व्यक्ति द्वारा पुलिस थाना में दर्ज नहीं कराया गया पाया गया था। अतः अभिकथित अपराध की उत्पत्ति ही संदेहास्पद है।

(ii) स्वीकृत रूप से ट्रैप टीम के किसी सदस्य द्वारा याची के कब्जे से कोई धन बरामद नहीं किया गया था।

(iii) यद्यपि, यह अभिकथित किया गया है कि याची ने अपने हाथों से दागदार करेंसी नोटों को प्राप्त किया था और उसके हाथों को बाद में रासायनिक घोल में डुबाया गया था और इसका परीक्षण न्यायालयिक प्रयोगशाला द्वारा किया गया था किन्तु जैसा न्यायालयिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट में घोषित किया गया है कि घोल जिसमें याची के हाथों को डुबाया गया था गुलाबी नहीं हुआ और न हीं याची का हैन्डवाश घोल अंतर्विष्ट करने वाले सीलबंद बोतल में फिनालथ्येलिन उपस्थित था।

(iv) कि राज्य पुलिस विभाग और निगरानी विभाग के बीच प्रतिद्वंदिता के कारण याची को झूठा फँसाया गया है और यह तथ्य उस तरीके से पर्याप्त रूप से प्रदर्शित होता है जिस तरीके से याची और सह-अभियुक्त को खुले स्थान पर पकड़ा गया था और बलपूर्वक पुलिस थाना ले जाया गया था और जिस तरीके से सह-अभियुक्त के जेब में करंसी नोटों को ठूसा गया था जैसा सह-अभियुक्त द्वारा धारा 164 दं० प्र० सं० के अधीन दंडाधिकारी के समक्ष दिए गए बयान में घोषित किया गया था।

(v) यह अभिकथन कि याची ने अपनी वर्दी में परिवादी को एक अत्यन्त भीड़ भरे स्थान लालपुर चौक पर किसी सुनसान जगह पर अभिकथित परितोषण प्राप्त करने बुलाया था, असंभाव्य है और वस्तुतः अविश्वसनीय है। समरुप तथ्यों पर विचार करते हुए ऐसा ही संप्रेक्षण सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी किल्ली राम बनाम राजस्थान राज्य [(1985)1 SCC 28 मामले में किया गया था।

(vi) अन्यथा भी, अभियोजन वर्ष 2002 से ही आशयपूर्वक विचारण में विलम्ब कर रहा है और आज की तिथि तक अभियोजन अपने 30 गवाहों के समूह का परीक्षण करने में सक्षम नहीं हुआ है। दांडिक कार्यवाहियों को लम्बा खींचकर और उसके विरुद्ध निगरानी मामला लंबित रखकर याची को उसके आधिकारिक अधिकारों से गैर कानूनी रूप से वंचित किया जा रहा है जो वह अपने चिरकालिक अनुभव के चलते अर्जित करता।

5. दूसरी ओर, राज्य निगरानी के अधिवक्ता यह कहते हुए याची द्वारा दिए गए आधारों का खंडन करेंगे कि ये भ्रामक हैं और पोषणीय नहीं हैं। आधारों के खंडन के लिए विद्वान अधिवक्ता निम्नलिखित आधार देते हैं:-

(i) मंजूरी के आदेश में कोई गलती नहीं है क्योंकि इसे सक्षम प्राधिकारी द्वारा दिया गया था और यदि गलती है भी यह स्वयं में दांडिक कार्यवाहियों को अभिखंडित करने के लिए पर्याप्त नहीं होगा जब तक याची यह प्रदर्शित करने में सक्षम न हो कि अभियोजन की मंजूरी प्रदान करने में की गयी गलती से उस पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

(ii) अन्वेषण अधिकारी के समक्ष दिए गए अपने-अपने बयानों में गवाहों ने अभियोजन मामले का समर्थन किया है कि याची द्वारा मांगे जाने पर परिवादी ने दागदार करंसी नोटों को याची को दे दिया और तत्पश्चात् अपने हाथों से नोटों को प्राप्त करने के बाद इसे चालक कुँवर सिंह को दे दिया और तत्पश्चात निगरानी अधिकारी ने तुरन्त दोनों अभियुक्तगण को गिरफ्तार कर लिया और सह-अभियुक्त के कब्जा से दागदार करंसी नोटों को बरामद किया। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार ये विशेष न्यायाधीश द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के प्रावधानों के अधीन अपराधों का संज्ञान लेने के लिए प्रथम दृष्टया पर्याप्त सामग्री हैं और मामले के इस दृष्टिकोण में संज्ञान का आक्षेपित आदेश किसी दुर्बलता अथवा विकृति से पीड़ित नहीं है।

(iii) याची के विरुद्ध विचारण काफी आगे बढ़ चुका है और पाँच गवाहों का परीक्षण अभियोजन द्वारा किया जा चुका है और इसलिए धारा 482 दं० प्र० सं० के अधीन इस न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का अवलम्ब कार्यवाहियों को अभिखंडित

करने के लिए अथवा कार्यवाहियों को स्थगित करने के लिए नहीं लिया जा सकता है और यह उपयुक्त है कि विचारण अपनी तार्किक परिणति तक जाए।

(iv) याची द्वारा दिए गए आधार उसके बचाव के रूप में है जिन्हें वह विचारण में दे सकता है और इस संदर्भ में साक्ष्य का बेहतर अधिमूल्यन विचारण न्यायालय द्वारा निर्णय के चरण पर किया जा सकता है।

6. परस्पर विरोधी अभिवाकों से उभरते महत्वपूर्ण बातें निम्नलिखित है:–

(i) इस अभिकथन पर कि याची ने पुलिस थाना का प्रभारी–अधिकारी होने के नाते परिवादी संतोष कुमार को बुलाया था और ट्रेकर के स्वामी द्वारा किए गए परिवाद के आधार पर पुलिस थाना में दर्ज पुलिस मामला के संबंध में परिवादी और ट्रेकर के स्वामी के बीच विवाद का न्यायालय से बाहर समाधान करने के लिए अवैध परितोषण मांगा था। इस प्रकार, परिवादी संतोष कुमार के विरुद्ध ट्रेकर स्वामी द्वारा दर्ज किसी परिवाद के आधार पर पुलिस थाना में मामाला दर्ज किया जाना उद्गम प्रतीत होता है और जिसके आधार पर यह दावा किया गया है कि याची को परिवादी को बुलाने और उससे अवैध परितोषण मांगने का अवसर था। किन्तु ऐसे दावे के विपरीत परिवाद के सत्यापन के क्रम में और अन्वेषण के क्रम में निगरानी के संबंधित अधिकारी ने घटना की अभिकथित तिथि के पहले समय के किसी बिन्दु पर परिवादी संतोष कुमार के विरुद्ध पुलिस थाना डायरी में प्रविष्ट ऐसी किसी रिपोर्ट को नहीं पाया था। यह प्रकटतः याची द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को समर्थन प्रदान करता है कि परिवादी संतोष कुमार के विरुद्ध पुलिस थाना में दर्ज ऐसे किसी पूर्व रिपोर्ट की अनुपस्थिति में, याची के पास परिवादी संतोष कुमार को बुलाने और अवैध परितोषण के रूप में धन मांगने का कोई अवसर नहीं हो सकता था।

यह ध्यान में लेना महत्वपूर्ण है कि अन्वेषण अधिकारी ने ऐसा कोई ट्रेकर स्वामी नहीं पाया है जिसके साथ परिवादी संतोष कुमार अभिकथित झगड़ा में अभिकथित रूप से अंतर्ग्रस्त था और इसलिए परिवादी संतोष कुमार के विरुद्ध पुलिस थाना में परिवाद दर्ज करने का कारण हो सकता था।

(ii) आगे, अभियोजन मामले में यह अभिकथित किया गया है कि दागदार करेंसी नोटों को परिवादी द्वारा याची को दिया गया था और याची ने इसे अपने हाथों से प्राप्त करने के बाद करेंसी नोटों को सह–अभियुक्त को अंतरित कर दिया जिसने इसे अपने पैन्ट की जेब में रखा। यह अभिकथन भी किया गया है कि याची के हाथों को रासायनिक घोल में डुबाया गया था और तत्पश्चात् घोल को सीलबंद किया गया था और परीक्षण के लिए न्यायालयिक प्रयोगशाला को अग्रसारित किया गया था। फिर भी, यह स्वीकार करने पर भी, न्यायालयिक प्रयोगशाला का रिपोर्ट याची के हैंडवाश घोल अंतर्विष्ट करते सीलबन्द बोतल में किसी फेनोपथेलिन अथवा अन्य रसायन की उपस्थिति पुष्ट नहीं करता है। अभियोजन का मामला कि याची ने अपने हाथों से दागदार करंसी नोटों को प्राप्त किया था और तत्पश्चात इसे सह–अभियुक्त को दिया था, वस्तुत गंभीर खामी से पीड़ित है और युक्तियुक्त संदेह उत्पन्न करता है।

(iii) निगरानी के अधिवक्ता ने याची के दावे से विनिर्दिष्टतः इंकार नहीं किया है कि पुलिस के डी० आई० जी० जिनसे याची को अभियोजित करने के लिए मंजूरी का आदेश प्राप्त किया गया था, ऐसी मंजूरी प्रदान करने के लिए धारा 197 (2) दं० प्र० सं०

के अधीन अथवा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अधीन सक्षम प्राधिकारी नहीं था।

दूसरी ओर, याची द्वारा निर्दिष्ट राज्य सरकार की अधिसूचना वस्तुतः पुष्ट करती है कि पुलिस सेवा सहित राज्य सरकार के अधिकारी, गजटेड अधिकारी की श्रेणी का होने के नाते राज्य सरकार के आदेश द्वारा पद से हटाए जाते हैं। यह तथ्य अनेक मंजूरी आदेशों (परिशिष्ट A श्रृंखला) के प्रति निर्देश द्वारा पुष्ट होता है जिन्हें अनेक मामलों में पुलिस के सब इंस्पेक्टर की श्रेणी के अधिकारियों सहित पुलिस अधिकारियों के अभियोजन के लिए राज्य सरकार द्वारा पारित किया गया था। यह स्पष्ट है कि पुलिस का डी० आई० जी० धारा 197 (2) दं० प्र० सं० के अधीन अथवा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अधीन याची के अभियोजन की मंजूरी देने वाला सक्षम प्राधिकारी नहीं है क्योंकि याची निश्चय ही पुलिस के डी० आई० जी० के आदेश द्वारा अपने पद से हटाए जाने योग्य नहीं था जो स्वीकृत रूप से याची का नियोक्ता प्राधिकारी नहीं है। राज्य निगरानी के अधिवक्ता ने ऐसी कोई अधिसूचना प्रस्तुत नहीं की है जो भारतीय दंड संहिता के अधीन किसी अपराध के लिए अथवा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अपराध के लिए पुलिस के सब-इन्सपेक्टर की श्रेणी के अधीनस्थ पुलिस अधिकारियों के अभियोजन के लिए पुलिस के डी० आई० जी० को विनिर्दिष्ट रूप से प्राधिकृत करता है।

राज्य निगरानी के अधिवक्ता द्वारा अधिनियम की धारा 19 के प्रावधानों को निर्दिष्ट करते हुए इस विवाद्यक पर प्रस्तुत एक मात्र प्रत्युत्तर यह है कि यदि मंजूरी का आदेश ऐसी किसी गलती से पीड़ित है तो भी यह स्वयं में दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए अथवा दांडिक कार्यवाही के स्थगन मात्र के लिए भी इस न्यायालय की अंतर्निहित अधिकारिता का अवलम्ब लेने के लिए पर्याप्त नहीं होगा जब तक कि याची यह इंगित नहीं करता है कि उस पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है जो न्यायालय के मत में युक्तियुक्त स्वीकार किया जा सकता है।

(iv) अभिकथनों के संदर्भ में याची का मुख्य प्रतिवाद यह है कि इस तथ्य पर विचार करते हुए कि समय के किसी बिन्दु पर पुलिस थाना में परिवादी संतोष कुमार के विरुद्ध कोई पूर्व परिवाद दर्ज नहीं था, परिवादी संतोष कुमार से किसी अवैध परितोषण की कोई मांग करने के लिए याची के पास आधार अथवा अवसर नहीं था। इसके अतिरिक्त, अभियोजन का दावा कि याची ने अपने हाथों से दागदार करंसी नोटों को प्राप्त किया था और तत्पश्चात् सह-अभियुक्त को दिया था, का न्यायालयिक रिपोर्ट द्वारा खंडन किया गया है और झुठलाया गया है। अतः आरोपों कि याची ने अवैध परितोषण मांगा था और प्राप्त किया था, को सिद्ध करने के लिए अभियोजन का प्रस्तुत साक्ष्य स्वयं में संदेहास्पद है। इसके अतिरिक्त, जैसा सर्वोच्च न्यायालय द्वारा किल्ली राम मामले में (ऊपर) संप्रेक्षित किया गया है, यह अत्यधिक असंभाव्य है कि कोई पुलिस अधिकारी वर्दी में गुप्त स्थान चुनने के बजाए घूस का पैसा प्राप्त करने के लिए परिवादी को भीड़ भरे सार्वजनिक स्थान में बुलाएगा। यदि इन महत्वपूर्ण सूचनाओं को सक्षम प्राधिकारी के समक्ष उसके विचारार्थ प्रस्तुत किया जाता, वह अभिकथित अपराधों के लिए याची को अभियोजित करने के लिए मंजूरी अनुदत्त नहीं कर सकता था। पुलिस के डी० आई० जी०, जो स्वीकृत रूप से सक्षम प्राधिकारी नहीं है, द्वारा पारित मंजूरी का आदेश प्रकटतः समुचित परिप्रेक्ष्य में मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के प्रति विवेक का इस्तेमाल किए बिना पारित किया गया है और ऐसी गैर-कानूनी मंजूरी के आदेश के आधार पर न्यायिक विवेक का ख्याल किए बिना ही दंडाधिकारी द्वारा संज्ञान लिया गया

है। आगे प्रतिवाद किया गया है कि न केवल इस तथ्य कि उसके विरुद्ध ऐसे झूठे और तुच्छ आरोपों को विरचित करके उसे अपमानित किया गया है, के कारण बल्कि इस तथ्य के कारण भी कि उसे लंबे खिंचे विचारण की कठिनाई झेलने के लिए मजबूर किया गया है जो आठ वर्षों के बीतने के बाद भी निष्कर्षित नहीं किया गया है, याची पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

7. मैं इन विवाद्यकों पर याची के अधिवक्ता के तर्कों में बल पाता हूँ।

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 का पठन निम्नलिखित है:–

*"19. **अभियोजन पूर्व स्वीकृति की आवश्यकता:**–(1) कोई न्यायालय धारा 7, 10, 11, 13, और 15 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान जिसके संबंध में यह अधिकथित है कि वह लोक सेवक द्वारा किया गया है, निम्नलिखित की पूर्व स्वीकृति के बिना नहीं करेगा:□*

(a) ऐसे व्यक्ति की दशा में जो [नियोजित है या यथास्थिति, अभिकथित अपराध की कारिता के समय नियोजित था] संघ के मामलों के संबंध में नियोजित है और जो अपने पद से केन्द्रीय सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी से हटाए जाने के सिवाय नहीं हटाया जा सकता है, केन्द्रीय सरकार,

(b) ऐसे व्यक्ति की दशा में, जो [नियोजित है या यथास्थिति, अभिकथित अपराध की कारिता के समय नियोजित था] राज्य के मामलों के संबंध में नियोजित है और जो अपने पद से राज्य सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी से हटाए जाने के सिवाय नहीं हटाया जा सकता है, राज्य सरकार,

(c) किसी अन्य व्यक्ति की दशा में उसे उसके पद से हटाने के लिए सक्षम प्राधिकारी।

(2) जहाँ किसी कारण से इस बाबत शंका उत्पन्न हो जाए, कि उपधारा (1) के अधीन अपेक्षित पूर्व मंजूरी केन्द्रीय या राज्य सरकार या किसी अन्य प्राधिकारी में से किसके द्वारा दी जानी चाहिए वहाँ ऐसी मंजूरी उस सरकार या प्राधिकारी द्वारा दी जाएगी जो लोक सेवक को उसके पद से उस समय हटाने के लिए सक्षम था जिस समय अपराध किया जाना अभिकथित है।

(3) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी:–

(a) उपधारा (1) के अधीन अपेक्षित मंजूरी में किसी अनियमितता लोप या मंजूरी के कारण अपील न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण, पुष्टिकरण या अपील में, विशेष न्यायालय द्वारा पारित कोई निष्कर्ष, दंडादेश या आदेश तब तक परिवर्तित या उल्टा नहीं जाएगा, जबतक कि उस न्यायालय की राय में उसके कारण यथार्थ में न्याय नहीं हो सका;

(b) इस अधिनियम के अधीन की किसी कार्यवाही को किसी न्यायालय द्वारा प्राधिकारी द्वारा दी गई मंजूरी में किसी अनियमितता या लोप या त्रुटि के कारण रोका नहीं जाएगा जब तक कि यह समाधान न हो जाए कि ऐसी अनियमितता, लोप या त्रुटि के परिणामस्वरूप न्याय नहीं हो सका है;

(c) इस अधिनियम के अधीन की किसी कार्यवाही, को किसी न्यायालय द्वारा किसी, अन्य आधारों पर रोका नहीं जाएगा और किसी न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण के अधिकारों का प्रयोग किसी जाँच, सुनवाई, अपील या अन्य कार्यवाही में पारित किसी अन्तर्वर्ती आदेश के संबंध में नहीं किया जाएगा।

(4) उपधारा (3) के अधीन अवधारणों के लिए, कि ऐसी मंजूरी के अभाव या किसी अनियमितता, लोप या त्रुटि के कारण न्याय नहीं हो सका है, न्यायालय इन तथ्यों को विचार में लेगा की आपत्ति, किसी कार्यवाही के दौरान उठाई जा सकती थी और उठाई गई थी।

स्पष्टीकरणः इस धारा के प्रयोजनों के लिएः–

(a) ''त्रुटि'' में मंजूरी देने वाले प्राधिकारी की सक्षमता शामिल है;

(b) ''अभियोजन के लिए अपेक्षित मंजूरी में किसी विनिर्दिष्ट प्राधिकारी के निर्देश पर किया जाने वाला अभियोजन की आवश्यकता का सन्दर्भ अथवा किसी विनिर्दिष्ट व्यक्ति द्वारा दी गई मंजूरी या इसी प्रकृति की अन्य अपेक्षा सम्मिलित है।

8. प्रावधानों के सावधानीपूर्वक पठन पर यह स्पष्ट होगा कि धारा का मुख्य लक्ष्य यह है कि अपेक्षित मंजूरी प्रदान करने के लिए सशक्त सक्षम प्राधिकारी के पूर्व मंजूरी को छोड़कर किसी लोकसेवक द्वारा उसमें संगणित अपराधों, जो अभिकथित रूप से किसी लोक सेवक द्वारा किया गया है, का संज्ञान लेने के लिए यह न्यायालय को वर्जित करता है। ऐसे प्रावधान का निहित लक्ष्य तुच्छ अथवा असिद्ध अभिकथन की परेशानी से लोक सेवक को बचाना था। अतः वैध मंजूरी का अस्तित्व किसी लोक सेवक द्वारा अभिकथित रूप से किए गए संगणित अपराधों का संज्ञान लेने के लिए पूर्वापेक्षा है। अतः, जैसा **के॰ वीरास्वामी बनाम भारत संघ एवं अन्य, (1991)3 SCC 655,** मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा संप्रेक्षित किया गया है, जब न्यायालय से ऐसे अपराधों का संज्ञान लेने के लिए अनुरोध किया जाता है, इसे जाँच करना ही होगा कि क्या उसके द्वारा अभिकथित रूप से किए गए अपराध को करने के लिए लोक सेवक को अभियोजित करने की वैध मंजूरी है।

9. सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों की एक श्रृंखला द्वारा सुनिश्चित किया गया है कि मंजूरी की वैधता प्रासंगिक तथ्यों, सामग्रियों और साक्ष्यों पर विचार करने के लिए सक्षम मंजूरी प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत सामग्रियों पर निर्भर करती है और मंजूरी देने वाले प्राधिकारी को मंजूरी देने से पहले मामले के प्रासंगिक तथ्यों संग्रहित साक्ष्य और अन्य अनुषंगिक तथ्यों पर स्वयं अपने स्वतंत्र विवेक का इस्तेमाल करना होगा। अधिनियम के अधीन मंजूरी का आशय केवल व्यर्थ/निराधार औपचारिकता नहीं है और यह आवश्यक है कि मंजूरी के संबंध में नियमों का पूर्ण कठोरता के साथ संप्रेक्षित किया जाय।

10. कर्नाटक राज्य बनाम सी॰ नागराज स्वामी, (2005)8 SCC 370 मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया हैः

''अपराध का संज्ञान लेने के लिए सक्षम प्राधिकारी द्वारा समुचित मंजूरी प्रदान करना अनिवार्य शर्त है।''

एक अन्य निर्णय में, **पुलिस स्टेट इंस्पेक्टर, विशाखापत्तनम बनाम सूर्य संकरम करी (2006)7 SCC 172** में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

''जब विधि में अप्राधिकृत व्यक्ति द्वारा मंजूरी प्रदान की जाती है, यह अधिकारिता विहीन होने के नाते अकृत होगी।''

11. वर्तमान मामले में, यह विवादित नहीं है कि राज्य सरकार याची का नियोक्ता प्राधिकारी है और वह प्राधिकारी भी है जो याची को उसके पद से हटा सकता है। पुलिस का डी॰ आई॰ जी॰ नियोक्ता

प्राधिकारी नहीं होने के नाते और न ही याची को उसके पद से हटाने की शक्तियों को विहित करता प्राधिकारी है, पूर्वोक्त अपराधों के लिए याची के अभियोजन की मंजूरी देने वाले सक्षम प्राधिकारी के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। ऐसी मंजूरी को अवैध और अकृत घोषित करना ही होगा।

12. निगरानी के अधिवक्ता अधिनियम की धाराओं 19 (3) और 19(4) के प्रावधानों और धारा के अंतिम पैराग्राफ में प्रस्तुत स्पष्टीकरण को निर्दिष्ट करते हुए तर्क करते हैं कि मंजूरी का आदेश, यदि अक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित भी किया जाता है, अधिकाधिक माना जा सकता है और जब तक ऐसे गलत मंजूरी के आदेश का परिणाम न्याय की विफलता में नहीं होता है, संज्ञान के आदेश का विरोध नहीं किया जा सकता है। आगे तर्क किया गया है कि धारा में निर्दिष्ट शब्द 'त्रुटि' मंजूरी प्रदान करने के लिए प्राधिकारी की सक्षमता को भी सम्मिलित करता है और मंजूरी के आदेश के विरुद्ध अभियुक्त की आपत्ति पर विचार करते हुए न्यायालय को इस तथ्य को भी ध्यान में रखना होगा कि ऐसी आपत्ति कार्यवाही के आरंभिक चरण पर उठायी जानी चाहिए थी। विद्वान अधिवक्ता आगे तर्क करते हैं कि याची ने मंजूरी के आदेश के विरुद्ध कार्यवाही के आरंभिक चरण पर आपत्ति नहीं उठायी थी और दूसरी ओर, आरोपों को विरचित किए जाने और अभियोजन के गवाहों के परीक्षण के साथ विचारण आरंभ किए जाने की अनुमति दी थी।

13. इन प्रश्नों के उत्तर निम्नलिखित मामलों में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों में पाए जाएँगे:–

गोवा राज्य बनाम बाबू थॉमस [AIR 2005 Supreme Court 3606] मामले में लगभग समरुप तथ्यों पर ऐसा ही विवाद्यक विचारार्थ सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष आया था। मामले के स्वीकृत तथ्यों को ध्यान में लेते हुए कि अभियोजन की मंजूरी का आदेश कम्पनी सेक्रेटरी के हस्ताक्षरों के अधीन पारित किया गया था जो नियमावली के अधीन मंजूरी का आदेश पारित करने में सक्षम प्राधिकारी नहीं था और अधिनियम की धारा 19(1) और 19(3) के प्रावधानों के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि चूँकि अधिनियम की धारा 19 के अधीन अभियोजन की मंजूरी सक्षम प्राधिकारी द्वारा नहीं प्रदान की गयी थी, न्यायालय द्वारा लिया गया संज्ञान दोषपूर्ण और अधिकारिताविहीन होगा। न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि यह केवल मंजूरी के आदेश में अनियमितता, गलती अथवा लोप का मामला नहीं है जैसी अपेक्षा अधिनियम की धारा 19(1) के अधीन की जाती है। यह अभियोजन मामला के जड़ तक जाता है और मूल गलती होने के नाते अधिकारिताविहीन होने के चलते संज्ञान को अविधिमान्य करता हैं।''

मनोरंजन प्रसाद चौधरी बनाम बिहार राज्य, (2002)10 SCC 688 मामले में पहले ही ऐसा ही दृष्टिकोण अभिव्यक्त करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि कार्यवाही दूषित हो गयी है क्योंकि सक्षम प्राधिकारी की मंजूरी नहीं है और ऐसे निष्कर्षों पर न्यायालय ने कार्यवाही को अभिखंडित कर दिया था।

अत: इससे इंकार नहीं किया जा सकता है कि अक्षम प्राधिकारी द्वारा प्रदान किया गया मंजूरी का आदेश मात्र गलती अथवा अनियमितता थी जिसे अपराधों का संज्ञान लेने और लोक सेवक को अभियोजित करने के उद्देश्य से स्वीकार किया जा सकता था। अपने पूर्वनिर्दिष्ट निर्णयों में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्थापित विधि यह है कि वैध मंजूरी की अनुपस्थिति में अपराधों के संज्ञान का आदेश अधिकारिताविहीन है और अवैध होगा। यह विधि का सुनिश्चित सिद्धान्त है।

14. निगरानी के अधिवक्ता के प्रतिवाद कि मंजूरी के विरुद्ध आपत्ति कार्यवाही के आरंभिक चरण पर उठायी जानी चाहिए थी, के प्रत्युत्तर में याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याचीगण द्वारा ऐसी आपत्ति आरंभिक चरण पर ही इस न्यायालय के समक्ष दांडिक विविध याचिका दाखिल करके उठायी गयी थी किन्तु अनुचित विधिक परामर्श पर इसे वापस ले लिया गया था। विद्वान अधिवक्ता जोड़ते हैं कि गैरकानूनी आदेश के संबंध में आरोप विरचित किए जाने के चरण पर दूसरी बार आपत्ति उठायी गयी थी किन्तु विचारण न्यायालय द्वारा ऐसी आपत्ति का अधिमूल्यन नहीं किया गया था और इसलिए याची ने वर्तमान आवेदन दाखिल किया है।

15. चाहे जो भी हो, इस तथ्य पर विचार करते हुए कि वर्तमान मामले में मंजूरी का आदेश अधिनियम की धारा 19 के प्रावधानों के अधीन अक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित किया गया था और ऐसी परिस्थितियों के अधीन विधि के सुनिश्चित सिद्धान्तों को लागू करते हुए मंजूरी का ऐसा आदेश एक मूल गलती है। मंजूरी के अवैध आदेश पर पारित संज्ञान के आदेश को याची द्वारा चुनौती दी जा सकती है और ऐसी आपत्ति निश्चय ही दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्तियों के प्रयोग में इस न्यायालय द्वारा विचार किए जाने वाला मामला होगा, विशेषत: इन अभिवाकों के प्रकाश में कि अवैध मंजूरी के आधार पर उसके विरुद्ध आरंभ किए गए अभियोजन के कारण याची पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

16. एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू जिसे संभवत: अनदेखा नहीं किया जा सकता है, वह है याची के विरुद्ध विचारण करने में हुआ विलम्ब। अभिलेख से प्रतीत होता है कि यद्यपि मामला वर्ष 2002 में पंजीकृत किया गया था और विचारण तत्पश्चात जल्द ही शुरू हुआ था किन्तु आठ वर्षों से अधिक के अवसान के बाद भी इसे पूरा नहीं किया गया है। जैसा निगरानी के अधिवक्ता द्वारा स्वीकार भी किया गया है कि विचारण के आरंभ होने के बाद की अवधि के दौरान प्रतिवर्ष एक गवाह की दर से केवल पाँच गवाहों का परीक्षण किया गया था। इस दर पर, आरोप-पत्र में नामित 31 गवाहों से भी अधिक के संपूर्ण संवर्ग के परीक्षण के लिए विचारण के अगले 10 वर्षों अथवा अधिक तक चलने की पूरी संभावना है। सुस्त तरीके के आठ वर्षों से अधिक समय के ऐसे विलम्ब के लिए, याची किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं था। अन्वेषण जो आठ वर्षों तक चला है, ने निश्चय ही त्वरित अन्वेषण एवं विचारण के याची के बहुमूल्य संवैधानिक अधिकारों का अतिलंघन किया है। वस्तुत: यह सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया गया निर्णयाधार का सार है जिसे **पंकज कुमार बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य [AIR 2006 Supreme Court 3077]** मामले में और **वकील प्रसाद सिंह बनाम बिहार राज्य, (2009)3 Supreme Court Cases 355** मामले में दांडिक कार्यवाहियों के अभिखंडन के लिए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लागू किया गया था।

वर्तमान मामले में, अभियोजन कोई भी आपवादिक परिस्थिति दर्शाने में विफल रहा है जिसे अन्वेषण और विचारण के लिए आठ वर्षों से अधिक कठोर और अत्यधिक विलम्ब को माफ करने के लिए विचार में लिया जा सकता था।

17. समान प्रासंगिकता का एक अन्य पहलू, जिस पर याची के अधिवक्ता जोर देंगे और जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता है, यह है कि याची के मामले के स्वीकृत तथ्यों के अनुसार भी, साक्ष्य, जिन पर अभियोजन विश्वास करना इप्सित करता है, याची द्वारा घूस मांगने और स्वीकार करने के अभिकथन को सिद्ध करने के लिए आधारभूत तथ्यों को अधिकथित नहीं करता है। यह सम्पुष्ट करने का कोई तर्कपूर्ण अथवा विश्वसनीय साक्ष्य नहीं है कि परिवादी संतोष कुमार से किसी अवैध परितोषण

की मांग करने के लिए याची के पास अवसर था। स्वीकृत रूप से, याची के व्यक्तिगत कब्जा से कोई दागदार करेंसी नोट बरामद नहीं किया गया था। इसके अतिरिक्त, यह अभिकथन कि याची ने अपने हाथों से दागदार करेंसी नोटों को प्राप्त किया था, न्यायालयिक प्रयोगशाला, जिसने याची के हैंडवाश घोल अंतर्विष्ट करते तात्पर्यित घोल का न्यायालयिक परीक्षण किया था, के रिपोर्ट द्वारा खंडित किया गया है और झुठलाया गया है। इस प्रकार, दिए गए अभियोजन के स्वयं अपने साक्ष्य द्वारा भी, मांग के बिन्दु पर और याची द्वारा अवैध परितोषण प्राप्त किए जाने के बिन्दु पर कोई तर्कपूर्ण और विश्वसनीय साक्ष्य प्रतीत नहीं होता है। प्रश्न, जिसे याची के अधिवक्ता द्वारा सही पूछा गया है, यह है कि क्या ऐसे क्षीण साक्ष्य के आधार पर अभियोजन, उन अपराधों जिनके लिए उसे आरोपित किया गया है, याची की दोषसिद्ध करवा सकता है? यदि नहीं, तब आगे अनिश्चित अवधि के लिए याची को लंबा खिंचने वाले विचारण के अधीन करना निरर्थक प्रयास होगा।

18. तथ्यों एवं परिस्थितियों और ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं इस आवेदन में गुणागुण पाता हूँ। परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है। विशेष न्यायाधीश, निगरानी राँची द्वारा निगरानी केस सं॰ 44 वर्ष 2002 में पारित किया गया दिनांक 11.9.2002 के संज्ञान के आक्षेपित आदेश सहित संज्ञान के आक्षेपित आदेश के अनुसरण में याची के विरुद्ध लंबित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही को एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

माननीय जे॰ सी॰ एस॰ रावत एवं डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्तिगण

झारखंड राज्य (2 में)

कृष्ण गंजू एवं एक अन्य (872 में)

बनाम

कृष्ण गंजू एवं एक अन्य (2 में)

झारखंड राज्य (872 में)

Death Ref. No. 02 of 2009. Decided on 20th August, 2010.

सिमरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 85 वर्ष 1998 से उद्भुत एस॰ टी॰ सं॰ 18 वर्ष 2001 में श्री श्रीकान्त रॉय, अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ III, चतरा द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 22.8.2009 और दिनांक 26.8.2009 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/149, 307/149, 353, 149 एवं 435/149—आयुध अधिनियम, 1959—धारा 27—हत्या–हत्या का प्रयास–मृत्युदंड–पुलिस कर्मिकों की हत्या–सिद्धदोष उग्रवादी संगठन के सदस्य हैं–अभियोजन की ओर से प्रस्तुत गवाह घटना के तरीके के बारे में संगत थे–अपीलार्थीगण को झूठा फँसाए जाने का कोई कारण नहीं–टी॰ आई॰ पी॰ चार्ट के असिद्ध रहने के कारण अपीलार्थीगण पर प्रतिकूल प्रभाव कारिता नहीं हुआ–विचारण न्यायालय के समक्ष अपीलार्थीगण की पहचान दुर्बलता रहित थी, इस प्रकार ऐसे पहचान पर आधारित अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है–किन्तु, वर्तमान मामला विरल से विरलतम मामला नहीं है ताकि मृत्युदंड अधिनिर्णीत किया जाए–दोषसिद्धि को मान्य ठहराया गया किन्तु मृत्युदंड को आजीवन कारावास में परिवर्तित कर दिया गया।

(पैराएँ 16, 17 से 22)

निर्णयज विधि.–(2010)3 SCC 508—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. B. K. Dubey, For the Appellants; Mr. R. Mukhopadhyay, For the State.

डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्ति.–अपीलार्थीगण/सिद्धदोषों के विरुद्ध दर्ज दोषसिद्धि के एक ही निर्णय एवं दोषसिद्धि से उद्भुत दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 366 (i) के अधीन मृत्यु दण्डादेश संदर्भ और ऊपर निर्दिष्ट दांडिक अपील को विचारार्थ एक साथ सुना जाता है।

2. सिद्धदोषों-अपीलार्थीगण के लिए और उनकी ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री दूबे और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ श्री आर॰ मुखोपाध्याय को सुना गया।

3. अपीलार्थी सं॰ 1 कृष्ण गंजू और अपीलार्थी सं॰ 2 रामदेव महतो को भारतीय दंड संहिता (इसमें इसके बाद अधिनियम के रूप में निर्दिष्ट) की धाराओं 148, 307/149, 302/147, 353/149, 435/149 के अधीन और धाराओं 379/149 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है। अपीलार्थीगण में से प्रत्येक को आगे आयुध अधिनियम की धारा 27 (1) के अधीन आगे दोषसिद्ध किया गया है। उन्हें यहाँ पहले निर्दिष्ट तत्सम अपराधों में विभिन्न आधारों पर विभिन्न अवधि के लिए कठोर कारावास भुगतने का दंड दिया गया था। इसके अतिरिक्त, उनमें से प्रत्येक को सिमरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 85 वर्ष 1998 से उद्भुत सत्र विचारण सं॰ 18 वर्ष 2001 में श्री श्री कान्त रॉय, अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ III, चतरा के न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 302/149 के अधीन उनकी दोषसिद्धि के लिए उनकी मृत्यु तक गर्दन से लटकाने का मृत्यु दंड अधिनिर्णीत किया गया था।

4. सूचक अ॰ सा॰ 5 सरयू पंडित, सिमरिया पुलिस थाना का तत्कालीन प्रभारी-अधिकारी, ने अथमपुर प्राथमिक विद्यालय के निकट दोपहर लगभग दो बजे दिनांक 24.11.1998 को अपना स्व बयान दर्ज किया जिसमें कथन किया गया कि जब वह पुलिस पेट्रोल के बाद ए॰ एस॰ आई॰ बृज मोहन सिंह के साथ लावालोन्ग से लौट रहा था और अथमपुर प्राथमिक विद्यालय के निकट पहुँचा उसने गोली चलने जैसी आवाज को सुना और जिज्ञासावश वह अन्य पुलिस कार्मिकों के साथ वाहन से नीचे उतरा। उसने आगे बताया कि जब वह ऐसी आवाज के उद्गम् के बारे में किसी वृद्ध महिला से पूछ रहा था, उसका सामना पहाड़ियों और जंगल की ओर से भयंकर गोलीबारी से हुआ। वह पुलिस वाहन, जिसे सड़क पर छोड़ दिया गया था, के पीछे से 'मोर्चा' लेने के लिए अन्य पुलिस कार्मिकों के साथ पिच सड़क की ओर दौड़ा और जवाबी गोली चलाई। इसी बीच, उसने पीछे से चीख सुनी और इस प्रकार उसके पास विश्वास करने का कारण था कि कुछ कांस्टेबलों ने बंदूक की गोली से उपहतियों को प्राप्त किया था। पुलिस दल ने गोलीबारी का जवाब दिया। सूचक ने उपधारित किया कि वे एम॰ सी॰ सी॰ उग्रवादी थे जो 'एम॰ सी॰ सी॰ जिन्दाबाद' और 'लाल सलाम' के नारे लगा रहे थे और गोलीबारी तेज कर दी। इसी बीच, पुलिस दल के होमगार्ड ने भी बंदूक की गोली से हुई उपहतियों को प्राप्त किया। सूचक किसी तरह सरक गया और भयंकर गोली बारी से बच निकला और 'विकास' बस पर चढ़ कर घटना की सूचना देने सिमरिया पुलिस थाना गया। वह तुरन्त पुलिस बल और सी॰ आर॰ पी॰ एफ॰ के साथ घटनास्थल पर वापस आया और पुलिस वाहन, जिसे उग्रवादियों द्वारा जला दिया गया था, से उठते धुएँ को देखा और आगे देखा कि कांस्टेबुल सं॰ 34 नागेन्द्र कुमार वत्स, एक होमगार्ड विनोद सिंह और गाँव के चौकीदार का पुत्र अर्थात् चंद्रा दुसाध उग्रवादी की ओर से हुए भयंकर गोलीबारी में मृत्यु के शिकार हो गए थे। एम॰ सी॰ सी॰ उग्रवादियों ने कांस्टेबुल के शरीर से न केवल राइफल, कारतूस और वर्दी छीन लिया था बल्कि कुल्हाड़ी से उन्हें काट भी डाला था। वे संख्या में 35/40 थे और एस॰ एल॰ आर॰, स्टेनगन, कार्बाइन और पुलिस राइफल से लैस भी थे। चतरा से वरीय पुलिस अधिकारी घटनास्थल पर आए और गाँववालों से पता लगाया

जा सका था कि विगत 3/4 दिनों से एम॰ सी॰ सी॰ उग्रवादी क्षेत्र में घूम रहे थे और घटना की तिथि पर उन्हें प्रातः लगभग 8 बजे अथमपुर के किसी कौलेश्वर भुइयाँ के घर में देखा गया था। गाँववालों ने आगे बताया कि एम॰ सी॰ सी॰ के लोगों में से उन्होंने अजय यादव, नागदेव तुरी, कौलेश्वर भुइयाँ और पंकज गंझू उर्फ पंकजजी को पहचाना था। सूचक ने बताया कि नामित अभियुक्तगण, जो एम॰ सी॰ सी॰ के सदस्य थे, ने अपने सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में पूर्वोक्तानुसार एक कांस्टेबुल, एक होमगार्ड और चौकीदार के पुत्र की नृशंस हत्या की, सरकारी काम में बाधा डाली, पुलिस वाहन को जला दिया और बंदूक तथा कारतूस छीन लिया। अपराध करने के बाद जंगल और पहाड़ियों का लाभ लेते हुए एम॰ सी॰ सी॰ उग्रवादी घटनास्थल से भाग गए। सिमरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 85 वर्ष 1998 को उद्भुत करते हुए नामित व्यक्तियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147/148/149/307/302/353/435/379 के अधीन, आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन और सी॰ एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 17 (i) (ii) के अधीन अभिकथित अपराध के लिए एक मामला दर्ज किया गया था। अन्वेषण अधिकारी ने अन्वेषण के बाद केवल पाँच अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया और वे थेः लखन यादव, मुकेश यादव, नेपाली गंजू, कृष्णा गंजू अपीलार्थी सं॰ 1 और रामदेव महतो (अपीलार्थी सं॰ 2)।

5. अभिलेख की सुपुर्दगी के बाद, सत्र न्यायाधीश के आदेशों के अधीन मामला प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, चतरा के न्यायालय को अंतरित किया गया था। भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148, 307/149, 302/149, 353/149, 435/149, 379/149 के अधीन आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन और दांडिक विधि संशोधन अधिनियम की धारा 17 (i) (ii) के अधीन अभिकथित अपराधों के लिए उनके विरुद्ध आरोप विरचित करने के बाद अपीलार्थीगण सहित समस्त पाँच अभियुक्तगण का विचारण किया गया था। अभियुक्तगण ने निर्दोष होने का अभिवाक् किया और अपना विचारण कराए जाने का दावा किया।

6. अभियोजन ने कुल मिलाकर 13 गवाहों का परीक्षण किया। इसके अतिरिक्त, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्तगण का बयान दर्ज करने के बाद ब॰ सा॰ 1 लखन यादव, मामले का अभियुक्त को बचाव गवाह के रूप में साक्ष्य देने की अनुमति दी गयी थी। विचारण के बाद अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध किया गया था किन्तु दो अन्य अभियुक्तगण मुकेश यादव और नेपाली गंजू को अपर्याप्त साक्ष्य की दृष्टि में दोषमुक्त कर दिया गया था जबकि सह-अभियुक्त लखन यादव विचारण के दौरान फरार था।

7. अभियोजन ने उस पर हस्ताक्षर के साथ सूचक का लिखित बयान (छाया प्रतिलिपि) प्रदर्श P1A, औपचारिक प्राथमिकी (छाया प्रतिलिपि) प्रदर्श P2A, उस पर गवाहों के हस्ताक्षर के साथ दागे गए कारतूसों और अन्य वस्तुओं की अभिग्रहण सूची प्रदर्श P3, उस पर गवाहों के हस्ताक्षर के साथ मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट प्रदर्श P4A, प्रदर्श P5A और प्रदर्श P6A को सिद्ध किया। मृतकों के मृत शरीरों के चालानों को प्रदर्श P7A, P8A और P9A चिन्हित किया गया था। समस्त प्रदर्शों को बचाव पक्ष की आपत्ति के बिना सिद्ध किया गया था।

8. अ॰ सा॰ 1 किरण गोसाई और अ॰ सा॰ 2 राजेश गोसाई ने गोलीबारी जो लावालाँग के निकट दिनांक 24.11.1998 को हुई थी, के बारे में अपनी अनभिज्ञता अभिव्यक्त की और इस प्रकार उन्हें पक्षद्रोही घोषित किया गया था। उनके साक्ष्य से कुछ भी तात्विक नहीं निकाला जा सका था। इसी प्रकार, अ॰ सा॰ 6 ब्रजमोहन साव, अ॰ सा॰ 7 मदन साव, अ॰ सा॰ 8 रामजी साव, अ॰ सा॰ 9 हजारी प्रसाद साहू और अ॰ सा॰ 13 मार्कस तिर्के अभियोजन के प्रतिकूल थे और इसलिए उन्हें पक्षद्रोही घोषित किया गया था और उनसे वर्तमान मामला के लिए प्रासंगिक कुछ भी तात्विक नहीं पाया जा सका था।

9. मामले का अन्वेषण आरंभ में अ॰ सा॰ 4 पुलिस के एस॰ आई॰ बालानन्द सिंह द्वारा किया गया था जिन्होंने घटनास्थल का दौरा किया और मृतक की मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट और विभिन्न वस्तुओं की अभिग्रहण सूची को भी तैयार किया। तब अन्वेषण का प्रभार पुलिस निरीक्षक नवल किशोर सिंह को दिया गया था। उन्होंने अभियुक्तगण का परीक्षा पहचान परेड आयोजित किया था। अ॰ सा॰ 11 अशोक कुमार अंतिम अन्वेषण अधिकारी थे जिन्होंने अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप पत्र दाखिल किया था। अ॰ सा॰ 5 एस॰ आई॰ सरयू पंडित, सिमरिया पुलिस थाना के तत्कालीन प्रभारी अधिकारी, सूचक पुलिस अधिकारी था। उसके स्व-दर्ज बयान के आधार पर सिमरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 85/1998 दर्ज किया गया था और विधि को गतिमान किया गया था। यह उल्लिखित करना प्रासंगिक होगा कि अ॰ सा॰ 4 एस॰ आई॰ बालानन्द सिंह का बयान अ॰ सा॰ 12 के रूप में दोहराया गया था। अत: विचारण न्यायाधीश ने अ॰ सा॰ 12 के रूप में दर्ज उसके पश्चातवर्ती बयान को त्यक्त कर दिया था।

10. अ॰ सा॰ 3 ब्रज मोहन सिंह ने परिसाक्ष्य दिया कि दिनांक 24.11.1998 को वह सिमरिया पुलिस थाना की अधिकारिता के अंतर्गत लावालाँग पुलिस पिकेट पर ए॰ एस॰ आई॰ के रूप में पदस्थापित था जबकि प्रासंगिक समय पर सरयू पंडित सिमरिया पुलिस थाना के प्रभारी-अधिकारी के रूप में पदस्थापित था। उसने सिमरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 85 वर्ष 1998 को उद्‌भुत करने वाले सरयू पंडित के स्व-दर्ज बयान की पहचान की जिसे उस पर सूचक के हस्ताक्षरों प्रदर्श A और B के साथ प्रदर्श P/1 चिन्हित किया गया था। उसने औपचारिक प्राथमिकी प्रदर्श P/2 (छाया प्रतिलिपि) को सिद्ध किया। गवाह ने परिसाक्ष्य दिया कि ए॰ एस॰ आई॰ मिथिलेश कुमार झा को वहाँ छोड़ने के लिए और उसे पिकेट से अवमुक्त करने के लिए सूचक सरयू पंडित सशस्त्र पुलिस के साथ लावालाँग पुलिस पिकेट आया। तद्‌नुसार मिथिलेश कुमार झा को वहाँ छोड़ दिया गया और वह सूचक के साथ सिमरिया पुलिस थाना जाने के लिए पुलिस वाहन पर सवार हो गया। प्रात: लगभग 11 बजे, जब वे अथमपुर प्राथमिक विद्यालय पहुँचे, उसने गोली छूटने जैसी आवाज सुनी जो मजल लोडिंग बन्दूक से आती प्रतीत होती थी। वह सूचक के साथ धमाका का स्रोत पता लगाने वाहन से उतरा किन्तु वह विद्यालय के पीछे से और पहाड़ियों के बगल से पुलिस दल को लक्ष्य बनाने वाली भयंकर गोलीबारी से अचानक घिर गया और उनकी ओर से चली गोली से कांस्टेबुल 'वत्स' ने उपहति प्राप्त की। पोजीशन लेते हुए पुलिस दल ने प्रत्याक्रमण किया। किन्तु हमला का जवाब देने के लिए अपर्याप्त बल होने के कारण वह सूचक के साथ वाहन वहाँ छोड़कर सरक गया और बी॰ एम॰ पी॰ के नियंत्रण कक्ष को सूचित किया। वह पुन: पुलिस दल के साथ घटनास्थल पर वापस आया और होमगार्ड विनोद कुमार, कांस्टेबल 'वत्स' और चौकीदार के पुत्र चन्द्रा दुसाध के मृत शरीरों को पाया। उन तीनों की मृत्यु उग्रवादियों द्वारा दागी गयी गोलियों से हुई उपहतियों के कारण हुई थी। पुलिस वाहन में आग लगा दिया गया था जिससे लगभग 2 लाख रुपयों की धनीय क्षति कारित हुई। गवाह ने अंत में अभिसाक्ष्य दिया कि वह ऐसी गोलीबारी में अंतर्ग्रस्त उग्रवादियों में से किसी को भी पहचान नहीं सका था किन्तु उसने 'लाल सलाम जिंदाबाद' नारा सुनने की बात स्वीकार किया और इसलिए उसने उन्हें उग्रवादी कर संबोधित किया था।

11. अ॰ सा॰ 4 बालानन्द सिंह ने परिसाक्ष्य दिया कि दिनांक 24.11.1998 को वह सिमरिया पुलिस थाना में पुलिस के सब-इंस्पेक्टर के रूप में पदस्थापित था, उसे अथमपुर में एम॰ सी॰ सी॰ उग्रवादियों के साथ पुलिस के मुठभेड़ के बारे में कांस्टेबल शिशुपाल महतो द्वारा सूचित किया गया था। कांस्टेबल ने बताया कि उग्रवादियों ने सरकारी वाहन में आग लगा दिया था। गवाह ने वायरलेस पर वरीय पुलिस अधिकारी को सूचित किया। इसी बीच सूचक सरयू पंडित एक अन्य पुलिस अधिकारी के साथ पुलिस थाना आया। वे केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल के साथ अथमपुर अर्थात् घटनास्थल की ओर गए जहाँ सूचक

प्रभारी-अधिकारी सरयू पंडित ने अपना स्व-बयान दर्ज किया। एस॰ एल॰ आर॰ 303 राइफल के दागे गए कारतूसों, बी॰ एम॰ पी॰ का बैजों और पूर्णत: जली अवस्था में पुलिस वाहन के अवशेषों को अभिग्रहित किया गया था और अभिग्रहण सूची तैयार की गयी थी। मृतकों की मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार की गयी थी और तत्पश्चात् प्रभारी-अधिकारी-सह-सूचक सरयू पंडित द्वारा उसे मामले का अन्वेषण सौंपा गया था। इस कार्यभार के अनुसरण में उसने घटना स्थल का दौरा किया, सरकार की जली जीप को पाया और वहाँ बिखरे रक्त को पाया। उसने कांस्टेबलों और हवलदारों का बयान दर्ज किया जो वहाँ उपस्थित थे। कुछ समय बाद, वरीय अधिकारी के अनुदेशों के अधीन उसने मामले के अन्वेषण का प्रभार अशोक कुमार, एस॰ आई॰ (अ॰ सा॰ 11) को सौंप दिया। उसने अनेक दस्तावेजों को सिद्ध किया जिन्हें प्रदर्शों के रूप में चिन्हित किया गया था। उसने स्वीकार किया कि घटना, जो प्रात: लगभग 11 बजे हुई थी, के स्थल पर उसकी उपस्थिति में सूचक ने अपना स्व-बयान दर्ज किया था। उसने आगे स्वीकार किया कि उस दिन के बाद उसने घटनास्थल का दौरा नहीं किया था और उसने अन्वेषण के क्रम में किसी शौकत मियाँ को गिरफ्तार किया था।

12. सिमरिया पुलिस थाना के तत्कालीप पुलिस सब-इंस्पेक्टर अ॰ सा॰ 5 सरयू पंडित ने अभिसाक्ष्य दिया कि दिनांक 24.11.1998 को प्रात: लगभग 8 बजे वह ए॰ एस॰ आई॰ मिथिलेश कुमार झा, हवलदार कार्तिक हजाम और कई अन्य कांस्टेबलों के साथ लावालाँग पिकेट पर ए॰ एस॰ आई॰ मिथिलेश कुमार झा को छोड़ने लावालाँग गया था। गाँव के चौकीदार के पुत्र चन्द्रा दुसाध को मार्गदर्शन के लिए उनके द्वारा साथ लिया गया था। वह प्रात: लगभग 10.30 बजे लावालाँग पहुँचा और उसे अवमुक्त करते हुए ए॰ एस॰ आई॰ मिथिलेश कुमार झा छोड़ दिया और अपने साथ ब्रजमोहन सिंह को लेते हुए सिमरिया वापस चला गया। प्रात: लगभग 11 बजे जब वह अथमपुर विद्यालय के सामने पहुँचा, उसने पीछे से गोली चलने की आवाज सुनी और वाहन को रोक दिया। कुछ कांस्टेबल और हवलदार वाहन से उतरे और जब वे गोलीबारी के स्रोत के बारे में किसी महिला से पूछताछ कर रहे थे, उनका सामना अथमपुर प्राथमिक विद्यालय के बगल से और पहाड़ियों से भी हो रही भयंकर गोलीबारी से हुआ। इसी बीच उसने कांस्टेबल नागेन्द्र कुमार वत्स की चीख सुनी। परिणामस्वरुप, पुलिस दल के सदस्य ने वाहन छोड़ दिया और पोजीशन लेते हुए जवाबी गोलियाँ चलाने लगे। उग्रवादियों ने दोनों दिशाओं से गोलीबारी जारी रखी और होमगार्ड विनोद सिंह को भी गोली लगने से उपहति प्राप्त हुई जो चीखा। उग्रवादी लगभग 35/40 की संख्या में थे, एस॰ एल॰ आर॰, कार्बाइन, राइफल और लाइट मशीनगन से लैस थे और 'एम॰ सी॰ सी॰ जिन्दाबाद' के नारे लगा रहे थे। इसी बीच कांस्टेबल शिशुपालन महतो घटनास्थल से सरक गया। गवाह ने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि हमला का जवाब देने के लिए पुलिस बल की कमी समझते हुए वह 'विकास' बस पर चढ़ा और सिमरिया पुलिस थाना गया जहाँ उसने शिशुपाल महतो को पाया जो पहले ही वहाँ आ चुका था। उसने घटना के बारे में संसूचित किया और वरीय पुलिस अधिकारियों को सूचित किया और पुन: अन्य वरीय पुलिस अधिकारियों और के॰ रि॰ पु॰ ब॰ के साथ अथमपुर प्राथमिक विद्यालय पर, घटनास्थल पर वापस आया। जहाँ उसके वाहन से धुआँ निकलते देखा और इस कारण उपधारित किया कि उग्रवादियों द्वारा पुलिस के सरकारी वाहन को जला दिया गया था। चतरा से अन्य वरीय पुलिस अधिकारी भी वहाँ आए। उन्होंने पाया कि उग्रवादियों द्वारा की गयी अंधाधुन्ध गोली-बारी में कांस्टेबल नागेन्द्र कुमार वत्स, होमगार्ड विनोद सिंह और चन्द्र दुसाध की गोली मार कर हत्या कर दी गयी थी। गोली मार कर उनकी हत्या करने के बाद मृतकों पर क्रूरतापूर्वक कुल्हाड़ी से प्रहार किया गया था। उग्रवादियों ने उनदोनों के शरीरों से वर्दी उतार ली थी। वह पता लगा सका था कि उग्रवादियों का गैंग 30-35 सदस्यों से गठित था

और विदेशी भुइयाँ और कौलेश्वर भुइयाँ भी उनके साथ थे। उसने घटनास्थल पर अपना स्व॰ बयान दर्ज किया और इसे विचारण न्यायालय में सिद्ध किया। उसने आगे औपचारिक प्राथमिकी की पहचान की जिसे पहले ही सिद्ध किया जा चुका था। मृत शरीरों की मृत्यु समीक्षा उसके द्वारा तैयार की गयी थी जिन्हें सिद्ध किया गया था और उसके हस्ताक्षरों के अधीन प्रदर्श P/4, P/5 और P/6 चिन्हित किया गया था। मृत शरीरों को शव परीक्षण के लिए चतरा सदर अस्पताल भेजा गया था। विभिन्न हथियारों के अनेक दागे गए कारतूसों, रक्तरंजित मिट्टी और जले हुए पुलिस वाहन को अभिग्रहित किया गया था जिसकी अभिग्रहण सूची उसने अपनी लिखावट में तैयार की थी। उसके पहले वह पहले ही मृत शरीरों का चालान तैयार कर चुका था जिन्हें सिद्ध किया गया था और प्रदर्श P/7, P/8, और P/9 चिन्हित किया गया था। गवाह ने परिसाक्ष्य दिया कि मामले के अभियुक्तगण की परीक्षा पहचान परेड चतरा जेल में आयोजित की गयी थी जिसमें वह उपस्थित हुआ था जिसमें उसने अभियुक्तगण कृष्णा गंजू, लखन यादव और रामदेव महतो को पहचाना था। प्रतिपरीक्षण में गवाह ने अभिसाक्ष्य दिया कि अभिकथित घटना के एक माह पहले उसे सिमरिया पुलिस थाना पर पदस्थापित किया गया था और उसने एक दो बार लावालाँग का दौरा किया था किन्तु उसे ऐसे दौरों की तिथि और माह याद नहीं थी। लावालाँग बगरा से कच्ची सड़क द्वारा जुड़ा था जिसकी स्थिति अच्छी नहीं थी। उसने आगे परिसाक्ष्य दिया कि अथमपुर गाँव लावालाँग से लगभग 8 कि॰ मी॰ की दूरी पर अवस्थित था और सिमरिया पुलिस थाना अथमपुर से 15 कि॰ मी॰ की दूरी पर था। प्रासंगिक समय पर भयंकर गोलीबारी के कारण वह विद्यालय के बालकों और शिक्षकों को नहीं देख सका था और जब वह दोपहर लगभग 12 बजे वहाँ दूसरी बार आया, उसने विद्यालय में किसी को नहीं पाया। लगभग 50-100 गज की दूरी पर पश्चिमी हिस्से से गोली चल रही थी। उसने गोली चलाते हुए उग्रवादियों को देखने का दावा किया किन्तु स्वीकार किया कि वह उनमें से किसी को पहले से नहीं पहचानता था। घटना के दिन घटनास्थल से उग्रवादियों में से किसी को पकड़ा नहीं जा सका था। दिनांक 15.1.2001 को दंडाधिकारी श्री बी॰ शुक्ला की उपस्थिति में परीक्षा पहचान परेड आयोजित की गयी थी और उसने 50-51 व्यक्तियों में से संदिग्धों को पहचाना था। संदिग्धों की परीक्षा पहचान परेड में वह चालक और कांस्टेबल कंचन रजक जिसने दोषियों की पहचान की थी, उपस्थित थे। उसने इस सुझाव से इंकार किया कि अपीलार्थीगण, जिनको उसने परीक्षा पहचान परेड में पहचाना था, को उसे जेल के फाटक पर ही दिखाया गया था।

13. अ॰ सा॰ 10 नवल किशोर सिंह दूसरा अन्वेषण अधिकारी था जिसने अ॰ सा॰ 4 से इस मामले के अन्वेषण का प्रभार लिया था जब उसने दिनांक 27.11.2001 को सिमरिया पुलिस थाना के प्रभारी-अधिकारी का पद ग्रहण किया था। कैदियों नेपाली गंझू, कृष्णा गंजू, लखन यादव, मुकेश यादव और रामदेव महतो के संबंध में परीक्षा पहचान परेड संचालित किया गया था जिसमें गवाह अर्थात् कांस्टेबल 220 परमानंद प्रसाद, सब-इंस्पेक्टर सरयू पंडित, हवलदार कार्तिक हजाम और कंचन रजक उपस्थित हुए थे। उसने अभिपुष्ट करते हुए परिसाक्ष्य दिया कि उक्त परीक्षा पहचान परेड में सरयु पंडित ने अभियुक्तगण लखन यादव, कृष्णा गंझू और रामदेव महतो को पहचाना था और अन्वेषण के बाद अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध अन्वेषण लंबित रखते हुए भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 147/148/302/353/435/307/379 सह-पठित 149 के अधीन, आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन और सी॰ एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 17(i)(ii) के अधीन लखन यादव, मुकेश यादव, कृष्णा गंझू, नेपाली गंझू और रामदेव महतो के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया था। उसने घटनास्थल का दौरा और प्रभार लेने के बाद गवाहों रामजी प्रसाद, ब्रजमोहन साव, मदन साव के बयानों को दर्ज करना स्वीकार किया। परीक्षा पहचान परेड दंडाधिकारी श्री बी॰ शुक्ला की उपस्थिति में संचालित की गयी थी और प्रासंगिक समय पर उसने जेल में प्रवेश नहीं किया

था। उसने दिनांक 5.2.1999 को अन्वेषण के क्रम में अभियुक्तगण राजेन्द्र यादव और देवकी यादव को गिरफ्तार किया था और दिनांक 6.2.1999 को उनको सी॰ जे॰ एम॰ के न्यायालय को अग्रसारित किया था। उन्हें इस गोपनीय सूचना के आधार पर गिरफ्तार किया गया था कि अभिकथित घटना, जो अथमपुर प्राथमिक विद्यालय के निकट घटित हुई थी, के समय उन्हें देखा गया था। निरीक्षण नोट प्राप्त करने के बाद उसने भा॰ दं॰ सं॰ की अनेक धाराओं के अधीन और सी॰ एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 17 (i) (ii) के अधीन भी राजेन्द्र यादव, देवकी यादव, गोविन्द यादव और शौकत मियाँ के विरुद्ध आरोप पत्र दाखिल किया। उसने स्वीकार किया कि इन चार अभियुक्तगण को प्राथमिकी में नामित नहीं किया गया था और देवकी यादव और राजेन्द्र यादव की गिरफ्तारी के पहले सी॰ जे॰ एम॰ के न्यायालय से कोई आदेशिका प्राप्त नहीं की थी और उनकी गिरफ्तारी के पहले कोई साक्ष्य एकत्रित नहीं किया जा सका था।

14. अभियोजन की ओर से समस्त 13 गवाहों के परीक्षण के बाद, समस्त पाँच अभियुक्तगण मुकेश यादव, कृष्णा गंझू (अपीलार्थी सं॰ 1), नेपाली गंझू, रामदेव महतो (अपीलार्थी सं॰ 2) और लखन यादव का परीक्षण किया गया था और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन उनके बयानों को दर्ज किया गया था। उनमें से प्रत्येक का सामना विचारण के क्रम में संग्रहित सामग्रियों से करवाया गया था जिसके प्रति उन्होंने व्यक्तिगत रूप से अपने दोष से इंकार किया था इस मामले के अभियुक्त ब॰ सा॰ 1 लखन यादव को अपना साक्ष्य देने की अनुमति दी गयी थी जिसने अभिसाक्ष्य दिया कि वह अन्य अभियुक्तगण के साथ अभियुक्त है। उसे उसके घर से गिरफ्तार किया गया था और तीन दिनों तक अन्य के साथ पुलिस थाना में बंद रखा गया था जहाँ उनका फोटोग्राफ लिया गया था। उन्हें एस॰ पी॰ चतरा के कार्यालय ले जाया गया था। वर्तमान मामले में उसका रिमांड किया गया था और इस प्रकार उसे जेल भेज दिया गया था। उसे उसके पहले लिए गए फोटोग्राफ के आधार पर पहचाना गया था जिसके प्रति उसने किसी विजय गिरि द्वारा सम्यक रूप से ड्राफ्ट किया गया आवेदन समस्त अभियुक्तगण के हस्ताक्षरों के साथ भेजा था। उसने उक्त आवेदन को प्रमाणित किया जिसे प्रदर्श A/5 के तौर पर चिन्हित किया गया था। प्रति परीक्षा में, साक्षी ने अभिसाक्ष्य दिया कि फोटोग्राफर द्वारा अभियुक्तों के पृथक-पृथक तस्वीरें ली गई थी। किन्तु वह फोटोग्राफर को नहीं जानता था। उसे पुलिस वाहन में चतरा ले जाया गया था। अभियुक्त के गवाह ने अभिपुष्ट किया कि उसने फोटोग्राफर द्वारा ऐसे फोटोग्राफों को लिए जाने के बारे में दंडाधिकारी से शिकायत नहीं किया था। उसने अनभिज्ञता अभिव्यक्त की कि किस मामला में विजय गिरि को जेल में रखा गया था।

15. सिद्धदोषों/अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वर्तमान मामला विरल से विरलतम मामलों में नहीं आता था जो मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में अपीलार्थीगण को मृत्युदंड जैसा अत्यधिक दंड दिए जाने की मांग करता हो। अभियोजन का मामला यह था कि दो दिशाओं से 35/40 उग्रवादियों (एम॰ सी॰ सी॰) द्वारा पुलिस दल पर हमला किया गया था और गोलीबारी का जवाब दिया गया था, किन्तु गोलीबारी में एक कांस्टेबल, एक होमगार्ड और गाँव के चौकीदार के पुत्र ने उपहतियाँ प्राप्त की थी जिनकी बाद में मृत्यु हो गयी थी। आरम्भ में गवाहों में से किसी ने भी पुलिस दल पर गोली बरसाने में लगे एम॰ सी॰ सी॰ उग्रवादियों में से किसी को पहचानने का दावा नहीं किया था। सूचक द्वारा यह स्वीकार किया गया था कि कुछ कांस्टेबलों/हवलदारों को भगवान की दया पर छोड़ते हुए घटनास्थल से एक अन्य पुलिस अधिकारी के साथ वह सरक गया था और जब वह अतिरिक्त पुलिसबल के साथ वापस आया, सूचक ने पुलिस वाहन को जला हुआ, उक्त वाहन से धुआँ निकलते हुए और तीन मृत शरीरों को पाया। अन्वेषण के क्रम में कुछ निर्दोष व्यक्तियों को पकड़ा गया था, चतरा सब-जेल में टी॰ आई॰ पी॰ पर रखा गया था और यह कथन किया गया था कि अपीलार्थीगण और ब॰ सा॰ 1 लखन यादव को केवल सूचक अ॰ सा॰ 5 सरयू पंडित द्वारा और न कि किसी अन्य द्वारा पहचाना

गया था। विचारण न्यायाधीश के संप्रेक्षण, जैसा निर्णय के पैराग्राफ सं॰ 7 में अंतर्विष्ट है, की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए यह कथन किया गया था कि केवल अभियोजन को ज्ञात कारणों से इस मामले में कई महत्वपूर्ण गवाहों को और दस्तावेजों को प्रस्तुत नहीं किया जा सका था। स्वीकृत रूप से, विदेशी भुइयाँ, अजय यादव, कौलेश्वर भुइयाँ, पंकज गंझू के विरुद्ध अभियुक्त के तौर पर नामित और 35/40 अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध मामला संस्थापित किया गया था किन्तु नामित अभियुक्तगण में से किसी का विचारण नहीं किया जा सका था। अभियोजन द्वारा प्रस्तुत घटना का तरीका, जिसमें एक कांस्टेबल, एक होमगार्ड और गाँव के चौकीदार की मृत्यु उपहतियों के फलस्वरूप हो गयी थी, से इंकार नहीं किया गया है किन्तु अभिकथित अपराध में अपीलार्थीगण की सह-अपराधिता से इंकार किया गया है। परीक्षा पहचान परेड में सूचक अ॰ सा॰ 5 द्वारा उनको पहचाने जाने को छोड़ कर अपीलार्थीगण के विरुद्ध कोई विधिक साक्ष्य नहीं है और वह भी अभिकथित अपराध में उनके प्रत्यक्ष कृत्य को विनिर्दिष्ट किए बिना। दंडाधिकारी, जिनकी उपस्थिति में, परीक्षा पहचान परेड किया गया था, विचारण न्यायालय के समक्ष कटघरे में उपस्थित नहीं हुए जिसने अपीलार्थीगण पर प्रतिकुल प्रभाव कारित किया और उस तरीके से अपीलार्थीगण के विरुद्ध अभिकथित आरोप सिद्ध नहीं किया जा सका था। फिर भी, उनका मामला विरल मामला में विरलतम की श्रेणी में लिया गया था और सुनिश्चित सिद्धान्तों के विपरीत मृत्युदंड अधिनिर्णीत किया गया था, जो अपील को अनुज्ञात करते हुए हस्तक्षेप करने की अपेक्षा करता है और कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 366 (i) के अधीन मृत्यु दण्डादेश संदर्भ को इस न्यायालय की सहमति की आवश्यकता नहीं है, अत: अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि अपास्त की जा सकती है और उनको आजाद किया जा सकता है।

16. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों की संपूर्णता को ध्यान में रखते हुए हम पाते हैं कि अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि मुख्यत: अ॰ सा॰ 3 ब्रजमोहन सिंह, अ॰ सा॰ 4 बालानन्द सिंह और अ॰ सा॰ 5 सरयू पंडित, जो सबके सब घटना के प्रासंगिक समय पर सिमरिया पुलिस थाना में पदस्थापित थे, के बयानों पर आधारित है। वे घटना देखने के बारे में संगत है। अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 5 ने एम॰ सी॰ सी॰ उग्रवादियों द्वारा की गयी अंधाधुंध गोलीबारी का सामना करने की बात को स्वीकार किया। अभियोजन की ओर से प्रस्तुत गवाह घटना के तरीका के बारे में संगत थे और उन्होंने उनके द्वारा लगाए गए नारों से पहचाना कि वे उग्रवादी थे जिनकी संख्या लगभग 35-40 थी और वे 'एम॰ सी॰ सी॰ जिन्दाबाद' और 'लाल सलाम' का नारा लगा रहे थे। उन्हें पुलिस दल पर घात लगाकर हमला करने, अंधाधुंध गोलीबारी करने और पुलिस वाहन में आग लगाने और तद्द्वारा एक कांस्टेबल, एक होमगार्ड और गाँव के चौकीदार के निर्दोष पुत्र की हत्या करने के उनकी आपराधिक कार्य प्रणाली द्वारा भी पहचाना गया था। एम॰ सी॰ सी॰ उग्रवादियों ने न केवल उनकी हत्या की बल्कि मृतकों में से दो के कब्जा से वर्दी और राइफल हटाने के बाद कुल्हाड़ी द्वारा उनके शरीर को काटने की अत्यधिक क्रूरता का प्रदर्शन भी किया। उनका शव परीक्षण रिपोर्ट पीड़ितों के विरुद्ध उनकी अत्यन्त क्रूरतापूर्ण रवैया भी दर्शाता है।

17. जहाँ तक अपीलार्थीगण कृष्ण गंझू और रामदेव महतो की सह-अपराधिता का संबंध है, हम पाते हैं कि इन अपीलार्थीगण को अन्वेषण के दौरान गिरफ्तार किया गया था और चतरा जेल में रखा गया था। हम पाते हैं कि चूँकि सिमरिया पुलिस थाना का तत्कालीन प्रभारी अधिकारी अ॰ सा॰ 5 सरयू पंडित ने जो पुलिस जीप में पुलिस दल का मुखिया था, दो दिशाओं से एम॰ सी॰ सी॰ उग्रवादियों द्वारा की जा रही अंधाधुंध गोलीबारी का सामना किया, जैसा उसके स्व-बयान में दावा किया गया है, ने घटना स्थल पर समय के प्रथम बिन्दु पर दर्ज किया कि वे सेना के हरे रंग की वर्दी में थे, स्टेनगन, सेल्फ लोडिंग राइफल, कार्बाइन और पुलिस राइफल से लैस थे, और इस प्रकार हमारे पास विश्वास करने का कारण है कि उसे उनको पास से देखने का अवसर मिला था, अत: संदिग्धों की परीक्षा पहचान परेड में पहचान करने के लिए अ॰ सा॰ 5 सरयू पंडित सक्षम गवाह था। परीक्षा पहचान परेड दंडाधिकारी बी॰ शुक्ला की उपस्थिति में की गयी थी और सारी औपचारिकताओं को पूरा करते हुए अ॰ सा॰ 5 ने चतरा जेल में रखे

गए 50-51 कैदियों में से अपीलार्थीगण कृष्णा गंझू, राम देव गंझू और लखन यादव को पहचाना था। अपीलार्थीगण की ऐसी पहचान को असाधारण अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है। गवाह, जिसने आरंभ में जवाबी गोलीबारी में भाग लिया था, के पास अत्यधिक निकटता से उग्रवादियों के रंग रूप को देखने का पर्याप्त अवसर था। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 6 के स्मरण में उनके चेहरों की छवि बैठ गयी होगी और अपीलार्थीगण की पहचान में किसी प्रकार की गलती करने का उसे कोई अवसर नहीं था। सूचक अ॰ सा॰ 5, जिसने दो दिशाओं से उग्रवादियों द्वारा की जा रही गोलीबारी के आघात/सदमा का अनुभव किया था, द्वारा अपीलार्थीगण को झूठा फँसाने के लिए बचाव पक्ष की ओर से कोई भी कारण नहीं दिया गया जा सका था। किन्तु स्वीकृत रूप से, टी॰ आई॰ पी॰ चार्ट सिद्ध नहीं किया गया और न ही दंडाधिकारी, जिनकी उपस्थिति में टी॰ आई॰ पी॰ की गयी थी, को कटघरे में प्रस्तुत किया जा सका था। फिर भी, हमारा दृढ़ मत है कि अपीलार्थीगण के प्रतिवाद पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है।

18. मुल्ला एवं एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2010)3 Supreme Court Cases 508 में प्रकाशित मामले में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया:–

''परीक्षा पहचान का साक्ष्य धारा 9 साक्ष्य अधिनियम, 1872 के अधीन अनुज्ञेय है। पुलिस द्वारा अन्वेषण के चरण पर पहचान परेड करवाया जाता है। यह प्रश्न कि क्या गवाह ने अन्वेषण के दौरान अभियुक्त को पहचाना है या नहीं, ऐसा प्रश्न नहीं है जो स्वयं में विचारण में प्रासंगिक है। पहचान के संबंध में वास्तविक साक्ष्य वह है जो गवाह द्वारा न्यायालय में दिया गया है। अभियुक्त को इस मांग कि पहचान परेड विचारण में जाँच पर अथवा इसके पहले किया जाना चाहिए के लिए हकदार बनाता हुआ दं० प्र० सं० में कोई प्रावधान नहीं है। यह तथ्य कि एक खास गवाह पहचान परेड में अभियुक्त को पहचानने में सक्षम रहा है, केवल ऐसी परिस्थिति है जो न्यायालय में किए गए पहचान को पुष्ट करती है।

परीक्षा पहचान परेड करने में विफलता न्यायालय में किए गए पहचान के साक्ष्य को अननुज्ञेय नहीं बनाती है बल्कि यह विधि में अनुज्ञेय है। जहाँ गवाह द्वारा अभियुक्त की पहचान पहले-पहल न्यायालय में की गयी है, इसे दोषसिद्धि का आधार निर्मित नहीं करना चाहिए।

पहचान परीक्षाएँ सारवान साक्ष्य गठित नहीं करती है। उनका प्राथमिक उद्देश्य अन्वेषण एजेन्सी को इस आश्वासन के साथ मदद करना है कि अपराध में अन्वेषण सही दिशा में चल रहा है। केवल न्यायालय में बयान को पुष्ट करने के लिए पहचान का उपयोग किया जा सकता है।

पहचान परेड कराने की आवश्यकता केवल तब ही उत्पन्न हो सकती है जब गवाह पहले से ही अभियुक्तगण को नहीं जानते थे। परीक्षा पहचान परेड का संपूर्ण विचार यह है कि गवाहों, जिन्होंने घटना के समय दोषियों को देखने का दावा किया है, को उन्हें बिना किसी मदद अथवा किसी अन्य स्रोत के बिना अन्य व्यक्तियों के बीच से पहचानना है। परीक्षा उनकी सत्यता की जाँच के लिए की जाती है। दूसरे शब्दों में, अन्वेषण के चरण पर पहचान परेड करने का मुख्य लक्ष्य प्रथम अंकित प्रभाव के आधार पर गवाहों की स्मरण शक्ति की परीक्षा करना है और अभियोजन को यह फैसला करने के लिए सक्षम बनाना है कि क्या उन सबों को अथवा उनमें से किसी को अपराध के चश्मदीद गवाह के रूप में उद्धृत किया जा सकता है।

उक्त प्रतिपादना की दृष्टि में, परीक्षा पहचान परेड में अपीलार्थीगण की पहचान का संपोषक मूल्य था जिसे तब सिद्ध किया जा सकता था जब दोनों अपीलार्थीगण को विचारण के दौरान न्यायालय में अ॰

सा॰ 5 सरयू पंडित द्वारा पहचाना गया था। यह उल्लिखित करना प्रासंगिक होगा कि सह-अपराधी लखन यादव, जिसे भी परीक्षा पहचान परेड में पहचाना गया था, ने ऐसी परीक्षा की सत्यता के प्रति न्यायालय में आवेदन देकर आपत्ति जतायी थी क्योंकि उसका फोटोग्राफ पुलिस थाना में लिया गया था किन्तु वह ऐसे अभिकथन को सिद्ध करने में विफल रहा और यह कि विचारण के दौरान वह अभिरक्षा से भाग गया था। अत: हम पाते हैं और अभिनिर्धारित करते हैं कि विचारण न्यायालय के समक्ष अपीलार्थीगण की पहचान किसी दुर्बलता से रहित थी और इस प्रकार ऐसी पहचान पर आधारित अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

19. अभिलेख पर लाए गए तथ्यों, जैसा अभियोजन गवाहों द्वारा अपने सारवान साक्ष्य में संगत रूप से बताया गया है, की संपूर्णता पर विचार करते हुए हम पाते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 307/149, 302/149, 353/149, 435/149 के अधीन और धारा 379/149 के अधीन और आयुध अधिनियम की धारा 27 (i) के अधीन अपीलार्थीगण में से प्रत्येक के विरुद्ध आरोप सिद्ध करने में सक्षम हो सकता था। प्रत्येक आधार पर अपीलार्थीगण को अधिनिर्णीत पर्याप्त दंड के अतिरिक्त हम पाते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 302/149 के अधीन जिसके द्वारा वर्तमान मामले को विरल मामले से विरलतम मामले में अभिनिर्धारित करते हुए उनमें से प्रत्येक को मृत्युदंड दिया गया था, उनकी दोषसिद्धि के लिए अपीलार्थीगण को दिया गया दंड सही नहीं है और हम विचारण न्यायालय के ऐसे दृष्टिकोण से सहमत नहीं हैं।

20. मुल्ला मामला (ऊपर) में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया,

''यह सुनिश्चित विधिक स्थिति है कि दंड अपराध के अनुरूप होना चाहिए। दांडिकता की डिग्री और ऐसा दंड अधिरोपित करने की वांछनीयता पर निर्भर करते हुए समुचित दंड अधिरोपित करना न्यायालय का कर्तव्य है। सामाजिक आवश्यकता के कदम के रूप में और अन्य संभावित अपराधियों को निरुत्साहित करने वाले साधन के रूप में भी दंड अपराध के समतुल्य समुचित होना चाहिए।

पंछी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य में यह न्यायालय ''जब वैकल्पिक विकल्प पुरोबंधित है'' पर भी विचार करता है जो निम्नलिखित शब्दों में है (SCC पृष्ठ 182 पैरा 16)

"16. जब इस न्यायालय की संवैधानिक पीठ ने, बहुमत द्वारा, बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य में मृत्युदंड की संवैधानिक वैधता को मान्य ठहराया, इस न्यायालय ने यह कहने की विशेष सावधानी बरती कि हत्या के अपराध के लिए मृत्युदंड सामान्यतः अधिनिर्णीत नहीं किया जाएगा और इसे विरल मामलों में विरलतम तक ही सीमित रखना होगा जब वैकल्पिक विकल्प पुरोबंधित कर दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, पूर्वोक्त मामलों, जिनमें कमतर दंड, किसी भी कारणवश, पूर्णतः अपर्याप्त होगा, को छोड़कर समस्त मामलों में संवैधानिक पीठ ने मृत्यु दंडादेश वैध नहीं पाया था। मच्छी सिंह बनाम पंजाब राज्य में इस न्यायालय की त्रि-न्यायाधीश वाली पीठ ने बचन सिंह मामले में निर्णायाधार का अनुसरण करते हुए कतिपय मार्गदर्शक सिद्धान्तों को अधिकथित किया जिसमें से निम्नलिखित वर्तमान मामले में प्रासंगिक हैं: (SCC पृष्ठ 489 पैरा 38)"

21. हम इन तथ्यों से पाते हैं कि अपीलार्थीगण को सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में हत्या के आरोप अर्थात् भारतीय दंड संहिता की धारा 302/149 के अधीन इसे छोड़कर कि उनदोनों को एम॰ सी॰ सी॰ उग्रवादियों के 35-40 सदस्यों में से पहचाना गया था जो कतिपय मंशा के साथ अंधाधुन्ध गोलीबारी कर रहे थे और यह कि अत्यधिक दंड की मांग करना अपीलार्थीगण का व्यक्तिगत कृत्य नहीं था, उनमें से किसी के प्रति प्रत्यक्ष कृत्य को विनिर्दिष्ट किए बिना दोषसिद्ध किया गया था। मामले के उस दृष्टिकोण

में, हम वर्तमान मामले को विरल मामला में विरलतम के अधीन श्रेणीकृत नहीं करते हैं ताकि उनमें से प्रत्येक को मृत्युदंड दिया जाए।

22. परिणामस्वरुप, भारतीय दंड संहिता और आयुध अधिनियम की विभिन्न धाराओं के अधीन अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि को उनमें प्रत्येक आधार पर उनको अधिनिर्णीत पर्याप्त दंड के साथ मान्य ठहराते हुए हम धारा 302/149 के अधीन उनकी दोषसिद्धि के लिए अपीलार्थीगण में से प्रत्येक के मृत्यु दंड को परिवर्तित करते हैं और उनको कठोर आजीवन कारावास अधिनिर्णीत करते हैं। तद्नुसार, मृत्युदंड की पुष्टि के लिए अपीलार्थीगण के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 366 (i) के अधीन मृत्यु दण्डादेश संदर्भ अनुदत्त नहीं किया जाता है।

जे॰ सी॰ एस॰ रावत, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

हैदर अली अंसारी एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य

Cri. Appeal No. 1680 of 2004. Decided on 1st September, 2010.

सत्र विचारण सं॰ 196 वर्ष 1999 और पूरक सत्र विचारण सं॰ 98 वर्ष 2003 में श्री जयप्रकाश नारायण पांडे, अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ 2 बोकारो द्वारा पारित दिनांक 14.9.2004 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 16.9.2004 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 323/34, 436 एवं 147—क्षति, अग्नि द्वारा नुकसान पहुँचाना और रिष्टि एवं बलवा–दोषसिद्धि एवं दंडादेश–चिकित्सीय रिपोर्ट सिद्ध करने के लिए किसी डॉक्टर का परीक्षण नहीं किया गया–अग्नि द्वारा घरेलू वस्तुओं को नुकसान का अभिकथन अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य द्वारा सम्पुष्ट नहीं किया गया–अभियोजन गवाहों के साक्ष्यों में महत्वपूर्ण विरोधाभास जिसके लिए युक्तियुक्त स्पष्टीकरण देने में अभियोजन सक्षम नहीं हुआ है–धारा 436 के अधीन अपराध के लिए साक्ष्य नहीं पाया गया–किन्तु धाराओं 147 और 323 के अधीन अपराधों के संबंध में गवाहों के साक्ष्य संगति में है और अभियुक्त/अपीलार्थी के दोष के युक्तियुक्त निष्कर्ष की ओर ले जाते हैं–स्वतंत्र गवाहों के गैर-परीक्षण को अभियोजन द्वारा स्पष्ट किया गया–अन्य गवाहों के साक्ष्य को मात्र इसलिए अनदेखा नहीं किया जा सकता है कि वे सूचक के सगे संबंधी है–घटना की उत्पत्ति स्थापित–अग्नि द्वारा रिष्टि का अपराध कारित करने के लिए समस्त अपीलार्थीगण के बीच पूर्वचिंतन अथवा मतैक्य नहीं था–दोषसिद्धि एवं दंडादेश परिवर्तित। (पैराएँ 8 से 14)

अधिवक्तागण.–M/s M.S. Chhabra, B.K. Sinha, For the Appellants; Mr. Amaresh Kumar, For the State; Mr. Sanjay Kumar, For the Informant.

न्यायालय द्वारा.–अपीलार्थीगण के अधिवक्ता एवं राज्य के अधिवक्ता एवं सूचक के अधिवक्ता को सुना गया।

2. इस मामले में अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 147 एवं 436/34 के अधीन अपराधों के लिए विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया गया था। अपीलार्थीगण बरकत अंसारी, बसीर अंसारी और मुमताज अंसारी को भारतीय दंड संहिता की धारा 323/34 के अधीन अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया गया है। दोषसिद्ध किए जाने पर अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धारा 436 के अधीन अपराध के लिए पाँच वर्षों, धारा 147 के अधीन अपराध के लिए एक वर्ष और धारा 323 के अधीन अपराध के लिए छह माह का कठोर कारावास भुगतने का दंड दिया गया था।

3. संक्षेप में, अभियोजन का मामला यह है कि दिनांक 1.4.1995 की सुबह बशीर अंसारी ने अपने घर के सामने सूचक की भतीजी द्वारा बंदागोभी के छिलकों को फेंके जाने पर आपत्ति जतायी। यह सूचक और अपीलार्थी बशीर अंसारी के बीच झगड़े की ओर ले गया जिसमें अन्य सह-अपीलार्थीगण भी तुरन्त शामिल हो गए और यह अभिकथन किया गया है कि अपीलार्थीगण ने गाली-गलौज और मार-पीट किया था और कम्पाउन्ड के भीतर अवस्थित सूचक की झोपड़ी में आग लगा दिया था। अभियुक्त अपीलार्थी बरकत अंसारी के विरुद्ध सूचक की बहन नसीबन बीबी पर लाठी से प्रहार करने का और अपीलार्थी बशीर अंसारी के विरुद्ध सूचक की भाभी पर प्रहार करने का विनिर्दिष्ट अभिकथन प्राथमिकी में किया गया है। ऐसे ही अभिकथन सह-सिद्धदोष मुमताज अंसारी के विरुद्ध उसकी बड़ी भाभी पर प्रहार करने का किया गया है।

अभिकथित घटना के संबंध में भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 147, 323, 435, 448, 337 एवं 379 के अधीन अपराधों के लिए पुलिस थाना में मामला चास पी॰ एस॰ केस सं॰ 58 वर्ष 1995 दर्ज किया गया था।

विचारण की समाप्ति पर, अन्वेषण अधिकारी ने भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 147, 323, 435/34, 448, 337 एवं 379 के अधीन अपराधों के लिए अभियुक्तगण के विचारण की अनुशंसा करते हुए आरोप-पत्र दाखिल किया। अवर न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त अपराधों का संज्ञान लिए जाने पर वर्तमान अपीलार्थीगण के विरुद्ध उक्त अपराधों के लिए दंडाधिकारी के समक्ष विचारण आरंभ किया गया।

यह प्रतीत होता है कि विचारण की समाप्ति पर, दंडाधिकारी ने संप्रेक्षण दर्ज किया कि अभियुक्तगण के विरुद्ध धारा 436 के अधीन प्रथम दृष्टया अपराध बनता है और ऐसे संप्रेक्षण पर दंडाधिकारी ने अभियुक्तगण का मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द कर दिया। तत्पश्चात, भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 147, 379 एवं 436/34 के अधीन अपराधों के लिए आरोपों पर वर्तमान अपीलार्थीगण के विरुद्ध और इसके अतिरिक्त भारतीय दंड संहिता की धारा 323/34 के अधीन अपीलार्थी सं॰ 3, 5 और 6 के विरुद्ध विचारण आरंभ किया गया था।

4. मामले के अन्वेषण अधिकारी सहित मामले के सूचक और सूचक के परिवार का सदस्य होने के नाते सात गवाहों का परीक्षण अभियोजन द्वारा किया गया था।

5. यह उल्लिखित करना आवश्यक है कि प्रहार और प्रहार के परिणामस्वरुप पीड़ितों द्वारा पायी गयी उपहति का अभिकथन अभियोजन मामले में किया गया था, किन्तु चिकित्सा रिपोर्टों को सिद्ध करने के लिए किसी डॉक्टर का परीक्षण नहीं किया गया था। इसके बजाय एक औपचारिक गवाह, जो एडवोकेट क्लर्क है, ने औपचारिक साक्ष्य के रूप में उपहति रिपोर्टों को प्रस्तुत किया था।

6. अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों पर विचार करने पर, विचारण न्यायालय ने अपना निष्कर्ष दर्ज किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 436/34 सह-पठित धारा 147 के अधीन अपराध सभी अभियुक्तगण के विरुद्ध बनता है और इसके अतिरिक्त अपीलार्थी सं॰ 3, 5 एवं 6 के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 323/34 के अधीन अपराध बनता है।

7. पूर्वोक्त तरीके से दोषसिद्धि का निर्णय दर्ज करने पर, विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 436/34 के अधीन अपराध के लिए पाँच वर्षों का कारावास भुगतने का दंड और पूर्वोल्लिखित अन्य दंडों को दिया।

8. अपीलार्थीगण ने निम्नलिखित आधारों पर दोषसिद्धि के आक्षेपित आदेश को चुनौती दी है:–

(i) भारतीय दंड संहिता की धारा 436 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि पूर्णतः भ्रामक है और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के भार के विरुद्ध है। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य को निर्दिष्ट करते हुए इंगित करते है कि घटना स्थल का निरीक्षण करने पर अन्वेषण अधिकारी ने पाया था कि झोपड़ी, जिसे जला दिए जाने का अभिकथन किया गया था, का उपयोग सूचक अथवा सूचक के परिवार के किसी सदस्य द्वारा रहने के लिए अथवा सामग्रियों के भंडारन के लिए नहीं किया जाता था। इसके विपरीत, झोपड़ी, जो उसी कम्पाउन्ड के भीतर अवस्थित थी जिसमें सूचक और अभियुक्तगण के घर अवस्थित थे, खाली पड़ी झोपड़ी थी। इस तथ्य को अन्वेषण अधिकारी द्वारा तैयार की गयी अभिग्रहण सूची द्वारा आगे सम्पुष्ट किया गया है जिसने उपदर्शित किया था कि पुआल एवं बाँस, जिनसे झोपड़ी का निर्माण किया गया था, के अवशेष एकमात्र ऐसी सामग्रियाँ थी जो घटना स्थल पर पायी गयी थी।

अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता स्पष्ट करते हैं कि यह तथ्य कि झोपड़ी में कोई संपत्ति नहीं रखी हुई थी और न हीं रहने के लिए झोपड़ी का इस्तेमाल किया जाता था, सूचक और उसके परिवार के सदस्यों के आचरण से संपुष्ट होता है कि इन गवाहों में से किसी ने आग-बुझाने का प्रयास नहीं किया था और सूचना मिलने पर जब घटना के अभिकथित समय के लगभग तीन घंटे बाद पुलिस घटनास्थल पर आयी थी, तब पुलिस ने आग बुझाया था। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, यह केवल यही उपदर्शित करता है कि सूचक और उसके परिवार के सदस्य आग बुझाने के लिए इच्छुक और चिंतित नहीं थे क्योंकि यह खाली झोपड़ी थी और इस प्रकार किसी संपत्ति का नुकसान नहीं हुआ था।

(ii) गवाहों के साक्ष्य के अनुसार भी घटना एकदम से हुई थी और अपीलार्थीगण में से कोई भी किसी हथियार से लैस नहीं था। इसके अतिरिक्त पक्षों के बीच कई वर्षों से भूमि विवाह लंबित पड़ा था और उनके बीच अनेक मुकदमे भी लंबित पड़े थे। ऐसे मुकदमों में से कुछ में, धारा 147 और 144 दं० प्र० सं० के अधीन कार्यवाही में निर्णय अपीलार्थीगण के पक्ष में गया था और ऐसे प्रतिकूल आदेशों के चलते दुर्भावना के कारण सूचक पक्ष ने अपीलार्थीगण को झूठे अभिकथनों पर फँसाया था।

(iii) इस स्वीकृत तथ्य के बावजूद कि घटना के समय और स्थल पर गाँव के केवल कुछ ही पड़ोसी उपस्थित थे, अभियोजन द्वारा किसी स्वतंत्र गवाह का परीक्षण नहीं किया गया है।

(iv) डॉक्टर, जिन्होंने तात्पर्यित रूप से उपहति रिपोर्टों को जारी किया था, के माध्यम से उपहति रिपोर्टों के प्रमाण की अनुपस्थिति में अपीलार्थी सं० 3, 5 और 6 के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन अपराध का निष्कर्ष बिल्कुल भ्रामक है।

(v) वर्तमान घटना वर्ष 1995 की है और विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 14.9.2004 को उनकी दोषसिद्धि की तिथि तक अपीलार्थीगण 15 वर्षों तक विचारण की कठोरता से जूझते रहे थे।

9. राज्य के विद्वान अधिवक्ता और सूचक के अधिवक्ता दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दंड के समर्थन में तर्क प्रस्तुत करेंगे।

सूचक के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि सूचक और अ॰ सा॰ 1, 3 और 4 सहित गवाहों के बयान उपदर्शित करेंगे कि झोपड़ी, जिसे जला दिया गया था, का उपयोग सूचक और उसके परिवार के सदस्यों द्वारा खाना पकाने के उद्देश्य से किया जाता था और इसलिए ऐसे साक्ष्य के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 436 के अधीन अपराध बनता है।

जहाँ तक धारा 323 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि का संबंध है, विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते है कि धारा 323 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपराध के लिए किसी उपहति रिपोर्ट का प्रमाण जरुरी नहीं है।

जहाँ तक धारा 147 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपराध का संबंध है, यह गवाहों के साक्ष्य में है कि वर्तमान अपीलार्थीगण ने सूचक के घर में गैरकानूनी रूप से अतिचार किया था और विध्वंस का कृत्य किया था।

10. मैंने गवाहों के साक्ष्यों और आक्षेपित दोषसिद्धि के निर्णय और अवर न्यायालय द्वारा पारित दंड का परिशीलन किया है। यह प्रतीत होता है कि यद्यपि सूचक और उसके परिवार के सदस्य दावा करेंगे कि झोपड़ी जिसे जला दिया गया था, का उपयोग खाना पकाने के लिए होता था किन्तु अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि उसने खाना पकाने के उद्देश्य से उपयोग किया जाने वाला ऐसा कोई बर्तन अथवा वेसेल नहीं पाया था और न हीं उसने घटनास्थल पर किसी मूल्य की ऐसी कोई संपत्ति पायी थी। इसके विपरीत, अन्वेषण अधिकारी का स्पष्ट तौर पर स्वीकृत बयान है कि उसने केवल भूसा और जलावन के जले अवशेषों को पाया था और न कि कोई अन्य सामग्री। यह अभियोजन गवाहों के साक्ष्यों में एक महत्वपूर्ण विरोधाभास प्रतीत होता है जिसके लिए अभियोजन कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण देने में विफल रहा है। इन तथ्यों से यह स्पष्ट है कि धारा 436 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपराध के लिए कोई साक्ष्य नहीं पाए जाने पर अन्वेषण अधिकारी ने भारतीय दंड संहिता की धारा 435 के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त/अपीलार्थीगण के विचारण की अनुशंसा करते हुए आरोप-पत्र दाखिल किया था। अवर न्यायालय के आक्षेपित निर्णय से यह प्रतीत होता है कि विचारण न्यायालय इस पहलू और अभियोजन गवाहों के साक्ष्यों में महत्वपूर्ण विरोधाभास का अधिमूल्यन करने में विफल रहा है और भारतीय दंड संहिता की धारा 436 के अधीन अपीलार्थीगण के विरुद्ध दोष का निष्कर्ष गलत प्रकार से दर्ज किया है।

11. जहाँ तक भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 147 और 323 के अधीन अपराधों का संबंध है, मैं पाता हूँ कि गवाहों के साक्ष्य संगति में हैं और पूर्वोक्त दोनों अपराधों के लिए अभियुक्त/अपीलार्थी के दोष के युक्तियुक्त निष्कर्ष की ओर ले जाते हैं।

12. यह सत्य है कि किसी स्वतंत्र गवाह का परीक्षण नहीं किया गया है किन्तु अभियोजन ने स्पष्ट किया है कि गवाहों में से कोई भी साक्ष्य देने आगे नहीं आया है। अन्य गवाहों, जिनका परीक्षण अभियोजन द्वारा किया गया है, के सूचक के परिवार के सदस्य होने के नाते उनके साक्ष्य को केवल इसलिए अनदेखा नहीं किया जा सकता है कि वे सूचक के अपने सगे-संबंधी है। घटना के समय और स्थल पर उनकी

उपस्थिति पर विवाद नहीं किया जा सकता है। यह तथ्य कि अन्वेषण अधिकारी ने पाया था कि एक झोपड़ी, जो सूचक के घर के कम्पाउन्ड के भीतर बनी हुई थी, को जला दिया गया था और अन्वेषण अधिकारी का इस प्रभाव का साक्ष्य कि उसने पीड़ितों के शरीर पर उपहति का निशान पाया था और उनको चिकित्सीय-परीक्षण के लिए निर्दिष्ट किया था, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147 और 323 के अधीन अपराध के संबंध में अभियोजन गवाहों के साक्ष्य को समर्थन देता है।

साक्ष्य से आगे प्रतीत होता है कि यद्यपि अभियुक्तगण द्वारा झोपड़ी जलाना अभिकथित किया गया है किन्तु ऐसा अभिकथन केवल अपीलार्थीगण बशीर अंसारी और बरकत अंसारी तक सीमित है। अन्य अपीलार्थीगण को धारा 34 भा० दं० सं० की मदद से अग्नि द्वारा रिष्टि कारित करने के अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है। यह पहलू भी गवाहों के साक्ष्य के प्रकाश में तर्क संगत नहीं लगता है। घटनाक्रम, जैसा प्राथमिकी में अभिकथन किया गया है, को देखने पर प्रतीत होता है कि घटना की उत्पत्ति सूचक की भतीजी द्वारा उसके घर के सामने बंदगोभी के छिलकों को फेंकने से अपीलार्थी बशीर अंसारी को कारित क्रोध थी। यह अचानक हुए झगड़े में बदल गया और इसके बाद हाथापाई हुई और हाथापाई के दौरान झोपड़ी में आग लगा दी गयी थी। अत: यह प्रकट है कि अग्नि द्वारा रिष्टि का अपराध कारित करने के लिए समस्त अपीलार्थीगण के बीच कोई पूर्व चिन्तन अथवा मतैक्य नहीं था। अत: अग्नि द्वारा रिष्टि कारित करने के अपराध के लिए सह-पठित भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के लिए दोषसिद्धि अनुचित है और गुणागुण रहित है।

13. इन तथ्यों और परिस्थितियों और ऊपर की गयी चर्चा के प्रकाश में और इस तथ्य कि अपीलार्थीगण कार्यवाही के आरंभ होने की तिथि से 15 वर्षों से अधिक के लिए पहले ही विचारण की कठोरता को भुगत चुके हैं, पर भी विचार करते हुए और इस तथ्य कि सूचक और अपीलार्थीगण निकटतम पड़ोसी हैं और उनके बीच सद्भावन के पुनर्स्थापन को सक्षम बनाने पर विचार करते हुए भी भारतीय दंड संहिता की धारा 436 के अधीन अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि और दंडादेश को एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। इसके बजाए, केवल अपीलार्थीगण बशीर अंसारी और बरकत अंसारी तक सीमित रखते हुए भारतीय दंड संहिता की धारा 435 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि परिवर्तित की जाती है। जहाँ तक धारा 147 भा० दं० सं० के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि और धारा 323/34 भा० दं० सं० के अधीन अपराध के लिए अपीलार्थीगण मुमताज अंसारी, बशीर अंसारी और बरकत अंसारी की दोषसिद्धि का संबंध है, इसे संपोषित किया जाता है।

14. इस तथ्य के प्रकाश में कि धारा 436 भा० दं० सं० के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि एवं दंडादेश अपास्त कर दिया गया है, दोषसिद्धि परिवर्तित की जाती है और अपीलार्थीगण बशीर अंसारी और बरकत अंसारी को धारा 435 भा० दं० सं० के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है। अपराधों, जिसके अधीन दोषसिद्धि संपोषित की गयी है, के लिए समस्त अभियुक्तगण के विरुद्ध दंडादेश, जिसे अपीलार्थीगण विचाराधीन कैदियों के रूप में भुगत चुके थे, की अवधि की सीमा तक परिवर्तित और घटायी जाती है और उक्त अवधि तद्नुसार मुजरा की जाती है।

इन संप्रेक्षणों के साथ, इस अपील को निपटाया जाता है।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक एवं डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्तिगण

आसिन राम एवं अन्य (17 में)

कृष्ण राम एवं एक अन्य (47 में)

बनाम

झारखंड राज्य (दोनों में)

Cr. Appeal (D.B.) Nos. 17 with 47 of 2001. Decided on 26th August, 2010.

चान्हो पी॰ एस॰ केस सं॰ 27/97, तत्सम जी॰ आर॰ सं॰ 1671/97 से उद्भुत एस॰ टी॰ सं॰ 66/98 में तृतीय अपर न्यायिक कमिश्नर, राँची द्वारा दर्ज एक ही निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34 एवं 148/325—हत्या–सामान्य आशय–बलबा एवं गंभीर उपहति–आजीवन कारावास–अभियोजन मामला चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा सम्पोषित–सूचक का साक्ष्य अपराध में अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका के बारे में संगत–घटनास्थल पर समस्त अभियुक्तगण की उपस्थिति के बारे में गवाह संगत थे–घटनास्थल के निकट अपराध का हथियार पाया गया–बचाव पक्ष अभिलेख पर विपरीत तथ्य लाने में विफल रहा कि वर्तमान मामले में अभियोजन द्वारा प्रस्तुत तरीके से घटना नहीं हुई थी–अपीलार्थीगण के विरुद्ध विरचित आरोपों को सिद्ध किया गया था और धाराओं 302/34 के अधीन अपीलार्थीगण को दोषी अभिनिर्धारित करने में विचारण न्यायालय न्यायोचित था–दोषसिद्धि एवं दंडादेश को मान्य ठहराया गया–अपील खारिज। (पैराएँ 6, 7, 11, 12 एवं 17)

अधिवक्तागण.–Mr. A. K. Sahani, For the Appellants; Mr. I. N. Gupta, For the State.

डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्ति.–चान्हो पी॰ एस॰ केस सं॰ 27/97, तत्सम जी॰ आर॰ सं॰ 1671/97 से उद्भुत एस॰ टी॰ सं॰ 66/98 में तृतीय अपर न्यायिक कमिश्नर, राँची द्वारा दर्ज एक ही निर्णय और दंड से उद्भुत इन दोनों दांडिक अपीलों को साथ सुना जाता है।

2. यह उल्लिखित करना प्रासंगिक है कि दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 17 वर्ष 2001 के अपीलार्थीगण आसिन राम, सोहन राम और विनोद राम को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148 और 325 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और तद्नुसार क्रमशः दो वर्षों और तीन वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंड दिया गया था। दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 47 वर्ष 2001 के अपीलार्थीगण कृष्ण राम और मोहन राम को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148/325 के अधीन उनमें से प्रत्येक की दोषसिद्धि के लिए क्रमशः दो वर्षों और तीन वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंड दिया गया था। उनमें से प्रत्येक को आगे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और आजीवन कठोर कारावास दिया गया था।

3. संक्षेप में, अभियोजन का मामला, जैसा सरकारी अस्पताल, चान्हो में पुलिस के समक्ष दिनांक 16.7.1997 को प्रातः लगभग 7 बजे सूचक अ॰ सा॰ 1 उदित राम के फर्दबयान में कथित किया गया है, यह हे कि पिछले दिन अर्थात् दिनांक 15.7.1997 (मंगलवार) को रात्रि लगभग 8 बजे जब वह घरेलू मामलों पर अपने पिता लक्ष्मण राम (अब मृत), चाचा सुकरा राम, माता समपति देवी और दादा रघु राम के साथ बातचीत कर रहा था, उस बीच किसी शांति देवी (दोषमुक्त), अपीलार्थी आसिन राम की पत्नी, सहित समस्त अपीलार्थीगण सूचक के दरवाजे पर आए और घर के सदस्यों को बाहर निकलने के

लिए कहते हुए गाली देना शुरू किया और अपना क्रोध व्यक्त किया कि क्यों वे शांति देवी को डायन कह रहे थे। सूचक सहित घर के सदस्यों ने अभियुक्तगण द्वारा प्रयुक्त गंदी भाषा पर आपत्ति जतायी जिस पर, यह अभिकथन किया गया था, अपीलार्थी आसिन राम ने अन्य अभियुक्तगण को उन सबों को जान से मार देने का आदेश दिया। इसके अनुसरण में अपीलार्थी कृष्ण राम जो हाथ में तलवार लिए था ने सूचक की माता समपति देवी पर प्रहार किया और मस्तक पर उपहति कारित किया। सूचक पर अपीलार्थीगण सोहन राम और विनोद राम द्वारा लाठी से प्रहार किया गया था। अपने मस्तक पर और दांयी आँख के निकट उपहतियाँ प्राप्त करने के फलस्वरूप वह अपनी माता के साथ आम के पेड़ के निकट गिर गया। आगे अभिकथन किया गया है कि अपीलार्थीगण तब उसके दादा रघु राम पर प्रहार करने लगे जिस पर सूचक का पिता लक्ष्मण राम (अब मृत) पीड़ितों को बचाने आगे आया किन्तु अपीलार्थी आसिन राम के आदेश पर अन्य अभियुक्तगण ने उस पर प्रहार करने के आशय से लक्ष्मण राम का पीछा किया। उसके पिता लक्ष्मण राम ने घटनास्थल से भागने का प्रयास किया और दौड़ने लगा किन्तु अपीलार्थीगण कृष्णा राम और मोहन राम द्वारा पीछा किए जाने पर, जिनके पीछे सूचक का चाचा सुकरा राम आ रहा था, लक्ष्मण राम को बढ़ैय्या से लगभग आधा किलोमीटर की दूरी पर बीजूपारा-खेलारी रोड पर अपीलार्थीगण कृष्णा राम और मोहन राम द्वारा पकड़ लिया गया था और दोनों अपीलार्थीगण ने नेपाला (छूरा) और तलवार की मदद से उसके पिता की हत्या कर दी। जब गवाह स्थल पर आए, दोनों अपीलार्थीगण भाग गए। उसका पिता लक्ष्मण राम उपहतियाँ पाने के कारण सड़क के किनारे मृत पाया गया था। गवाहों ने मृत शरीर की रात भर देखभाल की और सुबह पुलिस को घटना के बारे में संसूचित किया गया था। सूचक उदित राम के फर्दबयान के आधार पर शांति देवी सहित सभी छह नामित अभियुक्तगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 147, 148, 149, 323, 307, 302 के अधीन अभिकथित अपराध के लिए चान्हो पी॰ एस॰ केस॰ सं॰ 27/97 दर्ज किया गया था। अभिकथित अपराध के अधीन समस्त छह नामित अभियुक्तगण के विरुद्ध अन्वेषण अधिकारी ने आरोप पत्र दाखिल किया। सुपुर्द किए जाने के बाद भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन अपीलार्थीगण कृष्ण राम और मोहन राम के विरुद्ध आरोप विरचित किया गया था। इसके अतिरिक्त, भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 148/149/324/325/307 के अधीन समस्त नामित छह अभियुक्तगण कृष्णा राम, मोहन राम, आसिन राम, सोहन राम, विनोद राम और शांति देवी के विरुद्ध आरोपों को विरचित किया गया था जिनके प्रति उन्होंने निर्दोष होने का अभिवाक् किया और विचारण का दावा किया। अभियोजन की ओर से प्रस्तुत किए गए नौ गवाहों के परीक्षण के बाद शांति देवी सहित अभियुक्त अपीलार्थीगण को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन परीक्षित किया गया था जिनका सामना विचारण के क्रम में संग्रहित अपराध में फँसाने वाले सामग्रियों से करवाया गया था जिसके प्रति उन्होंने अपने दोष से इंकार किया और अपने बचाव में साक्ष्य देने की इच्छा अभिव्यक्त की।

4. इसके अतिरिक्त अभियोजन ने मृतक का शव परीक्षण रिपोर्ट प्रदर्श-5, घायल गवाहों की उपहति रिपोर्ट प्रदर्श 6, 6/1 और 6/2; फर्दबयान प्रदर्श 1/1; अभिग्रहण सूची प्रदर्श 3 और 4/2; औपचारिक प्राथमिकी प्रदर्श-7; गवाहों की उपहति रिपोर्ट का तलब प्रदर्श 8, 8/1 और 8/2 को सिद्ध किया। बचाव पक्ष ने तीन गवाहों को प्रस्तुत किया और उनका परीक्षण किया और मृतक लक्षमण राम का मृत्यु प्रमाण पत्र प्रदर्श A; समपति देवी की याचिका की प्रति प्रदर्श B; आर्डरशीट प्रदर्श C और आर्डरशीट पर चारों गवाहों का हस्ताक्षर प्रदर्श B/1, B/2, B/3 एवं B/4 सिद्ध किया।

5. लक्ष्मण राम के मृत शरीर की शव परीक्षा अ॰ सा॰ 7 डॉ॰ निरंजन मिंज द्वारा दिनांक 16.7.1997 को दोपहर 12.30 बजे की गयी थी जिन्होंने निम्नलिखित उपहतियाँ पायी:-

"(I) मस्तक के बांए फ्रौंटल क्षेत्र पर स्काल्प गहरी 6 x 2 सी० एम०

(II) दाएँ भौंह पर 5 x 1 सी० एम० x अस्थि तक गहरी। अंडर लाइन अस्थि पूर्ण टूटन के साथ पार्श्व भाग।

(III) 2 x 1 सी० एम० x अस्थि तक गहरी दांए भौंह तक मिड साइड, अंडरलाइन अस्थि के अस्थिभंग के साथ।

(IV) नाक के ब्रिज पर 3 x 2 सी० एम० x अस्थि पर गहरी। अंडरलाइन अस्थि टुकड़ों में टूट गयी थी।

(V) अंडरलाइन अस्थि के अस्थिभंग के साथ 7 x 2 सी० एम० x अस्थि तक गहरी बांए गाल में प्रीएमिनेंस

(VI) अंडरलाइन मैंडिबल अस्थि के पूर्ण अस्थिभंग के साथ 5 x 2 सी० एम० x अस्थि तक गहरी टुड्ढी का दायाँ हिस्सा।

(VII) अंडरलाइन मैंडिबल अस्थि के पूर्ण अस्थिभंग के साथ 3 x 2 सी० एम० x अस्थि तक गहरी टुड्ढी का दायाँ हिस्सा।

<u>खरोंच :</u>

(i) 3सी० एम० x 2सी० एम० दायीं केहुनी के पिछले भाग में।

(ii) 4सी० एम० x 2सी० एम० दायाँ लंबर क्षेत्र के पिछले भाग में।"

6. डॉक्टर के मत में, समस्त उपहतियाँ कड़े और भोथरे वस्तु द्वारा कारित एँटी मॉर्टम प्रकृति की थी। मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट प्रदर्श 2/2 ने उपदर्शित किया कि मृतका ने अपने चेहरे पर उपहतियाँ प्राप्त की थी जो तेज धार वाले हथियार द्वारा कारित प्रतीत होती है और विचारण न्यायाधीश द्वारा संप्रेक्षित किया गया था कि प्रदर्श 5 (शव परीक्षण रिपोर्ट) और प्रदर्श 2/2 (मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट) में उल्लिखित उपहतियों की प्रकृति ने सुझाया कि मृतक के शरीर पर उपहतियाँ कारित करने के लिए किसी तेज धार वाले हथियार का प्रयोग किया गया था। बचाव पक्ष का मामला संगत था कि सूचक के पिता लक्षमण राम की मृत्यु सड़क दुर्घटना में हुई थी और कतिपय दस्तावेजों को सिद्ध किया गया था जिन पर बाद के चरण पर चर्चा की जाएगी।

7. अ॰ सा॰ 1 उदित राम, जो मामले का सूचक था, संगत था कि प्रासंगिक समय पर अपीलार्थी कृष्णा राम तलवार से लैस था, अपीलार्थी मोहन राम नेपाला (छूरा) लिए था और अन्य अपीलार्थीगण आसिन राम, सोहन राम और विनोद राम लाठी लिए हुए थे जो अचानक उसके दरवाजे पर आए और गालियाँ देने लगे जिसका विरोध गवाहों द्वारा किया गया था। सूचक ने आगे परिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थीगण कृष्णा राम और मोहन राम द्वारा तलवार और नेपाला (छूरा) से उसकी माता पर हमला किया गया था जबकि अपीलार्थीगण सोहन राम और विनोद राम ने उस पर लाठी से प्रहार किया था। उसने परिसाक्ष्य देते हुए अपने पहले बयान को सिद्ध किया कि जब उसका पिता लक्ष्मण राम पीड़ितों को बचाने आया, कृष्णा राम और मोहन राम ने आधा किलोमीटर तक उसका पीछा किया, उसको पकड़ लिया और बढ़ैय्या खेलारी रोड पर उसकी हत्या कर दी। अ॰ सा॰ 2 गंदूर राम, सूचक का भाई, अपने साक्ष्य में संगत था कि जब वह हल्ला सुनकर अपने घर से बाहर आया, उसने समस्त अभियुक्तगण को अपने भाई उदित राम, दादा रघुराम और अपनी माता समपति देवी पर प्रहार करते देखा। उसने आगे कथन किया कि कृष्णा राम तलवार लिए था और मोहन राम अपने हाथ में नेपाला (छूरा) लिए था जबकि अन्य अभियुक्तगण लाठी लिए हुए थे। उसने परिसाक्ष्य दिया कि अभियुक्तगण कृष्णा राम, मोहन राम, आसिन राम, सोहन राम और विनोद राम ने दूर तक उसके पिता का पीछा किया था और सड़क पर उस पर प्रहार किया था और उसकी मृत्यु कारित की थी। अ॰ सा॰ 3 गोपाल राम, अ॰ सा॰ 4 रघुराम, अ॰ सा॰ 5 समपति देवी

और अ० सा० 6 सुखारी राम ने चश्मदीद गवाह होने का दावा किया जो प्रासंगिक समय पर घटनास्थल पर उपस्थित थे और अपने सारवान साक्ष्य में अ० सा० 1 और अ० सा० 2 के परिसाक्ष्य को सम्पुष्ट किया। उनके घर के सामने अवस्थित प्रथम घटनास्थल पर समस्त छह अभियुक्तगण की उपस्थिति के बारे में गवाह संगत थे और केवल अपीलार्थीगण ने ही मृतक का पीछा किया था। गवाह आगे संगत थे कि अभियुक्तगण द्वारा प्रहार के उसी संव्यवहार में सूचक अ० सा० 1, उसकी माता समपति देवी और उसके दादा अ० सा० 4 रघु राम ने घटनास्थल पर उपहतियाँ प्राप्त की थी और उनकी उपहतियों को चान्हो सरकारी अस्पताल में जाँचा गया था। अ० सा० 1 उदित राम, अ० सा० 4 रघु राम और अ० सा० 5 समपति देवी द्वारा प्राप्त की गयी उपहतियाँ सिद्ध की गयी थी और उन्हें क्रमश: प्रदर्श 6/1, 6, और 6/2 चिन्हित किया गया था। विचारण न्यायालय द्वारा संप्रेक्षित किया गया था कि शांति देवी को छोड़कर समस्त अभियुक्तगण ने विधि विरुद्ध जमाव निर्मित करने के बाद बल का प्रयोग किया था और बलवा कारित किया था और तलवार तथा नेपाला (खुकरी की तरह तेजधार वाला भारी हथियार) से लैस होकर अपने सामान्य लक्ष्य के निष्पादन में घटना को अंजाम दिया था।

8. अपीलार्थीगण के लिए और उनकी ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आरंभ में ही प्रतिवाद किया कि सूचक के पिता लक्ष्मण राम की मृत्यु सड़क दुर्घटना में हुई थी और न कि मानव वध के कारण और उसके लिए मृतक की विधवा अ० सा० 5 समपति देवी ने राष्ट्रीय सामाजिक कल्याण योजना के अधीन आवेदन दिया था और प्रखंड कार्यालय से 10,000/-रुपया मुआवजा प्राप्त किया था। मृतक का मृत्यु प्रमाण पत्र सिद्ध किया गया था और प्रदर्श A चिन्हित किया गया था, बी० डी० ओ० के समक्ष दाखिल अ० सा० 5 समपति देवी का आवेदन प्रदर्श B चिन्हित किया गया था; अंचलाधिकारी द्वारा दर्ज केस सं० 17/97-98 मामले के आर्डरशीट की प्रमाणित प्रति प्रदर्श C चिन्हित की गयी थी। आर्डर शीट में अंचलाधिकारी द्वारा संप्रेक्षित किया गया था कि चूँकि आवेदक के पति की मृत्यु खेलारी-बिजुपारा रोड पर भोथरी धार वाले हथियार द्वारा कारित उपहतियों के कारण हुई थी, वह ऐसे अनुदान के लिए हकदार थी।

9. अन्वेषण अधिकारी अ० सा० 9 अवधेश सिंह के बयान को निर्दिष्ट किया जा सकता है जिसने अभिसाक्ष्य दिया कि दिनांक 16.7.1997 को जब वह चान्हो पुलिस थाना में पुलिस सब-इन्सपेक्टर के रूप में पदस्थापित था, उसने प्रात: लगभग 7 बजे चान्हो सरकारी अस्पताल में सूचक उदित राम का बयान (प्रदर्श 1/1) दर्ज किया। उसने वहाँ पर अपना हस्ताक्षर प्रदर्श 1/2, अपने लिखावट में पृष्ठांकन और हस्ताक्षर प्रदर्श 2 सिद्ध किया। उसके लिखावट और हस्ताक्षर में सूचक के फर्दबयान के आधार पर प्राथमिकी दर्ज की गयी और इसे सिद्ध किया गया था और प्रदर्श 7 चिन्हित किया गया था। भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 147/148/149/302/307/324/325 के अधीन अभियुक्तगण के विरुद्ध मामला संस्थापित किया गया था। उसने घायल रघु राम, समपति देवी और सूचक उदित राम के उपहतियों के परीक्षण के लिए मांग पर्चियों को तैयार किया जिन्हें प्रदर्श 6, 6/1 और 6/2 चिन्हित किया गया था। उयसने परिसाक्ष्य दिया कि उसने सूचक उदित राम की उपस्थिति में घटनास्थल का दौरा किया था और अपने वस्तुपरक निष्कर्ष में वर्णन किया कि घटनास्थल बीजूपारा से खेलारी के बीच सड़क के दोनों ओर छह फीट चौड़ी फ्लैंक वाली पक्की सड़क थी और लक्षमण राम का मृत शरीर तने हुए अंगों के साथ पिछले हिस्से पर शरीर पर उपहतियाँ लिए और लाश के मस्तक के निकट खून के जमाव के बीच सड़क के पश्चिमी फ्लैंक पर पाया गया था। मृत शरीर के निकट एक नेपाला (छूरा) भी पाया गया था जो रक्त रंजित था। गवाहों की उपस्थिति में रक्त रंजित मिट्टी के साथ नेपाला अभिग्रहित किया गया था। उसके द्वारा लक्ष्मण राम की लाश की मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार की गयी थी जिसे प्रदर्श 2/2 चिन्हित किया

गया था। तब अन्वेषण अधिकारी ने पूरब की ओर लगभग 50 फीट की दूरी पर सूचक उदित राम के घर के सामने अवस्थित एक अन्य घटनास्थल का दौरा किया जहाँ उसने जमीन पर खून के धब्बों को पाया। उसने गवाहों की उपस्थिति में वहाँ की रक्तरंजित मिट्टी संग्रहित किया और अभिग्रहण सूची प्रदर्श 3/1 तैयार किया। गवाह अन्वेषण अधिकारी ने अभियुक्त कृष्णा राम द्वारा संस्थापित एक प्रति मामला स्वीकार किया जो उसके द्वारा चान्हों सरकारी अस्पताल में ही दर्ज किया गया था किन्तु उसने निष्पक्षत: स्वीकार किया कि उसने वर्तमान मामले के केस डायरी में प्रति मामला को निर्दिष्ट नहीं किया था। अन्वेषण अधिकारी ने अपनी अनभिज्ञता व्यक्त की कि क्या अभियुक्त कृष्णा राम ने अभिकथित रूप से कुल्हाड़ी द्वारा कारित उपहतियाँ प्राप्त की थी जैसा प्रति मामला में वर्णित किया गया था और यह कि क्या कृष्णा राम की माता ने भी उसी संव्यवहार में उपहतियाँ प्राप्त की थी। उसने रक्तरंजित मिट्टी को, जिसे इस मामले में अभिग्रहित किया गया था, न्यायालयिक प्रयोगशाला नहीं भेजने की बात को स्वीकार किया और आगे स्वीकार किया कि उसने उस आवेदन के विषय वस्तु का पता लगाने का प्रयास नहीं किया था जिसे मृतक की विधवा समपति देवी ने दिनांक 16.7.1997 को वाहन दुर्घटना में अपने पति की मृत्यु के लिए मुआवजा पाने के लिए चान्हो प्रखंड में दाखिल किया था और तद्नुसार मुआवजा प्राप्त किया था, फिर भी उसने इस सुझाव से इंकार किया कि लक्ष्मण राम की मृत्यु वाहन दुर्घटना में हुई थी।

10. विद्वान अधिवक्ता, श्री ए॰ के॰ साहनी ने दोहराया कि घटना अभियोजन द्वारा प्रस्तुत तरीके से नहीं हुई थी। प्रति मामला, जिसे अपीलार्थीगण द्वारा दर्ज किया गया है, से अन्वेषण अधिकारी द्वारा इंकार नहीं किया गया है और दोनों मामलों को एक ही न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जाना चाहिए था। अ॰ सा॰ 7 डॉ॰ निरंजन मिंज जिन्होंने लक्ष्मण राम के शरीर की शव परीक्षा की, ने अपने साक्ष्य में कोई निश्चित मत अभिव्यक्त नहीं किया था कि मृतक लक्ष्मण राम के शरीर पर पायी गयी उपहतियाँ नेपाला (एक भारी तेज धार वाला हथियार) द्वारा अथवा तलवार द्वारा कारित की गयी थी किन्तु वह निश्चित थे कि उपहतियाँ कड़े और भोथरें वस्तु द्वारा कारित की गयी थी। वस्तुत:, लक्षमण राम की मृत्यु वाहन दुर्घटना में प्राप्त उपहतियों के कारण हुई थी जो दिनांक 16.7.1997 की रात को बीजुपारा-खेलारी रोड पर हुई थी और यह कि उसकी विधवा समपति देवी ने अपनी पति की मृत्यु पर मुआवजा प्राप्त किया था।

11. हमने बचाव पक्ष की ओर से प्रस्तुत दस्तावेजों का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया है। प्रदर्श A लक्ष्मण राम, पुत्र रघुराम, का मृत्यु प्रमाण पत्र है जो उपदर्शित करता है उसकी मृत्यु दिनांक 16.7.1997 को हुई थी। इसे सक्षम प्राधिकारी द्वारा जारी किया गया था और उसकी मृत्यु दिनांक 31.7.1997 को दर्ज की गयी थी। प्रदर्श B राष्ट्रीय योजना के अधीन अनुदान के लिए आवेदन है जिसे ग्राम पंचायत के पूर्व मुखिया द्वारा सम्यक रूप से अनुशंसित और ग्राम के चौकीदार द्वारा सत्यापित करा कर बी॰ डी॰ ओ॰ के समक्ष दाखिल किया गया था। प्रदर्श B राष्ट्रीय योजना के अधीन अनुदान के लिए आवेदन है जिसे मुखिया द्वारा सम्यक रूप से अनुशंसित और ग्राम के चौकीदार द्वारा सत्यापित करा कर बी॰ डी॰ ओ॰ के समक्ष दाखिल किया गया था। प्रदर्श C अंचलाधिकारी द्वारा अभिलिखित आर्डरशीट है जिन्होंने दिनांक 16.7.1997 को खेलारी-बीजुपारा रोड पर तेजधार वाले हथियार द्वारा कारित उसके पति की 'हत्या' पर अनुग्रहपूर्वक अनुदान के रूप में समपति देवी को दी जाने वाली 10,000/-रुपयों की राशि अनुज्ञात किया था। राशि दिनांक 16.9.1997 को दी गयी थी। हम आर्डरशीट (प्रदर्श C) से पाते हैं कि अनुग्रहपूर्वक अनुदान राष्ट्रीय परिवार कल्याण योजना के अधीन उसके पति लक्षमण राम की मृत्यु पर और न कि वाहन दुर्घटना में उसके पति की मृत्यु पर मुआवजे के रूप में विधवा समपति देवी को दिया गया था। अत: अपीलार्थीगण का बचाव उनकी ओर से प्रस्तुत दस्तावेजों द्वारा सिद्ध किया नहीं जा सकता था। प्रदर्श-D चान्हो पी॰ एस॰ केस सं॰ 28/97 की प्राथमिकी की प्रमाणित प्रति है जिसे अपीलार्थी कृष्णा राम द्वारा सुकरा राम, गोपाल राम, उदित राम, गन्डूर राम और रघु राम के विरुद्ध दाखिल किया गया था और भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 147/148/323/324 के अधीन दर्ज किया गया था किन्तु बचाव

पक्ष अभिलेख पर अन्यथा तथ्य लाने में विफल रहा कि वर्तमान मामले में घटना अभियोजन द्वारा प्रस्तुत तरीके से नहीं हुई थी।

12. शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 5) ने उपदर्शित किया कि लक्षमण राम ने मुख्यत: चेहरा और मस्तक पर मृत्यु पूर्व प्रकृति की विभिन्न आयामों वाली उपहतियाँ प्राप्त किया था किन्तु सिर पर की उपहतियों में से कोई भी कुचला अथवा दबा हुआ नहीं था ताकि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि यह एक गतिमान मोटरवाहन के पहियों के नीचे उसके आने के कारण संभव थी अथवा इसे गतिमान मोटरवाहन के प्रभाव द्वारा कारित किया जा सकता था। हम पाते हैं कि घायल गवाह अर्थात् अ॰ सा॰ 1 उदित राम, अ॰ सा॰ 5 सपमति देवी और अ॰ सा॰ 4 रघु राम ने अपनी-अपनी उपहतियाँ प्राप्त की थी और वे हमलावर (अपीलार्थीगण) के निकट थे और स्वाभाविक गवाह थे। उनकी उपहतियों का परीक्षण अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ बिरेन तिर्के द्वारा किया गया था जिन्होंने उनकी उपहति रिपोर्टों अर्थात् प्रदर्श 6, 6/1 एवं 6/2 को जारी किया था और यह कि डॉक्टर के मत में घायलों के शरीर पर हुई उपहतियों में से कोई भी तेज धार वाले हथियार द्वारा नहीं कारित की गयी थी बल्कि कठोर और भोथरे वस्तु द्वारा कारित की गयी थी। हम पाते हैं कि अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धारा 325 के अधीन और धारा 148 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था जिससे तद्द्वारा निष्कर्षित होता है कि गवाहों पर प्रहार करने के सामान्य उद्देश्य से अपीलार्थीगण विधि विरुद्ध जमाव के सदस्य थे और उनमें से दो तलवार और नेपाला जैसे घातक हथियारों से लैस थे और कुछ हाथ में लाठी पकड़े थे। भारतीय दंड संहिता की धाराओं 325 और 148 के अधीन आरोपों को समस्त अपीलार्थीगण के विरुद्ध अभियोजन द्वारा समुचित रूप से सिद्ध पाया गया था और तद्नुसार समस्त अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148 और 325 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और पर्याप्त रूप से दंडित किया गया था जिसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं थी।

13. हम अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों से पाते हैं कि जब गवाह अ॰ सा॰ 1 उदित राम, अ॰ सा॰ 3 गोपाल राम, अ॰ सा॰ 4 रघु राम, अ॰ सा॰ 5 समपति देवी, अ॰ सा॰ 6 सुखारी राम और लक्ष्मण राम (मृतक) एक ही परिवार का सदस्य होने के नाते घरेलू मसलों पर बातचीत कर रहे थे, दिनांक 15.7.1997 को रात्रि लगभग 8 बजे अपीलार्थीगण शांति देवी के साथ गवाहों के दरवाजे पर आए और गुस्सा जाहिर करते हुए कि वे क्यों शांति देवी को डायन कह रहे थे, गालियाँ देने लगे जिसका परिणाम झगड़ा में हुआ और अपीलार्थीगण गवाहों पर यहाँ ऊपर चर्चा किए गए अपने व्यक्तिगत हथियारों से प्रहार करने लगे। अ॰ सा॰ 2 गन्डूर राम के मुताबिक वह हल्ला सुन कर घटना स्थल पर आया और अपीलार्थीगण को अपनी माता, भ्राता और दादा पर प्रहार करता पाया और उनमें से कृष्णा राम अपने हाथ में तलवार लिए था जबकि मोहन राम नेपाला (छूरा) पकड़े था। अन्य लाठियों से लैस थे। इसी बीच जब उनका पिता घर से बाहर आया। आसिन राम ने उसकी हत्या करने का आदेश दिया जिसके परिणामस्वरूप उसके पिता (लक्ष्मण राम) ने उस स्थान से भागने का प्रयास किया जिसका पीछा समस्त अपीलार्थीगण द्वारा किया गया जिन्होंने उसे रोड पर पकड़ लिया और उस पर प्रहार करने लगे जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गयी। उसने परिसाक्ष्य दिया कि वह, उसका भाई उदित राम और चाचा अ॰ सा॰ 6 सुखारी राम अपीलार्थीगण द्वारा पीछा किया और उन्होंने समस्त अपीलार्थीगण को मृतक पर प्रहार करते देखा था।

14. सूचक अ॰ सा॰ 1 अपने परिसाक्ष्य में विनिर्दिष्ट था कि अपीलार्थीगण मोहन राम ने नेपाला (छूरा) के साथ और कृष्णा राम ने तलवार के साथ बढ़ैय्या-खेलारी रोड पर उसके पिता लक्ष्मण राम का पीछा किया था और उसे पकड़ लिया था और उसके चेहरा और मस्तक पर प्रहार किया था। हमलावर उसके और अ॰ सा॰ 6 सुखारी राम के पहुँचने पर भाग गए थे। उसका विस्तारपूर्वक प्रति-परीक्षण किया गया था किन्तु उसके परिसाक्ष्य की विश्वसनीयता को हिलाया नहीं जा सका था।

15. एक अन्य गवाह सुखर राम, जो मृतक का सगा भाई है, ने परिसाक्ष्य दिया कि दिनांक 15.5.1997 को रात्रि लगभग 8 बजे वह अपने भाई लक्षमण राम के घर पर था और घरेलू मसलों पर अपने पिता रघुराम, भतीजा उदित राम, भाभी समपति देवी और भाई लक्षमण राम के साथ बातचीत कर रहा था। इसी बीच उनके पड़ोसी कृष्णा राम हाथ में तलवार लिए, मोहन राम नेपाला (छूरा) लिए, आसिन राम, सोहन राम और विनोद राम हाथों में लाठियाँ लिए शांति देवी के साथ वहाँ आए और गाली देना शुरू किया। उसने परिसाक्ष्य दिया कि उसकी भाभी समापति देवी पर उसके मस्तक पर कृष्णा राम द्वारा तलवार से प्रहार किया गया था जबकि अन्य अपीलार्थीगण ने उस पर लाठियों से प्रहार किया था। सोहन राम और विनोद राम द्वारा उदित राम पर लाठियों से प्रहार किया गया था। जब हमलावर उसके पिता रघु राम पर प्रहार करने लगे, उसका भाई लक्षमण राम अपने पिता को बचाने आगे आया जिस पर आसिन राम ने अन्य अभियुक्तगण को उसकी हत्या करने का आदेश दिया। उसके भाई लक्ष्मण राम ने घटना स्थल से दौड़कर भागने का प्रयास किया किन्तु कृष्णा राम और मोहन राम ने अपने हाथों में अपना अपना हथियार लिए उसका पीछा किया और उसने और उसके भतीजे उदित राम ने उनका पीछा किया। यह गवाह विनिर्दिष्ट था कि दोनों अपीलार्थीगण कृष्णा राम और मोहन राम ने किसी विनोद साहू के घर के निकट खेलारी–बैजुपारा पिच रोड पर लक्ष्मण राम को पकड़ लिया और प्रहार करके उसकी हत्या कर दी। ज्योंही वह और उसका भतीजा उदित राम घटनास्थल पर आए, हमलावर भाग गए। उसकी विस्तारपूर्वक परीक्षण और प्रतिपरीक्षण किया गया था किन्तु घटना के क्रम और लक्ष्मण राम की मृत्यु में परिणत उसमें अपीलार्थीगण की सह–अपराधिता को झुठलाया नहीं जा सकता था। हम पाते है कि विचारण न्यायालय ने मुख्यत: अ॰ सा॰ 1 उदित राम और अ॰ सा॰ 6 सुखारी राम के बयानों पर विश्वास करते हुए उनमें से प्रत्येक के विरुद्ध आपराधिक मानव वध के विनिर्दिष्ट अभिकथन की समान आशय को अग्रसर करने में ऐसे अपराध को अंजाम दिया गया था, के साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपीलार्थीगण कृष्णा राम और मोहन राम को दोषसिद्ध किया था। मृत शरीर पश्चिमी हिस्से की ओर रोड के फ्लैंक पर पाया गया था जहाँ से अन्वेषण अधिकारी ने लाश के बगल में पड़े रक्तरंजित नेपाला को भी बरामद किया था। कोई कुचली हुई उपहति अथवा किसी मोटरवाहन द्वारा कारित लाश पर कोई अन्य उपहति अथवा वाहन के टायरों के निशान मृत शरीर के निकट नहीं पाए गए थे। लगभग सारी उपहतियाँ चेहरे पर थी और अ॰ सा॰ 1 उदित राम और अ॰ सा॰ 6 सुखारी राम के अनुसार इन्हें अपीलार्थीगण कृष्णा राम और मोहन राम द्वारा कारित किया गया था।

16. बचाव पक्ष ने यह सिद्ध करने के लिए तीन गवाहों को प्रस्तुत किया था कि लक्ष्मण राम की मृत्यु वाहन दुर्घटना में हुई थी और इसके लिए उसकी विधवा समपति देवी को राष्ट्रीय योजना के अधीन मुआवजा दिया गया था। किन्तु हम उनकी ओर से अभिलेख पर लाए गए दस्तावेजों से पाते हैं कि विधवा ने मोटर दुर्घटना में उसके पति की मृत्यु के लिए मुआवजा प्राप्त नहीं किया था। बल्कि यह राष्ट्रीय योजना के अधीन परिवार के मुखिया की मृत्यु पर दिया गया अनुग्रहपूर्वक अनुदान था जिसपर हम चान्हो प्रखंड के अंचलाधिकारी द्वारा स्पष्टत: तैयार किया आर्डरशीट (प्रदर्श C) पाते है जो ऐसा अनुदान प्रदान करने का सक्षम प्राधिकारी था जिन्होंने सम्यक जाँच के बाद आदेश पारित किया था।

17. तथ्यों और परिस्थितियों में हम पाते हैं कि अपीलार्थीगण के विरुद्ध विरचित आरोपों को भली प्रकार से सिद्ध किया गया था और विचारण न्यायालय भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन अपीलार्थीगण कृष्णा राम और मोहन राम को दोषी अभिनिर्धारित करने में न्यायोचित था। हम आगे पाते हैं कि अपीलार्थीगण कृष्णा राम और मोहन राम के साथ अपीलार्थीगण आसिन राम, सोहन राम, विनोद राम को भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 325 और 148 के अधीन समुचित रूप से दोषी अभिनिर्धारित

किया गया है और पर्याप्त रूप से दंड दिया गया है। अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता किसी भी आधार को दर्शाने में विफल रहे जो दोनों अपीलों के अपीलार्थीगण के विरुद्ध दर्ज दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश में हस्तक्षेप आमंत्रित करता हो। एस॰ टी॰ सं॰ 66/1998 में अपीलार्थीगण के विरुद्ध तृतीय ए॰ जे॰ सी॰ राँची द्वारा दर्ज दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश को मान्य ठहराते हुए, इनमें कोई गुणागुण नहीं होने के चलते दोनों अपीलों को खारिज किया जाता है। विचारण न्यायालय को विधि के अनुरुप प्रभावकारी कदम उठाने का निर्देश दिया जाता है।

डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

माननीय डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्ति

मन महादेव साव उर्फ बनोदी साव एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य

Criminal Appeal No. 148 of 2002. Decided on 31st August, 2010.

एस॰ टी॰ सं॰ 525 वर्ष 1993 में श्री एस॰ एम॰ आलम, अपर सत्र न्यायाधीश VII हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 2.4.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 324, 147, 148 एवं 325—गंभीर उपहति–दोषसिद्धि एवं दंडादेश–घातक हथियारों से अपीलार्थीगण द्वारा पीड़ितों पर प्रहार किया गया–अभियोजन मामला चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा सम्पुष्ट–अपराध में अपीलार्थीगण की सह-अपराधिता के बारे में अ॰ सा॰ के साक्ष्य संगत–तत्सम उपहति के साथ अभियोजन गवाहों की एक संख्या द्वारा अभिकथन को सम्पुष्ट किया गया–किन्तु, अभियोजन मामला संदेहास्पद है कि समस्त अपीलार्थीगण ने मतैक्यता तथा सामान्य उद्देश्य के साथ घटना को अंजाम दिया था–दोषसिद्धि एवं दंडादेश अंशतः अभिपुष्ट। (पैराएँ 20 से 22)

अधिवक्तागण.–M/s A. K. Sahani, Parth Sarathi Ghosh, For the Appellants; Mr. Ravi Prakash, For the State.

डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्ति.–वर्तमान अपील बरका गाँव पी॰ एस॰ केस सं॰ 48 वर्ष 1989 से उद्भुत एस॰ टी॰ सं॰ 525 वर्ष 1993 में मो॰ एस॰ एम॰ आलम, अपर सत्र न्यायाधीश VII, हजारीबाग द्वारा अपीलार्थीगण के विरुद्ध दिनांक 2.4.2002 को दर्ज दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध की गयी है।

2. उक्त निर्णय एवं आदेश द्वारा अपीलार्थीगण में से प्रत्येक को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147/148/325 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और प्रत्येक आधार पर क्रमशः एक वर्ष, दो वर्ष और सात वर्ष के लिए कठोर कारावास भुगतने का दंड दिया गया था। अपीलार्थी सं॰ 3 को पूर्वोक्तानुसार भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147/148/325 के अधीन उसकी दोषसिद्धि के अतिरिक्त भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन भी दोषी अभिनिर्धारित किया गया था और दो वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंड दिया गया था। उनमें से प्रत्येक के विरुद्ध दंडों को साथ-साथ चलने का निर्देश दिया गया था।

3. सूचक शंभु शरण दास (अ॰ सा॰ 6) ने अपने फर्दबयान में कथन किया था कि वह चुर्चु प्रखंड में पदस्थापित कर्मचारी था। दिनांक 22.4.1989 को जब वह सरकारी कार्य के संबंध में कुरु ग्राम जा

रहा था, यह अभिकथन किया गया था कि अनेक घातक हथियारों से लैस समस्त अभियुक्तगण (इसमें अपीलार्थीगण) ने उसे घेर लिया और नापोखुर्द ग्राम चलने को कहा। भयभीत होकर और कोई विकल्प नहीं पाते हुए सूचक उनके साथ गया। सूचक ने आगे कथन किया कि जब वह स्वयं अपने गाँव बरगनिया में पीपल के पेड़ के निकट पहुँचा, अपीलार्थी सोना साव ने उसे लाठी से मारा और दायीं कलाई पर उपहति कारित किया। इसी संव्यवहार में अन्य अभियुक्तगण मन महादेव साव, पूरन, भुनेश्वर, शिव चरण, बोधन और कुन्दर उस पर लाठी से प्रहार करने लगे जिसके परिणामस्वरुप अनेक उपहतियाँ प्राप्त करते वह गिर गया। उसने आगे अभिकथन किया कि अपीलार्थी हरिहर साव ने उसके हाथ और पैर पर हथौड़ी से प्रहार किया और जब अपीलार्थी गुलाब साव ने उसकी हत्या के आशय से उसके सर पर फरसा उठाया, उसकी पत्नी निरो देवी (अ॰ सा॰ 1) अचानक सामने आयी और ढाल की तरह खड़ी रही जिसके परिणामस्वरुप फरसा का प्रहार उसके शरीर पर लगा और उसके मस्तक पर रक्त बहती उपहतियों को कारित किया। वह भी जमीन पर गिर गयी। अपीलार्थीगण तब सूचक के घर में घुस गए, उसके घरेलू सामानों को बिखेर दिया और जंगल की ओर भाग गए। घटना उसके परिवार के सदस्यों द्वारा देखी गयी थी जो उनके जाने के बाद तुरन्त पीड़ितों के पास आए और उन दोनों को उपचार के लिए तुरन्त बरकागाँव अस्पताल ले गए।

घटना की उत्पति प्रकट करते हुए, सूचक ने कथन किया कि बिहार राज्य ने खाता सं॰ 249, भूखंड सं॰ 434 से संबंधित 0.73 एकड़ भूमि उसे और उसके भाइयों को दिया था जिस पर अपीलार्थीगण ने उक्त भूमि पर अपने अधिकार का दावा किया था। अभिकथित घटना के पहले सरकार द्वारा बरगनिया टैंक में मछली मारने की अनुमति दी गयी थी और इस प्रकार प्रखंड के कर्मचारी वहाँ पर मछलियाँ मार रहे थे जो अपीलार्थीगण को नहीं भाया क्योंकि उक्त कर्मचारीगण सूचक के घर में रह रहे थे जिससे वे चिढ़े हुए थे और इसके लिए उसके विरुद्ध वे दुश्मनी का भाव रखे थे और घटना को अंजाम दिया था। सूचक का फर्दबयान दिनांक 22.4.1989 को बरकागाँव अस्पताल में दर्ज किया गया था जिससे उद्भुत बरकागाँव पी॰ एस॰ केस सं॰ 48 वर्ष 1989 भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147/148/149/307/323/324/341/427 के अधीन अपराधों के लिए सह-अभियुक्त खेदन साव, जिसकी मृत्यु विचारण के क्रम में हो गयी थी, सहित समस्त अपीलार्थीगण के विरुद्ध दर्ज किया गया था।

4. पुलिस ने अन्वेषण के बाद अभिकथित अपराध के लिए समस्त अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया और भा॰ दं॰ सं॰ के प्रासंगिक धाराओं के अधीन आरोप विरचित करने के बाद उनका सत्र विचारण शुरू किया। अपीलार्थीगण का प्रतिवाद लंबे अरसे से चले आ रहे भूमि विवाद के चलते झूठा फँसाने का था।

5. अभियोजन गवाहों के परीक्षण के बाद अपीलार्थीगण का परीक्षण किया गया था और उनके बयानों को धारा 313 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन दर्ज किया गया था जिसके दौरान उनमें से प्रत्येक का सामना विचारण के दौरान अभिलेख पर लायी गयी सामग्रियों के साथ करवाया गया था जिसके प्रति उन्होंने अपने दोष से इंकार किया और स्पष्ट किया कि भूमि विवादों के कारण उन्हें झूठा फँसाया गया है। अपीलार्थीगण ने ब॰ सा॰ 1 को प्रस्तुत किया जिसने कतिपय दस्तावेजों को सिद्ध किया।

6. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री ए॰ के॰ साहनी ने निवेदन किया कि अभियोजन की ओर से कोई स्वतंत्र गवाह प्रस्तुत किया गया था और गवाहों, जिन्हें प्रस्तुत किया गया था, सूचक के परिवार के सदस्य थे और अत्यधिक हितबद्ध एवं सपक्षी गवाह थे और इस प्रकार उनके परिसाक्ष्य को त्यक्त किया जा सकता है। घटना, जैसा अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किया गया है, दो स्थानों पर हुई थी अर्थात् पहली घटना बरकागाँव ग्राम के पड़ोस में अवस्थित पीपल के पेड़ के निकट और दूसरी घटना

सूचक के घर पर हुई थी किन्तु केवल अभियोजन को ज्ञात कारणों से अपने-अपने हथियारों से लैस अपीलार्थीगण की अभिकथित भागीदारी से हुई घटना के समर्थन में एक भी स्वतंत्र ग्रामवासी प्रस्तुत नहीं किया जा सका था। श्री साहनी ने इंगित किया कि मामला का अन्वेषण त्वरित क्रम में तीन अन्वेषण अधिकारियों द्वारा किया गया था, किन्तु अंतिम अन्वेषण अधिकारी जिसने अपनी व्यक्तिपरक संतुष्टि पर आरोप-पत्र दाखिल किया था कटघरे से अनुपस्थित रहा जिसका कारण केवल अभियोजन को ज्ञात है। इसी प्रकार, सदर अस्पताल, हजारीबाग के डॉ॰ आर॰ झा, जिन्होंने घायल शंभु शरण दास का परीक्षण किया था और छुट्टी की पर्ची जारी की थी, का परीक्षण नहीं किया गया था और जिससे अपीलार्थीगण पर अत्यन्त प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था क्योंकि घायल द्वारा प्राप्त उपहतियों की प्रकृति के प्रति प्रश्न रखकर उनका प्रति-परीक्षण करने का अवसर नहीं दिया गया था। श्री साहनी ने आगे निवेदन किया कि परस्पर विरोधी दावों वाले स्वीकृत भूमि विवादों सहित बीस वर्षों से चले आ रहे दीर्घकालिक विचारण की कठिनाई और कष्ट को अपीलार्थीगण ने झेला है और इस संबंध में दिनांक 21.6.1986 को विक्रेता द्वारा उनके पक्ष में निष्पादित प्रश्नगत भूमि के रजिस्टर्ड विकृत विलेख प्रदर्श A, किराया रसीदों-प्रदर्श B और प्रदर्श B/1, हजारीबाग के मुंसिफ के समक्ष लंबित टाइटल वाद सं॰ 32 वर्ष 2001 के आर्डरशीटों-प्रदर्श C और उस वाद सोना साव एवं अन्य बनाम भूपल दास पासवान एवं अन्य) का वाद पत्र-प्रदर्श D को ब॰ सा॰ 1 कमलनाथ साव को उनका एकमात्र बचाव गवाह होने के नाते प्रस्तुत कर सिद्ध किया है। अंत में, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यद्यपि अभियोजन तकनीकी रूप से यह सिद्ध करने में विफल रहा कि सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में घटना घटित हुई थी, फिर भी अपीलार्थीगण में से प्रत्येक को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 147/148/325 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था। यह अभियोजन का मामला नहीं था और न ही साक्ष्य दिया गया था कि समस्त अपीलार्थीगण घातक हथियारों से लैस थे और उसके लिए उन्हें बलवा करने का दोषी अभिनिर्धारित किया गया था ताकि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 148 के अधीन दंडनीय अपराध को आकृष्ट किया जा सके। इस मामले में हथौड़ा इस्तेमाल करने का अभिकथन अपीलार्थी हरिहर साव के विरुद्ध था और फरसा इस्तेमाल करने का अभिकथन अपीलार्थी गुलाब साव के विरुद्ध था किन्तु न तो तत्सम उपहतियाँ पीड़ितों पर पायी गयी थी और न ही ऐसा अभिकथन सही परिप्रेक्ष्य में सिद्ध किया जा सका था, फिर भी समस्त अपीलार्थीगण को धारा 325 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया था और कारणों को स्पष्ट और दर्ज किए बिना विहित महत्तम दंड अभिनिर्णीत किया गया था। विचारण न्यायालय इन पहलूओं पर विचार करने में विफल रहा और अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध किया जिसे संपोषित नहीं किया जा सकता है और इसलिए उन्हें दोषमुक्त किया जा सकता है।

7. अभियोजन का विनिर्दिष्ट मामला यह था कि समस्त अभियुक्तगण सूचक शंभु शरण दास (अ॰ सा॰ 6) को उसके गाँव बरगनिया ले गए जहाँ अपीलार्थी सोना साव ने उसको लाठी मारी और दायीं कलाई पर उपहति कारित की जबकि अन्य अभियुक्तगण ने उस पर अंधाधुंध लाठियों से प्रहार किया और उसी सम्व्यवहार में यह अभिकथन किया गया था कि अभियुक्त हरिहर साव ने हथौड़े से उसके हाथ-पैर पर प्रहार किया था और जब अभियुक्त गुलाब साव ने उसकी हत्या करने के आशय से उसके मस्तक पर फरसा उठाया था, उसकी पत्नी नीरो देवी (अ॰ सा॰ 1) अचानक ढाल की तरह अपने पति के सामने आ गयी जिसके परिणामस्वरुप उसके मस्तक पर फरसा का प्रहार लगा और जिसने खून बहती उपहतियों को कारित किया और वह जमीन पर गिर गयी।

8. बरकागाँव स्टेट डिस्पेंसरी में 22.4.1989 को सूचक शम्भु शरण दास का परीक्षण सर्वप्रथम अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ त्रिगुणानंद प्रसाद द्वारा किया गया था जिन्होंने उसके शरीर पर निम्नलिखित उपहतियाँ पायी:-

(i) बाएँ एड़ी के जोड़ पर 2" x 1" का सूजन, अस्थिभंग से सुनी गयी आवाज हड्डी के टूट जाने का उपदर्शक था।

(ii) बाएँ पैर और दाएँ पैर पर 1" x 1/2" का सूजन। उसने मरीज को सदर अस्पताल, हजारीबाग निर्दिष्ट किया। अ० सा० 8 ने सूचक की उपहति रिपोर्ट को सिद्ध किया जो सदर अस्पताल, हजारीबाग के डॉ० आर० झा की लिखावट एवं हस्ताक्षर में थी और एक्सरे रिपोर्ट के अनुसार अस्थिभंग दांयी लिबिया हड्डी के निचले हिस्से पर था।

(iii) दाएँ पैर में लाल रंग की 1" x 1/2" में सूजन

(iv) दाएँ बाँह पर 1" x 1/2" का सूजन

(v) दायीं जांघ पर 1" x 1/2" का सूजन

(vi) दाएँ बाँह पर 1" x 1/2" का सूजन

गवाह के मत में उपहति सं० (ii) गंभीर और शेष सरल प्रकृति की थी और सारी की सारी छह घंटों के भीतर कड़े और भोथरे वस्तु द्वारा कारित की गयी थी।

उसी दिन अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ त्रिगुणानन्द प्रसाद ने शंभुशरण दास (सूचक) की पत्नी नीरो देवी का परीक्षण दोपहर 1.12 बजे किया था और निम्नलिखित उपहतियों को पाया था:

(i) मस्तक के आंतरिक भाग पर 2" x 1/2" x 1/4" की कटी उपहति,

(ii) दाएँ पैर पर लाल रंग का 2" x 1" का सूजन,

(iii) दाएँ कोहनी पर 1" x 1/2" का सूजन और

(iv) बाएँ गाल पर 2" x 1" का सूजन।

गवाह के मत में, उपहति सं॰ (i) तेज हथियार जो गड़ाँसा हो सकता है, द्वारा कारित सरल प्रकृति की थी। शेष उपहतियाँ लाठी जैसे कड़े और भोथरे वस्तु द्वारा छह घंटे के भीतर कारित सरल प्रकृति की थी। उन्होंने अपने कलम एवं हस्ताक्षर में उपहति रिपोर्ट को सिद्ध किया जिसे क्रमश: प्रदर्श 5 और 5/1 चिन्हित किया गया था। सदर अस्पताल, हजारीबाग से जारी शंभुशरण दास की छुट्टी की पर्ची डॉ आर॰ झा के कलम एवं हस्ताक्षर में थी जिसे सिद्ध किया गया था और प्रदर्श 6 और 7 चिन्हित किया गया था।

प्रति-परीक्षण में गवाह ने मत दिया कि नीरो देवी की उपहति सं॰ (i) गड़ाँसा द्वारा अथवा किसी अन्य तेज धार वाले हथियार द्वारा संभव थी। उन्होंने इस सुझाव से इंकार किया कि रिपोर्ट दुस्संधिपूर्ण थी। उपहति रिपोर्टों प्रदर्श 5 और 5/1 उपदर्शित करता था कि सूचक शंभुशरण दास (अ॰ सा॰ 6) और उसकी पत्नी नीरो देवी (अ॰ सा॰ 1) को शुरू में बरका गाँव स्टेट डिस्पेन्सरी में जाँचा गया था और वहाँ से शंभुशरण दास को हजारीबाग सदर अस्पताल निर्दिष्ट किया गया था जहाँ वह बीस दिनों तक अंतरंग रोगी के रूप में रहा था। घायल शंभु शरण दास का दिनांक 26.4.1989 का रिपोर्ट (प्रदर्श 5) ने आगे उपदर्शित किया कि उसकी टिबिया हड्डी के दाएँ भाग के निचले हिस्से पर फ्रैक्चर हुआ था और कड़े एवं भोथरे वस्तु द्वारा कारित गंभीर प्रकृति की उपहति पायी गयी थी। प्रदर्श 7 डॉ॰ आर॰ झा द्वारा जारी छुट्टी की पर्ची है किन्तु इस पर रजिस्ट्रेशन सं॰ 703 को छोड़कर मरीज का नाम तक नहीं लिखा हुआ है। हजारीबाग सदर अस्पताल में मरीज को भर्त्ती करने की तिथि 23.4.1989 दर्शायी गयी है जबकि छुट्टी की तिथि 13.5.1989 उल्लिखित की गयी थी। घटना का तरीका जैसा अभियोजन गवाहों द्वारा बताया गया है और सूचक (अ॰ सा॰ 6) और उसकी पत्नी नीरो देवी (अ॰ सा॰ 1) द्वारा प्राप्त की गयी उपहतियाँ क्रमश: प्रदर्श 5 और 5/1 के उपहति रिपोर्टों से संपुष्ट होती है।

9. अभियोजन की ओर से नौ गवाहों को प्रस्तुत किया गया था और उनका परीक्षण किया गया था।

10. अ॰ सा॰ 1 नीरो देवी सूचक की पत्नी और घायल गवाह है जिसने परिसाक्ष्य दिया कि वह स्वयं को उसके शरीर से लिपट कर उस पर और प्रहार किए जाने से उसे बचाने के लिए दौड़ी। उस समय अपीलार्थी गुलाब साव अपने हाथ में फरसा लिए था जबकि अपीलार्थी हरिहर साव हाथ में लोहा का हथौड़ा पकड़े था। हरिहर साव ने हथौड़ा से उसके पति के बाएँ पैर पर प्रहार किया और अन्य अपीलार्थीगण ने उस पर लाठियों से प्रहार किया। उसने आगे परिसाक्ष्य दिया कि वह अपने पति को बचाने दौड़ी और उसने उसके शरीर पर अपना शरीर लगभग गिरा दिया था और अपीलार्थी गुलाब साव ने फरसा से उस पर प्रहार किया जिसके परिणामस्वरुप उसने मस्तक पर कटी और खून बहती उपहतियाँ प्राप्त की। शुरू में बरका गाँव स्टेट डिस्पेन्सरी में उसकी उपहतियों का परीक्षण किया गया था और वहाँ से उसे हजारीबाग सदर अस्पताल निर्दिष्ट किया गया था। मैं पाता हूँ कि उसके परिसाक्ष्य को उसके प्रति परीक्षण में झूठलाया नहीं जा सका था। उसने अपीलार्थीगण को नामित किया जो जबरन उसके पति को गाँव के पीछे पीपल के पेड़ के निकट ले गए थे और उसने घटना का यह अंश देखा था जो गाँव में घटी थी जिसमें उसके पति पर अपीलार्थीगण द्वारा प्रहार किया गया था और उस पर भी प्रहार किया गया था। उसे उसके पति के भाई और उसके परिवार की अन्य महिलाओं द्वारा बरकागाँव स्टेट डिस्पेन्सरी ले जाया गया था।

11. अ॰ सा॰ 2 शकुन्तला देवी ने घटना की पुष्टि की और अपीलार्थीगण गुलाब साव और हरिहर साव के विनिर्दिष्ट आरोप को बताया जिन्होंने क्रमश: फरसा और हथौड़ा की मदद से उपहति कारित किया था। उसने दृढ़तापूर्वक अभिसाक्ष्य दिया कि घटना उसकी उपस्थिति में उसकी आँख के सामने हुई थी और उसने अपीलार्थीगण के हथियारों को बताया जबकि अन्य ने लाठी से लैस होकर पीड़ितों पर प्रहार किया था।

12. अ॰ सा॰ 3 नकुल पासवान, जो सूचक का भाई है, ने घटना के तरीके का समर्थन करते हुए परिसाक्ष्य दिया कि हल्ला सुनने पर वह गाँव के तालाब के निकट गया और उसने देखा कि गुलाब साव फरसा पकड़े था जबकि हरिहर साव के हाथ में हथौड़ा था और अन्य अपीलार्थीगण लाठियों से लैस थे। जब उसकी भाभी नीरो देवी अपने पति को बचाने आगे आयी, उसने गुलाब साव द्वारा किए गए फरसा के प्रहार से उपहतियों को पाया जिससे उसके मस्तक पर खून बहती उपहति कारित हुई। उसके बाद भी दोनों पीड़ितों पर अन्य अपीलार्थीगण द्वारा लाठियों से प्रहार किया गया था।

13. अ॰ सा॰ 4 गोपाल दास पासवान सूचक का एक अन्य भाई है जिसने अभिकथित घटना का चश्मदीद गवाह होने का दावा किया और घटना में अपीलार्थीगण के करतूतों को बताया और अन्य गवाहों, जिन्होंने अपीलार्थीगण के विनिर्दिष्ट करतूतों को बताते हुए न्यायालय में अभिसाक्ष्य दिया था, के परिसाक्ष्य को पुष्ट किया। उसने परिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थीगण, जिनको उसने मुख्य परीक्षण में नामित किया था, में से अपीलार्थी गुलाब साव फरसा पकड़े था जबकि हरिहर साव अपने हाथ में हथौड़ा पकड़े था और जब नीरो देवी अपने पति को बचाने आगे आयी, अपीलार्थी गुलाब साव ने फरसा का वार किया जिससे नीरो देवी के मस्तक पर कटी और खून बहती उपहति कारित हुई। अन्य अपीलार्थीगण ने उसके भाई शंभु शरण दास पर प्रहार किया था जिसके परिणामस्वरुप वह गिर पड़ा। मैं पाता हूँ कि इस गवाह ने अपीलार्थी हरिहर साव के कृत्यों को अभिकथित नहीं किया था जिसके विरुद्ध अन्य गवाह संगत थे कि उसने हथौड़ा से सूचक के पैर पर वार किया था जिससे टिबिया हड्डी का फ्रैक्चर (गंभीर उपहति) कारित हुआ।

14. अ॰ सा॰ 5 अर्जुन दास पासवान भी सूचक का भाई है, जो अभिकथित घटना में अपीलार्थीगण के विनिर्दिष्ट करतूत को बताते हुए घटना के तरीके के बारे में संगत था जिसमें उसके भाई (सूचक) और भाई की पत्नी नीरो देवी पर प्रहार किया गया था। घायलों को शुरू में बरका गाँव स्टेट डिस्पेन्सरी ले जाया गया था और वहाँ से उन्हें हजारीबाग सदर अस्पताल निर्दिष्ट किया गया था।

15. अ॰ सा॰ 6 शंभु शरण दास का कटघरे में विस्तारपूर्वक परीक्षण किया गया था। उसने अपना पूर्व विवरण सम्पुष्ट किया जो उसने बरका गाँव स्टेट डिस्पेन्सरी में पुलिस के समक्ष दिनांक 22.4.1989 को अपने फर्दबयान में कथित किया था और परिसाक्ष्य दिया कि जब वह प्रात: लगभग 6 बजे कुरुग्राम जा रहा था, अपीलार्थीगण ने उसे रोका था और उसे गाँव वापस जाने के लिए कहा गया था जहाँ उन्होंने एक पंचायती प्रस्तावित किया था। गवाह ने बताया अपने गाँव नापोखुर्द अपने घर के अत्यन्त निकट तालाब के पास पहुँचा, समस्त अभियुक्तगण-अपीलार्थीगण ने उसे घेर लिया था। अपीलार्थी सोना साव ने अन्य अभियुक्तगण को उस पर प्रहार करने का आदेश दिया था और उसके आदेश के अनुसरण में समस्त अभियुक्तगण अपीलार्थीगण उस पर लाठियों से अंधाधुंध प्रहार करने लगे थे और उसके शरीर के विभिन्न अंगों पर उपहति कारित किया था। उसने आगे बताया कि उसी संव्यवहार में अपीलार्थी हरिहर साव ने उसके बाएँ पैर के घुटने पर हथौड़ा से वार किया था। जब वह जमीन पर गिर गया, उसकी पत्नी उसे बचाने आगे आयी और जब उसने ढाल बनकर उसे बचाने का प्रयास किया, अपीलार्थी गुलाब साव ने उस पर फरसा से वार किया और मस्तक पर उपहति कारित किया और खून तेजी से बहने लगा। उसके द्वारा हल्ला करने पर उसके परिवार के सदस्य वहाँ आए, घटना को देखा और अभियुक्तगण उसके घर की ओर भाग गए और उसके घर को बेहद नुकसान कारित किया। उसने भूमि, जिसे उसके अनुसूचित जाति का सदस्य होने के नाते पर्चा जारी करके बिहार राज्य द्वारा उसके पक्ष में व्यवस्थापित किया गया था किन्तु समस्त अपीलार्थीगण उसकी भूमि को हड़प लेने पर उतारु थे, के संबंध में अपीलार्थीगण द्वारा उसके और उसके भाइयों के विरुद्ध दर्ज किए गए दांडिक कार्यवाहियों और मामलों से संबंधित अभिलेख पर उपलब्ध अनेक दस्तावेजों जैसे प्रदर्श 8, 9, 10 और 11 को सिद्ध किया। उसने अपना फर्दबयान प्रदर्श 2 और पर्चा, प्रदर्श 3 जिसे बिहार राज्य द्वारा प्रदान किया गया था, को भी सिद्ध किया। उसने स्पष्ट किया कि वर्ष 1989 में घटना घटित होने के बाद अपीलार्थीगण ने धारा 144 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन कार्यवाही और टाइटल वाद आरंभ करके उसके विरुद्ध मामलों की श्रृंखला इस आधार पर शुरू किया था कि उन्होंने भूतपूर्व भूस्वामी से जमीन खरीदा था जबकि उसका दावा उसे और उसके भाईयों को बिहार राज्य द्वारा प्रदान किए गए पर्चा पर आधारित था। उसने आगे परिसाक्ष्य दिया कि अपनी उपहतियों के उपचार के दौरान लगभग 20 दिनों तक वह अंतरंग रोगी के रूप में हजारीबाग सदर अस्पताल में रहा था जबकि उसकी पत्नी का उपचार केवल बरका गाँव स्टेट डिस्पेन्सरी में किया गया था। अभियुक्तगण अपीलार्थीगण का हेतु प्रकट करते हुए सूचक-पीड़ित ने कथन किया कि अभियुक्तगण ने भूमि विवाद और मछली मारने के लिए गाँव के तालाब का सरकार द्वारा व्यवस्थापन से कारित दु:ख के कारण उसकी हत्या करने के आशय से घटना को अंजाम दिया था। उसने प्रति परीक्षण में स्वीकार किया कि तेजधार वाले हथियार द्वारा उसको कोई उपहति कारित नहीं की गयी थी और लाठियों द्वारा उसके मस्तक पर वार किए जाने से खून बहती उपहति कारित हुई और वह बेहोश हो गया था। उसने आगे परिसाक्ष्य दिया कि जब वह छुट्टी के बाद अस्पताल से वापस लौटा, उसने पाया कि उसके घर के दो कमरों जो पक्के के थे, को क्षतिग्रस्त कर दिया गया था यद्यपि कमरों के नुकसान के संबंध में तथ्य उसे सदर अस्पताल में उसकी पत्नी द्वारा बताया गया था। उसने इस सुझाव से इंकार किया कि घटना उस तरीके से नहीं हुई थी जैसा उसने अपने फर्दबयान में प्रस्तुत किया था।

16. अ॰ सा॰ 7 एन॰ सिंह बरकागाँव पुलिस थाना का प्रभारी-अधिकारी था। उसने दिनांक 22.4.1989 को सूचक शंभुशरण दास के बयान के आधार पर बरकागाँव पी॰ एस॰ केस सं॰ 48 वर्ष 1989 दर्ज किया था और मामले का अन्वेषण उसके द्वारा अ॰ सा॰ 9 श्री अर्जुन सिंह, पुलिस के एस॰ आई॰ को सौंप दिया गया था।

17. अ॰ सा॰ 9 अर्जुन सिंह ने निवेदन किया कि उसने बरका गाँव पी॰ एस॰ केस सं॰ 48 वर्ष 1989 के अन्वेषण का प्रभार लेने के बाद सूचक और उसकी पत्नी का पुनर्बयान हजारीबाग सदर अस्पताल में दर्ज किया था। उसने रोड, जो बरबनिया तालाब के नाम से सर्वज्ञात तालाब की ओर जाता था, के दक्षिण ओर अवस्थित घटनास्थल का दौरा किया। उक्त सड़क निर्माणाधीन थी और उसने तालाब से 20 फीट की दूरी पर पीपल का पेड़ देखा जबकि इंगित किया गया घटनास्थल उक्त पेड़ से लगभग 15 फीट दूर था। उसने परिसाक्ष्य दिया कि सूचक का घर प्रथम घटना स्थल से लगभग 50 फीट की दूरी पर अवस्थित था और उसने पाया कि उत्तर-पूर्वी हिस्से पर ढली छत के साथ ईंटों से बने घर का अंश क्षतिग्रस्त था किन्तु उत्तर में अवस्थित उसके घर का टाइल लगा अंश सही सलामत था यद्यपि टाइलों को क्षतिग्रस्त पाया गया था। चुँकि सड़क निर्माणाधीन थी, गवाह ने स्पष्ट किया कि वह घटनास्थल पर रक्त नहीं पा सका था। अन्वेषण के क्रम में उसका स्थानांतरण एक अन्य स्थान पर कर दिया था और इसलिए उसने एस॰ आई॰ गौतम को अन्वेषण का प्रभार सौंप दिया था। उसने स्वीकार किया कि उसने घटनास्थल पर कुदाल अथवा बेलचा नहीं पाया था। उसने अस्पताल में अन्य गवाहों का बयान दर्ज किया।

18. अभियोजन गवाहों के परीक्षण के बाद समस्त अभियुक्तगण का पृथक रूप से परीक्षण किया गया था और उनमें से प्रत्येक का बयान धारा 313 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन दर्ज किया गया था। अभियुक्तगण का सामना उन सामग्रियों से करवाया गया था जो विचारण के क्रम में संग्रहित की गयी थी और अभिलेख पर लायी गयी थी जिनके प्रति उन्होंने अपने दोष से इंकार किया और उनको झूठा फँसाए जाने का प्रतिवाद किया। अपीलार्थीगण ने एक मात्र बचाव गवाह ब॰ सा॰ 1 कमलनाथ साव को प्रस्तुत किया जिसने फुलेश्वर साव और हरिहर साव, आदि के पक्ष में निष्पादित दिनांक 21.6.1986 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख को सिद्ध किया। रजिस्टर्ड विक्रय विलेख को प्रदर्श A चिन्हित किया गया था। उसने आगे उक्त भूमि के दो किराया रसीदों को सिद्ध किया जिन्हें प्रदर्श B और B/1 चिन्हित किया गया था। प्रति परीक्षण में इस गवाह ने स्वीकार किया कि प्रश्नगत भूमि प्रदर्श A उसके नाम में और फुलेश्वर साव के नाम में भूस्वामी द्वारा जारी हुकुमनामा द्वारा व्यवस्थापित की गयी थी किन्तु हिचकिचाहट के साथ स्वीकार किया कि उक्त हुकुमनामा के निष्पादन के समय उसका जन्म भी नहीं हुआ था। पक्षों के बीच उक्त भूमि पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144/145 के अधीन कार्यवाही भी आरम्भ की गयी थी।

19. सूचक का मामला था कि जब वह सरकारी कार्य से कुरु गाँव जा रहा था, विभिन्न घातक हथियारों से लैस समस्त अपीलार्थीगण ने उसको घेर लिया और उसे नापोखुर्द गाँव साथ चलने को कहा। चूँकि वे घातक हथियारों से लैस थे, सूचक भयभीत होकर और कोई विकल्प नहीं पाते हुए उनके साथ हो लिया। सूचक ने अपने सारवान साक्ष्य में आगे कथन किया कि जब वह अपने गाँव बरगनिया के पीपल पेड़ के निकट पहुँचा, अपीलार्थी सोना साव ने लाठी से वार किया और उसकी दायीं कलाई पर उपहति कारित किया और उसी संव्यवहार में अन्य अभियुक्तगण (अपीलार्थीगण) मन महादेव, पूरन, भुनेश्वर, शिव चरण, बोधन और कुन्दन उस पर लाठियों से प्रहार करने लगे जिसके फलस्वरूप अनेक उपहतियाँ पाते हुए वह गिर गया। उसने अपीलार्थी हरिहर साव के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन किया कि उसने उसके हाथ और पैर पर हथौड़ा से वार किया जबकि उसकी हत्या करने के आशय से जब अपीलार्थी गुलाब

साव ने फरसा उठाया उसकी पत्नी नीरो देवी अचानक सामने आ गयी और अपने पति के सामने ढाल की भाँति सीधी खड़ी हो गयी जिसके परिणामस्वरुप फरसा का वार उसके मस्तक पर हुआ और खून बहती उपहतियाँ कारित हुई। सूचक का आगे मामला यह है कि अपीलार्थीगण सूचक के घर में घुस गए और ईंट से बने भाग में तोड़-फोड़ किया और इसे नुकसान पहुँचाया और जंगल की ओर भाग गए। पीड़ितों को पहले बरका गाँव स्टेट डिस्पेन्सरी ले जाया गया और वहाँ से उनकी उपहतियों के बेहतर उपचार के लिए हजारीबाग सदर अस्पताल निर्दिष्ट कर दिया गया। सबसे पहले सूचक शंभु शरण दास का परीक्षण स्वयं घटना की तिथि अर्थात् दिनांक 22.4.1989 को बरकागाँव स्टेट डिसपेन्सरी में डॉ॰ त्रिगुणानन्द प्रसाद (अ॰ सा॰ 8) द्वारा किया गया था और वहाँ से उसे हजारीबाग सदर अस्पताल निर्दिष्ट किया गया था जहाँ डॉ॰ आर॰ झा ने उसके दाएँ पैर, दायीं बाँह और दायीं जांघ पर विभिन्न आयामों वाला सूजन पाया। एक्सरे रिपोर्ट के आधार पर डॉ॰ झा ने पाया कि सूचक के दाएँ टिबिया हड्डी के निचले हिस्से पर फ्रैक्चर हो गया था किन्तु कड़े और भोथरे वस्तु द्वारा कारित अन्य उपहतियाँ सरल प्रकृति की थी और टिबिया हड्डी के निचले हिस्से में ऐसा फ्रैक्चर, सूचक शंभु शरण दास के अनुसार अपीलार्थी हरिहर साव द्वारा हथौड़ा से कारित किया गया था, जबकि गवाह के अनुसार अन्य अपीलार्थीगण ने लाठी से वार किया था, फिर भी शरीर के विभिन्न अंगों पर केवल चार उपहतियाँ पायी गयी थी। अपीलार्थीगण मन महादेव साव उर्फ बनोदी साव, सोना साव, पूरन साव, धनेश्वर साव, घामर साव और बोधन साव के विरुद्ध अभिकथन था कि उन्होंने लाठियों से वार किया था किन्तु सूचक के शरीर पर केवल चार उपहतियाँ पायी गयी थी किन्तु दायीं टिबिया बोन के फ्रैक्चर जिसे करने वाला अपीलार्थी हरिहर साव था, को छोड़कर उपहतियों में से किसी को भी गंभीर प्रकृति का नहीं पाया गया था। सूचक शंभु शरण दास की पत्नी नीरो देवी (अ॰ सा॰ 1) के शरीर पर उसके दाएँ पैर, दाएँ कोहनी और बाएँ गाल में सूजन के अतिरिक्त उसके मस्तक के आंतरिक भाग पर 2" x 1/2" x 1/4" की कटी उपहति पायी गयी थी। बरकागाँव स्टेट डिस्पेन्सरी के डॉ॰ त्रिगुणानन्द प्रसाद के मत में पूर्वोक्त कटी उपहति यद्यपि सरल प्रकृति की थी किन्तु तेज धार वाले हथियार, जो फरसा हो सकता था, द्वारा कारित की गयी थी और उसकी अन्य उपहतियाँ लाठी जैसे कड़े और भोथरे वस्तु द्वारा उसके परीक्षण के छह घंटे के भीतर कारित की गयी थी। छुट्टी की पर्ची ने उपदर्शित किया कि यद्यपि सूचक (अ॰ सा॰ 6) को हजारीबाग सदर अस्पताल में दिनांक 23.4.1989 को भर्ती किया गया था किन्तु रजिस्ट्रेशन सं॰ 703 (प्रदर्श 7) के तहत दिनांक 13.5.1989 को निर्मुक्त कर दिया गया था यद्यपि उसका नाम स्पष्टत: उल्लिखित नहीं किया गया था। किन्तु आपत्ति के बिना अभियोजन की ओर से सिद्ध किया गया था और प्रदर्श 6 और प्रदर्श 7 चिन्हित किया गया था।

20. अब मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों के अधीन विचाराधीन प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी हरिहर साव, जिसने उसके दाएँ घुटने पर हथौड़ा मारकर सूचक के दाएँ टिबिया हड्डी का फ्रैक्चर कारित किया था, के साथ अन्य अपीलार्थीगण का समान लक्ष्य था। अभियोजन गवाह अर्थात् अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 6 घटनास्थल के बारे में संगत थे कि यह पीपल के पेड़ के निकट था जहाँ सोना साव और हरिहर साव को छोड़कर बाकी अपीलार्थीगण ने सूचक पर लाठियों से प्रहार किया था, किन्तु सूचक के शरीर पर केवल चार उपहतियाँ पायी गयी थी और यह सात अपीलार्थीगण की सात लाठियों के वार से कारित नहीं किया जा सकता था और, इसलिए, मैं पाता हूँ कि अपने फर्दबयान में सूचक द्वारा और उनके सारवान साक्ष्य में अन्य गवाहों द्वारा कुछ रंग मिलाया गया है। किन्तु गवाह दृढ़ और संगत थे कि सूचक के घुटना पर अपीलार्थी हरिहर साव ने हथौड़ा से वार किया था जबकि सोना साव ने नीरो देवी के मस्तक पर कटी उपहति कारित करते हुए फरसा से वार किया था।

मैं मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों से और गवाहों, जो सूचक (अ॰ सा॰ 6) के भाई, पत्नी और भाभी है, के बयानों से पाता हूँ कि सूचक और उसकी पत्नी दोनों पर प्रहार किया गया था किन्तु पीड़ितों में से कोई भी लाठियों से लैस प्रत्येक अपीलार्थी के प्रत्येक कृत्य को नहीं बता सका था। लाठी द्वारा कारित कोई भी तत्सम उपहति, कम से कम सात, पीड़ितों के शरीर पर नहीं पायीं गयी थी। अभियोजन मामला संदेहास्पद प्रतीत होता है कि समस्त अपीलार्थीगण ने सामान्य उद्देश्य अग्रसर करने में मिल-जुलकर घटना को अंजाम दिया था। तात्विक अभियोजन गवाह संगत है कि सूचक की टिबिया में तत्सम गंभीर उपहतियाँ कारित करते हुए अपीलार्थी हरिहर साव ने हथौड़ा से वार किया था और जब उसकी पत्नी नीरो देवी अपने पति को बचाने आगे आयी, अपीलार्थी गुलाब साव ने फरसा से वार किया जिसने उसके मस्तक में उपहति कारित किया और खून बहने लगा। गुलाब साव जिसे भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन पृथक रूप से दोषसिद्ध किया गया था, के अतिरिक्त समस्त अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147/148/325 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था। सूचक का मामला यह नहीं था कि समस्त अपीलार्थीगण विधि विरुद्ध जमाव निर्मित करते हुए घातक हथियारों से लैस थे और सामान्य उद्देश्य के अनुसरण में उन्होंने बलवा का अपराध किया था ताकि भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अधीन दंडनीय अपराध आकृष्ट हो।

21. ऊपर चर्चा किए गए कारणों से, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147/148/325 के अधीन आरोप के लिए अपीलार्थीगण मन महादेव साव उर्फ बनोदी साव, सोना साव, पूरन साव, धनेश्वर साव, शिव चरण साव, घामर साव और बोधन साव की दोषसिद्ध संपोषित नहीं की जा सकती है। अपीलार्थीगण ने यह स्पष्ट करते हुए कि उन्होंने रजिस्टर्ड विक्रय-विलेख, जिसे सिद्ध किया गया था और प्रदर्श A चिन्हित किया गया था, के फलस्वरुप प्रश्नगत भूमि पर टाइटल अर्जित किया था जबकि उक्त भूमि का अंश सरकारी भूमि होने के नाते सूचक और उसके भाईयों के पक्ष में पर्चा जारी करके व्यवस्थापित किया गया था क्योंकि वे भूमिहीन थे और अनुसूचित जाति के सदस्य थे, पक्षों के बीच दीर्घकालिक भूमि विवादों को प्रतिवाद का आधार बनाया था। उक्त भूमि पर धारा 144 के अधीन कार्यवाही शुरू की गयी थी जिसे निपटाया गया था और टाइटल वाद जिसे अपीलार्थीगण द्वारा शुरू किया गया था, मुंसिफ, हजारीबाग के न्यायालय में विचाराधीन है। पक्षों में से किसी ने भी संपत्ति के निजी बचाव के अपने अधिकार का दावा नहीं किया है और यह मामला नहीं था कि सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में दो समूहों के बीच खुली लड़ाई हुई थी और इसलिए अन्य अपीलार्थीगण संदेह के लाभों के हकदार है।

22. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों और यहाँ ऊपर की गयी चर्चा को ध्यान में रखते हुए मैं पाता हूँ कि गुलाब साव और हरिहर साव को छोड़कर भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147/148/325 के अधीन अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि विधि में संपोषणीय नहीं है और इसलिए बरका गाँव पी॰ एस॰ केस सं॰ 48 वर्ष 1989 से उद्भुत एस॰ टी॰ सं॰ 525 वर्ष 1993 में उन्हें दोषमुक्त किया जाता है। मैं आगे पाता हूँ कि अभियोजन की ओर से दिए गए साक्ष्य की दृष्टि में और चिकित्सा साक्ष्य पर विचार करते हुए कि अपीलार्थीगण गुलाब साव ने तेज धारवाले हथियार का प्रयोग करते हुए नीरो देवी के मस्तक पर उपहति कारित किया था, उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन दोषी सही अभिनिर्धारित किया गया था और दो वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंड दिया गया था। विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत उसकी दोषसिद्धि और दंडादेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और इस प्रकार इसे मान्य ठहराया जाता है। जहाँ तक भारतीय दंड संहिता की धारा 325 के अधीन अपीलार्थी हरिहर साव के दोषसिद्धि का संबंध

है, मैं पाता हूँ कि सूचक (अ॰ सा॰ 6) के दाएँ टिबिया हड्डी के फ्रैक्चर की प्रकृति के तत्सम उपहति के बारे में अभिकथन अभियोजन गवाहों द्वारा सम्पुष्ट किया गया है। अभियोजन गवाहों का विस्तारपूर्वक परीक्षण किया गया था किन्तु उनकी विश्वसनीयता पर अविश्वास नहीं किया जा सकता था और इसलिए मैं पाता हूँ और अभिनिर्धारित करता हूँ कि भारतीय दंड संहिता की धारा 325 के अधीन अपीलार्थी हरिहर साव को दोषी सही अभिनिर्धारित किया गया था। अभियोजन यह सिद्ध करने में विफल रहा कि दोनों का अपराध करने के लिए सामान्य उद्देश्य था जैसा विचारण न्यायालय द्वारा गलत रूप से निष्कर्षित किया गया है और धारा 149 भा॰ दं॰ सं॰ की मदद से अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध नहीं किया गया था। मैं विद्वान अधिवक्ता के तर्कों में सार पाता हूँ कि यद्यपि अपीलार्थी हरिहर साव को भारतीय दंड संहिता की धारा 325 के अधीन दोषी अभिनिर्धारित किया गया था किन्तु कारणों को स्पष्ट और दर्ज किए बिना सात वर्षों का महत्तम दंड अधिनिर्णीत किया गया था। विनिर्दिष्ट कारणों की कमी के कारण, भारतीय दंड संहिता की धारा 325 के अधीन अपीलार्थी हरिहर साव और अन्य को सात वर्षों के कारावास का दंड अधिनिर्णीत करके विचारण न्यायालय ने गलती की थी। चूँकि धारा 325 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपीलार्थी हरिहर साव की दोषसिद्धि को मान्य ठहराते हुए अन्य अपीलार्थीगण को दोषमुक्त किया गया है, उसको सात वर्षों की सीमा तक अधिनिर्णीत दंड को केवल तीन वर्षों के कठोर कारावास में परिवर्तित किया जाता है। ऊपर उपदर्शित तरीके से यह दांडिक अपील अंशत: अनुज्ञात की जाती है। धारा 324 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपीलार्थी गुलाब साव की दोषसिद्धि और उसमें अधिनिर्णीत दंडादेश अभिपुष्ट किया जाता है और मान्य ठहराया जाता है। अन्य अपीलार्थीगण मन महादेव साव उर्फ बनोदी साव, सोना साव, पूरन साव, धनेश्वर साव, शिव चरण साव, घामर साव और बोधन साव को दोषमुक्त किया जाता है और उनका जमानत पत्र उन्मोचित किया जाता है। विचारण न्यायालय को विधि के अनुरूप अपीलार्थीगण गुलाब साव और हरिहर साव के विरुद्ध आदेशिका जारी करके प्रभावकारी कदम उठाने का निर्देश दिया जाता है क्योंकि उनकी अंतरिम जमानत वापस ले ली गयी है।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

इंद्रजीत बनर्जी एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cr. M. P. No. 670 of 2010. Decided on 27th August, 2010.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406, 409 एवं 420/34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग और छल–अभिखंडन हेतु आवेदन–विभिन्न कंपनिया/विज्ञापनदाताओं से धन की विशाल राशि प्राप्त करने पर याचीगण धन जिसका सूचक हकदार था, का भुगतान करने में विफल रहे–ऐसी सारी राशियों, जिसका सूचक हकदार था, को देने से जानबूझकर इंकार करके याचीगण ने न्यास भंग किया है और राशियाँ प्राप्त करने की तिथि से दो वर्षों से अधिक समय तक इसे जानबूझकर अपने पास रखे हुए है–सूचक का अभिकथन कि अपने लिए गलत रूप से लाभ पाने और उसको गलत रूप से नुकसान पहुँचाने के लिए याचीगण ने बेइमानी से उसका धन अपने पास रखा, युक्तियुक्त आधार के बिना नहीं है–प्राथमिकी में अभिकथन सूचक के धन का दांडिक दुर्विनियोग और न्यास का दांडिक भंग के अपराधों के लिए प्रथम दृष्टया ताथ्यिक मामला अधिकथित करते हैं और संपूर्ण अन्वेषण एवं न्यायनिर्णयन की अपेक्षा करते हैं–अपील खारिज। (पैराएँ 15 से 18)

निर्णयज विधि.—(2009)1 SCC 996; (2007)3 SCC (Cri) 370; (2003) SCC (Cri) 1703; (2006)3 SCC (Cri) 188; (2009)4 SCC 439; (2001)8 SCC 645—Distinguished; (1999)3 SCC 259; (2006)3 SCC (Cri) 188; (2001)8 SCC 645—Relied on.

अधिवक्तागण.—M/s B. M. Tripathy, T. Kabiraj, For the Petitioners; A.P.P., For the State. Mr. Indrajeet Sinha, For the O.P. No. 2.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान अधिवक्ता और विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया और उनकी सहमति से ग्रहण के चरण पर यह मामला निपटारे के लिए लिया जाता है।

2. याचीगण ने वर्तमान याचिका समस्त दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया है जिसे धाराओं 406, 409, 420/34 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपराधों के लिए विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा दर्ज प्राथमिकी के आधार पर शुरू किया गया है और यह डोरन्डा पी॰ एस॰ केस सं॰ 208 वर्ष 2010 दिनांक 15.6.2010 तत्सम जी॰ आर॰ सं॰ 2477 वर्ष 2010 के रूप में दर्ज किया गया है।

3. इस मामले को निपटाने के लिए प्रासंगिक तथ्य जैसा प्राथमिकी के विषयवस्तु से प्रतीत होता है, निम्नलिखित है:

सूचक एक प्रतिष्ठित क्रिकेटर है जिसने देश-विदेश में व्यापक प्रसिद्धि अर्जित किया है।

याचीगण, एक प्राईवेट लिमिटेड कम्पनी अर्थात्, मेसर्स गेम प्लान स्पोर्ट्स प्राइवेट लिमिटेड जिसका मुख्यालय कोलकाता में है, का निदेशक होने के नाते सूचक के पास उसके राँची स्थित घर गए और स्वयं को विपणन मामलों के प्रबंधन का विशेषज्ञ बताते हुए उनके उत्पादों के अनुमोदन के लिए सूचक और विभिन्न कंपनियों/विज्ञापनदाताओं के बीच हुए वाणिज्यिक संविदाओं में उसके एजेन्ट के रूप में सूचक का प्रतिनिधित्व करने का प्रस्ताव किया। सद्भावपूर्व सद्विश्वास में याचीगण पर विश्वास करते हुए सूचक ने याचीगण के साथ दिनांक 1 फरवरी, 2005 को तीन वर्षों की अवधि के लिए, जिसका अवसान दिनांक 31 जनवरी, 2008 को होना था, करार किया जिसके अधीन याचीगण के प्रतिनिधित्व वाली कम्पनी को सूचक के एकमात्र प्रबंधक-सह-एजेन्ट के रूप में काम में लगाया गया था।

सूचक के साथ करार करते हुए याचीगण ने उनके उत्पादों के अनुमोदन और विपणन के लिए और विभिन्न कम्पनियों से संविदा राशियों को प्राप्त करने के लिए और उनके द्वारा प्राप्त की गयी ऐसी सारी राशियों को तत्परता से सूचक को भेजने के लिए सूचक की ओर से विभिन्न वाणिज्यिक स्थापनों के साथ विपणन संविदाओं को करने के लिए सहमत हुए थे और जिम्मा लिया था।

दिनांक 1 जनवरी, 2005 से दिनांक 31 जनवरी, 2008 तक अभियुक्तगण ने विभिन्न कम्पनियों/विज्ञापनदाताओं से विशाल राशियाँ प्राप्त की थी।

करार की अवधि के अवसान के बाद, सूचक द्वारा याचीगण को सूचित किया गया था कि अवधि बढ़ायी नहीं जा रही थी और तद्द्वारा उन्होंने उसके एकमात्र प्रबंधक-सह-एजेन्ट के रूप में सूचक का प्रतिनिधित्व करने का अपना दर्जा खो दिया था। किन्तु सूचक ने केवल तीन कम्पनियों अर्थात् भारत पेट्रोलियम, मेसर्स टाइटन इंडस्ट्रीज और मेसर्स लाफार्ज सीमेन्ट जिनके साथ एजेन्सी के अस्तित्व के दौरान संविदाएँ की गयी थी, के संबंध में फ्रीलान्स आधार पर अपने एजेन्ट के रूप में कार्य करने की अनुमति उनको दी थी।

सूचक ने अभिकथन किया है कि दिनांक 31 जनवरी, 2008 के पहले किए गए त्रिपक्षीय करारों के आधार पर अभियुक्तगण/याचीगण ने विभिन्न कम्पनियों से विशाल राशियाँ प्राप्त की थी जिसमें से 8,44,20,169/-रुपयों की राशि सूचक को भुगतान योग्य थी, किन्तु याचीगण ने गैर-कानूनी रूप से और गैर ईमानदार रूप से धन का दुर्विनियोग कर लिया। इसके अतिरिक्त, उस अवधि के दौरान जब दिनांक 31 जनवरी, 2008 के बाद सूचक द्वारा याचीगण को फ्रीलांस आधार पर अपने प्रबंधक-सह-एजेन्ट के रूप में काम पर लगाया गया था, उन्होंने तीनों कम्पनियों से 2,02,50,000/-रुपयों की कुल राशि प्राप्त की थी, किन्तु वे आशयपूर्वक और गैर ईमानदार रूप से धन का लेखा-जोखा देने में और धन को सूचक को सौंपने में विफल रहे। सूचक द्वारा किए गए अनगिनत बुलावों का उत्तर देने में याचीगण की विफलता उसे याचीगण से अपने देयों को प्राप्त करने के लिए धन वाद के संस्थापन की ओर ले गयी और अभियुक्तगण के अभिकथित दांडिक आचरण से व्यथित होकर वर्तमान प्राथमिकी दाखिल की गयी थी।

4. याचीगण ने मुख्यत: इस आधार पर प्राथमिकी और अपने विरुद्ध दांडिक कार्यवाही का विरोध किया है कि प्राथमिकी में किए गए संपूर्ण अभिकथनों से कोई दांडिक अपराध नहीं बनता है। बल्कि तथ्य दर्शाएँगे कि विभिन्न कम्पनियों से याचीगण द्वारा प्राप्त की गयी राशियों का लेखा नहीं दिए जाने के कारण विवाद उद्‌भुत हुआ और ऐसा विवाद अनन्यत: सिविल विवाद है और धन की प्राप्ति के लिए सूचक ने पहले ही कोलकाता उच्च न्यायालय में सिविल कार्यवाही संस्थापित किया है।

5. आधारों को विस्तार देते हुए याचीगण का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री बी॰ एम॰ त्रिपाठी निवेदन करेंगे कि जैसा उसकी प्राथमिकी में सूचक द्वारा निर्दिष्ट करार के निबंधनानुसार स्वीकार किया गया है, याचीगण को विभिन्न कम्पनियों/विज्ञापनदाताओं, जिनके उत्पादों को विपणन के लिए अनुमोदन करने हेतु सूचक सहमत हुआ था, से संविदा राशियों को प्राप्त करने का प्राधिकार था। करार के तीन वर्षों की अवधि के दौरान याचीगण ने विभिन्न कम्पनियों के साथ अनेक संविदाएँ की थी और ऐसी संविदाओं की अवधि दिनांक 31 जनवरी, 2008 के परे थी और इसलिए, याचीगण एवं सूचक के बीच हुए दिनांक 31 जनवरी, 2008 के करार की समाप्ति मात्र ऐसी सारी कम्पनियों/विज्ञापनदाताओं, जिनके साथ संविदा अवधि का प्रवर्तन जारी था, से धन प्राप्त करने के याचीगण के अधिकार को निराकृत नहीं कर सकती थी।

विद्वान अधिवक्ता आगे स्पष्ट करते हैं कि जब सूचक ने इस आधार पर कि संविदा की अवधि 31 जनवरी, 2008 को समाप्त हो गई थी, अन्य एजेन्टों को काम पर लगाया था जिन्होंने कुछ कम्पनियों के साथ नए सिरे से बातचीत करना शुरू किया था, याचीगण ने इस आधार पर आपत्ति उठायी थी कि त्रिपक्षीय करार, जिसे सूचक की ओर से याचीगण और विभिन्न कंपनियों/विज्ञापनदाताओं के बीच किया गया था, अस्तित्वहीन नहीं हुआ था और ऐसी संविदाओं के प्रवर्तन की अवधि तक याचीगण को सूचक द्वारा बाहर निकाला नहीं जा सकता था और न ही ऐसी संविदाओं के लाभ से सूचक द्वारा याचीगण को वंचित किया जा सकता था। विद्वान अधिवक्ता जोड़ते हैं कि जैसा करार के निबंधनानुसार स्वीकार किया गया है, इस तथ्य कि सूचक के साथ करार दिनांक 31 जनवरी, 2008 को समाप्त हो गया था, को ध्यान में लिए बिना याचीगण 30% की दर से अपना कमीशन रखने के हकदार है। जब सूचक ने एक पक्षीय निर्णय द्वारा विभिन्न कम्पनियों के साथ उसका प्रतिनिधित्व करने के लिए अन्य एजेन्टों को काम पर लगाया था, याचीगण ने इस आधार कि वे उन राशियों, जिन्हें सूचक के नवनियुक्त एजेन्टों द्वारा क्लाइन्ट में से कुछ से संग्रहित किए जा सकता है, में 30% कमीशन प्राप्त करने के हकदार हैं, पर अपने धारणाधिकार

के प्रयोग के अपने-अपने अधिकार की घोषणा की थी। विद्वान अधिवक्ता जोड़ते हैं कि सूचक 8,18,61,718/- रुपयों की राशि की डिक्री के लिए और लेखा देने के लिए और अंतरिम ब्याज और 12% की वार्षिक दर से निर्णय की तिथि से ब्याज के लिए भी कोलकाता उच्च न्यायालय के समक्ष सी० एस० सं० 100 वर्ष 2010 वाला सिविल वाद पहले ही संस्थापित कर चुका है।

परिवादी/वादी द्वारा दाखिल अंतरिम आवेदन पर, कोलकाता उच्च न्यायालय ने याचीगण की कम्पनी अर्थात् गेम प्लान स्पोर्ट प्राईवेट लिमिटेड को 8,18,61,718/-रुपयों की राशि का अंश रखे बिना अपना बैंक खाता चलाने से निर्बंधित करते हुए एक-पक्षीय आदेश पारित किया था। जब याचीगण ने न्यायालय की जानकारी में कतिपय तात्विक साक्ष्य को लाया जिन्हें परिवादी/वादी द्वारा आशयपूर्वक दबाया गया था, न्यायालय ने राशि को 5.21 करोड़ रुपयों तक घटा दिया। विद्वान अधिवक्ता जोड़ते हैं कि अन्यथा भी प्राथमिकी में किए गए अभिकथन संपुष्ट नहीं करते हैं कि आरंभ से ही अर्थात् उस तिथि से जब से उन्होंने वर्ष 2005 में सूचक के साथ करार किया था, याचीगण का गैर ईमानदार आशय था और न ही यह कहा जा सकता है कि याचीगण ने दांडिक दुर्विनियोग का कृत्य किया था अथवा न्यास का दांडिक भंग किया था क्योंकि विवाद लेखा दिए जाने से संबंधित है और शुद्धतः सिविल प्रकृति का है।

विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि केवल याचीगण को परेशान करने के लिए और याचीगण के स्वामित्व वाली कम्पनी की प्रतिष्ठा हानि और अपमान कारित करने के लिए सूचक द्वारा वर्तमान दांडिक कार्यवाही दाखिल की गयी है और याचीगण के विरुद्ध निजी और व्यक्तिगत शिकायतों का बदला लेने के असद्भावपूर्व आशय के साथ प्राथमिकी दाखिल की गयी है।

6. अपने तर्कों को पुख्ता करने के लिए, विद्वान अधिवक्ता सर्वोच्च न्यायालय के निम्नलिखित निर्णयों पर विश्वास करेंगे और उन्हें निर्दिष्ट करेंगे :

(I) वी० वाई० जोश बनाम गुजरात राज्य एवं एक अन्य, ***[(2009)1 SCC (Cri)996]***

(II) वीर प्रकाश बर्मा बनाम अनिल अग्रवाल, ***[(2007)3 SCC (Cri)370***

(III) अजय मित्रा बनाम मध्य प्रदेश राज्य, ***[2003 SCC (Cri)1703***

(IV) आई० ओ० सी० बनाम एन० ई० पी० सी० इंडिया लि० ***[(2006)3 SCC (Cri) 188.***

7. दूसरी ओर, विपक्षी पक्षकार सं० 2 के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता निवेदन करेंगे कि याचीगण द्वारा दिए गए आधार पूर्णतः भ्रामक और गलत है और पोषणीय नहीं हैं।

विपक्षी पक्षकार सं० 2 के विद्वान अधिवक्ता, श्री इंद्रजीत सिन्हा ने निवेदन किया कि मात्र इसलिए कि संविदा भंग किए जाने के कारण विवाद उद्भुत हुआ और व्यथित पक्ष को सिविल उपचार उपलब्ध है, यह स्वयं में याचीगण को उसी तथ्य पर जिसके लिए दांडिक अपराध निर्मित हुआ है, दांडिक अभियोजन से उन्मुक्ति प्रदान नहीं करेगा।

8. प्राथमिकी के विषय-वस्तु का पठन करते हुए विद्वान अधिवक्ता स्पष्ट करते हैं कि याचीगण के कृत्य, जैसा प्राथमिकी में अभिकथन किया गया है, उपदर्शित करेंगे कि याचीगण ने सूचक के एजेन्ट के रूप में कार्य करते हुए विभिन्न कम्पनियों/विज्ञापनदाताओं से धन की विशाल राशि प्राप्त की थी और राशियों, जिनका सूचक हकदार था, को तत्परता से देने के बजाय इसे गैर-कानूनी रूप से अपने पास रख लिया है और इस गलत तथा भ्रामक अभिवाक् पर कि भविष्य में अपेक्षित अनभिनिश्चित राशियों

के विरुद्ध भी, जो याचीगण द्वारा नहीं बल्कि दिनांक 31 जनवरी, 2008 के बाद सूचक द्वारा काम पर लगाए गए अन्य एजेन्टों द्वारा उनके साथ किए गए संविदाओं के आधार पर विभिन्न कम्पनियों द्वारा भुगतान योग्य हो सकती है, स्वयं अपना कमीशन प्राप्त करने के उद्देश्य से राशि को अपने पास रखने के हकदार है, धन का दांडिक दुर्विनियोग किया है। धन को इस प्रकार गैरकानूनी रूप से रख लेना न केवल दांडिक दुर्विनियोग है बल्कि न्यास का दांडिक भंग भी है और जिसके लिए याचीगण दांडिक रूप से दायी हैं। अपने तर्कों को पुख्ता करने के लिए विद्वान अधिवक्ता सर्वोच्च न्यायालय के निम्नलिखित निर्णयों पर विश्वास करेंगे और उन्हें निर्दिष्ट करेंगे:–(i) **इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन बनाम एन॰ ई॰ पी॰ सी॰ इंडिया लिमिटेड एवं अन्य, [(2006)3 SCC (Cri)188,** (ii) **महेश चौधरी बनाम राजस्थान राज्य एवं एक अन्य [(2009)4 SCC 439] एवं** (iii) **एम॰ कृष्णन बनाम विजय सिंह एवं एक अन्य [(2001)8 SCC 645.**

9. प्रतिद्वंदी तर्कों से, विनिश्चय के लिए उद्भुत विवाद्यक निम्नलिखित है:–

(i) क्या संविदा के भंग से उद्भुत विवाद के मामले में, जब सिविल उपचार उपलब्ध है और व्यथित पक्ष द्वारा इनका लाभ लिया गया है, उन्हीं तथ्यों पर दांडिक दायित्व जोड़ा जा सकता है?

(ii) ऐसे मामलों में दांडिक परिवाद अभिखंडित करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के प्रावधानों के अधीन इस न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का विस्तार क्या है?

(iii) क्या याचीगण के विरुद्ध दांडिक अभियोजन न्यायोचित ठहराने के लिए वर्तमान मामले के तथ्य वस्तुतः किसी अपराध को प्रथम दृष्टया प्रस्तुत करते हैं?

10. प्राथमिकी अभिखंडित करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा अधिकारिता के प्रयोग के संबंध में विधिक अवस्था सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों की श्रृंखला द्वारा अब सुनिश्चित है। निम्नलिखित मामलों में कुछ निर्णयों को उल्लिखित किया जा सकता है:

*(i) **माधवराव जीवाजी राव सिंधिया बनाम संभाजी राव चन्द्रोजी राव आंग्रे, [(1988)1 SCC 692;** (ii) हरियाणा राज्य बनाम चौधरी भजन लाल, **[(1992 SCC (Cri)426;** (iii) रुपन देवल बजाज बनाम कुँवर पाल सिंह गिल, **[(1995)6 SCC (Cri) 194** और (iv) **झंडू फार्मास्यूटिकल वर्क्स लि॰ बनाम मो॰ शरफुल हक, [2005 (1) SCC 122]***

11. पूर्वोल्लिखित मामलों में से प्रत्येक में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों को निम्नलिखित शब्दों में उद्धृत किया जा सकता है:

''.....आरंभिक चरण पर कार्यवाही अभिखंडित करने की अंतर्निहित शक्तियाँ केवल तब ही प्रयोग की जा सकती है जब परिवाद अथवा प्राथमिकी में किए गए अभिकथन, यदि इन्हें उनके प्रकट मूल्य पर अथवा संपूर्णता में स्वीकार भी किया जाए, कोई अपराध किया जाना प्रथम दृष्टया प्रकट नहीं करते हैं अथवा जहाँ प्राथमिकी अथवा परिवाद में किए गए अखंडनीय अभिकथन और इनके समर्थन में विश्वास किए गए साक्ष्य किसी अपराध, को अभियुक्त के विरुद्ध प्रकट नहीं करते हैं अथवा अभिकथन इतने बेतुके और अंतर्निहित रूप से असंभाव्य हैं कि जिनके आधार पर कोई भी विवेकशील व्यक्ति इस न्यायोचित निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता था कि अभियुक्त के विरुद्ध अग्रसर होने के लिए पर्याप्त आधार है अथवा संहिता अथवा किसी अन्य संविधि के किसी प्रावधान में दांडिक कार्यवाही के संस्थापन और इसे जारी रखने के लिए अभिव्यक्त विधिक वर्जना सम्मिलित की गयी है अथवा जहाँ दांडिक कार्यवाही स्पष्टतः असद्भावपूर्वक लाई गयी है और अभियुक्त से प्रतिशोध लेने के लिए और निजी एवं व्यक्तिगत दुश्मनी के कारण उसे अपमानित करने के अंतरस्थ हेतु के साथ द्वेषपूर्वक आरम्भ की गयी है।''

12. इस विवाद्यक पर कि क्या संविदा के भंग होने से उद्भुत विवाद के मामले में जहाँ सिविल उपचार उपलब्ध था और इसका लाभ लिया भी गया है, दांडिक विधि के अधीन उपचार वर्जित है?

13. पूर्वतर मामलों में विनिश्चित निर्णयाधार को दोहराते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने **एम॰ कृष्णन बनाम विजय सिंह एवं एक अन्य [(2001)8 SCC 645** में प्रकाशित मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

''पक्षों के बीच सिविल वाद का लंबित रहना मात्र अभियुक्त के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने का आधार नहीं बन सकता है और यदि इसकी अनुमति दी जाती है, ऐसी परिपाटी अभियुक्त को दांडिक कार्यवाही से बचने का आसान रास्ता उपलब्ध करा देगा।''

राजेश बजाज बनाम राज्य (दिल्ली का एन॰ सी॰ टी॰) [(1999)3 SCC 259 में प्रकाशित मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:

''यह हो सकता है कि वर्तमान परिवाद में कथन किए गए तथ्य वाणिज्यिक संव्यवहार अथवा धनीय संव्यवहार प्रकट करें किंतु यह अभिनिर्धारित करने के लिए शायद ही यह कोई कारण है कि छल का अपराध ऐसे संव्यवहार से बच निकलेगा। वस्तुतः अनेक छल वाणिज्यिक और धनीय संव्यवहारों में किए जाते हैं। ऐसा ही एक उदाहरण निम्न है।''

इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन बनाम एन॰ ई॰ पी॰ सी॰ इंडिया लि॰ एवं अन्य [(2006)3 SCC (Cri)188 में प्रकाशित मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने सिद्धान्तों को अधिकथित करते हुए निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:

''यदि परिवाद में किए गए अभिकथन को उनके प्रकट मूल्य पर लेने पर दांडिक अपराध प्रकट करते हैं, परिवाद मात्र इसलिए अभिखंडित नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह वाणिज्यिक संव्यवहार अथवा संविदा के भंग से संबंधित है जिसके लिए सिविल उपचार उपलब्ध है और इसका लाभ भी लिया गया है। वाणिज्यिक संव्यवहार अथवा विवाद दांडिक अपराध अंतर्ग्रस्त करता है। यदि यह पाया जाता है कि यह जानकारी होते हुए भी कि केवल सिविल विधि में उपचार उपलब्ध है, महत्वहीन परिवाद दाखिल किया गया था, कार्यवाही के अंत में विधि के अनुरुप ऐसे व्यक्ति, जिसने ऐसा परिवाद दाखिल किया था, को उत्तरदायी बनाना चाहिए,□न्यायालय को धारा 250 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन शक्ति का प्रयोग बार-बार करना चाहिए जहाँ परिवादी की तरफ से द्वेष अथवा तुच्छता अथवा अंतरस्थ हेतु है।''

14. मैंने याचीगण के अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट निर्णयों का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया है और मैं पाता हूँ कि निर्णयों में से कोई भी वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर लागू नहीं होगा।

वी॰ वाई जोश (ऊपर), वेद प्रकाश शर्मा (ऊपर) एवं **अजय मित्रा बनाम मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य (ऊपर)** के मामलों में सर्वोच्च न्यायालय ने प्रत्येक मामलों के तथ्यों पर विचार करते हुए मात्र संविदा के भंग और छल के अपराध के बीच भिन्नता दर्शाया है और मामलों के तथ्यों के विश्लेषण के बाद अभिनिर्धारित किया है कि मात्र संविदा का भंग आवश्यकत: छल अंतर्ग्रस्त नहीं करता है।

इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन बनाम एन॰ ई॰ पी॰ सी॰ इंडिया लि॰ एवं अन्य (ऊपर) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने सुनिश्चित सिद्धान्तों को दोहराया है जो यह विचार करते हुए कि क्या सिविल कार्यवाही के लंबित रहने की दृष्टि में दांडिक कार्यवाही अभिखंडित कर दी जानी चाहिए, धारा 482 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों के प्रयोग को मार्ग दर्शित करते हैं। मामले के तथ्यों का विश्लेषण करते हुए न्यायालय ने उसमें के याची द्वारा प्रतिवाद में उठाए गए अभिवाकों को ध्यान में लिया था और निम्नलिखित संप्रेक्षित किया था:–

''ऐसा बचाव विचारण के दौरान किया जाना होगा और इस पर विचारण के दौरान विचार करना होगा। बचाव जो उपलब्ध हो सकते हैं अथवा तथ्य/पहलू जिन्हें विचारण के दौरान स्थापित किया जाता है, दोषमुक्ति की ओर ले जा सकते हैं किन्तु ये परिवाद को आरंभ में ही अभिखंडित करने का आधार नहीं हो सकते हैं। इस चरण पर प्रासंगिक प्रश्न केवल यह है कि परिवाद में किए गए प्रकथन दांडिक अपराध के घटकों को स्पष्ट करते हैं या नहीं।

15. यह प्रश्न कि क्या वर्तमान मामले के तथ्य याचीगण के विरुद्ध दांडिक अभियोजन को न्यायोचित सिद्ध करते हुए प्रथम दृष्टया अपराध प्रकट करते हैं, प्राथमिकी के विषयवस्तु को पुन: निर्दिष्ट किया जा सकता है।

वर्तमान मामले में प्राथमिकी में किए गए अभिकथन का सार यह है कि याचीगण प्राईवेट लिमिटेड कम्पनी का निदेशक होने के नाते सूचक द्वारा अनुमोदित किए जाने वाले उनके उत्पादों के विपणन के लिए विभिन्न कम्पनियों/विज्ञापनदाताओं के साथ सूचक की ओर से संविदा करने के लिए उसके विपणन एजेण्टों के रूप में उसका प्रतिनिधित्व करने के प्रस्ताव के साथ परिवादी के पास गए थे। याचीगण ने अभिकथित रूप से सूचक को विश्वास दिलाया था कि वे सूचक के लिए और उसकी ओर से विभिन्न कम्पनियों/विज्ञापनदाताओं से संविदा राशियों का प्राप्त करेंगे और ऐसी सारी राशियों को सूचक को देंगे जिसका वह संविदा के अधीन हकदार है। सद्विश्वास में याचीगण के अभ्यावेदन पर विश्वास करते हुए सूचक ने उनके साथ तीन वर्षों की अवधि के लिए करार किया था। करार के अधीन, याचीगण ने अनेक कम्पनियों/विज्ञापनदाताओं से संविदा की अवधि के दौरान सूचक की ओर से संविदाओं को करने के लिए और धन प्राप्त करने के लिए सूचक से प्राधिकार प्राप्त किया। अवधि तीन वर्षों तक जारी रही और अवधि के अवसान के बाद संविदा का नवीकरण नहीं किया गया था अथवा इसे बढ़ाया नहीं गया था।

करार के निबंधनों में अंतर्निहित था कि याचीगण एजेन्ट होने के नाते सूचक की ओर से उनके द्वारा प्राप्त की गयी प्रत्येक धन राशि जिसका सूचक हकदार था, का तत्परता से ब्योरा देंगे। अत: याचीगण और सूचक के बीच करार थी कि विभिन्न कम्पनियों से संविदा राशि प्राप्त करने पर याचीगण ऐसी राशियों को सूचक के लिए और उसकी ओर से न्यास में रखेंगे और तत्परतापूर्वक ऐसे सारे धन को उसे देंगे।

याचीगण के विरुद्ध अभिकथन यह है कि विभिन्न कम्पनियों/विज्ञापनदाताओं से धन की विशाल राशियों को प्राप्त करने के बाद याचीगण धन जिसका सूचक हकदार था का लेखा देने और भुगतान करने में विफल रहे हैं और उपेक्षा की है और यह कि याचीगण ऐसे धन को दो वर्षों से अधिक तक और करार की अवधि के अवसान के बाद भी ऐसे धन को प्राप्त करने की तिथि से अपने पास गैर कानूनी रूप से रखे हुए थे। आगे अभिकथन है कि करार की अवधि बीत जाने के बाद भी, उसके द्वारा प्राधिकृत किए बिना, विभिन्न कम्पनियों/विज्ञापनदाताओं के समक्ष सूचक का गैर कानूनी रूप से प्रतिनिधित्व करना जारी रखे हुए है और उसके नाम में और उसकी ओर से अनेक कम्पनियों से धन प्राप्त कर रहे थे किन्तु उन्होंने न तो धन का लेखा दिया था और न ही उसे धन प्रदान किया था। ऐसे अभिकथन पर सूचक ने न केवल याचीगण पर न्यास के दांडिक भंग का बल्कि उसके धन के दांडिक दुर्विनियोग का आरोप भी लगाया है।

16. यह तथ्य कि याचीगण ने स्वयं को सूचक के एजेन्ट के रूप में प्रतिनिधित्व करते हुए धन की विशाल राशि अनेक कम्पनियों से प्राप्त किया था, से इंकार नहीं किया गया है। इस तरह उनके द्वारा प्राप्त किया गया धन सूचक की ओर से और उसके लाभ के लिए न्यास में था।

17. वर्तमान आवेदन में अंतर्विष्ट प्रकथनों और याचीगण के अधिवक्ता द्वारा किए गए निवेदनों से प्रतीत होता है कि सूचक द्वारा सिविल कार्यवाही और वर्तमान दांडिक मामला संस्थापित किए जाने के बाद याचीगण ने प्रतिवाद का यह आधार उठाया है कि चूँकि करार के निबंधनों के अधीन वे प्राप्त की गयी राशि में अपने कमीशन के रूप में 30% के हकदार हैं, अपने कमीशन का हिस्सा प्राप्त करने के लिए राशि को अपने पास रखने के लिए उन्हें धारणाधिकार का अधिकार है। ऐसे अभिवाक का अधिमूल्यन शायद याचीगण द्वारा विश्वास किए गए दस्तावेजों को निर्दिष्ट करके ही किया जा सकता था और वह भी केवल विचारण न्यायालय द्वारा। ऐसे अभिवाक् का शायद अधिमूल्यन किया जा सकता था यदि याचीगण ने सूचक की ओर से उनके द्वारा प्राप्त की गयी राशियों का सत्य रूप से और विश्वासजनक रूप से उसे लेखा दिया होता और दो वर्षों की अवधि के दौरान उसके असंख्य बुलावे का उत्तर दिया होता। सूचक के अभिकथन के अनुसार, तीन कम्पनियों, जिनके लिए उसने याचीगण को फ्रीलान्स के आधार पर काम करने की अनुमति दी थी, को छोड़कर किसी कम्पनी के समक्ष उसके विपणन एजेन्ट के रूप में उनको उसका प्रतिनिधित्व करने का अधिकार नहीं था। यह तथ्य कि याचीगण ने आशयपूर्वक सूचक के धन को अपने पास रखा था, उनके द्वारा ताथ्यिक रूप से अभिस्वीकृत किया गया है। यह निष्कर्ष वैध रूप से इस तथ्य से निकाला जा सकता है कि सिविल कार्यवाहियों में भी कोलकाता उच्च न्यायालय ने याचीगण की कम्पनी को 5.21 करोड़ रुपयों की राशि रखे बिना अपने बैंक खाता को चालू रखने से निर्बंधित किया है। याचीगण स्पष्ट करना चाहेंगे कि भविष्य में प्राप्त की जानेवाली अनभिनिश्चित भुगतानों के विरुद्ध वाणिज्यिक संव्यवहार में उनके कमीशन के हिस्से के समायोजन के लिए विनियोग के उद्देश्य से जानबूझ कर सूचक का धन इस तरह अपने पास रखा गया था।

18. उक्त तथ्य वस्तुत: यह युक्तियुक्त निष्कर्ष सुझाते हैं कि याचीगण ने सूचक के लिए और उसकी ओर से सूचक के लाभ के लिए न्यास में विभिन्न कम्पनियों/विज्ञापनदाताओं से धन प्राप्त किया था किन्तु ऐसी सारी राशियों, जिनका सूचक हकदार था, को जानबूझ कर देने से इंकार करके न्यास का भंग किया है और राशियों को प्राप्त करने की तिथि से दो वर्षों से अधिक के लिए जानबूझ कर इस तरह अपने पास रखना जारी रखे हुए है। सूचक का अभिकथन कि अपने लिए गलत रूप से लाभ पाने के लिए और उसको गलत रूप से नुकसान पहुँचाने के लिए उसके धन को याचीगण ने गैर ईमानदार रूप से अपने पास रख लिया है, युक्तियुक्त आधार के बिना नहीं है।

मेरे मत में, प्राथमिकी में किए गए अभिकथन वस्तुत: न्यास के दांडिक भंग और सूचक के धन के दांडिक दुर्विनियोग के अपराधों के लिए प्रथम दृष्टया ताथ्यिक मामला अधिकथित करते है। प्राथमिकी में किए गए अभिकथन वस्तुत: संपूर्ण अन्वेषण और न्याय निर्णयन की अपेक्षा करते हैं। अत: धारा 482 दं० प्र० सं० के अधीन इस न्यायालय की अंतर्निहित अधिकारिता के प्रयोग में प्राथमिकी को इस तरीके से निष्फल नहीं किया जा सकता है जैसी प्रार्थना याचीगण ने है।

19. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों और ऊपर की गयी चर्चाओं के प्रकाश में, मैं इस आवेदन में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, यह आवेदन खारिज किया जाता है। याचीगण को प्रदान किया गया सुरक्षा का अंतरिम आदेश रिक्त किया जाता है।

माननीय जे० सी० एस० रावत एवं डी० के० सिन्हा, न्यायमूर्तिगण

परदुमन मांझी एवं एक अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Criminal Appeal No. 59 of 2001. Decided on 6th September, 2010.

सत्र विचारण सं॰ 268 वर्ष 1996 में श्री हरिभूषण प्रसाद सिन्हा, अपर सत्र एवं जिला न्यायाधीश, सिमडेगा द्वारा पारित दिनांक 19.12.2000 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध।

(क) दांडिक विधि–साक्ष्य का अधिमूल्यन–जब तक अन्वेषण अधिकारी को अभियोजन गवाह के परीक्षण में हुए विलम्ब को स्पष्ट करने के लिए विनिर्दिष्ट तौर पर नहीं कहा जाता है, बचाव पक्ष इसका लाभ नहीं ले सकता है–सार्वभौम रूप से लागू नियम के रूप में यह अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि यदि किसी गवाह विशेष के परीक्षण में विलंब हुआ है, अभियोजन का विवरण संदेहास्पद हो जाता है। (पैरा 11)

(ख) दांडिक विधि–यदि गवाह एक दूसरे से संबंधित हैं और वे सपक्षी गवाह हैं, उनका साक्ष्य केवल इस कारण से त्यक्त नहीं किया जा सकता है कि वे एक दूसरे संबंधित हैं–चश्मदीद गवाह मृतक के संबंधी होने के नाते, यह देखना उनका प्रयास होगा कि वास्तविक दोषियों को दंडित किया जाय और वे किसी गलत और निर्दोष व्यक्ति को अपराध में झूठा फँसाना नहीं चाहेंगे ताकि वास्तविक अपराधी बच निकले। (पैरा 13)

(ग) दांडिक विधि–साक्ष्य का अधिमूल्यन–अपीलार्थीगण घातक हथियारों से लैस थे जिनके द्वारा उन्होंने क्रूरतापूर्वक उसकी गर्दन काट करके मृतक की हत्या कर दिया–यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि चूँकि चश्मदीद गवाहों अथवा अन्य व्यक्तियों ने भगदड़ में हस्तक्षेप नहीं किया था, उनके साक्ष्य को त्यक्त कर देना चाहिए। (पैरा 17)

(घ) भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872—धारा 27—प्रकटीकरण बयान–बरामद किए गए हथियारों का प्रस्तुत नहीं किया जाना बरामदगी को अविश्वसनीय बनाता है–किन्तु, अपराध करने के लिए बरामदगी पुष्टि कारक साक्ष्य थी–मात्र बरामदगी पर जताया गया अविश्वास चश्मदीद गवाहों के संपूर्ण रूप से विश्वसनीय और तर्कपूर्ण साक्ष्य को अविश्वसनीय और असत्य नहीं बनाएगा। (पैराएँ 25 से 27)

निर्णयज विधि.–2005 (3) SCC 114 : 1998 (3) PLJR 739; (2002) 4 SCC 76; (2005 (9) SCC 299; 2009 (11) SCC 193; 2006(2) SCC (Cri.) 568; AIR 2008 SC 1184—Relied upon.

अधिवक्तागण.–Mr. Mahesh Kumar Sinha, For the Appellants; Mr. Ravi Prakash, For the Respondents.

आदेश

यह अपील सत्र विचारण सं॰ 286 वर्ष 1986 में अपर सत्र न्यायाधीश, सिमडेगा द्वारा पारित दिनांक 19.12.2000 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा अपीलार्थीगण को धारा 302/34 भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और आजीवन कारावास भुगतने का दंड दिया गया है।

2. संक्षेप में, अभियोजन का मामला यह है कि दिनांक 10.7.1996 को रात्रि लगभग 1 बजे मृतक के पिता सूचक विशंभर मांझी, प्राथमिक विद्यालय के प्रधानाध्यापक द्वारा फर्दबयान दिया गया था, जिसमें बताया गया था कि वह सुबह में करवाजोर स्थित अपने प्राथमिक विद्यालय गया हुआ था जहाँ वह पदस्थापित था। वह अपने घर दोपहर लगभग 3.30 बजे लौटा और उसने घटना देखा कि उसके पुत्र भुवनेश्वर मांझी और उसके भाई प्रभु मांझी एक ओर एवं दूसरी ओर सूचक अ॰ सा॰ 7 के संबंधीगण अभियुक्त-अपीलार्थीगण के बीच पेड़ों से तोड़े गए कुसुम के फलों के वितरण के लिए झगड़ा हुआ था। झगड़े में सूचक के हस्तक्षेप के बाद हाथापाई खत्म हो गयी थी और तत्पश्चात् अपीलार्थीगण ने धमकी दी कि वे सूचक के पुत्र भुवनेश्वर मांझी और उसके भाई प्रभु मांझी की हत्या कर देंगे। सायं लगभग

4 बजे उसने देखा कि नीलांबर प्रधान के घर के सामने आम के पेड़ के निकट अभियुक्त अपीलार्थीगण प्रद्युमन मांझी, रामेश्वर मांझी और मदन मांझी अपने हाथों में फरसा पकड़े हुए थे। अपीलार्थी प्रद्युमन मांझी ने प्रभु मांझी की गर्दन पर फरसा से प्रहार किया और अपीलार्थी रामेश्वर मांझी ने भी भुवनेश्वर मांझी की गर्दन पर फरसा से प्रहार किया। अपीलार्थी मदन मांझी (उसकी मृत्यु अपील के लंबित रहने के दौरान हो गयी) ने दोनों मृतकों प्रभु मांझी और भुवनेश्वर मांझी के गर्दन पर फरसा का प्रहार किया। अपने शरीर पर उपहतियाँ प्राप्त करने के परिणामस्वरुप, दोनों की मृत्यु घटनास्थल पर हो गयी। पुलिस थाना में सिमडेगा पी० एस० केस सं० 71 वर्ष 1996 दर्ज किया गया था। पुलिस द्वारा अन्वेषण शुरू किया गया था। अन्वेषण समाप्त होने के बाद न्यायालय के समक्ष अपीलार्थीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था।

3. अपीलार्थीगण का मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और अपीलार्थीगण के विरुद्ध आरोप-पत्रों को विरचित किया गया था और उन्होंने आरोपों से इंकार किया और विचारण का दावा किया।

4. अभियोजन मामले के समर्थन में, अभियोजन ने आठ गवाहों का परीक्षण किया है। अ० सा० 3 दीनू धुर्वा, अ० सा० 4 सतमती देवी उर्फ पौरा देवी, मृतक (प्रभु मांझी की पत्नी) और अ० सा० 7 मृतक भुवनेश्वर मांझी का पिता विशंभर मांझी का परीक्षण किया गया था और उन्होंने दावा किया कि वे सभी घटना के चश्मदीद गवाह थे। अ० सा० 1 निलाम्बर प्रधान है जिसे अपराध करने में प्रयुक्त हथियार की बरामदगी का गवाह बताया जाता है। उसे अभियोजन पक्ष द्वारा पक्षद्रोही घोषित किया गया है। अ० सा० 5 राणा राम बदन सिंह मामले का अन्वेषण अधिकारी है। अ० सा० 8 डॉ० के० डी० चौधरी है जिन्होंने दिनांक 10.7.1996 को दोपहर लगभग 1 बजे मृतकों के मृत शरीर की शव समीक्षा संचालित की थी। अ० सा० 2 हरिहर प्रधान है जिसे अभियोजन द्वारा पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया था और जिसने अभियोजन के विवरण का समर्थन नहीं किया है। अ० सा० 6 ज्योति प्रकाश तिर्के हैं। वह मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट का गवाह है।

5. विचारण की समाप्ति के बाद अपीलार्थीगण ने अपीलार्थीगण के विरुद्ध किए गए संपूर्ण अभिकथनों से इंकार किया। उन्होंने अभिवाक् किया कि वे निर्दोष हैं और भूमि विवाद के कारण उन्हें मामले में झूठा फँसाया गया है।

6. अपने बचाव के समर्थन में अपीलार्थीगण ने कोई मौखिक अथवा दस्तावेजी साक्ष्य नहीं दिया है।

7. विचारण की समाप्ति और पक्षों को सुनने और अभिलेख का परिशीलन करने के बाद विचारण न्यायालय ने अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध किया और उनको दंड दिया जैसा ऊपर उपदर्शित किया गया है।

8. यह विवादित नहीं है कि मृतक प्रभु मांझी और भुवनेश्वर मांझी की मृत्यु दिनांक 9.7.1996 को सायं लगभग 4 बजे घटना स्थल पर हो गयी जैसा अभियोजन द्वारा उपदर्शित किया गया है। अभियोजन ने अ० सा० 8 डॉ० के० डी० चौधरी का भी परीक्षण किया था जिन्होंने दिनांक 10.7.1996 को दोपहर लगभग 1.15 बजे मृतकों के मृत शरीर पर शव परीक्षा किया था। उन्होंने प्रभु मांझी के मृत शरीर पर निम्नलिखित उपहतियों को पाया:-

> ***बाह्य उपहतियाँ*** *: त्वचा, मुलायम टिशूओं, गर्दन की मांसपेशी, केरोडिड आर्टरी, जुगुलर वेन, वेपस नर्व को काटते और ट्रेचिया एवं इसोफेगस को अंशतः काटते सर्वाइकल वरीटीब्रा के फ्रैक्चर के साथ गर्दन के लेटेरल हिस्से से गर्दन के पीछे तक जाते*

हुए गर्दन के दाएं हिस्से पर स्थित 4" x 4" x 3" का कटा जख्म। ब्रेन के मेम्ब्रेन का रंग फीका था, गर्दन के दाएं हिस्से से आत्यधिक हेमरेज था। उपहति मृत्यु पूर्व थी और गंभीर प्रकृति की थी और तेज धार वाले हथियार जैसे फरसा द्वारा कारित की गयी थी।

उसी दिन दोपहर लगभग 1 बजे अ० सा० 8 डॉ० डी० के० चौधरी ने मृतक भुवनेश्वर मांझी के मृत शरीर का शव-परीक्षण किया था और निम्नलिखित उपहतियों को पाया था:

बाहरी उपहतियाँ: *त्वचा, मुलायम टिशुओं, विशाल रक्त नलिकाओं जैसे दायां केरोडिड, आर्टरी और गर्दन का दांया जुगुलर वेन, सुपरीयर टाइरॉयड आर्टरी, दाएँ हिस्से की गर्दन की मांसपेशी, बेगस नर्व, वोकल कॉर्ड के नीचे ट्रेचिया और इसोफेगस को काटते हुए और सर्वाइकल वरटिब्रा को काटते हुए गर्दन के एन्टेरीयर हिस्से से गर्दन के पीछे तक जाती गर्दन के दाएँ हिस्से पर स्थित 6" x 4" x 4" का बड़ा कटा हुआ जख्म।*

दाएँ हाथ के मेटार्प्रोमलान्किवीयल जोड़ से दायीं कनिष्ठ उंगली, दांयी अंगूठी की उंगली और दांयी मध्य उंगली का पूर्ण अंगभंग।

अ० सा० 8 डॉ० के० डी० चौधरी ने आगे शव परीक्षण रिपोर्टों (प्रदर्श 6 और 6/1) को सिद्ध किया। उन्होंने आगे मत दिया कि मृतकों के शरीर पर उपहतियाँ मृत्यु पूर्व प्रकृति की थी और तेज धार वाले हथियार जैसे फरसा द्वारा कारित की गयी होंगी और आगे मत दिया गया था कि दोनों मृतकों की मृत्यु गर्दनों के आंशिक अंग-भंग और अत्यधिक हेमरेज के कारण कारित हुई होगी। मृत्यु की अवधि 24 घंटा आकलित की गयी थी। अभियोजन ने घटना के चश्मदीद गवाहों का भी परीक्षण किया है। अ० सा० 3 डेमू धुर्वा और अ० सा० 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी को अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किया गया था और उन्होंने स्पष्टत: बयान दिया कि अपीलार्थीगण ने दोनों मृतकों की मृत्यु अभियोजन द्वारा उपदर्शित किए गए समय और स्थल पर कारित किया था। मृतकों की मृत्यु स्थल पर उपहतियों के कारण हो गयी। इस प्रकार यह पूर्णत: स्पष्ट है कि दिनांक 10.7.1996 को सांय लगभग 4 बजे प्रभु मांझी और भुवनेश्वर मांझी की हत्या कर दी गयी थी जैसा अभियोजन द्वारा उपदर्शित किया गया है और मृतकों की मृत्यु मानव वध थी।

9. अब हमें यह परीक्षण करना है कि मृतकों के शरीर को उपहतियाँ पहुँचाने वाला कौन था? अभियोजन के अनुसार, दोनों मृतकों प्रभु मांझी और विशम्भर मांझी के गर्दन पर फरसा का वार करके अपीलार्थीगण द्वारा उपहतियाँ कारित की गयी थी जिससे उनकी मृत्यु घटना स्थल पर ही हो गयी। अपीलार्थीगण के अनुसार, उन्हें मामले में झूठा फँसाया गया है और वे निर्दोष हैं। अभियोजन ने अ० सा० 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी का परीक्षण किया था जिसने अपने साक्ष्य में कथन किया कि घटना के दिन सांय लगभग 4 बजे अ० सा० 1 नीलाम्बर प्रधान के घर के सामने उसने देखा था कि अभियुक्त अपीलार्थी प्रद्युमन मांझी अपने हाथ में बलुआ लिए खड़ा था और उसने बलुआ से महेश (प्रभु मांझी) पर प्रहार किया जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु घटना स्थल पर ही हो गयी और तत्पश्चात् अपीलार्थीगण रामेश्वर मांझी और मदन मांझी (विशम्भर मांझी) ने उसके पति प्रभु मांझी को पकड़ लिया और अपीलार्थी प्रद्युमन मांझी ने बलुआ से उसकी गर्दन को काट दिया-किन्तु इसे शरीर से पूर्णत: अलग नहीं किया जा सका था-जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु स्थल पर हो गयी। अ० सा० 7 सूचक विशंभर मांझी मृतक भुवनेश्वर मांझी का पिता है। उसने अपने साक्ष्य में कथन किया है कि दिनांक 9.7.1996 की सुबह वह विद्यालय गया था और सांय 3.30 बजे लौटा था। जब वह घर लौटा, उसने देखा कि अपीलार्थीगण और दोनों मृतकों के बीच कुसुम के फल के वितरण के लिए झगड़ा हुआ था। जब सूचक अ० सा० 7 विशम्भर

मांझी ने मामले को सुलझाने का प्रयास किया, अपीलार्थीगण ने दोनों मृतकों प्रद्युमन मांझी और प्रभु मांझी को गंभीर परिणामों और उनकी हत्या करने की धमकी दी। उसने घटना स्थल पर दोनों पक्षों के बीच झगड़ा को शांत किया। तब वह घटना स्थल छोड़कर अपने घर जाने लगा। तत्पश्चात्, वह भुवनेश्वर मांझी और प्रभु मांझी (कजिन) को बुलाने पुनः वापस आया। तब उसने देखा कि अपीलार्थी रामेश्वर मांझी अपने घर से फरसा ले आया था। अपीलार्थी प्रद्युमन मांझी भी अपने हाथ में फरसा लिए था और अपीलार्थी मदन मांझी ने उसे मृतक की हत्या करने के लिए कहा। तत्पश्चात्, अपीलार्थीगण रामेश्वर मांझी और प्रद्युमन मांझी ने मृतकों पर उन हथियारों से प्रहार किया जिन्हें वे अपने हाथों में पकड़े हुए थे। अपीलार्थी रामेश्वर मांझी ने भुवनेश्वर मांझी की गर्दन पर फरसा से प्रहार किया जिसके परिणामस्वरूप उसकी गर्दन का अधिक हिस्सा कट गया और वह जमीन पर गिर गया। अपीलार्थी प्रद्युमन मांझी ने भी प्रभु मांझी की गर्दन पर फरसा से प्रहार किया और उसकी गर्दन भी बिल्कुल कट गयी, किन्तु यह उसके शरीर से अलग नहीं हुई थी। वह भी जमीन पर गिर गया। तत्पश्चात, अपीलार्थी मदन मांझी ने प्रद्युमन मांझी के हाथ से फरसा ले लिया और भुवनेश्वर मांझी के हाथ पर प्रहार किया जिसके परिणामस्वरूप उसकी उंगलियाँ कट गयी और उसने (अ० सा० 7) घटनास्थल से लगभग 10-15 मीटर की दूरी से घटना को देखा था। अभियोजन ने स्वतंत्र प्रत्यक्षदर्शी गवाह के रूप में अ० सा० 3 दीनू धुर्वा का भी परीक्षण किया है। उसने कथन किया है कि घटना की तिथि पर सांय लगभग 4 बजे अपीलार्थीगण ने कुसुम का फल तोड़ा था और मृतकों ने उक्त फलों में से अपना हिस्सा मांगा था। जब मृतकों ने अपना हिस्सा मांगा, अपीलार्थी प्रद्युमन मांझी ने तुरन्त मृतक भुवनेश्वर मांझी की गर्दन पर फरसा का वार किया जिसके परिणामस्वरूप वह जमीन पर गिर गया और उपहतियों के चलते उसकी मृत्यु हो गयी। अपीलार्थीगण मदन मांझी और रामेश्वर मांझी ने मृतक प्रभु मांझी को पकड़ लिया और अपीलार्थी प्रद्युमन मांझी ने उसकी गर्दन पर फरसा से वार किया जिसके परिणामस्वरूप वह जमीन पर गिर गया। तत्पश्चात्, अपीलार्थीगण प्रद्युमन मांझी और रामेश्वर मांझी ने उसकी गर्दन को काट दिया, किन्तु इसे पूरी तरह उसके धड़ से अलग नहीं किया जा सका था। मृतक की मृत्यु घटनास्थल पर ही हो गयी। उसने कटघरे में दोनों अपीलार्थीगण प्रद्युमन मांझी और रामेश्वर मांझी को पहचाना। अ० सा० 3 दीनू धुर्वा घटना का चश्मदीद गवाह होने का दावा करता है और आगे कथन करता है कि घटना अ० सा० 1 नीलाम्बर प्रधान के घर के सामने हुई थी।

10. चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य के अधिमूल्यन करने के बाद विद्वान विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया कि अ० सा० 7 सूचक के घटना के चश्मदीद गवाह के रूप में दिए गए साक्ष्य पर संदेह के परे विश्वास नहीं किया जा सकता है। विचारण न्यायालय ने अपने निष्कर्षों में अभिनिर्धारित किया है कि अ० सा० 3 दीनू धुर्वा ने अपने प्रति-परीक्षण में कथन किया है कि अ० सा० 7 विशम्भर मांझी विद्यालय गया हुआ था और वह घटना स्थल पर उपस्थित नहीं था। वह विद्यालय से ही सीधा पुलिस थाना गया था और घटना स्थल पर रात्रि लगभग 9-10 बजे आया था। अ० सा० 3 दीनू धुर्वा के अनुसार, अ० सा० 7 घटना का गवाह नहीं है और विचारण न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया है कि अ० सा० 7 ने स्वयं कथन किया है कि वह विद्यालय गया हुआ था जो 5-7 कि० मी० की दूरी पर अवस्थित है। घटना मंगलवार को हुई थी जब विद्यालय खुला था और वह विद्यालय बन्द होने के पहले अपने घर आया था और विचारण न्यायालय द्वारा उसकी उपस्थिति पर संदेह जताया गया है। हमारा दृष्टिकोण भी यह है कि अ० सा० 7 जो चश्मदीद गवाह होने का दावा करता है, का साक्ष्य तर्कपूर्ण और विश्वसनीय नहीं है और हम विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्षों के साथ पूरी तरह सहमत हैं।

11. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया कि मृतक प्रभु मांझी की विधवा अ० सा० 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी ने अपने प्रति-परीक्षण में कथन किया है कि पुलिस (अन्वेषण

अधिकारी अ॰ सा॰ 5) ने घटना के पाँच दिन बाद उसका परीक्षण किया था। विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि चार दिन बाद धारा 161 दं॰ प्र॰ सं॰ के अधीन अ॰ सा॰ 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी का बयान दर्ज किया जाना अभियोजन के लिए घातक है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क का खंडन किया और प्रतिवाद किया कि अभियुक्त अपीलार्थीगण की अ॰ सा॰ 5 अन्वेषण अधिकारी के साथ दुश्मनी नहीं थी जिन्होंने अपने साक्ष्य में कथन किया है कि अ॰ सा॰ 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी का परीक्षण उसके द्वारा घटना की रात को ही किया गया था। उन्होंने आगे प्रतिवाद किया कि गवाहों के परीक्षण में विलम्ब अभियोजन के लिए घातक नहीं है। अ॰ सा॰ 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी के विलम्ब से किए गए परीक्षण के बारे में विचारण के दौरान बचाव पक्ष अधिवक्ता ने अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ 5 से कोई प्रश्न नहीं पूछा था। यह विधि की सुनिश्चित अवस्था है कि जब तक अभियोजन गवाहों के परीक्षण में हुए विलम्ब को स्पष्ट करने के लिए अन्वेषण अधिकारी को विनिर्दिष्टत: नहीं कहा जाता है, बचाव पक्ष इसका लाभ नहीं ले सकता है। सार्वभौम रूप से लागू नियम के रूप में यह अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि यदि गवाह विशेष के परीक्षण में विलम्ब हुआ है, अभियोजन का विवरण संदेहास्पद हो जाता है। यह अन्य कई कारकों पर निर्भर करेगा। **उ॰ प्र॰ राज्य बनाम सतीश, 2005 (3) SCC 114** में प्रकाशित मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:

> *"18. कतिपय गवाहों के विलम्ब से किए गए परीक्षण के संबंध में इस न्यायालय ने अनेक निर्णयों में अभिनिर्धारित किया है कि जब तक अन्वेषण अधिकारी से स्पष्ट रूप से नहीं पूछा जाता है कि गवाहों के परीक्षण में विलम्ब क्यों हुआ था, बचाव पक्ष उससे कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकता है। सार्वभौम रूप से लागू नियम के रूप में यह अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि यदि गवाह विशेष के परीक्षण में कोई विलम्ब होता है, अभियोजन का विवरण संदेहास्पद बन जाता है। यह अनेक कारकों पर निर्भर करेगा। यदि विलम्ब से किए गए परीक्षण के लिए प्रस्तुत स्पष्टीकरण सत्याभाषी और स्वीकार योग्य है और न्यायालय इसे सत्याभाषी के रूप में स्वीकार करता है, निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है। (देखे रणबीर बनाम पंजाब राज्य, (AIR 1973 SC 1409); बोधराज बनाम जम्मू काश्मीर राज्य (2002 (8) SCC 45) और बन्टी बनाम मध्य प्रदेश राज्य, (2004 (1) SCC 414)"*

> *"20. यह ध्यान में लेना होगा कि विलम्ब से किए गए परीक्षण के पहलू पर अभियुक्त द्वारा पूछे जाने पर अन्वेषण अधिकारी द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण का परीक्षण न्यायालय को विश्वसनीयता के मापदंड करना होगा। यदि स्पष्टीकरण सत्याभाषी है, तब कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है। दूसरी ओर, यदि स्पष्टीकरण को असंभाव्य पाया जाता है, निश्चय ही न्यायालय इसे गवाहों जिनका परीक्षण विलम्ब से किया गया था, की विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारकों में से एक मान सकता है। इसका अन्य गवाहों द्वारा दिए गए अभियोजन के साक्ष्य की विश्वसनीयता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता है।''*

12. इसके अतिरिक्त, वर्तमान मामले में अन्वेषण अधिकारी ने विनिर्दिष्टत: कथन किया है कि उसने उसका बयान घटना के दिन ही लिया था। अ॰ सा॰ 4 सतमति देवी, जो एक निरक्षर महिला है, मृतकों में से एक की विधवा है और गाँव में रहती है; घटना दिनांक 9 जुलाई, 1996 को हुई थी और साक्ष्य घटना के नौ माह बाद मई, 1997 में दर्ज किया गया था। यह विवादित नहीं किया जा सकता है कि समय बीत जाने पर गवाह की स्मरण शक्ति धुंधली, मद्धिम और अस्पष्ट हो जाती है और पूरे यथा तथ्य और सूक्ष्म के साथ घटना का पुनर्स्मरण करना गवाहों के लिए मुश्किल हो जाता है जिसका परिणाम महत्वहीन विरोधाभासों और असंगतियों में होता है जो उसके साक्ष्य को पूर्णत: अविश्वसनीय नहीं बनाएगा। अ॰ सा॰ 4 सतमति देवी के पति की मृत्यु अपीलार्थीगण द्वारा कारित की गयी थी; वह आघात और संत्रास में होगी

और वह अन्वेषण अधिकारी द्वारा उसके बयान दर्ज किए जाने की पक्की तिथि और समय बताने में सक्षम नहीं होगी। इसके अतिरिक्त, अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ 5 ने स्पष्ट तौर पर कथन किया है कि उसने उसका बयान घटना के दिन ही रात को दर्ज किया था। अत: अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ 5 के साक्ष्य पर अविश्वास करने हेतु कोई सामग्री नहीं है। प्रतिवादी ने अन्वेषण अधिकारी को कोई सुझाव नहीं दिया है कि उसने (अ॰ सा॰ 5) ने उसी रात इस गवाह का परीक्षण नहीं किया था। इसके अतिरिक्त अ॰ सा॰ 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी को प्राथमिकी में भी नामित किया गया है। घटना स्थल पर उसकी उपस्थिति पर संदेह नहीं किया जा सकता है। अत: अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता का तर्क मान्य नहीं है।

13. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया कि अ॰ सा॰ 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी मृतकों में से एक प्रभु मांझी की विधवा है और अ॰ सा॰ 7 विशम्भर मांझी अन्य मृतक भुवनेश्वर मांझी का पिता है। मृतक प्रभु मांझी सूचक अ॰ सा॰ 7 का कजन है। अत: वे संबंधित, हितबद्ध और सपक्षी गवाह हैं और उनके साक्ष्य पर तब तक विश्वास नहीं किया जा सकता है जब तक कि स्वतंत्र स्रोत अथवा गवाह द्वारा संपुष्ट नहीं किया जाता है। यह विधि की सुनिश्चित अवस्था है कि यदि गवाह एक-दूसरे से संबंधित हैं और वे सपक्षी गवाह हैं, उनके साक्ष्य को केवल इस कारण से त्यक्त नहीं किया जा सकता है कि वे एक-दूसरे से संबंधित हैं। यह भी विधि की सुनिश्चित अवस्था है कि चश्मदीद गवाहों का मृतक का संबंधी होने के कारण यह देखना उनका अथक प्रयास होगा कि वास्तविक दोषियों को दंडित किया जाय और वे अपराध में किसी गलत अथवा निर्दोष व्यक्ति को नहीं फँसाना चाहेंगे ताकि वास्तविक अपराधी बच निकले। अत: यह प्रतिवाद करना अयुक्तियुक्त होगा कि गवाह (अ॰ सा॰ 4) द्वारा दिए गए साक्ष्य को केवल इस आधार पर त्यक्त कर दिया जाना चाहिए कि यह सपक्षी और हितबद्ध गवाह का साक्ष्य है। मात्र इस आधार कि वे संबंधित और हितबद्ध गवाह है, पर उनके साक्ष्य की यांत्रिक रूप से अस्वीकृति निश्चय ही न्याय की विफलता की ओर ले जाएगी। कोई पक्का नियम अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि कितने साक्ष्य का अधिमूल्यन किया जाना चाहिए। ऐसे साक्ष्य पर विचार करते हुए न्यायालय को सतर्क रहना होगा। किन्तु यह अभिवाक् कि सपक्षी गवाह होने के नाते ऐसे साक्ष्य को त्यक्त कर देना चाहिए सही स्वीकार नहीं किया जा सकता है। जैसा हमने पहले ही इंगित किया है, इस तथ्य कि वह घटना का चश्मदीद गवाह है, के संबंध में सूचक अ॰ सा॰ 7 का साक्ष्य तर्कपूर्ण और विश्वसनीय नहीं है। वर्तमान मामले में, अ॰ सा॰ 3 दीनू धुर्वा को भी स्वतंत्र चश्मदीद गवाह बताया जाता है। अ॰ सा॰ 3 घटना के समय और स्थान पर उपस्थित था; घटना अ॰ सा॰ 1 नीलाम्बर प्रधान के घर के सामने हुई थी। घटना के समय अ॰ सा॰ 1 नीलाम्बर प्रधान अपने घर में उपस्थित नहीं था। दीन धुर्वा अ॰ सा॰ 3 के साक्ष्य का परिशीलन प्रकट करता है कि वह स्वतंत्र गवाह है। इस बिन्दु पर प्रतिपरीक्षण नहीं किया गया है कि अपीलार्थीगण के प्रति उसे बैर था और वह मृतक/सूचक के प्रति मित्रवत था। उक्त गवाह को इस प्रभाव का कोई सुझाव नहीं दिया गया था। अत: वह एक चश्मदीद गवाह है। उसने घटना के तथ्यों और अ॰ सा॰ 4 सतमति देवी के साक्ष्य को संपुष्ट किया है। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने इंगित किया कि अपने प्रति-परीक्षण में अ॰ सा॰ 3 दीनू धुर्वा ने कथन किया है कि घटना के समय वह अ॰ सा॰ 1 नीलाम्बर प्रधान के घर में था और उसके घर के सामने घटना हुई थी। उसने आगे कथन किया है कि उसने पुलिस के समक्ष कोई बयान नहीं दिया था कि उसने घटना को देखा था। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने इंगित किया कि उसके साक्ष्य को त्यक्त कर देना चाहिए क्योंकि स्वीकृत रूप से वह घटना का चश्मदीद

गवाह नहीं है और अत्यन्त विलम्ब के बाद अभियोजन द्वारा न्यायालय के समक्ष उसे प्रस्तुत किया गया था, और यदि वह घटना का चश्मदीद गवाह होता, अ॰ सा॰ 5 अन्वेषण अधिकारी द्वारा उसका परीक्षण किया गया होता। दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि अ॰ सा॰ 3 और 4 के बयानों को केस डायरी में दर्ज किया गया था। अ॰ सा॰ 5 अन्वेषण अधिकारी को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और कोई विनिर्दिष्ट उल्लेख नहीं है कि उसने अन्वेषण के क्रम में उक्त गवाह (अ॰ सा॰ 3) का परीक्षण नहीं किया था। फर्दबयान दिनांक 10.7.1996 को प्रात: 10 बजे दर्ज किया गया था जो स्पष्टत: उपदर्शित करता है कि अ॰ सा॰ 3 दीनू धुर्वा और अ॰ सा॰ 4 सतमति देवी के नामों को उक्त फर्दबयान में घटना के चश्मदीद गवाह के रूप में उपदर्शित किया गया था। इस प्रकार फर्दबयान के परिशीलन से प्रकट है कि वे घटना स्थल पर उपस्थित थे। अत: घटना स्थल पर अ॰ सा॰ 3 और 4 की उपस्थित पर संदेह नहीं किया जा सकता है।

14. नर्मदेश्वर प्रधान बनाम बिहार राज्य, (1998 (3) PLJR 739) के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि विधि अथवा व्यवहार कुशलता की ऐसी कोई प्रतिपादना नहीं है कि केवल इसलिए कि किसी खास मामले में अन्वेषण अधिकारी ने अन्वेषण के क्रम में बयान को लेखबद्ध करने की सावधानी नहीं बरती, ऐसे गवाहों को न्यायालय में प्रस्तुत करने पर उनके साक्ष्य को त्यक्त कर देना चाहिए। केस डायरी में गवाह विशेष के बयान को दर्ज करने में अन्वेषण अधिकारी की विफलता उस कारण से उसके परिसाक्ष्य को पूरी तरह त्यक्त कर देने का आधार नहीं बन सकता है। अ॰ सा॰ 3 दीनू धुर्वा का अपीलार्थीगण से बैर नहीं है। कोई कारण नहीं है कि वह क्यों स्वयं चश्मदीद गवाह होने का दावा करने के लिए आगे आएगा यदि वह घटना स्थल पर उपस्थित नहीं था। हम केवल इस आधार पर उसके साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं देखते हैं।

15. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि घटना स्थल पर चश्मदीद गवाह अ॰ सा॰ 3 और 4 दीनू एवं सतमति की उपस्थिति अत्यन्त संदेहास्पद है क्योंकि अ॰ सा॰ 4 ने मृतक की पत्नी होने पर भी हंगामा में हस्तक्षेप नहीं किया और अपने पति को नहीं बचाया और कि यद्यपि परिवार के अन्य सदस्य उपस्थित थे, उन्होंने मृतक को बचाने का प्रयास नहीं किया और दीनू धुर्वा अ॰ सा॰ 3 ने भी हंगामा में हस्तक्षेप नहीं किया। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद का खंडन किया। कठोरतापूर्वक कहते हुए, मानव व्यवहार व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न होता है। विभिन्न स्थितियों में विभिन्न व्यक्ति भिन्नतापूर्वक व्यवहार और प्रतिक्रिया करते हैं। मानव व्यवहार प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है; कोई व्यक्ति कैसे किसी खास स्थिति में व्यवहार और प्रतिक्रिया करेगा, इसकी भविष्यवाणी नहीं की जा सकती हैं; प्रत्येक व्यक्ति जो गंभीर अपराध को देखता है, स्वयं अपने तरीके से प्रतिक्रिया करता है; कुछ स्तब्ध रहते हैं; कुछ मूक हो जाते हैं; कुछ घटना को देखेंगे जबकि कुछ स्थल से भाग जाएँगे। स्वाभाविक व्यवहार का कोई बना-बनाया नियम नहीं है। अपीलार्थीगण घातक हथियारों से लैस थे। यह स्वाभाविक है कि कोई चश्मदीद गवाह मृतक को बचाने आगे नहीं आएगा, विशेषत: तब जब अपीलार्थीगण मृतक पर घातक प्रहार कारित कर रहे थे। केवल उस आधार पर कि चश्मदीद गवाह मौन धारण किए रहा और हंगामा में हस्तक्षेप नहीं किया, यह निष्कर्षित नहीं किया जा सकता है कि वे स्थल पर नहीं थे।

16. अशोक कुमार पांडे बनाम दिल्ली राज्य, (2002 (4) SCC 76 के मामले में मृतक का पिता घटना का चश्मदीद गवाह था और हथियार से लैस नहीं था। मृतका के पिता ने अपनी पुत्री की चीख सुनी जिस पर वह तुरन्त घटना स्थल की ओर भागा और पाया कि अभियुक्त उसकी पुत्री पर छूरा से वार कर रहा था जबकि उसके शरीर से खून तेजी से बह रहा था। अभियुक्त छुरा हाथ में लिए आया था और पिता तथा अन्य चश्मदीद गवाह हंगामा में हस्तक्षेप नहीं कर सके थे। अभियुक्त घटना स्थल से भाग गया। यह प्रतिवाद किया गया था कि अभियुक्त अपीलार्थी ने उसकी पुत्री पर उपहतियाँ कारित किया

था और पिता उसे बचाने नहीं आया था। यह निवेदन किया गया था कि पिता का आचरण अस्वाभाविक था और यह दर्शाता है कि वह घटना स्थल पर उपस्थित नहीं था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने प्रतिवाद को नकार दिया और अभिनिर्धारित किया कि इसे अस्वाभाविक आचरण नहीं कहा जा सकता है यदि वह शस्त्रहीन होने के कारण अपनी पुत्री का जीवन बचाने नहीं आया और सामान्यत: वह अभियुक्त के हाथों अपनी जान जोखिम में नहीं डाल सकता था जो होना अश्वयंभावी था।

17. बलबीर सिंह बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य (2005) (9) SCC 299) मामले में चश्मदीद गवाह मृतक का पुत्र था। पुत्र और उसका पिता खेत से वापस आ रहे थे। अभियुक्त अपीलार्थी खेत के निकट आया और घातक हथियारों से मृतक के शरीर पर घातक उपहतियों को कारित किया। पिता की मृत्यु स्थल पर ही हो गयी। यह प्रतिवाद किया गया था कि चूँकि मृतक के पुत्र ने झगड़ा में हस्तक्षेप नहीं किया था, उसकी उपस्थिति संदेहास्पद थी। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि हंगामा में हस्तक्षेप नहीं करने के लिए मृतक के पुत्र की उपस्थिति पर अविश्वास नहीं किया जा सकता है। वर्तमान मामले में, तीन हमलावर थे जो घातक हथियारों से लैस थे। इस प्रकार, वर्तमान मामले में अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से प्रकट है कि अपीलार्थीगण घातक हथियारों से लैस थे जिसके द्वारा उन्होंने क्रूरतापूर्वक उनकी गर्दन को काटकर मृतकों की हत्या कर दी थी। अत: इन परिस्थितियों में, कोई भी आगे आना और स्थल पर मार दिए जाने का जोखिम उठाना नहीं चाहेगा और यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि चूँकि चश्मदीद गवाहों अथवा अन्य व्यक्तियों ने हंगामा में हस्तक्षेप नहीं किया था, उनके साक्ष्य को त्यक्त कर देना चाहिए और यह निष्कर्षित किया जाना चाहिए कि वे स्थल पर उपस्थित नहीं थे। हम अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के प्रतिवाद में कोई बल नहीं पाते हैं।

18. अभियोजन की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया कि घटना के तरीके के संबंध में चश्मदीद गवाहों के परिसाक्ष्य में कतिपय महत्वपूर्ण विरोधाभास थे। विद्वान अधिवक्ता ने आगे इंगित किया कि अ० सा० 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी और अ० सा० 3 दीनू धुर्वा ने अभिसाक्ष्य दिया है कि दोनों मृतक खड़े थे जब उन पर प्रहार किया गया था जबकि अ० सा० 7 विशम्भर मांझी ने कथन किया है कि वे बैठे हुए थे जब प्रहार किया गया था। आगे इंगित किया गया था कि मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट के अनुसार मृतक भुवनेश्वर का मस्तक उत्तर की ओर था जबकि अ० सा० 3 दीनू धुर्वा के अनुसार मृतक भुनेश्वर मांझी का मस्तक पश्चिम की ओर था जबकि अ० सा० 7 विशम्भर मांझी के अनुसार उसका मस्तक उत्तर-पूर्व की ओर था। मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट के अनुसार प्रभु मांझी का मृत शरीर इस प्रकार पड़ा हुआ था कि उसका मस्तक पूर्व की ओर था। अ० सा० 3 दीनू धुर्वा ने कथन किया है कि घटना के बाद, मृतक प्रभु का मस्तक पश्चिम की ओर था, जबकि अ० सा० 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी के अनुसार उसका मस्तक पूर्व की ओर था। विद्वान अधिवक्ता ने इंगित किया कि उक्त विरोधाभास घटना स्थल पर गवाहों की उपस्थिति को झुठलाते है। उन्होंने आगे इंगित किया कि अ० सा० 3 दीनू धुर्वा और अ० सा० 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी ने कथन किया है कि अभियुक्त अपीलार्थी प्रद्युमन मांझी द्वारा भुनेश्वर मांझी पर फरसा से वार किया गया था जबकि सूचक अ० सा० 7 के अनुसार उसकी गर्दन पर दोनों अपीलार्थीगण द्वारा फरसा से वार किया गया था। हमने चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य का परिशीलन किया है। विद्वान अधिवक्ता द्वारा इंगित किए गए विरोधाभासों से बचाव पक्ष लाभ नहीं उठा सकता है। घटना स्थल पर दोनों मृतकों की मृत्यु के बारे में कोई विवाद नहीं है। समस्त गवाहों द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि अ० सा० 4 पौरा देवी मृतक प्रभु मांझी की विधवा है और अभियोजन के साक्ष्य में भी यह कहा गया है कि वह घटना स्थल से 50 गज की दूरी पर घास छील रही थी जहाँ से उसने वीभत्स घटना को देखा था। अ० सा० 4 पौरा

देवी और अ० सा० 3 दीनू धुर्वा ने इस तथ्य का कथन किया है। हमने पहले ही ऊपर चर्चा की है कि घटना के समय पर उपस्थिति के संबंध में सूचक अ० सा० 7 का साक्ष्य संदेहास्पद है। गवाहों के साक्ष्य को घटना के एक वर्ष बाद दर्ज किया गया था और इस प्रकार स्मरणशक्ति क्षीण हो जाने के कारण विश्वसनीय गवाहों के परिसाक्ष्य में विरोधाभास आ जाना स्वाभाविक है। सामान्यत: संप्रेक्षण की सामान्य गलती और समय के अवसान के चलते स्मरण शक्ति की त्रुटि के कारण और घटना के समय लगे आघात एवं संत्रास से उत्पन्न मन:स्थिति के कारण सत्यवादी गवाह के साक्ष्य में सदैव अंतर हो सकता है और ऐसा सदैव होता है चाहे गवाह कितना भी ईमानदार और सत्यवादी क्यों न हो। यहाँ यह उल्लिखित करना महत्वपूर्ण है कि जब गवाह न्यायालय के समक्ष उपस्थित होता है, कभी-कभी वह किसी दक्ष प्रति परीक्षक के समक्ष टिका नहीं रह सकता है क्योंकि वह एक देहाती व्यक्ति होता है और दक्ष प्रति परीक्षक द्वारा उससे पूछे गए प्रश्नों को समझने में वह सक्षम नहीं होता है और कभी-कभी, प्रति-परीक्षण के दबाव के अधीन उससे कतिपय उत्तरों को उगलवा लिया जाता है। जब कोई देहाती अथवा निरक्षर गवाह किसी दक्ष अधिवक्ता का सामना करता है, असंतुलन होना ही है और इसलिए ऐसे लघु अंतरों को अनदेखा करना ही होगा। (देखें **कृष्ण मोची बनाम बिहार राज्य, 2002 (6) SCC 81)**

19. इसके अतिरिक्त, ये दोनों गवाह अ० सा० 3 और 4 (दीनू धुर्वा और पौरा देवी) देहाती/ग्रामवासी है और न्यायालय के वातावरण से अविभूत हो सकते हैं और बचाव पक्ष अधिवक्ता द्वारा प्रति-परीक्षण किए जाने पर नर्वस हो जाने के कारण वे भ्रमित हो सकते हैं और इसके सही अर्थों में प्रश्नों का उत्तर देने में सक्षम नहीं हो सकते हैं। अ० सा० 4 पौरा देवी मृतक प्रभु मांझी की विधवा है। उसकी मृत्यु के समय वह घटनास्थल के निकट थी और उसने देखा था कि कैसे अपीलार्थीगण द्वारा उसके पति की हत्या कर दी गयी थी। महिला (अ० सा० 4), जो देख रही थी कि कैसे प्रहार करके उसके पति की हत्या कर दी गयी थी। अपीलार्थीगण द्वारा मृतक के शरीर पर कारित वास्तविक उपहतियों को गिनने की स्थिति में नहीं होगी और वह ऐसी डरावनी घटना से आतंकित हो गयी होगी और स्वाभाविकत: घटना स्थल पर हो रही घटनाओं का अवलोकन करने और इनके बारे में सोचने समझने की प्रथम दृष्टया शक्ति को स्वाभाविकत: गँवा बैठी होगी। वह प्रहारों को गिनने और यह देखने कि कैसे उसके पति की हत्या की जा रही थी और कैसे उस पर प्रहार किए जा रहे थे की हालत में नहीं होगी और वह केवल घटना की उत्पत्ति के बारे में बता सकती थी, वह एक स्वाभाविक गवाह है। कुल मिलाकर लोग घटना जो एक छोटी अवधि के भीतर घटित हुई है, के परिणामों को ठीक-ठीक याद नहीं कर सकते हैं और अन्वेषण अधिकारी अथवा न्यायालय के समक्ष घटनाओं के परिणामों को उद्धृत नहीं कर सकते हैं। वे केवल घटना के मुख्य तात्पर्य को याद कर सकते हैं। किसी गवाह से मानव रूपी टेपरिकार्डर अथवा विडियो कैमरा होने की अपेक्षा करना अवास्तविक है। गवाहों से फोटोग्राफिक स्मरण शक्ति होने की और घटना के विवरणों के पुनर्स्मरण की शक्ति होने की अपेक्षा नहीं की जाती है। गवाहों के लिए घटना एकदम से अचानक हुई थी जिसके बारे में उन्होंने सोचा तक नहीं था जो कि आश्चर्य का भाव दर्शाता है। दांडिक मामलों में गणित की परिष्कृतता के साथ घटना बताने की अपेक्षा गवाहों से नहीं की जाती है। अत: बचाव पक्ष के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इंगित अंतर, अन्यथा स्वीकार्य साक्ष्य को मिटा नहीं सकते है। संपूर्ण साक्ष्य के परिशीलन से, घटना के तरीके और घटना की उत्पत्ति को छेड़ा नहीं गया है। अत: हम बचाव पक्ष के विद्वान अधिवक्ता के प्रतिवादों में कोई बल नहीं पाते हैं।

20. विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया कि अ० सा० 3 दीनू धुर्वा और अ० सा० 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी द्वारा दिए गए प्रत्यक्ष विवरण और चिकित्सीय साक्ष्य जिसे न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत

किया गया था के बीच स्पष्ट विरोधाभास है। उन्होंने आगे इंगित किया कि अ॰ सा॰ 4 ने कथन किया है कि भुवनेश्वर मांझी की गर्दन के बाएँ हिस्से पर फरसा से वार किया गया था जबकि अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ के॰ डी॰ चौधरी ने दाएँ हिस्से पर उसकी गर्दन का आंशिक अंग-भंग पाया है। अ॰ सा॰ 3 दीनू धुर्वा ने कथन किया है कि प्रभु मांझी की गर्दन के बाएँ हिस्से पर फरसा से वार किया गया था, अ॰ सा॰ 8 डॉक्टर के अनुसार दोनों मृतकों की गर्दन के दाएँ हिस्से पर उपहतियाँ पायी गयी थी। मृतकों में से किसी की गर्दन के बाएँ हिस्से पर अ॰ सा॰ 8 डॉक्टर द्वारा कोई उपहति नहीं पायी गयी थी। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने इस तर्क का खंडन किया और प्रतिवाद किया कि ये मामूली अंतर हैं और अंतर, जैसा इंगित किया जा चुका है, स्वाभाविक है। उन्होंने आगे प्रतिवाद किया कि चश्मदीद गवाहों के अन्यथा तर्क पूर्ण और विश्वसनीय साक्ष्य को न्यायालय द्वारा केवल इस आधार पर त्यक्त नहीं किया जा सकता है कि डॉक्टर द्वारा दिया गया मत साक्ष्य असंगत है। उन्होंने आगे प्रतिवाद किया कि प्रहार मृतकों के गर्दन पर किए गए थे। चश्मदीद गवाहों में से एक उसकी पत्नी है और दूसरा एक स्वतंत्र गवाह है। जब ऐसी घिनौनी घटना घट रही थी, कोई भी अपीलार्थीगण द्वारा किए जा रहे भयभीत कर देने वाले प्रयास को देखने का साहस नहीं करेगा। गवाह, जो स्थल पर उपस्थित है और अपीलार्थी द्वारा मृतक पर किए जा रहे प्रहारों को देखता है, से शरीर के अंगों जहाँ, उपहतियाँ कारित की जा रही थी, पर किए जा रहे प्रहारों की संख्या गिनने की अपेक्षा नहीं की जाती है। किसी चश्मदीद गवाह से प्रहारों और वारों, जहाँ ये किए जा रहे थे, की सही-सही गिनती करने की उम्मीद करना बेतुकी आशा है। अत: अ॰ सा॰ 3 दीनू धुर्वा और अ॰ सा॰ 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी के साक्ष्य तर्क पूर्ण और विश्वसनीय है और इस आधार पर उन पर अविश्वास नहीं किया जा सकता है कि गवाह के साक्ष्य में व्यक्ति पर उपहतियों और वारों, जहाँ इन्हें किया गया था, के बारे में नगण्य अंतर है। जब कोई घटना घटती है, यह गवाहों को चौंका देती है और संत्रास एवं आतंक के कारण उससे गणितीय परिष्कृतता के साथ विवरण देने की अपेक्षा नहीं की जाती है। घटना के समय, गवाह या तो घायलों अथवा मृतकों को बचाने का प्रयास करता है या फिर वह असहाय व्यक्ति बन जाता है, खासकर जब वह शस्त्रविहीन है और अभियुक्त अपीलार्थीगण हथियारों से लैस है। गवाह से घटना की उत्पत्ति के बारे में बताने की अपेक्षा की जाती है। उससे घटना के समय उपहतियों को गिनने की अपेक्षा नहीं की जाती है क्योंकि उसे न्यायालय के समक्ष साक्ष्य देना है। घटना के समय वह ऐसी परिस्थितियों से घिरा रहता है जो उसे आश्चर्य चकित कर देती हैं। इन परिस्थितियों में, बचाव पक्ष के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इंगित किए गए असंगतियों का लाभ उनको नहीं मिलता है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ के॰ डी॰ चौधरी का साक्ष्य मत साक्ष्य है और चश्मदीद गवाह का साक्ष्य मुख्य सारवान साक्ष्य है जो अन्यथा ग्राह्य, तर्कपूर्ण और विश्वसनीय है और उस पर अविश्वास नहीं किया जा सकता है अथवा त्यक्त नहीं किया जा सकता है।

21. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **महाराष्ट्र राज्य बनाम प्रकाश सखा वसावे, (2009(11) SCC 193)** के मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:-

> *"14. उच्च न्यायालय इस बेतुके निष्कर्ष पर आया कि चश्मदीद गवाहों अ० सा० 3 और 6 ने 4-5 उपहतियों का विवरण दिया है किन्तु गवाहों ने शेष 15 उपहतियों के बारे में एक शब्द नहीं कहा। उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया यदि इन दोनों गवाहों ने वस्तुतः घटना को इतनी कम दूरी से देखा था, तब यह स्पष्ट नहीं किया गया था कि वे शेष उपहतियों जिन्हें मृतक के शरीर पर पाया गया था का विवरण देने में सक्षम क्यों नहीं हुए थे। एक गवाह, जो तीन सशस्त्र व्यक्तियों द्वारा किसी अन्य पर हमला किया जाता देखता है, शरीर के अंगों, जहाँ उपहतियाँ कारित की गयी थी पर प्रहारों की संख्या की गिनती करने की अपेक्षा नहीं की जाती है .....।''*

22. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया कि प्राथमिकी और फर्द बयान की सत्यता पूर्णत: संदेहास्पद है। अभियोजन के मामले के अनुसार अभियुक्त की गिरफ्तारी के बाद फर्दबयान दर्ज किया गया था जिसे गवाहों के बीच चर्चा के बाद दिया गया था। उन्होंने आगे इंगित किया कि सूचना, जो पुलिस थाना में दोपहर लगभग 1 बजे अ॰ सा॰ 7 विशम्भर मांझी द्वारा दी गयी थी जिसे उसके द्वारा हस्ताक्षरित बताया जाता है, प्राथमिकी के रूप में नहीं मानी गयी थी। अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ 5 ने कथन किया है कि वह अगले दिन अर्थात् दिनांक 10.7.1996 को दोपहर लगभग 11 बजे गोपनीय सूचना प्राप्त करने पर घटनास्थल पर पहुँचा था। इस प्रकार, संपूर्ण अभियोजन मामला संदेहास्पद बन जाता है। राज्य की ओर से उपस्थित ए॰ पी॰ पी॰ ने प्रतिवाद का खंडन किया और प्रतिवाद किया कि अ॰ सा॰ 7 पर विचारण न्यायालय द्वारा अविश्वास किया गया है और उन्होंने आगे इंगित किया कि अ॰ सा॰ 7 ने दृढ़तापूर्वक कथन किया कि वह फर्दबयान के गवाह अ॰ सा॰ 6 ज्योति प्रकाश तिर्के के साथ पुलिस थाना गया था और उसने साक्ष्य दिया है कि फर्दबयान अ॰ सा॰ 5 राणा राम बदन सिंह आई॰ ओ॰ द्वारा घटनास्थल पर दर्ज किया गया था। उसने अपने प्रति परीक्षण में कथन किया है कि सूचक ने घटना के बारे में पुलिस थाना में बताया था और इसे पुलिस थाना में दर्ज नहीं किया गया था। उन्होंने आगे अन्वेषण अधिकारी राणा रामबदन सिंह अ॰ सा॰ 5 के साक्ष्य पर विश्वास किया जिन्होंने अपने बयान में दृढ़तापूर्वक कथन किया है कि इसे घटनास्थल पर दोपहर 1 बजे दर्ज किया गया था। साक्ष्य के अधिमूल्यन का प्रमुख सिद्धांत सबसे पहले यह देखना है कि क्या गवाह के साक्ष्य को समग्रता से लेने पर यह सत्य प्रतीत होता है। जब एक बार उक्त छवि निर्मित हो जाती है न्यायालय को समग्र साक्ष्य में इंगित किए गए कमियों, खामियों और दुर्बलताओं को विशेषत: यह ध्यान में रखते हुए साक्ष्य का संवीक्षण करना होगा और यह पाने के लिए उनका मूल्यांकन करना होगा कि क्या यह गवाह द्वारा दिए गए साक्ष्य के सामान्य भाव के विरुद्ध है और क्या साक्ष्य का पूर्व मूल्यांकन डगमगा गया है जो इसे अविश्वसनीय बना दे। विवाद्यक के केंद्र को नहीं छुने वाले तुच्छ मामलों की महत्वहीन भिन्नताएँ, उक्त भिन्नता और अतिशयोक्ति और विरोधाभास को हटाते हुए प्राक्कल्पित दृष्टिकोण, अन्वेषण अधिकारी द्वारा कुछ तकनीकी गलतियों को ज्यादा दिया गया महत्व साक्ष्य को संपूर्ण रूप से अस्वीकार करने की अनुमति नहीं देगा। अ॰ सा॰ 7 विशम्भर मांझी के साक्ष्य पर इस बिन्दु पर अविश्वास किया गया है कि वह घटना का गवाह था। अन्य चश्मदीद गवाह ने दृढ़तापूर्वक कथन किया है कि उसे घटना के बारे में सूचित किया गया था और वह सीधा पुलिस थाना गया था। यह भी स्वाभाविक है कि जब उसने सुना कि उसके पुत्र और भाई की हत्या कर दी गयी है, वह आश्चर्य चकित हो गया होगा और अपने द्वारा किए गए लोपों और कृत्यों को ध्यान में लेने हेतु अपना मानसिक संतुलन गँवा बैठा होगा। उक्त गवाह (अ॰ सा॰ 7) सूचक ने फर्दबयान पर हस्ताक्षर किया था। उसने कथन किया है कि उसने लिखित में पुलिस थाना को सूचना दिया था जिसे पुलिस द्वारा पुलिस थाना में दर्ज किया गया था। चश्मदीद गवाह के रूप में अ॰ सा॰ 7 की उपस्थिति पर संदेह किया गया है। अतिउत्साह और अतिशयोक्ति में उसने अभिसाक्ष्य दिया है कि वह घटना का चश्मदीद गवाह था। इसी प्रकार, उसने कथन किया है कि उसने लिखित में पुलिस थाना को रिपोर्ट दिया था ताकि उसके साक्ष्य पर अविश्वास नहीं किया जाए। अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य में यह भी अभिलेख पर है कि वह गोपनीय सूचना पर घटना स्थल पर पहुँचा था और उसने सूचक अ॰ सा॰ 7 का फर्दबयान घटना स्थल पर दर्ज किया था और उसने दृढ़तापूर्वक यह कथन भी किया है कि पुलिस थाना में कोई अन्य रिपोर्ट नहीं था। सूचक अ॰ सा॰ 7 का साक्ष्य दिनांक 7.7.1999 को अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य के बाद दर्ज किया गया था। यदि वह इतना विवेकशील और सिखाया पढ़ाया होता, वह अ॰ सा॰ 5 के संपूर्ण साक्ष्य का परिशीलन कर सकता था और घटना को उसी तरह से बता सकता था जैसा अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ 7 राणा

राम बदन सिंह के साक्ष्य में बताया गया था। अन्य गवाह ने पुलिस थाना जाते समय और फर्दबयान दर्ज किए जाते समय स्वयं को उसके साथ बताया है; ज्योति प्रकाश तिर्के अ॰ सा॰ 6 ने दृढ़तापूर्वक कथन किया है कि पुलिस के समक्ष ऐसी कोई रिपोर्ट नहीं दी गयी थी और इसे पुलिस थाना में दर्ज नहीं किया गया था। उसने अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ 5 के परिसाक्ष्य को आगे पुष्ट किया है कि उसने (अ॰ सा॰ 5) फर्दबयान घटना स्थल पर दर्ज किया था। अ॰ सा॰ 7 की अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ 5 के साथ कोई दुश्मनी नहीं है। कोई कारण नहीं है कि पुलिस क्यों उक्त रिपोर्ट को दबा देगी और क्यों अन्वेषण अधिकारी (अ॰ सा॰ 5) और ज्योति प्रकाश तिर्के (अ॰ सा॰ 6) न्यायालय के समक्ष झूठ बोलने के लिए आगे आएँगे।

23. अब विचारार्थ यह प्रश्न उद्‌भुत होता है कि अभियुक्त अपीलार्थी सं॰ 1 के घर की दक्षिणी कमरे के छप्पर से तेज धार वाले फरसा की बरामदगी का साक्ष्य तर्कपूर्ण और विश्वसनीय है या नहीं। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया कि उक्त बरामदगी को विचार में नहीं लिया जा सकता है और उक्त बरामदगी गढ़ी गयी है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क का खंडन किया और प्रतिवाद किया कि अभियोजन ने पर्याप्त रूप से रक्त रंजित फरसा की बरामदी को सिद्ध किया है जिसे अभियुक्त प्रद्युमन मांझी के बयान के आधार पर बरामद किया गया था और यह भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन प्रासंगिक है। अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में अन्वेषण अधिकारी राणा राम बदन सिंह अ॰ सा॰ 5 का परीक्षण किया जिसने कथन किया है कि अभियुक्त अपीलार्थी प्रद्युमन मांझी की सूचना के आधार पर उसने उसके घर के दक्षिणी कमरे के छप्पर से तेज धार वाला फरसा बरामद किया था। अभिग्रहण मेमों, जिसे प्रदर्श 4 के रूप में प्रदर्शित किया गया है, को घटना स्थल पर तैयार किया गया था। उक्त बरामदगी अ॰ सा॰ 1 नीलाम्बर प्रधान और अ॰ सा॰ 6 प्रकाश तिर्के की उपस्थिति में की गयी बतायी जाती है। अभियोजन का मामला यह भी है कि उक्त फरसा रक्तरंजित था। अ॰ सा॰ 1 नीलाम्बर प्रधान को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और उसने उक्त बरामदगी का समर्थन नहीं किया था और उसने यह कथन किया है कि उक्त हथियार उसकी उपस्थिति में बरामद नहीं किया गया था। उसने केवल प्रदर्श 4 पर अपना हस्ताक्षर स्वीकार किया। अ॰ सा॰ 6 ज्योति प्रकाश तिर्के ने बरामदगी के बिन्दु पर अभियोजन के मामला का समर्थन किया है। उसने अपने अभिसाक्ष्य में कथन किया है कि पुलिस ने फरसा बरामद किया था और बरामदगी मेमो तैयार किया गया था। उक्त फरसा अभियुक्त अपीलार्थी प्रद्युमन मांझी के घर से बरामद किया गया था और इसे उसकी उपस्थिति में बरामद किया गया था और उसने उक्त बरामदगी मेमो पर अपना हस्ताक्षर सिद्ध किया था। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 6 ने अभियोजन का समर्थन किया है। अपने प्रति-परीक्षण के दौरान, उसने कथन किया कि फरसा, जिसे उसके कहने पर अभियुक्त अपीलार्थी के घर से बरामद किया गया था, न्यायालय में उनके समक्ष उपलब्ध नहीं है। उक्त फरसा की बरामदगी के संबंध में अ॰ सा॰ 5 अन्वेषण अधिकारी ने भी अभियोजन के मामले का समर्थन किया है। उसने अपने प्रति-परीक्षण में आगे कथन किया है कि उक्त फरसा, जिसे अपीलार्थी 'प्रद्युमन मांझी के बताए जाने पर बरामद किया गया था, उसके साक्ष्य के समय न्यायालय में उनके समक्ष उपलब्ध नहीं था। अभिलेख से यह भी पता चलता है कि अभियोजन ने फरसा की बरामदगी को सुकर बनाने के लिए अपनी इच्छा अभिव्यक्त करते हुए अभियुक्त अपीलार्थी द्वारा अभिकथित रूप से दिए गए बयान का दर्ज किया जाना अंतर्विष्ट करके किसी दस्तावेज को प्रस्तुत नहीं किया था। अभियोजन का मामला यह है कि अभियुक्त अपीलार्थी ने स्वेच्छापूर्वक सूचना दी थी और फरसा की बरामदगी के लिए पुलिस को ले गया था। अभियोजन अथवा अन्वेषण अधिकारी जिसने उक्त तथ्य का पता लगाया था, ने अभियुक्त के किसी बयान को सिद्ध नहीं किया है। अभियोजन ने किसी प्रकटीकरण बयान को सिद्ध नहीं किया है। यह भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के प्रावधान को आकृष्ट करने हेतु पूर्वशर्त है। अभियुक्त

अपीलार्थी ने प्रकटीकरण बयान दिया और इसके बाद साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन बरामदगी को प्रभाव दिया जा सकता है। प्रकटीकरण मेमो केवल यह प्रकट करता है कि उक्त हथियार उसके घर से बरामद किया गया था। अभिग्रहण मेमो में भी उसके प्रकटीकरण बयान के बारे में कोई उल्लेख नहीं है। अभिग्रहण मेमो के फॉरमैट का उपयोग किया गया है जिसका उपयोग दं॰ प्र॰ सं॰ के प्रावधानों के अधीन वस्तुओं की बरामदगी के लिए किया जाता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **निसार खान बनाम उत्तरांचल राज्य (2006 (2) SCC (Cri) 568)** में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"6. .....अब यह विधि का सुनिश्चित सिद्धान्त है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन अभियुक्त द्वारा दिए गए प्रकटीकरण बयान के अनुसरण में की गयी बरामदगी साक्ष्य में स्वीकार्य है। धनन्जय चटर्जी बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (1994 (2) SCC (Cri) 358) में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि धाराओं 25 और 26 द्वारा हिट होने के चलते पुलिस के समक्ष अभियुक्त द्वारा दिया गया संपूर्ण बयान साक्ष्य में अस्वीकार्य है, किंतु उसके बयान का वह अंश, जो वस्तुओं की बरामदगी की ओर ले गया, स्पष्टतः अधिनियम की धारा 27 के अधीन स्वीकार्य है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय को बयान के अस्वीकार्य अंश पर ध्यान नहीं देना होगा और उसके बयान के केवल उस अंश को ध्यान में लेना होगा जो अभियुक्त द्वारा दिए गए प्रकटीकरण बयान के अनुसरण में वस्तुओं की बरामदगी के साथ सुभिन्न रूप से संबंधित है। आगे अभिनिर्धारित किया गया है कि इस संबंध में तथ्य की खोज पायी गयी वस्तु की बरामदगी/खोज, स्थान जहाँ से इसे प्रस्तुत किया गया था और इसके अस्तित्व के बारे में अभियुक्त की जानकारी सम्मिलित करता है।''

"7. गोलाकोंडा वेंकटेश्वर राव बनाम आंध्र प्रदेश राज्य (2003 (9) SCC 277 : 2003 SCC (Cri) 1904) में इस न्यायालय ने दृष्टिकोण को दोहराया और अभिनिर्धारित किया कि छुपाये गए स्थान से आपराधिक वस्तुओं की बरामदगी की ओर ले जाता अभियुक्त का प्रकटीकरण बयान, भले ही प्रकटीकरण बयान और बरामदगी मेमो पर अभियुक्त का हस्ताक्षर नहीं था, कुएँ और खोदी गयी जगह से बरामदगी का तथ्य उस स्थान से सम्बन्धित था जिसे अपीलार्थी द्वारा इंगित किया गया था और इसलिए, ऐसी खोज स्वैच्छिक थी। बरामदगी जो दी गयी सूचना के परिणामस्वरूप की गयी थी, को मृतका द्वारा पहने गए कपड़ों और उसके कंकाल की खोज द्वारा सुदृढ़ और संपुष्ट किया गया है और इसलिए बयान और सूचना को झूठा नहीं माना जा सकता है। वर्तमान मामले में, बरामदगी मेमो पर समस्त अभियुक्तगण का हस्ताक्षर प्राप्त किया गया है। प्रवीण कुमार बनाम कर्नाटक राज्य, (2003 (12) SCC 199 : 2004 SCC (Cri) Supp 357) में यही दृष्टिकोण दोहराया गया है।''

"8. जैसा पहले ध्यान में लिया गया है, वर्तमान मामले में गिरफ्तारी के तुरन्त बाद अभियुक्त द्वारा दिए गए प्रकटीकरण बयान के अनुसरण में हथियारों को बरामद किया गया था और अभियुक्त में से प्रत्येक द्वारा इंगित किए गए स्थान से अपराधिक हथियारों को बरामद किया गया था जो बालू के नीचे छुपायी गयी थी और जिन्हें पत्थरों से ढँक दिया गया था। उच्च न्यायालय ने इस संबंध में बरामदगी मेमो पर केवल इस आधार पर विश्वास नहीं करके भारी भूल की है कि स्थान एक सार्वजनिक स्थान है जहाँ लोगों का आना-जाना लगा रहता है। उच्च न्यायालय यह ध्यान में लेने में विफल रहा कि प्रकटीकरण बयान के अनुसरण में अभियुक्तगण में से प्रत्येक द्वारा इंगित किए गए स्थान से पत्थरों द्वारा ढँके बालू के नीचे से बरामदगी की गयी थी।''

24. सर्वोच्च न्यायालय ने **सत्तातिया बनाम महाराष्ट्र राज्य, (AIR 2008 SC 1184)** के मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

"23. अगली चीज जिसे देखना है वह यह है कि क्या अपराध करने में अभिकथित रूप से प्रयुक्त आधी ब्लेड और अपीलार्थी के कपड़ों की बरामदगी के संबंध में साक्ष्य विश्वसनीय है और अपीलार्थी के विरुद्ध आपराधिक मानव वध का आरोप सिद्ध करने के लिए इस पर विश्वास किया जा सकता है। इस संदर्भ में, यह ध्यान में लेना आवश्यक है कि अभियोजन ने कपड़ों और आधी ब्लेड की बरामदगी को सुकर बनाने के लिए अपनी इच्छा अभिव्यक्त करते हुए अपीलार्थी द्वारा अभिकथित रूप से दिए गए बयान का दर्ज किया जाना अंतर्विष्ट करने वाले किसी दस्तावेज को प्रस्तुत नहीं किया था। अभियोजन मामला कि अभियुक्त ने स्वेच्छापूर्वक सूचना दी और कपड़ों, आधी ब्लेड और रुमाल की बरामदगी के लिए पुलिस को ले गया, अत्यन्त संदेहास्पद है... ...."

25. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय से स्पष्ट है कि खोज की ओर ले जाता प्रकटीकरण बयान होना चाहिए। वर्तमान मामले में, उक्त प्रकटीकरण बयान नहीं है। अन्वेषण अधिकारी को घटना स्थल पर जाने से पहले पृथक प्रकटीकरण बयान दर्ज करना चाहिए था और उसे गवाहों को इस तथ्य को स्पष्ट करना चाहिए था कि उसने ऐसा बयान दिया है और समस्त गवाहों को सूचना देने के बाद उसे उस स्थान पर जाना चाहिए था जहाँ से उक्त हथियार बरामद किया गया था। उक्त बयान को न्यायालय के समक्ष सिद्ध करना होगा और इसे प्रदर्शित करना होगा। दूसरी आकस्मिकता में जब वह अभिग्रहण मेमो तैयार करता है, वह उसमें सारे विवरणों और स्थान पर उक्त हथियार इंगित करता अभियुक्त के बयान को दर्ज कर सकता है और तत्पश्चात् अन्वेषण अधिकारी द्वारा बरामदगी को प्रभाव देना चाहिए था। यदि उक्त प्रकटीकरण बयान सिद्ध नहीं किया जाता है, कल्पना की किसी सीमा तक यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि यह भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन खोज है और यह हथियार की बरामदगी के रूप में बना रहेगा और भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन नहीं पढ़ा जाएगा।

26. वर्तमान मामले में, उक्त हथियार न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है; आम गवाहों में से एक अ॰ सा॰ 1 नीलाम्बर प्रधान ने अभियोजन के मामला का समर्थन नहीं किया है। अ॰ सा॰ 5 और 6 को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था जिन्होंने अभियोजन का समर्थन किया था किन्तु उनके साक्ष्य के समय उक्त हथियार न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया था। उक्त हथियार को प्रस्तुत करना अभियोजना पर बाध्यकारी था ताकि न्यायालय हथियार देख सके और बचाव पक्ष गवाहों के साक्ष्य की सत्यता की परीक्षा करने के लिए प्रति-परीक्षण में प्रश्नों को रख सके। इस प्रकार, उक्त तथ्यों के साथ उक्त हथियार को प्रस्तुत नहीं किया जाना हथियार की बरामदगी को अविश्वसनीसय बनाता है। अत:, हमारा मत है कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन बरामदगी का साक्ष्य विचार में नहीं लिया जा सकता है।

27. यहाँ चश्मदीद गवाहों का विश्वसनीय और तर्कपूर्ण साक्ष्य है। बरामदगी का साक्ष्य अपराध किए जाने को पुष्ट करता साक्ष्य का टुकड़ा है। मात्र बरामदगी पर अविश्वास करना चश्मदीद गवाहों के संपूर्ण विश्वसनीय और तर्कपूर्ण साक्ष्य को असत्य और अविश्वसनीय नहीं बनाएगा। उत्पत्ति, घटना की प्रकृति, घटना के समय अपीलार्थीगण के हथियारों की प्रकृति सहित अनेक प्रासंगिक लक्षणों का अवलोकन करने पर अभियोजन के साक्ष्य से अथवा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों से उद्‌भूत किसी संभाव्यता से यह निष्कर्षित नहीं किया जा सकता है कि अपीलार्थीगण को इस मामले में झूठा फँसाया गया है। हमने चश्मदीद गवाहों और अन्य गवाहों के संपूर्ण साक्ष्य का परिशीलन किया है। विचारण न्यायालय ने साक्ष्य

को अंतर्निहित रूप से सत्य और विश्वसनीय पाया है। यद्यपि उनकी उपस्थिति को संदेहास्पद दर्शाने का प्रयास किया गया था। हम अपीलार्थीगण की ओर से दिए गए अभिवाक् को स्वीकार करने का कोई कारण नहीं पाते हैं। घटना स्थल पर उनकी उपस्थिति को स्पष्ट किया गया था और उनके साक्ष्य को केवल इसलिए अविश्वसनीय मानकर संदेह नहीं किया जा सकता है कि गवाहों में से एक मृतक से संबंधित था। दूसरी ओर, अ॰ सा॰ 4 सतमति देवी उर्फ पौरा देवी घटना की स्वाभाविक गवाह थी। अभियोजन के साक्ष्य ने समस्त तात्विक विशिष्टियों में संपूर्ण मामले का समर्थन किया है और उनके साक्ष्य में कोई दुर्बलता इंगित नहीं की जा सकती है। अभिलेख पर साक्ष्य के स्वतंत्र अधिमूल्यन के बाद, हम घटना की उत्पत्ति के संबंध में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्षों में कोई गलती नहीं पाते हैं। अपीलार्थीगण की ओर से विचारार्थ कोई अन्य बिन्दु उठाया नहीं गया था।

28. पूर्वोक्त चर्चा की दृष्टि में, हम अभिनिर्धारित करते हैं कि अभियोजन ने अपीलार्थीगण के विरुद्ध युक्तियुक्त संदेह के परे दोष स्थापित किया है। हम पाते हैं कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थीगण को सही दोष सिद्ध और दंडित किया है और सत्र विचारण सं॰ 58 वर्ष 1996 में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और दोषसिद्धि एवं दंड के आदेश में कोई दुर्बलता नहीं है। अपीलार्थीगण दोषसिद्ध एवं दंडित किए जाने के दायी है जैसा विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत किया गया है। अतः अपील खारिज करने योग्य है।

पूर्वोक्त कारणों से, हम इस अपील को गुणावगुणविहीन पाते हैं और यह खारिज करने योग्य है। तद्नुसार, अपील खारिज की जाती है।

डी॰ के सिन्हा, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

माननीय जे॰ सी॰ एस॰ रावत, न्यायमूर्ति

राजाराम भुइया

बनाम

भारत कोकिंग कोल लि॰ एवं अन्य

W.P. (S) No. 4981 of 2003. Decided on 13th August, 2010.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–आवेदन की अस्वीकृति इस आधार पर कि मृतक की पत्नी पहले से ही प्रत्यर्थी के नियोजन में थी–वर्तमान आवेदन कर्मचारी की मृत्यु के 16 वर्षों के बाद, वयस्कता प्राप्त करने के उपरांत याची द्वारा दाखिल किया गया–अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए आवेदन दाखिल करने की समय सीमा सामान्यतः कर्मचारी की मृत्यु की तिथि से एक वर्ष होती है–अगर समय सीमा के भीतर आवेदन दाखिल नहीं किया जाता है, याची का दावा पोषणीय नहीं होता है–आश्रितों में से एक (मृतक की विधवा) पहले से ही सेवा में थी जबकि उसकी मृत्यु नियोजन में रहते हुए हो गई थी–आवेदन काफी विलम्बित प्रक्रम पर दाखिल किया गया था–कर्मचारी के नियोजन में रहने के बाद लम्बे समय तक परिवार जीवित रहा–याची अनुकंपा के आधार पर नियोजन पाने का हकदार नहीं–याचिका खारिज।

(पैराएँ 3 से 5)

निर्णयज विधि.–1994(4) SCC 138; 2006(5) SCC 766—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Manish Kumar, For the Petitoner; J.C. to Mr. A.K. Mehta, For the Respondents.

आदेश

यह याचिका भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अपने मृत पिता, जिसकी मृत्यु कार्यरत रहते दिनांक 24.5.1983 को हो गयी थी, के स्थान पर अनुकंपा के आधार पर याची को नियुक्त करने का अनुतोष इप्सित करते हुए दाखिल की गयी है। अनुकम्पा पर नियुक्ति के लिए आवेदन वर्ष 2002 में दिया गया था। याचिका में यह अभिकथन भी किया गया है कि याची के चाचा ने उक्त नियुक्ति के लिए दिनांक 11.6.1984 को आवेदन दिया था जिसे इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया था कि मृतक के आश्रितों में से एक अर्थात् मृतक की पत्नी पहले से ही प्रत्यर्थीगण के अधीन रोजगार में थी। तत्पश्चात् वर्ष 2002 में, याची द्वारा इस आधार पर आवेदन दिया गया था कि वह तब तक वयस्क हो चुका था।

2. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची के पिता की मृत्यु वर्ष 1983 में हो गयी थी; तत्पश्चात, याची के चाचा द्वारा अनुकम्पा पर नियुक्ति के लिए आवेदन दिया गया था जिस इस आधार पर प्राधिकारीगण द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था कि आश्रितों में से एक अर्थात् मृतक कर्मचारी की पत्नी पहले से ही बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ की सेवा में थी और तत्पश्चात्, वर्तमान याची ने वर्ष 2002 में अनुकम्पा पर नियुक्ति के लिए आवेदन दिया था जो कर्मचारी की मृत्यु की तिथि से लगभग 16 वर्षों बाद अत्यन्त विलम्बित चरण पर दिया गया था और इसलिए अनुकम्पा पर नियुक्ति के लिए दिया गया आवेदन प्राधिकारीगण द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था। याची के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क का खंडन किया और प्रतिवाद किया कि अपने पिता की मृत्यु के समय याची अवयस्क था और इसलिए आवेदन दाखिल नहीं कर सकता था।

3. अनुकम्पा पर नियुक्ति के लिए आवेदन दाखिल करने की समय सीमा सामान्यत: कर्मचारी की मृत्यु की तिथि से एक वर्ष है। यदि इस समय के भीतर कोई आवेदन दाखिल नहीं किया जाता है, याची का दावा पोषणीय नहीं होता है। वर्तमान मामले में विलम्ब केवल माहों का नहीं है बल्कि अनुकम्पा के आधार पर नियुक्ति के लिए आवेदन दाखिल करने में वर्षों बीत गए हैं। यह भी विवाद में नहीं है कि आश्रितों में से एक अर्थात् मृतक की पत्नी पहले से ही सेवा में थी जब उसकी मृत्यु कार्यरत रहते हो गयी थी। अनुकम्पा के आधार पर लोक सेवा में नियुक्ति न्याय के हित में अपवादस्वरुप काढ़ी गयी है क्योंकि लोक सेवा में नियुक्ति कठोरतापूर्वक केवल आवेदनों के खुले निमंत्रण और मेधा के आधार पर की जानी चाहिए और न कि नियुक्ति के किसी अन्य ढंग से और न ही कोई अन्य अनुचिन्तन अनुज्ञेय है ऐसी अनुकंपा पर नियुक्ति का मुख्य उद्देश्य केवल मानवीय आधार पर इस तथ्य के कारण किया जाता है कि जब तक आजीविका का कोई स्रोत प्रदान नहीं किया जाता है, परिवार जीवन यापन करने में सक्षम नहीं होगा। ऐसी नियुक्ति प्रदान करने का मुख्य लक्ष्य परिवार को आकस्मिक संकट से उबरने के लिए सक्षम बनाना है। **उमेश कुमार नागपाल बनाम हरियाणा राज्य, [(1994)4 SCC 138,** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि:–

> *''2. प्रश्न उन अनुचिन्तनों से संबंधित है जिन्हें अनुकम्पा के आधार पर लोक सेवाओं में नियुक्ति देते हुए मार्गदर्शन करना चाहिए। यह प्रतीत होता है कि इस विवाद्यक पर अत्यन्त अस्पष्टता है। नियमानुसार, लोक सेवाओं में नियुक्ति कठोरतापूर्वक आवेदनों के खुले निमंत्राण और मेधा के आधार पर की जानी चाहिए। नियुक्ति का कोई अन्य ढंग या अन्य अनुचिन्तन अनुज्ञेय नहीं है। किसी अन्य प्रक्रिया का अनुसरण करने अथवा पद के लिए नियमों द्वारा अधिकथित अर्हताओं को शिथिल करने की स्वतंत्रता सरकारों अथवा लोक प्राधिकारीगण को नहीं है। किन्तु इस नियम, जिसका अनुसरण प्रत्येक मामले में कठोरतापूर्वक करना होगा, के प्रति न्याय के हित में और*

कतिपय आकस्मिकताओं को पूरा करने के लिए कुछ अपवादों को काढ़ा गया है। एक ऐसा अपवाद अपने परिवार की आर्थिक तंगी में और आजीविका के किसी साधन के बिना छोड़ते हुए कार्यरत कर्मचारी की मृत्यु होने पर उसके आश्रितों के पक्ष में है। ऐसे मामलों में, केवल शुद्ध मानवीय अनुचिन्तनों पर इस तथ्य को विचार में लेते हुए कि जब तक परिवार को आजीविका का एक स्रोत नहीं प्रदान किया जाता है, परिवार जीवन यापन में सक्षम नहीं होगा, मृतक के आश्रितों में से किसी एक को जो ऐसे रोजगार का पात्र हो सकता है, लाभदायमक/अर्जक रोजगार प्रदान करने के लिए नियमावली में प्रावधान बनाया गया है। इस प्रकार, अनुकम्पा पर रोजगार प्रदान करने का मुख्य लक्ष्य आकस्मिक संकट से उबारने के लिए परिवार को सक्षम बनाना है। लक्ष्य ऐसे परिवार के सदस्य को पद, मृतक द्वारा धारित पद की तरह पद की बात ही छोड़ दें, प्रदान करना नहीं है। इसके अतिरिक्त, किसी कार्यरत कर्मचारी की मृत्यु मात्र उसके परिवार को आजीविका का ऐसे स्रोत का हकदार नहीं बनाता है। सरकार अथवा संबंधित लोक प्राधिकारी को मृतक के परिवार की वित्तीय दशा का परीक्षण करना होगा और केवल तभी जब वह संतुष्ट है कि रोजगार के प्रावधान के बिना परिवार संकट का सामना करने में सक्षम नहीं होगा, परिवार के पात्र सदस्य को नौकरी का प्रस्ताव देना होगा। तृतीय और चतुर्थ वर्गों के पद गैर शारीरिक और शारीरिक श्रेणियों के निम्नतर पद हैं और इसलिए परिवार को वित्तीय तंगी से मुक्त करने के लिए और संकट से पार पाने के लिए इसकी सहायता करने के लिए केवल इन्हें ही अनुकम्पा के आधार पर प्रदान किया जा सकता है। नियम के प्रति अपवाद बनाकर ऐसे निम्नतम पदों में रोजगार का प्रावधान न्यायोचित और वैध है क्योंकि यह भेदभाव नहीं करता है। ऐसे पदों में मृतक कर्मचारी के ऐसे आश्रितों के साथ किया गया अनुकूल व्यवहार का इप्सित लक्ष्य के साथ तर्कपूर्ण संबंध है अर्थात् दरिद्रता के विरुद्ध अनुतोष। इस उद्देश्य के लिए लोक प्राधिकारीगण द्वारा कोई अन्य पद दिया जाना अपेक्षित अथवा आवश्यक नहीं है। इस संबंध में यह सदैव स्मरण रखना होगा कि मृतक के दरिद्र परिवार के विरुद्ध ऐसे करोड़ों परिवार है जो उतना ही, यदि अधिक नहीं, दरिद्र हैं। मृतक कर्मचारी के परिवार के पक्ष में किया गया नियम का अपवाद उसके द्वारा की गयी सेवा और अब तक रोजगार से उत्पन्न परिवार की हैसियत और क्रिया-कलाप में परिवर्तन और वैध आशाओं, जो अचानक पलट गयी हैं, को देखते हुए है।''

4. जम्मू-कश्मीर राज्य बनाम सज्जाद अहमद मीर [(2006)5 SCC 766] के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:

"11. हम यह भी संप्रेक्षित कर सकते हैं कि जब उच्च न्यायालय की खंडपीठ आवेदक के मामले पर विचार कर रही थी और अभिनिर्धारित किया था कि उसने ''अनुकम्पा'' इप्सित की थी; पीठ को वृहत्तर विवाद्यक पर विचार करना चाहिए था और वह यह है कि ऐसी नियुक्ति सामान्य नियम का अपवाद है। सामान्यतः सरकार अथवा अन्य लोक उपक्रम/क्षेत्र में रोजगार समस्त पात्र उम्मीदवारों के लिए खुला होना चाहिए जो आवेदन देने आगे आ सकते हैं और एक-दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकते हैं। यह संविधान के अनुच्छेद 14 के अनुकूल है। प्रतिद्वंदी मेधा के आधार पर लोक पद के लिए नियुक्ति की जानी चाहिए। बाध्यकारी परिस्थितियों जैसे एकमात्र कमानेवाली की मृत्यु और इसके चलते परिवार के पीड़ित होने की संभावना, को छोड़ कर सामान्य नियम से प्रस्थान नहीं करना चाहिए। जब एक बार यह सिद्ध किया जाता है कि एकमात्रा कमाने वाले की मृत्यु के बावजूद परिवार जीवित है और काफी अधिक अवधि

बीत चुकी है, नियुक्ति के सामान्य नियम को ''विदा'' करने की और संविधान के अनुच्छेद 14 की आज्ञापकता को अनदेखा करके कई अन्य के हितों की कीमत पर किसी एक के साथ पक्षपात करने की आवश्यकता नहीं है।''

5. जैसा ऊपर इंगित किया गया है, आवेदन अत्यन्त विलम्बित चरण पर दाखिल किया गया था; परिवार कार्यरत कर्मचारी की मृत्यु के बाद अत्यधिक अवधि तक गुजारा करता रहा; याची के पिता की मृत्यु के समय मृतक का आश्रित पहले से ही सेवा में था; इन तथ्यों और परिस्थितियों पर संपूर्णता से विचार करते हुए मैं इसे सुयोग्य मामला नहीं पाता हूँ जहाँ याची अनुकम्पा आधार पर नियुक्ति पाने का हकदार है। अत: याचिका आरंभ में ही खारिज की जाती है। किन्तु व्यय के प्रति कोई आदेश नहीं है।

माननीय आर॰ के॰ मेराठिया, न्यायमूर्ति

हरि शंकर प्रसाद सिंह

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 5036 of 2008. Decided on 16th August, 2010.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–प्लॉट का आबंटन–प्रत्यर्थी के पक्ष में किए गए आबंटन आदेश को चुनौती–प्रत्यर्थी के पक्ष में मूल आबंटित ने इकाई सरेंडर किया–प्रत्यर्थी ने प्रोजेक्ट रिपोर्ट के साथ अपेक्षित दस्तावेज उपलब्ध कराया–प्रत्यर्थीगण को याची और मूल आबंटिती के बीच किसी विवाद से कोई सरोकार नहीं है–ऐसे आबंटन में कोई मनमानापन, अनियमितता या अवैधता नहीं–याचिका खारिज। (पैराएँ 4 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Sumeet Kumar Gadodia, For the Petitioner; Mr. R. C. P. Sah, For the AIADA; Mr. Indrajit Sinha, For the Respondent No. 4.

आदेश

यह रिट याचिका प्रत्यर्थी सं॰ 4 के पक्ष में पारित दिनांक 1.7.2008 के आबंटन आदेश को चुनौती देते हुए दाखिल की गयी है।

2. यह प्रतीत होता है कि प्रश्नगत भूमि दिनांक 15.1.1985 को इसके स्वत्वधारी डॉ॰ राजीव रंजन सिंह के माध्यम से मेसर्स डॉ॰ हाइजिन एण्ड सर्जिकल प्रोडक्ट को आबंटित की गयी थी। उक्त स्वत्वधारी ने दिनांक 21.4.2007 के निम्नलिखित प्राधिकार पत्र द्वारा याची को प्राधिकृत किया:

''प्राधिकार पत्र

मैं, डॉ० राजीव रंजन सिंह, पुत्र स्वर्गीय राधा रमण प्रताप सिंह, धर्म से हिन्दु, 144 अब बरदवारी, पी० एस० सीताराम डेरा, जमशेदपुर, जिला सिंहभूम पूर्व, झारखंड राज्य का निवासी एतद् द्वारा निम्नलिखित सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान और घोषित करता हूँ:–

(1) कि मैं C-13, चतुर्थ फेज, औद्योगिक क्षेत्र, आदित्यपुर, गम्हरिया जिला सरायकेला खारसवन स्थित मेसर्स डॉ० हाइजिन एण्ड सर्जिकल प्रोडक्ट का स्वत्वधारी हूँ।

(2) कि मैं यकृत की बीमारी का मरीज हूँ और इसलिए बेहतर उपचार के लिए विदेश जाना चाहता हूँ।

(3) कि मैं अपनी अनुपस्थिति में, कम्पनी के सारे कार्यों के लिए कम्पनी से संबंधित सारे दस्तावेजों को हस्ताक्षरित करने के लिए ''हरिशंकर प्रसाद सिंह'' को प्राधिकृत करता हूँ।

(4) कि इस प्राधिकार पत्र के नीचे श्री हरिशंकर प्रसाद सिंह का वास्तविक हस्ताक्षर और चित्र इसके साथ संलग्न किया गया है।

(5) कि मैं शपथ पत्र पर यह संपुष्ट करने के लिए शपथ लेता हूँ कि उक्त तथ्य मेरी जानकारी और विश्वास में सत्य हैं.....''

3. उक्त इकाई के स्वत्वधारी डॉ॰ राजीव रंजन सिंह ने प्रश्नगत भूखंड को दिनांक 25.5.2008 के अभ्यर्पण विलेख द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 4 को अभ्यर्पित किया और तब ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 4 के पक्ष में प्रश्नगत आबंटित आदेश जारी किया गया था।

4. याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री एस॰ के॰ गडोडिया ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थी सं॰ 4 के पक्ष में उक्त आबंटन किए जाने के पहले याची ने अभ्यावेदन दिया था कि डॉ॰ राजीव रंजन सिंह ने प्रत्यर्थी सं॰ 4 को इकाई बेच दिया था जब याची डॉ॰ राजीव रंजन सिंह के साथ भागीदारी के लिए प्रयास कर रहा था, किन्तु उसपर कोई आदेश पारित किए बिना प्रत्यर्थी सं॰ 4 के पक्ष में आबंटन किया गया है और वह भी प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा आवश्यक दस्तावेजों को प्रस्तुत किए बिना।

5. दूसरी ओर, ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, श्री आर॰ सी॰ पी॰ साह और प्रत्यर्थी सं॰ 4 के विद्वान अधिवक्ता श्री इंद्रजीत सिन्हा ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया।

6. उन्होंने निवेदन किया कि उक्त प्राधिकार पत्र द्वारा याची उक्त इकाई का स्वामी अथवा स्वत्वधारी नहीं बन गया था, और कि स्वत्वधारी द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 4 के पक्ष में उक्त इकाई का आबंटन अभ्यर्पित करने के बाद इसे ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ द्वारा उसको आबंटित किया गया था और इसलिए प्रश्नगत आबंटन का आदेश जारी करने में कुछ भी गलत नहीं था।

7. मैं प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में बल पाता हूँ। उक्त प्राधिकार फर्म के मूल आबंटिती-स्वत्वधारी अर्थात् डॉ॰ राजीव रंजन सिंह द्वारा उसकी अनुपस्थिति में फर्म से संबंधित समस्त दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने के लिए याची के पक्ष में दिया गया था। उक्त प्राधिकार के आधार पर याची आबंटित इकाई पर किसी अधिकार का दावा नहीं कर सकता है। प्रत्यर्थीगण याची और डॉ॰ राजीव रंजन सिंह के बीच किसी विवाद, यदि हो तो, से सरोकार नहीं रखते हैं। मूल आबंटिती डॉ॰ राजीव रंजन सिंह ने प्रत्यर्थी सं॰ 4 के पक्ष में इकाई अभ्यर्पित कर दिया था। प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने प्रोजेक्ट रपट के साथ आवश्यक/अपेक्षित दस्तावेजों को प्रस्तुत किया था। ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ ने संपूर्ण मामला पर विचार किया और प्रश्नगत भूमि को प्रत्यर्थी सं॰ 4 को आबंटित करने का निर्णय किया। मैं ऐसे आबंटन में कोई मनमानापन, अनियमितता अथवा अवैधता नहीं पाता हूँ।

8. तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है। किन्तु, व्यय के लिए आदेश नहीं है।

माननीय सुशील हरकौली, ए॰ सी॰ जे॰ एवं डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति

राजीव सचदेवा

बनाम

राजहंस स्टील लि॰ (समापन में) आधिकारिक समापक के माध्यम से एवं अन्य

Company Appeal No. 2 of 2010. Decided on 12th August, 2010.

रूग्ण औद्योगिक कंपनी (विशेष प्रावधान) अधिनियम, 1985–धाराएँ 20 एवं 32–कार्यवाहियों के ऐसे समापन के प्रक्रम पर BIFR की अनुशंसा पर प्रारम्भ की गई समापन कार्यवाहियों में कंपनी न्यायाधीश के समक्ष पुनर्वास पैकेज को पेश करने और कंपनी न्यायाधीश द्वारा ऐसे पुनर्वास पैकेज पर विचार करने के लिए हकदारी का दावा करने के लिए प्रोमोटर के अधिकार–उच्च न्यायालय की कंपनी अधिकारिता के अधीन BIFR या AAIFR के आदेशों पर प्रश्न करने का विकल्प व्यथित पक्षकार को नहीं है–पुनर्वास की योजना की आड़ में प्रोमोटर मूलतः BIFR के आदेश पर प्रश्न कर रहे हैं जो कहता है कि पुनर्वास संभव नहीं है और परिणामतः इसका समापन किया जाना चाहिए–कंपनी न्यायाधीश ने पुनर्वास की अभिकथित योजना प्रदान करने से उचित रूप से इनकार किया–याचिका खारिज। (पैराएँ 8, 14 से 21)

निर्णयज विधि.–(1979) 49 CC 342; (2007) 7 SCC 753; (2008) 4 SCC 222—Explained.

अधिवक्तागण.–Mr. Ashok Kumar Sinha, For the Appellant; OL (in person), For the Respondents.

आदेश

हमने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुना है।

2. अपीलार्थी राजहंस स्टील लि॰ (समापन में) (इसमें इसके बाद संक्षेप में कम्पनी के रूप में निर्दिष्ट) का संप्रवर्तक/पूर्व प्रबंधक है।

3. इस मुकदमों के इतिहास से संबंधित विस्तृत तथ्यों, जो केवल भ्रम कारित करेंगे, को छोड़ कर मूल तथ्य ये हैं कि कम्पनी बीमार हो गयी थी और इसके मामले पर बीमार औद्योगिक कम्पनीज (विशेष प्रावधान) अधिनियम, 1985 (इसके बाद एस॰ आई॰ सी॰ ए॰ के रूप में निर्दिष्ट) के प्रावधानों के अधीन बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ द्वारा विचार किया गया था। एस॰ आई॰ सी॰ ए॰ की धारा 20 के अधीन बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ ने अनुशंसा की कि कम्पनी का परिसमापन कर दिया जाए क्योंकि इसका पुनर्वास संभव नहीं था।

4. बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ की अनुशंसा के अनुसरण में, विद्वान कम्पनी न्यायाधीश ने कम्पनी को परिसमाप्ति करने का आदेश दिया। यह इंगित नहीं किया गया है कि बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ के उक्त आदेश/अनुशंसा के विरुद्ध एस॰ आई॰ सी॰ ए॰ की धारा 25 के अधीन ए॰ ए॰ आई॰ एफ॰ आर॰ के पास कोई अपील की गयी थी। अतः बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ के आदेश, जिसे केवल ऐसी अपील के जरिए और तत्पश्चात रिट याचिका के जरिए चुनौती दी जा सकती थी ने अंतिमता प्राप्त कर लिया था।

5. परिसमापन के आदेश के बाद समापक ने आस्तियों का प्रभार ले लिया और आस्तियों के विक्रय हेतु विज्ञापन दिया।

6. इस चरण पर संप्रवर्तकों अर्थात् अपीलार्थी ने विद्वान कम्पनी न्यायाधीश के समक्ष पुनर्वास की योजना प्रस्तुत की ओर इस पर विचार किया जाना इप्सित किया। दिनांक 25.6.2010 के आक्षेपित आदेश द्वारा विद्वान कम्पनी न्यायाधीश ने निर्देशित किया है कि वह पुनर्जीवन पैकेज को मंजूरी देने का इच्छुक नहीं है और परिसमापन कार्यवाहियाँ जारी रहेंगी और दिनांक 4.12.2009 और दिनांक 11.12.2009 के पूर्व आदेशों के निबंधनानुसार विक्रय के लिए नया विज्ञापन जारी किया जाएगा। यहाँ यह भी उल्लिखित किया जा सकता है कि परिसमापन मामला वर्ष 1999 से विद्वान कम्पनी न्यायाधीश के समक्ष लंबित था और लगभग 10 वर्षों तक, जो बीत चुके थे, समापन में कम्पनी के सम्प्रवर्तक/पूर्व-प्रबंधक उद्योग को पुनर्जीवित नहीं कर सके थे और समापक द्वारा प्रकाशित विक्रय नोटिस के अनुसरण में बोली लगाए जाने के बाद ही बोली लगाने वालों पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हुए डी॰ वी॰ पी॰ एल॰ द्वारा अभिकथित पुनर्जीवन पैकेज प्रस्तुत किया गया था। यहाँ यह इंगित करना भी प्रासंगिक होगा कि डी॰ वी॰ पी॰ एल॰ भी बोली

लगाने वालों में से एक था। तद्नुसार, विद्वान कम्पनी न्यायाधीश द्वारा आक्षेपित आदेश में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यह पुनर्जीवन पैकेज जिसे डी॰ वी॰ पी॰ एल॰ द्वारा वित्त पोषित किया जाना था, समापन में कम्पनी को अवैध प्रकार से अर्जित करने का तरीका था।

7. अपीलार्थी की प्रथम मूल शिकायत यह है कि कम्पनी न्यायाधीश के समक्ष प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा दाखिल किया गया आई॰ ए॰ सं॰ 746 वर्ष 2010 को उस विशेष तिथि पर सूचीबद्ध नहीं किया गया था। यह अधिकाधिक तकनीकी तर्क है क्योंकि मूल प्रश्न, जिस पर इस आदेश में नीचे चर्चा की गयी है, प्रत्यर्थी सं॰ 2 अथवा उसके आई॰ ए॰ सं॰ 746 वर्ष 2010 को अंतर्ग्रस्त नहीं करता है।

8. इस अपील में परीक्षित किया जानेवाला मूल प्रश्न यह है कि क्या ऐसी परिसमापन कार्यवाहियों के किसी भी चरण पर बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ की अनुशंसा पर परिसमापन के लिए आरंभ की गयी कार्यवाही में कम्पनी न्यायाधीश के समक्ष पुनरुद्धार पैकेज प्रस्तुत करने के लिए और ऐसे पुनरुद्धार पैकेज पर कम्पनी न्यायाधीश द्वारा विचार किए जाने की हकदारी का दावा करने के लिए संप्रवर्तकों को छूट है।

9. एस॰ आई॰ सी॰ ए॰ की योजना निम्नलिखित है।

10. धारा 32 द्वारा अधिनियम को अध्यारोही प्रभाव दिया गया है।

11. धारा 15 के अधीन बीमार कम्पनी का मामला बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ को निर्दिष्ट किया गया है।

12. बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ द्वारा बीमार औद्योगिक कम्पनियों के क्रियाकलापों की जाँच की गयी है। ऐसी जाँच के दौरान कम्पनी के विरुद्ध कुर्की कार्यवाहियाँ एस॰ आई॰ सी॰ ए॰ की धारा 22 के अधीन निर्लंबित बनी हुई है।

13. बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ ने पुनरुद्धार की साध्यता का परीक्षण किया है।

14. यदि बोर्ड इस निष्कर्ष पर आता है कि पुनरुद्धार संभव नहीं है, यह धारा 20 (1) के अधीन बीमार कम्पनी के परिसमापन की अनुशंसा करता है। बोर्ड का ऐसा आदेश धारा 25 के अधीन ए॰ ए॰ आई॰ एफ॰ आर॰ के समक्ष अपील योग्य है। धारा 26 एस॰ आई॰ सी॰ ए॰ के अधीन अथवा इसके द्वारा प्रदत्त किसी शक्ति के अनुसरण में की गयी कार्रवाई अथवा की जाने वाली कार्रवाई के संबंध में सिविल न्यायालयों अथवा अन्य प्राधिकारीगण की अधिकारिता को वर्जित करती है।

15. यदि कोई हितबद्ध व्यक्ति ए॰ ए॰ आई॰ एफ॰ आर॰ के अपीलीय आदेश से भी संतुष्ट नहीं है, ऐसे व्यथित व्यक्ति के पास केवल उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता में बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ अथवा ए॰ ए॰ आई॰ एफ॰ आर॰ के आदेश को चुनौती देने का रास्ता खुला है।

16. उच्च न्यायालय की कम्पनी अधिकारिता के अधीन बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ अथवा ए॰ ए॰ आई॰ एफ॰ आर॰ के आदेशों को चुनौती देने की छूट किसी भी व्यथित पक्ष को नहीं है। एस॰ आई॰ सी॰ ए॰ की धारा 20(2) बोर्ड के मत के आधार पर बीमार कम्पनी के परिसमापन करने के लिए ''होगा'' शब्द का प्रयोग करके उच्च न्यायालय को शक्ति देती है।

17. इस मामले में, पुनरुद्धार की योजना की आड़ में संप्रवर्तक मूलत: बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ के आदेश जो कहता है कि पुनरुद्धार संभव नहीं है और परिणामस्वरुप कम्पनी का परिसमापन कर देना चाहिए, को चुनौती देने का प्रयास कर रहे हैं।

18. अपील में और तत्पश्चात रिट अधिकारिता में चुनौती नहीं दिए जाने पर बोर्ड का आदेश और अनुशंसा अंतिमता प्राप्त कर चुका है और एस॰ आई॰ सी॰ ए॰ की धारा 20 (2) के फलस्वरुप (जिसका पुनरावृति की कीमत पर अध्यारोही प्रभाव है) उच्च न्यायालय कम्पनी के परिसमापन के लिए अग्रसर होने को बाध्य है।

19. हम यहाँ यह भी इंगित कर सकते हैं कि अपीलार्थी का प्रतिवाद कि पुनरुद्धार की एक के बाद एक योजना के साथ कम्पनी न्यायाधीश को लगातार तंग करने की छूट संप्रवर्तकों अथवा कम्पनी

अथवा अन्य व्यक्तियों को है, को स्वीकार करने का परिणाम समय का अपव्यय करके परिसमापन के अधीन बीमार कम्पनी के स्रोतों को नि:शेष करके देनदारों और मजदूरों को हानि पहुँचा कर परिसमापन कार्यवाहियों को अनिश्चित रूप से टालना होगा।

20. ऐसी स्थिति होने के नाते हमारा मत है कि विद्वान कम्पनी न्यायाधीश पुनरुद्धार की अभिकथित योजना को मंजूरी देने से इंकार करने में और परिसमापन कार्यवाहियों को जारी रखने का निर्देश देने में सही थे।

21. मामले के उक्त दृष्टिकोण में, आक्षेपित आदेश में दिए गए कारणों से, यह बहुत तात्विक नहीं हो सकता है किन्तु फिर भी इसे उल्लिखित किया जा सकता है, विद्वान कम्पनी न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर आए हैं कि प्रस्तावित पुनरुद्धार पैकेज समापन में कम्पनी की आस्तियों को प्रत्यर्थी सं॰ 3 अर्थात् मेसर्स डाइवर्सीफायड व्यापार प्रा॰ लि॰ (इसके बाद डी॰ वी॰ पी॰ एल॰ के रूप में निर्दिष्ट) के पक्ष में बेच डालने/ठिकाने लगाने की चाल है।

22. मेघल होम्स (प्रा॰) लि॰ बनाम श्रीनिवास गिरनी के॰ के॰ समिति एवं अन्य, (2007)7 SCC 753 में प्रकाशित मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर अपीलार्थी की ओर से विश्वास किया गया है। वह मामला जिसे सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया गया था, देनदारों की परिसमापन याचिका से और न कि एस॰ आई॰ सी॰ ए॰ के अधीन बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ की अनुशंसा पर उद्भूत हुआ था। देनदारों की परिसमापन याचिका पर विचार करते हुए न्यायालय को किसी कम्पनी का परिसमापन करने की आज्ञा नहीं है। न्यायालय (कम्पनी न्यायाधीश) को आश्वस्त होना पड़ेगा कि यह न्यायोचित और साम्यापूर्ण' है कि कम्पनी का परिसमापन कर दिया जाना चाहिए। ऐसे मामलों में कम्पनी न्यायाधीश को मजदूरों और अन्य देनदारों के हित सहित अनेक कारकों को विचार में लेना होगा। किन्तु उद्धृत निर्णय में भी सर्वोच्च न्यायालय ने सावधान किया है कि धारा 391 से 394A तक और धारा 466 के निबंधनानुसार योजना अथवा व्यवस्था पर विचार करते हुए न्यायालय को योजना के सद्भाव को देखना होगा और सुनिश्चित करना होगा कि योजना, जिसे अग्रसरित करना है, समापन में कम्पनी की आस्तियों को ठिकाने लगाने की चाल नहीं है और क्या ऐसा प्रस्ताव लोक हित वाणिज्यिक नैतिकता के तत्वों को संतुष्ट करता है। सर्वोच्च न्यायालय ने आगे कहा है कि यदि न्यायालय पाता है कि योजना निजी व्यवस्था द्वारा आस्तियों को ठिकाने लगाने की चाल है, तब विधि के अनुरुप समापन में कम्पनी की संपत्तियों को निस्तारित करना आस्तियों को प्राप्त करना और इसका वितरण करना न्यायालय का कर्तव्य है।

23. अत: उद्धृत निर्णय अपीलार्थी को कोई लाभ नहीं देता है।

24. विजय कुमार करवा बनाम शासकीय समापक, रोहतास इंडस्ट्रीज लि॰, (2008)4 SCC 222, में प्रकाशित मामले में सर्वोच्च न्यायालय के एक अन्य निर्णय पर अपीलार्थी ने इस प्रस्थापना के लिए विश्वास किया है कि पक्षों को नोटिस दिए जाने के बाद अपील को स्वीकार करना ही चाहिए और इसे सुनना चाहिए। इस तर्क का मूल अर्थ यह है कि इस न्यायालय को अपील को आज ही विनिश्चित नहीं करना चाहिए बल्कि अपील की सुनवाई के लिए इसको स्वीकार करना चाहिए। हम सहमत होने में अक्षम है। उद्धृत मामले में अपील आरंभ में ही कोई कारण दिए बिना निपटा दी गयी थी जैसा कि उस विधि रपट के पैराग्राफ 4 से स्पष्ट है। उस संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि सांविधिक अपील होने के कारण इसे आरंभ में ही नहीं निपटाया जाना चाहिए था।

25. हम सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का यह अर्थ लगाने के लिए व्याख्या करने में अक्षम है कि प्रत्येक अपील, चाहे यह कितना भी महत्वहीन हो, को सुनवाई के लिए स्वीकार करना होगा और तद्द्वारा लंबित रखना होगा और परिसमापन कार्यवाहियों को रोके रखना होगा जो, जैसा पहले कहा जा चुका है, कम्पनी की आस्तियों के मूल्यांकन के लिए हानिकारक है जो समय बीतने के साथ-साथ नि:शेष होती जाएँगी।

26. हमारा मत है कि सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का निर्णयाधार केवल यह है कि ऐसी अपीलों को आरंभ में ही कारणों के बिना नहीं निपटाया जाना चाहिए।

27. अपीलार्थी की ओर से **एस॰ के॰ गुप्ता एवं एक अन्य बनाम के॰ पी॰ जैन एवं एक अन्य, (1979)49 Company Cases 342,** में प्रकाशित मामले में सर्वोच्च न्यायालय के एक अन्य निर्णय पर विश्वास किया गया है। यह निर्णय कम्पनी याचिका सं॰ 86 वर्ष 1974 के संबंध में है जिसे व्यवस्था की योजना की मंजूरी देने के लिए दाखिल किया गया था। इसका बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ की अनुशंसा पर परिसमापन कार्यवाही के साथ कोई लेना-देना नहीं है।

28. जो कुछ भी ऊपर कहा गया है उसकी दृष्टि में हमारा मत है कि उस परिसमापन कार्यवाहियों में इसके समक्ष प्रस्तुत पुनरुद्धार की योजना की मंजूरी पर विचार करने से इंकार करने में कम्पनी न्यायाधीश सही थे, जहाँ परिसमापन आदेश बी॰ आई॰ एफ॰ आर॰ की अनुशंसा पर पारित किया गया है और जिस अनुशंसा ने अंतिमता प्राप्त कर ली थी और जो अनुशंसा एस॰ आई॰ सी॰ ए॰ की धारा 20 (2) की दृष्टि में कम्पनी न्यायाधीश पर बाध्यकारी थी जो एस॰ आई॰ सी॰ ए॰ की धारा 20(2) की विधायी आज्ञापकता की दृष्टि में कम्पनी के परिसमापन के लिए अग्रसर होने के लिए बाध्य थे।

29. तद्नुसार, यह कम्पनी याचिका गुणागुण रहित होने के कारण खारिज की जाती है।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

सुरेश चन्द्र राय

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 68 of 2010. Decided on 31st July, 2010.

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973–धाराएँ 305 एवं 482–ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970–धाराएँ 25 एवं 28–दोष का अभिवाक् करने की प्रार्थना अस्वीकृत–कंपनी को अभियुक्त बनाया गया है और दो अन्य व्यक्तियों को कंपनी के प्रतिनिधियों के तौर अभियोजन रिपोर्ट में नामजद किया गया है–केवल वैसा व्यक्ति ही जो अपराध की कारिता के समय इसके कारोबार के संचालन हेतु कंपनी के प्रति उत्तरदायी है, के विरूद्ध कार्यवाही किए जाने और तद्नुसार दण्डित किए जाने का दायी होगा–जाँच या विचारण के दौरान न्यायालय के समक्ष कंपनी या इसके प्रतिनिधियों के तौर पर किसी अन्य व्यक्ति को प्राधिकृत करके ऐसे व्यक्ति की दायिता को प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता है–दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 305 के प्रावधानों पर विशेष अधिनियम में यथा अंतर्विष्ट प्रावधानों को अभिभावी होना है और यह किसी व्यक्ति को एक न्यायालय में जाँच या विचारण में उपस्थित होने के लिए अपने प्रतिनिधि के तौर पर प्राधिकृत करने हेतु कंपनी को एक विकल्प प्रदान करने का विषय-वस्तु नहीं होगा–आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता नहीं–आवेदन खारिज। (पैराएँ 9 से 13)

अधिवक्तागण.–M/s V. Shivnath, Birendra Kr., For the Petitioner; Mr. I. N. Gupta, For the State; Md.M. Khan, For the O.P. No. 2.

आदेश

याची के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता और वि॰ प॰ सं॰ 2 के अधिवक्ता को सुना गया।

2. वर्तमान आवेदन सी॰ एल॰ ए॰ केस सं॰ 169 वर्ष 2007 में न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 13.10.2009 के आक्षेपित आदेश, जिसके द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 305 के अधीन दोष का अभिवचन करने के लिए उसको अनुमति देने हेतु याची की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया गया था, के विरुद्ध दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 321 वर्ष 2009 के तहत याची द्वारा दाखिल दांडिक पुनरीक्षण आवेदन को खारिज करते हुए सत्र न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 24.11.2009 के आदेश के अभिखंडन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन याची द्वारा दाखिल की गयी है।

3. इस मामले के निपटारे के लिए प्रासंगिक तथ्य निम्नलिखित हैं:

परिवादी/विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970 की धारा 28 की उपधारा (i) के अधीन इन्सपेक्टर होने के नाते दिनांक 5.2.2007 को मेसर्स सैनिक माइनिंग एण्ड एलायड सर्विसेज लिमिटेड के कार्यस्थलों का निरीक्षण किया और उसने अधिनियम की कतिपय धाराओं/नियमावली का उल्लंघन/भंग करने की कोटि के कतिपय अनियमितताओं को पाया।

तत्पश्चात् कारण बताओ नोटिस के साथ निरीक्षण रिपोर्ट को अभियुक्तगण अर्थात् कैप्टन रुद्र सेन सिंधु, प्रबंध निदेशक और कैप्टन कुलदीप सिंह सोलंकी, कम्पनी के निदेशक को इस आधार पर कि वे अपनी पदीय हैसियत से कम्पनी का प्रतिनिधित्व करते हैं। रजिस्टर्ड डाक द्वारा भेजा गया था। बाद में, ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970 की धाराएँ 23 एवं 24 के अधीन अपराधों के लिए उनके अभियोजन के लिए कैप्टन रुद्रसेन सिंधु, एम॰ डी॰ और कैप्टन कुलदीप सिंह सोलंकी, कम्पनी निदेशक द्वारा प्रतिनिधित्व की जाने वाली मेसर्स सैनिक माइनिंग एण्ड एलायड सर्विसेज के विरुद्ध विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद के समक्ष विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 ने अभियोजन रिपोर्ट दाखिल किया। अभियोजन रिपोर्ट/परिवाद प्राप्त करने पर, विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने अपराध का संज्ञान लिया और उपस्थित होने के लिए और विचारण का सामना करने के लिए अभियुक्तगण को समन जारी किया। समन के प्रत्युत्तर में, अभियुक्तगण ने कंपनी और प्रबंध निदेशक एवं कम्पनी निदेशक की ओर से विचारण न्यायालय में उपस्थित होने के लिए और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 305 के अधीन अधिकथित प्रावधानों के मुताबिक ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970 की धाराएँ 23 एवं 34 के अधीन अपराधों के अभिवचन के लिए विशेष मुख्तारनामा द्वारा याची सुरेशचंद्र राय को प्राधिकृत किया।

विद्वान अवर न्यायालय ने याची सुरेश चंद्र राय को अभियुक्त कंपनी के प्रतिनिधि के तौर पर स्वीकार करने से इनकार किया और याची को अभियुक्तों का प्रतिनिधित्व करने की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया।

व्यथित होकर, याची ने सत्र न्यायाधीश के विरुद्ध पुनरीक्षण आवेदन दिया जिन्होंने आक्षेपित आदेश द्वारा पुनरीक्षण आवेदन खारिज कर दिया।

4. याची ने आक्षेपित आदेशों का इस आधार पर विरोध किया है कि सत्र न्यायाधीश द्वारा और न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा भी पारित दोनों आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में दोषपूर्ण है और समुचित परिप्रेक्ष्य में मामले के तथ्यों के समुचित अधिमूल्यन किए बिना पारित किए गए हैं।

5. याची की ओर से तर्क करते हुए विद्वान वरीय अधिवक्ता, श्री वी॰ शिवनाथ निम्नलिखित आधारों को उठाएँगे:

> *अभियोजन रिपोर्ट में किए गए अभिकथन के मुताबिक भी, अभियुक्त कम्पनी विधिक व्यक्ति है और इसलिए दोष का अभिवचन करने के लिए और सी॰ एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 23 के अधीन अपराधों के लिए जुर्माना भरने के उद्देश्य से अपनी ओर से उपस्थित होने के लिए किसी व्यक्ति को प्राधिकृत कर सकता है।*

6. आधारों को विस्तार देते हुए और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 305 के प्रावधानों की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए विद्वान अधिवक्ता स्पष्ट करेंगे कि वर्तमान मामले में कम्पनी अभियुक्त होने के नाते किसी को प्रतिनिधि नियुक्त करने का हकदार है और ऐसी नियुक्ति कम्पनी के प्रबंध निदेशक द्वारा अथवा निगम के प्रबंधन और क्रियाकलापों पर नियंत्रण रखने वाले किसी व्यक्ति द्वारा लिखित रूप में की जा सकती है। याची का कम्पनी का प्राधिकृत प्रतिनिधि होने के नाते विचारण न्यायालय के समक्ष कम्पनी की ओर से उसकी उपस्थिति को इस आधार पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता है कि कम्पनी के प्रबंध निदेशक अथवा निदेशक को कम्पनी के प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होना चाहिए था।

ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970 की धारा 25 के प्रावधानों को निर्दिष्ट करते हुए विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रावधान अधिकथित करता है कि यदि इस अधिनियम के अधीन अपराध करता व्यक्ति कम्पनी है, तब कम्पनी और वह व्यक्ति जो अपराध किए जाते समय इसके व्यवसाय का संचालन करने का प्रभारी है और कम्पनी के प्रति जिम्मेदार है, उसे अपराध का दोषी समझा जाएगा और तद्नुसार कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का दायी होगा।

7. विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि विहित दंडों की प्रकृति के अनुसार अधिनियम की धाराओं 23 और 24 के अधीन दोनों अपराध संक्षिप्त विचारण योग्य है। जुर्माना के अधिरोपन के विरुद्ध अपने प्राधिकृत प्रतिनिधि के माध्यम से अभियुक्त कम्पनी अपराधों के लिए दोष का अभिवचन कर सकती है।

विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि अभियुक्तगण के इसी संवर्ग के विरुद्ध दाखिल एक पूर्व मामला में प्रबंध निदेशक कैप्टेन रुद्र सेन सिंधु और कैप्टन कुलदीप सिंह सोलंकी द्वारा तात्पर्यित रूप से प्रतिनिधित्व किए जाने वाले इसी कम्पनी अर्थात मेसर्स सैनिक माइनिंग एण्ड एलायड सर्विसेज के विरुद्ध समरूप अभिकथन किए गए थे और इसी सत्र न्यायाधीश, जिन्होंने दोष का अभिवचन करने के लिए प्राधिकृत प्रतिनिधि की प्रार्थना को अस्वीकार करते हुए न्यायिक दंडाधिकारी के आदेश के विरुद्ध दाखिल पुनरीक्षण आवेदन को अस्वीकार कर दिया है, ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970 की धाराएँ 23 एवं 24 के अधीन अपराधों के लिए दोष का अभिवचन करने के लिए प्राधिकृत एजेन्ट को अनुमति दी जानी चाहिए, एक पूर्व दांडिक पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया था।

8. दूसरी ओर, राज्य के अधिवक्ता तर्क करेंगे कि चूँकि अपराधों के लिए दंड केवल जुर्माना तक सीमित नहीं है और यह कारावास, जिसकी अवधि तीन माहों तक बढ़ायी जा सकती है, के साथ भी दंडनीय है, अत: केवल प्रबंध निदेशक और ऐसे अन्य व्यक्तियों, जो अपराध किए जाते समय कम्पनी के कार्यों के लिए जिम्मेदार है, को ही दोषी समझा जाएगा और इसलिए ऐसा कोई व्यक्ति, भले ही उसे विचारण न्यायालय के समक्ष इसका प्रतिनिधित्व करने के लिए कम्पनी द्वारा प्राधिकृत किया गया है, संभवत: कम्पनी के ओर से दोष का अभिवचन नहीं कर सकता है और उस व्यक्ति, जो प्रभारी है और इसके कार्यों के संचालन के लिए कम्पनी के प्रति जिम्मेदार है, को कम्पनी की ओर से उपस्थित होना होगा और दोष का अभिवचन प्रस्तुत करते हुए दंड भुगतना होगा, जैसा विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित किया गया है।

9. परस्पर विरोधी निवेदनों के समुचित अधिमूल्यन के लिए अभियोजन रिपोर्ट और अभियोजन रिपोर्ट की प्राप्ति पर अवर न्यायालय द्वारा पारित संज्ञान के आदेश को निर्दिष्ट करना प्रासंगिक होगा।

परिवाद याचिका/अभियोजन रिपोर्ट के परिशीलन से, अभियुक्तगण का नाम और पता, जैसा रिपोर्ट के कॉलम 2 में निर्दिष्ट किया गया है, कैप्टन रुद्रसेन सिंधु एम॰ डी॰ और कैप्टेन कुलदीप सिंह सोलंकी

द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने वाले मेसर्स सैनिक माइनिंग एण्ड एलायड सर्विसेज को अभियुक्त के रूप में उल्लिखित किया गया है। स्पष्ट उपदर्शन यह है कि इसके प्रबंध निदेशक और निदेशक द्वारा अभियुक्त कम्पनी मेसर्स सैनिक माइनिंग एण्ड एलायड सर्विसेज का प्रतिनिधित्व किया जाता है।

तद्नुसार उक्त नामित प्रबंध निदेशक और निदेशक द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने वाले कम्पनी के विरुद्ध ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970 की धाराओं 23 और 24 के अधीन अपराधों का संज्ञान लिया गया है।

ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम की धारा 25 प्रावधानित करती है कि जहाँ इस अधिनियम के अधीन अपराध करता व्यक्ति कम्पनी है, तब ऐसा व्यक्ति, जो प्रभारी है और अपराध किए जाते समय इसके कार्यों के संचालन के लिए कम्पनी के प्रति जिम्मेदार है, अपराध का दोषी समझा जाएगा और कार्यवाही किए जाने और तद्नुसार दंडित किए जाने का दायी होगा। इस प्रकार, अधिनियम की धारा 25 की उपधारा (i) धारणा उपबंध है, जिसके अधीन प्रभारी और इसके कार्यों के संचालन के लिए कम्पनी के प्रति जिम्मेदार व्यक्ति अधिनियम के अधीन कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का दायी होगा। यदि अभिकथित अपराध कम्पनी के प्रबंध निदेशक, निदेशक, प्रबंधक, एजेन्ट अथवा किसी अन्य पदधारी की ओर से की गयी उपेक्षा के रूप में बताया जाता है, ऐसा व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से अपराध के लिए दायी होगा।

जैसा ऊपर संप्रेक्षित किया गया है, वर्तमान मामले में, कम्पनी को अभियुक्त बनाया गया है और दो अन्य व्यक्तियों को कम्पनी के प्रतिनिधि के रूप में नामित किया गया है।

10. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 305 अधिकथित करती है कि जब किसी जाँच अथवा विचारण में निगम अभियुक्त व्यक्ति अथवा अभियुक्तगण में से एक है, यह जाँच अथवा विचारण के उद्देश्य से प्रतिनिधि नियुक्त कर सकता है और कम्पनी के प्रबंध निदेशक अथवा कम्पनी के क्रियाकलापों का प्रबंधन करने वाले किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों में किसी एक द्वारा हस्ताक्षरित लिखित प्राधिकार के जरिए प्रतिनिधि की ऐसी नियुक्ति की जा सकती है।

किन्तु, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 305 की उपधारा 6 अधिकथित करती है कि यदि यह प्रश्न उद्भूत होता है कि न्यायालय के समक्ष जाँच अथवा विचारण में निगम के प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होता कोई व्यक्ति प्रतिनिधि है या नहीं, यह प्रश्न न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जाएगा।

11. दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 305 के प्रावधानों और ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम की धारा 25 के प्रावधानों का पठन करने पर यह प्रकट होगा कि ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम एक विशेष अधिनियम होने के नाते कम्पनियों द्वारा किए गए अपराधों के संबंध में प्रक्रिया अधिकथित करता है कि केवल ऐसा व्यक्ति, जो प्रभारी है और अपराध किए जाते समय इसके कार्यो के संचालन के लिए कम्पनी के प्रति जिम्मेदार है, कार्यवाही किए जाने के लिए और तद्नुसार दंडित किए जाने के लिए दायी होगा और ऐसे व्यक्ति का दायित्व जाँच अथवा विचारण के क्रम में न्यायालय के समक्ष कम्पनी अथवा इसके प्रतिनिधियों का प्रतिनिधित्व करने के लिए प्राधिकृत करके किसी अन्य व्यक्ति को नहीं दिया जा सकता है। दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 305 के प्रावधानों को विशेष अधिनियम में अंतर्विष्ट प्रावधानों के लिए रास्ता छोड़ना होगा और इस प्रकार न्यायालय में किसी जाँच अथवा विचारण में इसके प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होने के लिए किसी व्यक्ति को प्राधिकृत करने की छूट निगम को नहीं होगी। जैसा ऊपर संप्रेक्षित भी किया गया है, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 305 की उपधारा 6 के प्रावधान इस प्रश्न कि क्या निगम के प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होने वाले किसी व्यक्ति को ऐसे प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए या नहीं, को विनिश्चित करने की शक्ति न्यायालय में निहित करते हैं।

12. इस विवाद्यक पर एक अन्य पहलू से भी विचार किया जा सकता है। यद्यपि अपराध संक्षिप्त विचारण योग्य हैं किन्तु दंड केवल जुर्माना तक ही सीमित नहीं है। ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम की धाराओं 23 और 24 दोनों के अधीन अपराधों के लिए कारावास का दंड भी प्रावधानित किया गया है और इस स्थिति में यदि विचारण न्यायालय अभियुक्त को कारावास का दंडादेश देना समुचित और योग्य समझता है, कम्पनी का प्राधिकृत प्रतिनिधि होने का दावा करने वाले ऐसे अन्य व्यक्ति को कम्पनी अथवा इसके निदेशकों की ओर से कारावास भुगतने का निर्देश संभवत: नहीं दिया जा सकता है।

13. तथ्यों एवं परिस्थितियों और ऊपर की गयी चर्चा के आलोक में, मैं न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा और सत्र न्यायाधीश द्वारा भी पारित आक्षेपित आदेशों में कोई अनौचित्यता अथवा अवैधता नहीं पाता हूँ। इस आवेदन में कोई गुणागुण नहीं होने के नाते इसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

दुलाल चन्द घोष

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 918 of 2008. Decided on 12th August, 2010.

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973–धाराएँ 82, 83 एवं 482–आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन अभिकथित अपराध के लिए गैर जमानती गिरफ्तारी का वारंट निर्गत–याची के विरूद्ध संज्ञान का आदेश पारित किए जाने के उपरांत पारित किया गया आक्षेपित आदेश सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिखंडित कर दिया गया था–सर्वोच्च न्यायालय के ऐसे आदेश के बावजूद, मजिस्ट्रेट ने याची के विरूद्ध मामले को जारी रखा और आक्षेपित आदेश पारित किया था–आक्षेपित आदेश अभिखंडित–मामले को प्रशासनिक पक्ष पर उच्च न्यायालय द्वारा ग्रहण किया जाएगा। (पैराएँ 5 से 10)

अधिवक्तागण.–Mr. Nilesh Kumar Agrawal, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता को सुना गया।

2. मैंने विचारण न्यायालय के अभिलेखों में मौजूद आदेश-पत्रकों का भी परिशीलन किया है।

3. याची ने इस आवेदन में डोरन्डा पी॰ एस॰ केस सं॰ 46/1999 के संबंध में एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, राँची द्वारा पारित दिनांक 2.5.2008 के अभिखंडन के लिए दाखिल किया है जिसके द्वारा याची के विरुद्ध गैर जमानती गिरफ्तारी का वारंट जारी किया गया है।

4. मामला आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन अभिकथित अपराध के लिए प्रखंड आपूर्त्ति अधिकारी, नामकुम द्वारा दर्ज प्राथमिकी रिपोर्ट के आधार पर दर्ज किया गया था। अन्वेषण समाप्त करने पर, पूर्वोक्त अपराध के लिए याची के विचारण की अनुशंसा करते हुए अन्वेषण अधिकारी ने आरोप-पत्र दाखिल किया। विद्वान अवर न्यायालय ने अपराध का संज्ञान लिया है और याची को उपस्थित होने और विचारण का सामना करने का निर्देश दिया।

5. संज्ञान के आक्षेपित आदेश को चुनौती देते हुए, याची सर्वोच्च न्यायालय तक गया था और एस॰ एल॰ पी॰ दांडिक सं॰ 2980 वर्ष 2003 दाखिल किया था। दिनांक 12.3.2004 के अपने आदेश द्वारा

सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षण करते हुए याची दुलाल चन्द घोष के विरुद्ध संज्ञान के आक्षेपित आदेश का अभिखंडन कर दिया था।

''.....इस तथ्य को ध्यान में लेते हुए कि हम अपराध, यदि किया गया है, से संबंधित मामले के गुणागुणों पर कोई मत अभिव्यक्त नहीं कर रहे हैं और चुनौती के अधीन आदेश को विशेष न्यायालय में अधिकारिता की कमी के प्रश्न मात्र पर संपोषित नहीं किया जा सकता है, जैसा 2002 (1) SCC 15 में अभिनिर्धारित किया गया है, हम अवर न्यायालय के आदेश को अपास्त करते हैं और विधि के अनुरूप मामले पर उपयुक्त रूप से विचार करने के लिए समुचित न्यायालय के पास जाने की छूट प्राधिकारीगण को देते हैं।''

6. सर्वोच्च न्यायालय का आदेश तत्परता से दिनांक 29.3.2004 को विचारण न्यायालय को संसूचित किया गया था, जैसा एस॰ डी॰ जे॰ एम॰ के न्यायालय के विचारण न्यायालय अभिलेखों के आर्डर-शीट से स्पष्ट है। दांडिक अपील सं॰ 323 वर्ष 2004 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश की प्रति की प्राप्ति को अभिपुष्ट करते हुए समरुप आदेश एस॰ डी॰ जे॰ एम॰ द्वारा विचारण न्यायालय अभिलेख में पुन: दर्ज किया गया था। दिनांक 17.7.2004 को दोहराया गया आदेश भी दांडिक अपील सं॰ 323 वर्ष 2004 में सर्वोच्च न्यायालय के आदेश की प्रति की प्राप्ति को उसके विषय वस्तु को ध्यान में लेते हुए निर्दिष्ट करता है।

आश्चर्यजनक रूप से, सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों को प्राप्त करने के बावजूद, जो स्पष्ट रूप से घोषणा करता था कि आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध के लिए विशेष न्यायालय द्वारा पारित संज्ञान के आक्षेपित आदेश को अपास्त कर दिया गया है, विद्वान दंडाधिकारी ने याची के विरुद्ध मामले को जीवित रखा था और उसके विरुद्ध गिरफ्तारी का वारंट जारी करते हुए आक्षेपित आदेश को पारित किया था और गिरफ्तारी के वारन्ट को जारी करने मात्र से संतुष्ट नहीं होकर, विद्वान अवर न्यायालय ने याची के विरुद्ध दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराएँ 82 और 83 के विरुद्ध आदेशिका भी जारी किया था।

7. गिरफ्तारी का गैर जमानती वारंट जारी करने के बाद आदेशिकाओं को जारी करने के आदेश के संबंध में याची की शिकायत को रखते हुए याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश प्रकटत: सुझाते हैं कि उन्हें अभिलेखों को सत्यापित किए बिना और इस तथ्य कि याची के स्वतंत्रता के मूल अधिकारों को गैर कानूनी रूप से अतिउलंघित करना इप्सित किया गया है, पर विचार किए बिना अत्यन्त उपेक्षापूर्वक यांत्रिक रूप से पारित किया गया है।

8. यदि याची के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों को स्वीकार किया जाता है, यह केवल ये सुझाएँगे कि दंड निम्नलिखित कारणों में से किसी एक के लिए आक्षेपित आदेशों को दंडाधिकारी द्वारा पारित किया गया है:–

(i) दंडाधिकारी को सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के प्रति आदर नहीं है।

(ii) उनको आदेश की समझ नहीं है।

(iii) विचारण न्यायालय के आदेशों को शायद उनके बेंच क्लर्क अथवा किसी अन्य कार्यालय क्लर्क द्वारा लिखा गया है और विषयवस्तु को पढ़े बिना उनके द्वारा हस्ताक्षरित किया गया है।

(iv) दंडाधिकारी अपने कर्तव्यों में कर्मठ और सच्चे नहीं हैं और अत्यन्त उपेक्षापूर्वक और लापरवाह तरीके से कार्य कर रहे हैं।

उक्त कथित कारणों में से सबसे उदार कारण को ध्यान में लेते हुए भी मामला निश्चय ही सम्बद्ध अधिकारी से स्पष्टीकरण की मांग करता है। मैं केवल उस तरीके पर अपनी व्यथा अभिव्यक्त करुँगा जिस

तरीके से अपने आधिकारिक कर्तव्यों के पालन में अधिकारी काम कर रहा है। सम्बद्ध अधिकारी से स्पष्टीकरण इप्सित करते हुए न्यायिक आदेश पारित किए बिना, मैं समुचित कार्रवाई के लिए मामला उच्च न्यायालय के प्रशासन को निर्दिष्ट करना चाहूँगा।

9. कार्यालय को सम्बद्ध अधिकारी की पहचान करने और प्रशासनिक पक्ष से समुचित कार्रवाई करने हेतु माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष इस आदेश की एक प्रति रखने का निर्देश दिया जाता है।

10. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए, आक्षेपित आदेश जिसके द्वारा याची के विरुद्ध गिरफ्तारी का वारंट जारी किया गया है और पश्चातवर्ती आदेशों जिसके द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धाराएँ 82 एवं 83 के अधीन आदेशिकाएँ पूर्वोल्लिखित मामले में याची के विरुद्ध जारी किया गया है, एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

माननीय प्रदीप कुमार, न्यायमूर्ति

कर्मकार-अशोक कुमार बर्नवाल

बनाम

मेसर्स प्रभात खबर का प्रबंधन

W.P. (L) No. 1437 of 2007. Decided on 6th August, 2010.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–बर्खास्तगी–श्रम न्यायालय ने प्रबन्धन द्वारा लिए जा रहे साक्ष्य के मध्य में आक्षेपित अधिनिर्णय द्वारा इसको किए गए संदर्भ एवं विवाद का निर्णय करने के बजाय मामले को प्रबन्धन द्वारा दाखिल आक्षेप पर और कर्मकार द्वारा दिए गए इसके प्रत्युत्तर के आधार पर प्रारंभिक मुद्दे को विनिश्चित किया और इस निष्कर्ष पर आया कि याची-कर्मकार का नियोक्ता एवं कर्मचारी से सम्बन्ध नहीं था–श्रम न्यायालय को पक्षों की बीच प्रारम्भ किए गए साक्ष्यों को लेने से पहले प्रारंभिक मुद्दे को विनिश्चित करना चाहिए था और दोनों पक्षों को सुनने के उपरांत अंतिम अधिनिर्णय का प्रारंभिक मुद्दे के साथ विनिश्चय करने और साक्ष्य समाप्त होने की प्रतीक्षा करना चाहिए था–कर्मकार को अपने साक्ष्य पेश करने और सुनवाई करने का निष्पक्ष अवसर प्रदान नहीं किया गया था–आक्षेपित अधिनिर्णय अभिखंडित–आवेदन अनुज्ञात।
(पैराएँ 6 से 9)

अधिवक्तागण.–M/s S. N. Das, V. Divya, For the Petitioners; M/s Satish Bakshi, M.A. Khan, N. Bakshi, For the Respondents.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और नियोक्ता के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. कर्मकार ने सन्दर्भ केस सं॰ 1 वर्ष 2004 में पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, देवघर द्वारा पारित दिनांक 6 सितम्बर, 2006 के अधिनिर्णय को चुनौती दी है, जिसके द्वारा परिशिष्ट-4 में अधिनिर्णय और श्रम मंत्रालय को किया गया संदर्भ निम्नलिखित है:–

> *''क्या मेसर्स प्रभात खबर, राँची के प्रबंधन द्वारा श्री अशोक कुमार बर्नवाल, प्रभारी-सह-संदेशवाहक, देवघर की सेवा-समाप्ति न्यायोचित है? यदि नहीं, वह किस अनुतोष का हकदार है?''*

3. श्रम न्यायालय ने विवाद और इसको किए गए संदर्भ को विनिश्चित करने के बजाय प्रबंधन द्वारा दिए जा रहे साक्ष्य के बीच में ही आक्षेपित अधिनिर्णय द्वारा दाखिल आपत्ति पर और कर्मकार द्वारा दिए

गए इसके प्रत्युत्तर के आधार पर आरंभिक विवाद्यक पर प्रबन्धन द्वारा मामला विनिश्चित किया और इस निष्कर्ष पर आया कि याची-कर्मकार का नियोक्ता एवं कर्मचारी का संबंध नहीं था और श्री अशोक कुमार बर्नवाल प्रबंधन के अधीन कर्मकार कभी नहीं था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि न्यायालय के दिनांक 13 जुलाई, 2006 पृष्ठ 89 के आर्डर शीट से यह प्रतीत होगा कि यद्यपि दिनांक 19 जुलाई, 2006 को उसे समय दिए जाने के बावजूद कर्मकार अपने गवाहों का शपथ पत्र दाखिल करने में विफल रहा, फिर भी सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण अपनाते हुए, विद्वान न्यायालय ने आदेश पारित किया कि प्रबंधन के साक्ष्यों के पूरा हो जाने के बाद, उसे अपने साक्ष्यों को देने का अवसर दिया जाएगा और यह प्रतीत होगा कि प्रबंधन के अंतिम गवाह का परीक्षण अगली तिथि दिनांक 19 अगस्त, 2006 को किया गया था और अंतिम गवाह सं० 4 श्री संजीत कुमार मंडल के प्रति-परीक्षण के लिए कर्मकार को प्रति-परीक्षण के लिए समय दिया गया था। दिनांक 23 अगस्त, 2006 को उक्त गवाह श्री संजीत कुमार मंडल का प्रति परीक्षण कर्मकार द्वारा किया गया था और उसे उन्मोचित किया गया था और तत्पश्चात, प्रबंधन द्वारा दाखिल दिनांक 10 अगस्त, 2006 के आवेदन में चूँकि दिनांक 26 अक्टूबर, 2005 को कर्मकार द्वारा पहले ही प्रत्युत्तर दाखिल किया जा चुका था, श्रम न्यायालय ने आरंभिक बिन्दु पर मामला को सुना और अगली तिथि पर अधिनिर्णय पारित किया जो विधि की दृष्टि में दोषपूर्ण है और अभिखंडन किए जाने योग्य है क्योंकि अपने साक्ष्यों को देने में कर्मकार को अवसर नहीं दिए जाने से और अचानक साक्ष्य को बन्द किए जाने से श्रम न्यायालय द्वारा अनुचित श्रम व्यवहार किया गया था और मामला आरंभिक आधार पर विनिश्चित कर दिया गया था।

5. दूसरी ओर, प्रबंधन अर्थात् प्रभात खबर के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि न्यायालय के आर्डर-शीट से प्रतीत होगा कि दिनांक 1 दिसम्बर, 2005 से दिनांक 14 जून, 2006 तक प्रत्येक तिथि पर अपने गवाहों, जिनका वह मामले में परीक्षण करने का इच्छुक था, का शपथ पत्र दाखिल करने के लिए कर्मकार को न्यायालय द्वारा निर्देश दिया गया था, किन्तु वह ऐसा करने में विफल रहा और इसलिए, दिनांक 14 जून, 2006 को साक्ष्यों को देते हुए मामला बन्द कर दिया गया था और इस प्रकार, श्रम न्यायालय के पास आरंभिक बिन्दु पर मामला विनिश्चित करने के अलावा कोई और विकल्प नहीं था। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि दिनांक 23 अगस्त, 2006 को भी जब न्यायालय ने नियोक्ता के साक्ष्य को बन्द करने के बाद इसने दिनांक 10 अगस्त, 2006 को कर्मकार द्वारा दाखिल आपत्ति पर आरंभिक बिन्दु पर मामले की सुनवाई आरम्भ किया था, कर्मकार द्वारा कोई आपत्ति दाखिल नहीं की गयी थी कि वह न्यायालय के दिनांक 13 जुलाई, 2006 के आदेश के मुताबिक साक्ष्य देना चाहता है, और इस प्रकार, श्रम न्यायालय द्वारा कोई अवैधता नहीं की गयी है और अधिनिर्णय अभिखंडन योग्य है।

6. दोनों पक्षों को सुनने के बाद और न्यायालय के आर्डर-शीट के परिशीलन के बाद, मैं पाता हूँ कि नि:संदेह न्यायालय ने गवाहों, जिन पर वह विश्वास करना चाहता था, का शपथ पत्र दाखिल करने के लिए दिनांक 1 दिसम्बर, 2005 से दिनांक 14 जून, 2006 तक कर्मकार याची को पर्याप्त अवसर दिया था। दिनांक 14 जून 2006 को बार-बार निर्देशों के दिए जाने के बावजूद कोई शपथ पत्र दाखिल नहीं किया गया था। अत: विद्वान श्रम न्यायालय के पास कर्मकार के साक्ष्य को बन्द करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। किन्तु दिनांक 13 जुलाई, 2006 के आर्डर शीट से यह भी स्पष्ट है कि जब मामला कर्मकार द्वारा पुन: उठाया गया था, न्यायालय ने यह विचार करते हुए कि कर्मकार समाज के कमजोर वर्ग से आता है और अपना साक्ष्य देने के लिए उसे अवसर दिया जाना चाहिए, सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण अपनाया और दिनांक 13 जुलाई, 2006 के आर्डर शीट के तहत प्रबंधन के साक्ष्य को बन्द करने के बाद अपने साक्ष्यों को देने के लिए कर्मकार को निर्देशित किया।

7. मामले के उस दृष्टिकोण में, जब प्रबंधन के गवाह सं॰ 4 श्री संजीत कुमार मंडल के अंतिम प्रति-परीक्षण के बाद दिनांक 23 अगस्त, 2006 को प्रबंधन के साक्ष्यों को बन्द कर दिया गया था, कर्मकार जिसे स्वयं दिनांक 13 जून, 2005 के इस आदेश के मुताबिक साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर दिया गया था, के साक्ष्य के लिए तिथि नियत करना श्रम न्यायालय के लिए बाध्यकारी था, किन्तु उसे अवसर को देने के बजाय प्रबंधन के साक्ष्य को बन्द करने के बाद मामले को आरंभिक बिन्दु पर खारिज करके श्रम न्यायालय ने उलटा रुख अपनाया। उन्हें या तो पक्षों के बीच साक्ष्यों को शुरु करने के पहले आरंभिक बिन्दु पर मामला विनिश्चित करना चाहिए था या फिर उन्हें साक्ष्यों के बन्द होने तक प्रतीक्षा करना चाहिए था और दोनों पक्षों को सुनने के बाद अंतिम अधिनिर्णय के साथ आरंभिक बिन्दु को विनिश्चित करना चाहिए था।

8. मामले के उस दृष्टिकोण में, मेरे मत में कर्मकार को अपना साक्ष्य देने का और सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया था।

9. सन्दर्भ केस सं॰ 1 वर्ष 2004 में दिनांक 6 सितम्बर, 2006 को पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, देवघर द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय अनुचित होने के नाते अभिखंडित किया जाता है और इसके लिए उसको नोटिस देने के बाद कर्मकार के साक्ष्य के लिए तिथि नियत करने और तत्पश्चात विधि के अनुरुप अग्रसर होने के निर्देश के साथ मामला पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, देवघर को वापस भेजा जाता है।

10. याची कर्मकार को दिनांक 28 सितम्बर, 2010 को पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, देवघर के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया जाता है। प्रबंधन को भी उपस्थित होने का निर्देश दिया जाता है ताकि न्यायालय तिथि नियत कर सके और मामले में आगे अग्रसर हो सके।

तद्नुसार, यह रिट आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

माननीया जया रॉय, न्यायमूर्ति

अतुल लायक एवं अन्य

बनाम

बिहार राज्य अब झारखंड

Criminal Appeal (S. J) No. 1 of 1995. Decided on 4th August, 2010.

सत्र केस सं॰ 238 वर्ष 1986 में विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, दुमका द्वारा पारित दिनांक 2.12.1994 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दण्ड संहिता, 1860–धाराएँ 304, भाग-I, 148, 323 एवं 147–हत्या की कोटि में न आने वाला सदोष मानव वध–दोषसिद्धि एवं दण्डादेश–मृत्यु पत्थर फेंकने से कारित हुई–अभियोजन घटना की वास्तविक रीति को स्थापित करने में विफल रहा–अभियोजन द्वारा परीक्षित सभी साक्षीगण हितबद्ध साक्षी हैं एवं अभियुक्त पक्ष से शत्रुता रखते हैं–अभियोजन मामले का समर्थन करने के लिए कोई भी स्वतंत्र विश्वसनीय गवाह आगे नहीं आया–चौकीदार द्वारा थाने को दी गई प्रथम सूचना विचारण न्यायालय के समक्ष पेश नहीं की गई–सूचक का फर्दबयान जिसके आधार पर प्राथमिकी तैयार की गई थी, मुख्य न्यायिक दण्डाधिकारी के न्यायालय में दो दिनों के विलम्ब के उपरांत प्राप्त किया गया था–डॉक्टर का अभियोजन द्वारा परीक्षण नहीं किया गया है जिसने अपीलार्थी को काफी अधिक प्रतिकूल प्रभाव कारित किया

है–अभियोजन मामले के सही विवरण को लेकर अभियोजन पक्ष विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ है–अपीलार्थीगण को संदेह का लाभ उन्हें देते हुए उन्हें दोषमुक्त किया गया। (पैराएँ 10 से 14)

निर्णयज विधि.–AIR 1976 SC 2263; 1988 BBCJ 212; 1989 BBCJ 422; 1993 BBCJ 40—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s Jai Prakash, Yougesh Modi, Chaitali C. Sinha, For the Appellant; Mr. D.K. Prasad, For the Respondent.

निर्णय

यह अपील सत्र केस सं॰ 238 वर्ष 1986 में विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, दुमका श्री महेश प्रसाद तिवारी द्वारा पारित दिनांक 2.12.1994 के उस निर्णय के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा अपीलार्थी सं॰ 2 रेवती लायक को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 (भाग-1) के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और दस वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है और उसे आगे भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 148 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और दो माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है। अपीलार्थी सं॰ 1, 4, 5, 6, 7 अर्थात् अतुल लायक, शिशिर लायक, सुबोध लायक, सरत लायक और उत्तम लायक को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराएँ 323 एवं 147 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और क्रमश: दो माह और एक माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है और अपीलार्थी सं॰ 3, 8, 9, 10 अर्थात् धीरन लायक, बिशुन लायक, पिरु लायक और आशीष कुमार दत्ता को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 147 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और एक माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि सूचक ने अपने फर्दबयान में कथन किया कि घटना के दिन अर्थात् दिनांक 8.5.1984 को वह न्यायालय से लौटने के बाद अपने बरामदा में आराम कर रहा था जब समस्त दस अभियुक्तगण लाठी, सबल और कटारी से लैस होकर वहाँ आए और गाली देना शुरू किया और उस पर प्रहार करने के लिए सूचक की ओर दौड़े। सूचक अपने घर के अंदर भाग गया और दरवाजा बंद कर लिया। अभियुक्तगण ने दरवाजा तोड़ डाला और सूचक के पुत्र को बाहर खींच लिया। अभियुक्त रेवती लायक ने रविन्द्र नाथ डे (सूचक का पुत्र) के मस्तक पर सबल से वार किया जो अपने मस्तक पर गंभीर उपहतियाँ प्राप्त करते हुए तुरन्त गिर गया। सूचक, उसकी पत्नी और पुत्रियाँ भी बचाने के लिए वहाँ आयी किन्तु अभियुक्तगण द्वारा उन पर भी प्रहार किया गया था और उपहतियाँ पहुँचायी गयी थी। ''हल्ला'' सुनने पर अनेक गाँववाले वहाँ आए और उनको देखने पर अभियुक्तगण उस स्थान से भाग गए। जब वे भाग रहे थे, उन्होंने सूचक के घर पर पत्थरों को फेंका जिसके परिणामस्वरुप उनके घर के अनेक सदस्य भी घायल हो गए थे। सूचक के पुत्र रविन्द्र कुमार डे की मृत्यु अस्पताल में हो गयी।

3. इस मामले में अभियोजन ने दस गवाहों का परीक्षण किया है जिनमें से अ॰ सा॰ 5 सूचक है, अ॰ सा॰ 4 उसकी पत्नी है, अ॰ सा॰ 1 उसका पुत्र है और अ॰ सा॰ 6 और 7 पुत्रियाँ हैं। अ॰ सा॰ 8 और 9 पुलिस अधिकारीगण है जिन्होंने मामले का अन्वेषण किया था। अ॰ सा॰ 10 औपचारिक गवाह है। अ॰ सा॰ 2 tendered गवाह है और अ॰ सा॰ 3 को अभियोजन द्वारा पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है। स्वीकृत रूप से कोई भी स्वतंत्र गवाह का परीक्षण अभियोजन द्वारा नहीं किया गया है।

4. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता, श्री जय प्रकाश ने प्रतिवाद किया है कि अ॰ सा॰ 10 ने अपने साक्ष्य में कथन किया है कि चौकीदार खोकू महतो ने घटना के बारे में पुलिस थाना को सूचना दी है और जिसके बाद दरोगा अभियोजन पक्ष की ओर से (घटनास्थल) पर आया। इस प्रकार, चौकीदार द्वारा दी गयी सूचना घटना का वास्तविक पूर्व विवरण था जिसे दबा दिया गया है। अत: सूचक का फर्दबयान (प्रदर्श-2) प्राथमिकी के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है और अपने प्रतिवाद

के समर्थन में उन्होंने **1988 BBCJ पृष्ठ 212** में प्रकाशित **बशीर मियाँ एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य** के मामले में माननीय पटना उच्च न्यायालय के निर्णय को उद्धृत किया है जिसमें माननीय उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:–

''दं० प्र० सं० धारा 154–पुलिस थाना में सूचना–अन्वेषण के लिए आई० ओ० का अग्रसर होना–अन्वेषण के दौरान सूचक का बयान दर्ज किया गया–यह सबसे पहला बयान नहीं होने के नाते प्राथमिकी के रूप में नहीं माना जा सकता है–ऐसा बयान धारा 162 द्वारा hit होता है।

पैरा 14

''पैरा 14. .....इस प्रकार जैसा दं० प्र० सं० की धारा 162 के अधीन अधिकथित किया गया है, पुलिस अन्वेषण के क्रम में दर्ज किसी बयान का उपयोग केवल सीमित उद्देश्य अर्थात् गवाह का खंडन करने के उद्देश्य से किया जाएगा और दं० प्र० सं० की धारा 162, दं० प्र० सं० की धारा 154 के अधीन दर्ज प्राथमिकी को स्पष्टतः अपवर्जित करती है। ऊपर उल्लिखित परिस्थितियों में, सूचक इन्द्रदेव सिंह (अ० सा० 10) का बयान, जैसा प्रदर्श–1 में अंतर्विष्ट है, ऐसी सूचना के रूप में नहीं माना जा सकता है जैसा दं० प्र० सं० की धारा 154 के अधीन अनुध्यात किया गया है और यह अभिनिर्धारित करना होगा कि पूर्वोक्त बयान पुलिस अन्वेषण के क्रम में दर्ज किया गया था और इसलिए इसका उपयोग केवल सीमित उद्देश्य के लिए किया जा सकता है जैसा ऊपर उपदर्शित किया गया है।''

5. आगे निवेदन किया गया है कि इस मामले में सूचक का बयान (प्रदर्श–2) दिनांक 9.5.84 को प्रात: 10 बजे दर्ज किया गया था किन्तु प्राथमिकी सी॰ जे॰ एम॰ के न्यायालय में दिनांक 11.5.84 को पहुँची थी और पुलिस थाना से सी॰ जे॰ एम॰ के न्यायालय में प्राथमिकी पहुँचने के अत्यधिक विलम्ब को अभियोजन द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया है। उन्होंने **1993 BBCJ (40)** में प्रकाशित **संजय सिंह उर्फ पप्पू बनाम बिहार राज्य** के मामले में विनिश्चित माननीय पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय को उद्धृत किया है जिसमें माननीय उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:–

''.....प्राथमिकी अभिकथित रूप से दिनांक 1.4.89 को प्रातः 9.30 बजे दर्ज की गयी और विशेष संदेशवाहक द्वारा भेजी गयी, जो दंडाधिकारी के पास दिनांक 3.4.89 को पहुँची थी, अत्यन्त संदेहास्पद है और अभियोजन का मामला बनाने के लिए विलम्ब पूरी तरह उपयोग किया गया प्रतीत होता है।''

6. श्री जय प्रकाश द्वारा तर्क किया गया अगला बिन्दु यह है कि अपीलार्थी सं॰ 3 धीरेन लायक, अपीलार्थी सं॰ 2 रेवती लायक और उनके परिवार को कुछ सदस्यों पर सूचक और उसके परिवार के सदस्यों द्वारा प्रहार किया गया था जिसके लिए रानेश्वर पी॰ एस॰ केस सं॰ 36 वर्ष 1984 भी दर्ज किया गया था। प्रदर्श–A धीरेन लायक का फर्दबयान है और प्रदर्श–B उक्त मामले की औपचारिक प्राथमिकी है। प्रदर्श–D, D/a, D/b, और D/c रेवती लायक (अपीलार्थी सं॰ 2), धीरेन लायक (अपीलार्थी सं॰ 3), महेश्वरी देवी और अतुल चन्द्र लायक (अपीलार्थी सं॰ 1) की उपहति रिपोर्टें हैं जिन्हें ब॰ सा॰ 1 डॉक्टर श्याम सुन्दर दारूका के द्वारा जारी किया गया है जिन्होंने उन पीड़ितों का परीक्षण किया था। इस मामले के आई॰ ओ॰ जो अ॰ सा॰ 9 हैं, न अपने साक्ष्य में स्वीकार किया है कि उसने धीरेन चन्द्र लायक का उक्त फर्दबयान दर्ज किया था और जिसके आधार पर रानेश्वर पी॰ एस॰ केस सं॰ 36 वर्ष 84 दर्ज किया गया है और बी॰ एन॰ सिंह (अ॰ सा॰ 8) ने उन पीड़ितों (अभियुक्तगण) के शरीर पर उपहतियों को ध्यान में लिया था और उक्त उपहति नोट प्रदर्श C से C/3 है। श्री प्रकाश ने आगे प्रतिवाद किया है कि उपहति रिपोर्ट प्रदर्श–D दर्शाता है कि पीड़ित रेवती लायक (अपीलार्थी सं॰ 2) ने निम्नलिखित उपहतियाँ प्राप्त की है:–

"(i) एन्टीरियर पार्ट में, स्काल्प के बीच 6" लंबा सिला जख्म।

(ii) दाएँ कंधे के जोड़ के एन्टीरियर सतह पर 2" x 1" का लाल-नीला खरोंच।

(iii) दाएँ कंधे के जोड़ पर सूजन और लालिमा

N/I-ऑल सिम्पल

हथियार की प्रकृतिः-क्रम सं० (i) की उपहति के लिए कोई निश्चित मत नहीं दिया जा सकता है किन्तु शेष कड़े और भोथरे वस्तु से हुए हैं

क्रम सं० (i) के उपहति के लिए कोई निश्चित मत नहीं दिया जा सकता है किन्तु शेष विगत 24 घंटों के भीतर हुई है।''

7. पूर्वोक्त उपहति रिपोर्टों और अ॰ सा॰ 9 और ब॰ सा॰ 1 के साक्ष्य के अतिरिक्त सूचक (अ॰ सा॰ 5) ने अपने साक्ष्य में यह भी स्वीकार किया है कि उसने अभियुक्तगण में से कुछ को अस्पताल में देखा था। अ॰ सा॰ 7 ने भी अपने साक्ष्य में स्वीकार किया है कि उसने अभियुक्तगण रेवती, धीरेन, मालती और माहेश्वरी की उपहतियों को देखा था। किन्तु इन उपहतियों को अभियोजन द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया है और केवल इस तथ्य के आधार पर अभियोजन मामले पर अविश्वास किया जाना चाहिए।

8. श्री जय प्रकाश ने **AIR 1976 SC 2263** में प्रकाशित **लक्ष्मी सिंह एवं अन्य बनाम बिहार राज्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को उद्धृत किया है जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:-

"11. .....हमें यह प्रतीत होता है कि हत्या के मामले में, घटना के समय पर अथवा झगड़ा के क्रम में अभियुक्त द्वारा प्राप्त उपहतियों का अस्पष्टीकरण एक अत्यन्त महत्वपूर्ण परिस्थिति है जिसमें न्यायालय निम्नलिखित निष्कर्षों को निकाल सकता है:

(1) कि अभियोजन ने घटना की उत्पत्ति एवं उद्गम को दबाया है और सत्य विवरण प्रस्तुत नहीं किया है;

(2) कि गवाह, जिन्होंने अभियुक्त के शरीर पर उपहतियों की उपस्थिति से इंकार किया है, सर्वाधिक तात्विक बिन्दु पर झूठ बोल रहे हैं और इसलिए उनका साक्ष्य अविश्वसनीय है;

(3) कि यदि कोई बचाव विवरण है, जो अभियुक्त के शरीर पर उपहतियों को स्पष्ट करता है, यह अभियोजन मामले को संदेहास्पद बनाने के लिए संभाव्य बन जाता है।

अभियुक्त के शरीर पर उपहतियों को स्पष्ट करने में अभियोजन की ओर से लोप कुछ अधिक महत्व उपधारित करता है जहाँ साक्ष्य हितबद्ध अथवा बैरपूर्ण गवाहों से गठित होता है अथवा जहाँ बचाव ऐसा विवरण देता है जो अभियोजन के विवरण के साथ संभाव्यता में प्रतिस्पर्धा करता है।''

9. श्री जय प्रकाश ने यह निवेदन भी किया है कि वर्तमान मामले में डॉक्टर बी॰ के॰ मलहोत्रा, जिन्होंने मृतक रविन्द्र नाथ डे के मृत शरीर का शव परीक्षण किया था, का अभियोजन द्वारा परीक्षण नहीं किया गया है। किन्तु शव परीक्षण रिपोर्ट को दुमका सदर अस्पताल के कम्पाउन्डर अ॰ सा॰ 10 विजय प्रसाद दास द्वारा सिद्ध किया गया है। शव परीक्षण रिपोर्ट दर्शाती है कि मृतक के शरीर पर एक मस्तक उपहति सहित अनेक मृत्यु-पूर्व उपहतियाँ पायी गयी है। यह प्रतिवाद किया गया है कि अ॰ सा॰ 10 वह

व्यक्ति नहीं है जिसके समक्ष शव परीक्षण परीक्षा संचालित की गयी है। उसने केवल शव परीक्षण रिपोर्ट अभिलेख पर लाया है। अत: डॉक्टर, जिन्होंने उक्त रिपोर्ट तैयार किया था, का परीक्षण किए बिना शव परीक्षण रपट का उपयोग सारवान साक्ष्य के रूप में नहीं किया जा सकता है। न केवल शव परीक्षण रिपोर्ट में उल्लिखित उपहति के लिए ही बल्कि उपहतियों से संबंधित अपना मत देने के लिए भी डॉक्टर का परीक्षण करना होगा। इस संबंध में श्री जय प्रकाश ने **1989 BBCJ 422** में प्रकाशित **धोबी यादव एवं एक अन्य बनाम बिहार राज्य** मामले में माननीय पटना उच्च न्यायालय के निर्णय को प्रस्तुत किया है जिसमें अभिनिर्धारित किया गया है:–

> *"32. .....मौखिक साक्ष्य यह है कि पीड़ित ने उपहतियाँ प्राप्त की और तत्पश्चात उसकी मृत्यु हो गयी। इन सबके बावजूद यह नहीं कहा जा सकता है कि पीड़ित की मृत्यु का कारण क्या था। अत: इन परिस्थितियों में डॉक्टर के परीक्षण की अनुपस्थिति में शव परीक्षण रिपोर्ट स्वीकार नहीं की जा सकती है। किन्तु केवल यही स्थापित किया गया है कि अभियुक्तगण द्वारा पीड़ित पर प्रहार किया गया था और पीड़ित ने उपहतियों को प्राप्त किया था.....''*

10. राज्य के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अपीलार्थीगण ने सूचक के पुत्र पर प्रहार किया जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गयी। अभियोजन के अनुसार, अ॰ सा॰ 1, 4, 5, 6 और 7 तात्विक गवाह हैं जिन्होंने अभियोजन मामला सिद्ध किया है। पूर्वोक्त गवाहों के साक्ष्य का संवीक्षण करने पर मैं पाता हूँ कि अ॰ सा॰ 1 ने अपने साक्ष्य में स्वीकार किया है कि वह अपनी दुकान पर था जो उसके घर से लगभग आधा किलोमीटर की दूरी पर है। वह अपने घर (घटनास्थल) पर अपनी बहन से सूचना मिलने पर आया। अ॰ सा॰ 1 की माता अ॰ सा॰ 4 ने अपने साक्ष्य के पैरा 2 में कथन किया है कि उसका पुत्र निमाई (अ॰ सा॰ 1) आधा घंटा बाद घटना स्थल पर आया और उन सबों को अस्पताल ले गया। इस प्रकार यह पूर्णत: स्पष्ट है कि अ॰ सा॰ 1 अभिकथित घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है।

11. प्रहार के संबंध में अ॰ सा॰ 4 और 5 ने अपने साक्ष्य में कथन किया है कि रेवती लायक ने सबल से (मृतक) रविन्द्र नाथ डे पर प्रहार किया जिसके परिणामस्वरुप वह जमीन पर गिर गया और बेहोश हो गया। किसी अन्य अभियुक्त ने उस पर प्रहार नहीं किया। दूसरी ओर, अ॰ सा॰ 6 और 7 ने कथन किया है कि रेवती लायक ने सबल से और अतुल एवं विष्णु ने लाठी से रविन्द्र नाथ डे (मृतक) पर प्रहार किया। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 5 ने कथन किया है कि कुछ देर तक अंधाधुन्ध प्रहार किया गया है और हल्ला सुनकर गाँव वाले घटना स्थल पर आए। किन्तु कोई भी ग्रामीण अथवा स्वतंत्र गवाह अभियोजन मामले का समर्थन करने सामने नहीं आया था। अभियुक्त अपीलार्थीगण द्वारा किए गए प्रहार के बारे में भी कोई संगति नहीं है। इन परिस्थितियों में, यह कहना मुश्किल है कि रेवती लायक द्वारा किए गए प्रहार ने रविन्द्र नाथ डे की मृत्यु कारित की है।

12. राज्य की ओर से उपस्थित अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विचारण न्यायालय ने अपना निष्कर्ष दिया है कि चूँकि प्राथमिकी भेजने में हुई देरी अभियोजन की गलती नहीं थी और इस संबंध में बचाव पक्ष की ओर से आई॰ ओ॰ (अ॰ सा॰ 9) से कभी कोई प्रश्न नहीं पूछा गया था, अत: उक्त विलम्ब के कारण अभियोजन मामले पर अविश्वास नहीं किया जा सकता है।

13. अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य और सामग्री पर समग्रता से विचार करने पर, मैं पाता हूँ कि वर्तमान मामले में अभियोजन घटना के वास्तविक तरीके को स्थापित करने में विफल रहा है और अभियोजन ने कोई भी स्पष्टीकरण नहीं दिया है कि उसी घटना में कैसे और किन परिस्थितियों में अभियुक्तगण पर उपहतियाँ कारित की गयी थी। स्वीकृत रूप से अभियोजन द्वारा परीक्षित सारे गवाह

हितबद्ध गवाह है और अभियुक्त पक्ष के बैरी हैं और किसी स्वतंत्र विश्वसनीय गवाह ने अभियोजन मामले का समर्थन नहीं किया है। चौकीदार द्वारा पुलिस थाना को दी गयी पहली सूचना विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं की गयी है। सूचक का बयान जिसके आधार पर प्राथमिकी दर्ज की गयी थी, सी॰ जे॰ एम॰ के न्यायालय द्वारा दो दिनों के विलम्ब के बाद प्राप्त किया गया था। इसके अतिरिक्त, अभियोजन द्वारा डॉक्टर का परीक्षण नहीं किया गया है जिसने अपीलार्थी पर गंभीर प्रतिकूल कारित की है क्योंकि केवल वही वह व्यक्ति था जो उपहतियों, और मृत्यु का कारण क्या था और किस उपहति के परिणामस्वरुप पीड़ित की मृत्यु हो गयी थी, के बारे में मत दे सकता था। समस्त परिस्थितियों को स्पष्टत: स्थापित किया गया था कि अभियोजन विचारण न्यायालय के समक्ष अभियोजन मामले के सही विवरण के साथ नहीं आया है। उक्त उल्लिखित कारण और चर्चा से, मेरे मत में अभियोजन अपीलार्थीगण के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को युक्तियुक्त संदेह के परे स्थापित करने में विफल रहा है। मेरे मत में, अपीलार्थीगण को संदेह का लाभ मिलना चाहिए।

14. परिणामस्वरुप, संदेह का लाभ देते हुए, मैं समस्त अपीलार्थीगण को उनके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त करती हूँ। तद्नुसार, यह अपील अनुज्ञात की जाती है और अपीलार्थीगण के विरुद्ध विचारण न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय के जरिए पारित दोषसिद्धि और दंडादेशों को अपास्त किया जाता है और अपीलार्थीगण को उनके जमानत बंधपत्रों से उन्मोचित किया जाता है।

माननीय सुशील हरकौली, कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश एवं डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति

मेसर्स सुजाता पिक्चर पैलेस, राँची

बनाम

झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड, राँची एवं अन्य

L.P.A. No. 391 of 2009. Decided on 9th August, 2010.

विद्युत विधि–संयोजित विद्युत भार–संयोजित विद्युत भार का अर्थ केवल वैसी स्थितियाँ हो सकती है जिसमें विवेकशील व्यक्तियों द्वारा सामान्य उपयोग में विद्युत उपभोग युक्ति साथ-साथ प्रवर्तन में होगा–यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि केवल एक पर्दा वाले सिनेमा हॉल में एक दिए गए समय में अन्य प्रोजेक्टरों के साथ-साथ एक से अधिक मूवी प्रोजेक्टर कार्य करेगा–संयोजित भार का अवधारण करने में निष्क्रिय एवं अप्रयुक्त प्लगों को नहीं जोड़ा जा सकता है जबतक कि यह किसी परिपत्र या अन्य विधि के अधीन अनुज्ञेय न बनाया गया हो–महाप्रबंधक द्वारा पारित आक्षेपित आदेश और एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय अपास्त–मामले को नये सिरे से निर्णय करने के लिए महाप्रबंधक के पास भेजा गया।

(पैराएँ 4, 5, 9, 17 एवं 19)

निर्णयज विधि.–(2003) 5 SCC 226; CWJC No. 379 of 2000—Referred to.

अधिवक्तागण.–M/s M. S. Mittal, N. K. Pasari, For the Appellant; Mr. V.P. Singh, For the J.S.E.B..

आदेश

प्रत्यर्थी विद्युत बोर्ड के अधिकारियों द्वारा दिनांक 28.1.2000 को याची के परिसरों (सिनेमा हाल्स) पर निरीक्षण/छापा के परिणामस्वरुप प्रत्यर्थी बोर्ड के महाप्रबंधक द्वारा पारित दिनांक 7.6.2000 के आदेश द्वारा निर्धारण की मात्रा का न्याय निर्णयण किया गया था। उस आदेश को रिट याचिका द्वारा विद्वान एकल

न्यायाधीश के समक्ष याची-अपीलार्थी द्वारा असफलतापूर्वक चुनौती दी गयी थी जिसे दिनांक 1.7.2009 के आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था।

हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को आज विस्तारपूर्वक सुना है। दिनांक 17 जुलाई, 2010 को पिछली सुनवाई पर इस मामले में निम्नलिखित आदेश पारित किया गया था:

''प्रथम दृष्टया, महाप्रबंधक, जिन्होंने अपीलार्थी की पूर्व रिट याचिका में दिए गए इस न्यायालय के निर्देश के अनुसरण में सकारण आदेश पारित किया, ने स्पष्ट निष्कर्ष दर्ज नहीं किया है कि क्या एक हॉल में तीनों प्रोजेक्टरों और दूसरे सिनेमा हॉल में दोनों प्रोजेक्टरों को साथ-साथ चलाया जा सकता है। समान रूप से, उन्होंने कोई निष्कर्ष दर्ज नहीं किया है कि क्या दोनों केन्द्रीय वातानुकूलित प्लान्टों को सामान्य क्रम में साथ-साथ चलाया जा सकता है। ऐसा कोई निष्कर्ष भी नहीं है कि क्या दोनों केन्द्रीय वातानुकुलित प्लान्टों को चलाने के लिए दोनों मोटरों की आवश्यकता है अथवा एक समय पर केवल एक ही मोटर चलता है।

किन्तु, इस पर विचार करने के लिए कि क्या सारे उपकरण अर्थात् सारे प्रोजेक्टर और दोनों मोटरों के साथ वातानुकूलित प्लान्ट ''संयोजित भार'' की परिभाषा के अधीन आते हैं या नहीं, मामले को महाप्रबंधक के पास वापस भेजने का निर्णय लेने के पहले हम ऐसी स्थिति में ऐसे उपकरणों के सामान्य उपयोग को ध्यान में रखते हुए इस निमित्त विनिर्दिष्ट अनुदेशों को इप्सित करने के लिए जे० एस० ई० बी० के विद्वान अधिवक्ता को आगे अवसर प्रदान करना समुचित समझते हैं।

जैसा प्रार्थना की गयी है, इस मामले को दिनांक 30.7.2010 पर सूचीबद्ध करें।''

2. बिहार राज्य विद्युत बोर्ड द्वारा जारी वित्तीय एवं लेखा संहिता के खंड 2 का उपखंड 14 (A) के अधीन ''कनेक्टेड लोड'' को परिभाषित किया गया है, जिसका पठन निम्नलिखित है:–

''कनेक्टेड लोड' का अर्थ है उपभोक्ता के परिसरों पर ऊर्जा उपभोग संयंत्रों की स्थापित क्षमता का कुल योग जिन्हें आवश्यकता की तुलना में अतिरिक्त इकाईयों अथवा वृहत्तर रेटिंग के रूप में स्पेअर अथवा स्टैन्ड बाई क्षमता को अपवर्जित करते हुए साथ-साथ चलाया जा सकता है।''

3. शब्द समूह ''साथ-साथ चलाया जा सकता है'' निर्णायक वाक्यांश है।

4. प्रत्यर्थी-बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया है कि यदि किसी लक्ष्य अथवा उद्देश्य के साथ या बिना सभी उर्जा उपभोग संयंत्रों को 'संभवत:' साथ-साथ चलाया जा सकता है, उन्हें 'कनेक्टेड लोड' की परिभाषा के भीतर सम्मिलित समझा जाना चाहिए। हम नहीं समझते हैं कि कोई विवेकशील व्यक्ति ऐसे युक्तियुक्त दृष्टिकोण को संभवत: मानेगा। हमारे सुदृढ़ विचार में, कोई संभव संदेह नहीं हो सकता है कि ऊपर उद्धृत वाक्यांश का अर्थ केवल वे स्थितियाँ है जहाँ समझदार व्यक्तियों द्वारा सामान्य उपयोग में उर्जा उपभोग संयंत्रें साथ-साथ चलाए जाएँगे। उदाहरणस्वरुप, वर्तमान मामले में ऐसा अभिनिर्धारित करना अनुचितताओं की सारी सीमा को पार करेगा कि केवल एक पर्दा वाले सिनेमा हॉल में समय के किसी बिन्दु पर एक मूवी प्रोजेक्टर अन्य प्रोजेक्टरों के साथ-साथ चलाया जाएगा।

5. चूँकि आक्षेपित आदेश में निर्णायक ताथ्यिक प्रश्न के प्रति विवेक का इस्तेमाल नहीं किया गया है कि क्या अपीलार्थी के परिसरों में पाए गए संयंत्रों को उपयोग की सामान्य परिस्थितियों में साथ-साथ चलाया जा सकता है या नहीं, अत: जहाँ तक इस पहलू का संबंध है, आक्षेपित आदेश को संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. निर्धारण में, अप्रयुक्त प्लग प्वायंट्स को भी कनेक्टेड लोड में जोड़ दिया गया है।

7. याची की ओर से इंगित किया गया है, अपील के मेमो के साथ परिशिष्ट-12 के रूप में संलग्न दिनांक 28 जुलाई, 2001 का बोर्ड का एक परिपत्र है जिसमें परिपत्र के नीचे दिए गए पहले नोट में यह विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया गया है कि निष्क्रिय और अप्रयुक्त प्लग प्वायंट्स को कनेक्टेड लोड के निर्धारण में सम्मिलित नहीं किया जाएगा।

8. प्रत्यर्थीगण की ओर से तर्क किया गया है कि निरीक्षण दिनांक 28 जनवरी, 2000 अर्थात् पूर्वोक्त परिपत्र की तिथि से पहले किया गया था और परिणामस्वरुप निष्क्रिय और अप्रयुक्त प्लग प्वायंट्स को अपवर्जित करने के लिए अपीलार्थी द्वारा परिपत्र का उपयोग नहीं किया जा सकता है।

9. यदि तर्क के लिहाज से यह उपधारित भी किया जाता है कि निरीक्षण की तिथि का पश्चातवर्ती होने के नाते पूर्वोक्त उद्देश्य के लिए परिपत्र का उपयोग नहीं किया जा सकता है, फिर भी प्रत्यर्थी-बोर्ड द्वारा यह नहीं दर्शाया गया है कि निरीक्षण की तिथि के पहले कोई अन्य परिपत्र था जो अप्रयुक्त और निष्क्रिय प्लग प्वायन्ट्स को 'कनेक्टेड लोड' के साथ जोड़ने की अनुमति देता था। हमारा मत है कि निष्क्रिय और अप्रयुक्त प्लग प्वायन्ट्स को 'कनेक्टेड लोड' को अवधारित करने के लिए तब तक नहीं जोड़ा जा सकता है जब तक इसे किसी परिपत्र अथवा अन्य विधि के अधीन अनुज्ञेय नहीं बनाया जाता है। इस मत का कारण यह है कि यह विनिर्दिष्टत: प्रावधानित करना होगा कि ऐसे निष्क्रिय और अप्रयुक्त प्लग प्वायन्ट्स में से प्रत्येक को कितने लोड वाला माना जा सकता है। अप्रयुक्त और निष्क्रिय प्लग प्वायन्ट्स पर लोड को मनमाने रूप से मानने की अनुमति नहीं दी जा सकती है क्योंकि यह मनमानापन के दोष से पीड़ित होगा क्योंकि स्वविवेक पूर्णत: मार्गदर्शन रहित होगा।

10. आक्षेपित आदेश में इस पहलू पर भी विचार नहीं किया गया है।

11. जे॰ एम॰ डी॰ एल्वॉय लि॰ बनाम बिहार राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य, (2003)5 SCC 226 (विधि रपट का पैरा 17) में प्रकाशित मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करते हुए अपीलार्थी की ओर से तर्क किया गया है कि फ्यूल सरचार्ज को तीन से गुणा नहीं किया जा सकता है। फ्यूल सरचार्ज की गणना के लिए फार्मूला टैरिफ के खंड 16.10.3 में दिया गया है जो अनेक कारकों को विचार में लिए जाने की अपेक्षा करता है और वे अनेक वेरिएबल्स पर निर्भर करते है।

12. यह तर्क कि टैरिफ के खंड 16.9 के भाग (iii) के अनुरूप प्रति इकाई दर के तीन गुणा पर फ्यूल सरचार्ज का निर्धारण किया जाना चाहिए, उस मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिव्यक्त रूप से टैरिफ अस्वीकार कर दिया गया था।

13. आक्षेपित आदेश ने पूर्वोक्तानुसार सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के प्रकाश में मामले का परीक्षण नहीं किया है।

14. हम दिनांक 7 जून, 2000 के आक्षेपित आदेश से पाते हैं कि आदेश के चार पृष्ठों में से महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियन्ता ने लगभग पूरे निर्णय में पक्षों के निवेदनों पर चर्चा किया है और अंतिम पैराग्राफ में उन्होंने सरसरी तरीके से मामला विनिश्चित किया है।

15. सकारण आदेश अपेक्षा करता है कि समस्त युक्तिसंगत तर्कों का प्रत्येक कारणों के साथ उत्तर देना होगा।

16. अंत में, उक्त निर्णय को लिखाए जाने के बाद प्रत्यर्थी-बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान **मेसर्स शारदा कलर लेबोरेटरी बनाम बी॰ एस॰ ई॰ बी॰ एवं अन्य** मामले में **सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 379 वर्ष 2000 (आर॰)** में पटना उच्च न्यायालय की राँची पीठ के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 24 मार्च, 2000 के निर्णय की ओर आकृष्ट किया है जिसे उनके अनुसार एक एल॰

पी० ए० में मान्य ठहराया गया था। एल० पी० ए० का आदेश प्रस्तुत नहीं किया गया है, किन्तु विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय पर विश्वास करते हुए यह तर्क किया गया था कि ऊपर लिखाया गया हमारा निर्णय एल० पी० ए० में खंडपीठ के निर्णय के विपरीत था–जिसे हमारे समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है। यह प्रतिवाद अप्रयुक्त प्लग प्वायन्ट्स के संबंध में है।

17. उस आदेश में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया है कि वह अपने समक्ष आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता पाने में अक्षम हैं जिसमें अप्रयुक्त प्लग प्वायन्ट्स को बोर्ड द्वारा विचार में लिया गया था। अब वह निर्णय न्याय निर्णीत नहीं है क्योंकि अपीलार्थी इसका पक्षकार नहीं था। परीक्षण किया जाने वाला प्रश्न उस बिन्दु पर पूर्ववर्ती के रूप में उस निर्णय का मूल्य है। हम पाते हैं कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने सकारात्मक तरीके से यह अभिनिर्धारित नहीं किया है कि अप्रयुक्त प्लग प्वायन्ट्स को 'कनेक्टेड लोड' को निश्चित करने के लिए जोड़ा जाना चाहिए। निर्णय का निर्णयाधार वह कारण है जिस पर निर्णय आधारित है। विद्वान एकल न्यायाधीश के उक्त निर्णय का आधार यह है कि उन्हें (तर्कों के दौरान) यह अभिनिर्धारित करने के लिए कि अप्रयुक्त प्लग प्वायन्ट्स का जोड़ा जाना विधिक रूप से अनुज्ञेय नहीं था, कोई आधार नहीं दर्शाया गया है। उस प्रभाव के किसी अभिव्यक्त प्राधिकार के बिना 'कनेक्टेड लोड' में अप्रयुक्त और निष्क्रिय प्लग प्वायन्ट्स को जोड़ने में मुश्किल और इससे भी महत्वपूर्ण, कि प्रत्येक अप्रयुक्त प्लग प्वायन्ट्स पर कितना अधिक लोड संभवत: दिया जा सकता है, के बारे में मुश्किल ऐसे पहलू है जिनके प्रति विद्वान एकल न्यायाधीश का ध्यान आकृष्ट नहीं किया गया है। अत: अप्रयुक्त प्लग प्वायन्ट्स को जोड़ने की अनुज्ञेयता के विवाद्यक का उत्तर देने के लिए उदाहरण के रूप में विद्वाल एकल न्यायाधीश के उक्त निर्णय को हम प्रासंगिक नहीं पाते हैं। किसी भी सूरत में, हम हमारे द्वारा पारित रिमाण्ड आदेश के अनुसरण में मामले को फिर से विनिश्चित करने के लिए इन सारे प्रश्नों को महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियन्ता के लिए खुला रखते हैं।

18. नया आदेश पारित करते हुए महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियन्ता उक्त संप्रेक्षणों को ध्यान में रखेंगे।

19. तद्नुसार, यह लेटर्स पेटेन्ट अपील व्यय के साथ अनुज्ञात किया जाता है। सी० डब्ल्यू० जे० सी० सं० 1571 वर्ष 2000 (आर०) में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 1 जुलाई, 2009 के निर्णय और आदेश को एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियन्ता, विद्युत आपूर्त्ति क्षेत्र, राँची द्वारा पारित दिनांक 7 जून, 2000 का आक्षेपित आदेश (अपील के मेमो का परिशिष्ट-7) अभिखंडित किया जाता है। इस आदेश की प्रमाणित प्रति को उसके समक्ष प्रस्तुत किए जाने की तिथि से छह सप्ताह के भीतर अपीलार्थी को सुनवाई का अवसर दिए जाने के बाद महाप्रबंधक-सह-मुख्य अभियन्ता द्वारा मामला फिर से विनिश्चित किया जाएगा।

माननीय रमेश कुमार मेराठिया, न्यायमूर्ति

मेसर्स उज्जल ट्रान्सपोर्ट एजेन्सी

बनाम

कोल इंडिया लिमिटेड एवं अन्य

W.P. (C) No. 2708 of 2010. Decided on 12th August, 2010.

सरकारी संविदा–निविदा–बैंक गारंटी का सहारा लेना और अग्रिम धन का समपहरण–याची भूमि पर खड़े पेड़ों को काटने के लिए वन विभाग की अनुमति देने से इनकार किए जाने के चलते कार्य आगे जारी नहीं रख सका–यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं कि जिस तिथि को याची ने

अपनी बोली लगाई थी, वन विभाग को कोई आपत्ति थी–प्रत्यर्थीगण बैंक गारंटी का अवलम्ब नहीं ले सकते और याची के अग्रिम धन का समपहरण नहीं कर सकते–प्रत्यर्थीगण प्रश्नगत कार्य के निष्पादन के लिए विधिक अड़चनें दूर किए जाने के उपरांत नई निविदा विज्ञापित कर सकते हैं। (पैराएँ 3 से 8)

निर्णयज विधि.–(2010) 1 SCC 655—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s A. K. Sinha, Neha Prashant, For the Petitioner; Mr. Anoop Kumar Mehta, For the Respondents No. 3 to 5.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ सिन्हा ने निवेदन किया कि याची की एकमात्र शिकायत केवल यह है कि याची द्वारा अग्रिम धन के रूप में दी गयी 5,67,300/-रुपए (पाँच लाख सड़सठ हजार तीन सौ रुपए) की बैंक गारंटी को प्रत्यर्थीगण द्वारा नहीं भुनाया जाना चाहिए। उन्होंने निवेदन किया कि जब याची ने अपनी निविदा दाखिल की, वन विभाग द्वारा कोई आपत्ति नहीं की गयी थी किन्तु बाद में दिनांक 10.5.2000 के पत्र (परिशिष्ट-8) द्वारा 9.79 हेक्टेयर भूमि, जिस पर निविदा के मुताबिक प्रश्नगत कार्य किया जाना था, क्षेत्र पर खड़े 82 वृक्षों को काटने की अनुमति प्रत्यर्थी सं॰ 5 को देने से इसने इंकार कर दिया और इसलिए वन विभाग से अनापत्ति की अनुपस्थिति में प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा जारी दिनांक 22.3.2010 के पत्र (परिशिष्ट-1) के निबंधनानुसार याची अग्रसर नहीं हो सकता था। उन्होंने **हरियाणा वित्तीय निगम एवं एक अन्य बनाम राजेश गुप्ता, [(2010)1 Supreme Court Cases 655)** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया।

2. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 3, 4, और 5 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ मेहता ने प्रतिशपथ पत्र के पैराग्राफ 19 को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि 7 हेक्टेयर से अधिक भूमि पर कोई वृक्ष नहीं है और इसलिए याची द्वारा कार्य शुरू किए जाने में कोई रूकावट नहीं है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि बोली लगाने वालों के प्रति अनुदेशों के खंड 6.1 के निबंधनानुसार बोली लगाने से पहले अपनी जिम्मेदारी, व्यय और जोखिम के बारे में स्वयं को संतुष्ट करना याची से अपेक्षित था।

3. पक्षों को सुनने के बाद, मेरे मत में, प्रत्यर्थीगण बैंक गारंटी का अवलम्ब नहीं ले सकते हैं और याची के अग्रिम धन का समपहरण नहीं कर सकते है।

4. श्री ए॰ के॰ मेहता विवाद नहीं कर सकते थे कि उक्त 7 हेक्टेयर भूमि 9.79 हेक्टेयर भूमि के भीतर थी, जिसके बारे में वन विभाग ने दिनांक 10.5.2010 का उक्त पत्र जारी किया है।

5. इसके अतिरिक्त, यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं है कि तिथि, जिस पर याची ने अपनी बोली प्रस्तुत की थी, वन विभाग द्वारा कोई आपत्ति उठायी गयी थी बल्कि पेड़ काटने के लिए प्रत्यर्थीगण की ओर से की गयी प्रार्थना लंबित थी जिस प्रार्थना को दिनांक 10.5.2010 को अस्वीकार कर दिया गया था।

6. यह सूचित किया गया था कि उक्त क्षेत्र में पेड़ काटने पर आपत्ति करते हुए एक जनहित याचिका इस न्यायालय में लंबित है जिसमें प्रत्यर्थीगण भी एक पक्ष है।

7. श्री ए॰ के॰ मेहता ने याची के अनुदेश पर यह निवेदन भी किया कि दिनांक 22.3.2010 के पत्र (परिशिष्ट-1) के निबन्धनानुसार कार्य निष्पादित करने के लिए आगे कदम उठाने के लिए याची अनिश्चित अवधि तक प्रतीक्षा नहीं कर सकता है।

8. इन परिस्थितियों में, याची से 5,67,300/- रुपया (पाँच लाख सड़सठ हजार तीन सौ रुपया) के अग्रिम धन की प्राप्ति के लिए बैंक गारंटी प्रवर्तित नहीं करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को दिया जाता है। प्रश्नगत कार्य के निष्पादन के लिए विधिक रूकावटों की समाप्ति के बाद प्रत्यर्थीगण नयी निविदा विज्ञापित कर सकते हैं।

इन संप्रेक्षणों और निर्देशों के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है। किन्तु व्यय को लेकर आदेश नहीं है।

माननीय डी॰ जी॰ आर॰ पटनायक, न्यायमूर्ति

कमला देवी एवं एक अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1026 of 2009. Decided on 13th August, 2010.

भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धाराएँ 498-A सहपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3/4—दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 177, 178 एवं 482—क्रूरता—न्यायालय में राज्य क्षेत्रीय अधिकारिता की कमी के आधार पर संज्ञान के आदेश को चुनौती—क्रूरता के अभिकथित कृत्यों से सम्बन्धित सम्व्यवहार परिवादी के गया स्थित ससुराल तक सीमित थे जबकि संज्ञान राँची में लिया गया था—अभिकथित कृत्य दहेज की किसी अभिकथित मांग से जुड़ा नहीं है—पति ने अपनी पत्नी के विरुद्ध वैवाहिक अधिकारों की प्रत्यास्थापना के लिए एक सिविल वैवाहिक कार्यवाही संस्थित की है—राँची में हुई अभिकथित घटनाएँ काल्पनिक हैं एवं राँची के न्यायालय को अधिकारिता प्रदान करने के लिए अंतःस्थापित की गई हैं—राँची स्थित न्यायालय को परिवाद ग्रहण करने की कोई अधिकारिता नहीं है—संज्ञान का आदेश एवं सम्पूर्ण दाण्डिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 7 से 12)

निर्णयज विधि.—ACR 3 (2007) 2772; 2006(8) Supreme 373; Cr. M.P. No. 66 of 2006—Relied on.

अधिवक्तागण.—M/s. Indrajeet Sinha, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Rajesh Kumar, For the O.P. No.2.

आदेश

याचीगण के अधिवक्ता और विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के अधिवक्ता और राज्य के अधिवक्ता को सुना गया।

2. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन दाखिल आवेदन में याचीगण ने धुर्वा पी॰ एस॰ केस सं॰ 185 वर्ष 2006 से उद्भूत जी॰ आर॰ केस सं॰ 3256 वर्ष 2006 में अवर न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 11.10.2007 के संज्ञान के आदेश, जिसके द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन संज्ञान लिया गया था और पूर्वोक्त अपराधों के सम्बन्ध में विचारण का सामना करने के लिए उन्हें निर्देशित किया गया था, सहित याचीगण के विरुद्ध लंबित समस्त दांडिक कार्यवाहियों के अभिखंडन के लिए प्रार्थना की गयी है।

3. याचीगण ने संज्ञान के आक्षेपित आदेश और समस्त दांडिक कार्यवाही, जिसे प्राथमिकी के अनुसरण में आरंभ किया गया था, का विरोध निम्नलिखित आधारों पर किया है:—

(i) स्वीकृत तथ्यों की दृष्टि में कि अभिकथित अपराध से संबंधित संपूर्ण संव्यवहार समय के किसी बिन्दु पर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची की क्षेत्रीय अधिकारिता के भीतर नहीं हुआ था, दंडाधिकारी न तो अपराध का संज्ञान ले सकते थे और न ही दं० प्र० सं० की धाराओं 177 और 178 के प्रावधानों के अधीन प्रतिषेध की दृष्टि में याचीगण के विरुद्ध मामले के विचारण के लिए अधिकारिता का प्रयोग कर सकते थे।

(ii) प्राथमिकी असद्भाव पूर्वक और अंतरस्थ हेतु के साथ दर्ज की गयी है जैसा स्वीकृत तथ्य दर्शाएँगे कि इसे विपक्षी पक्षकार सं० 2 द्वारा हिन्दु विवाह अधिनियम की धारा 9 के अधीन याची-पति द्वारा दाखिल वैवाहिक अभिधान वाद के विरुद्ध अपना बदला लेने के लिए दाखिल किया गया था।

(iii) मामला 10 माह से अधिक के विलम्ब के बाद संस्थापित किया गया था जब विपक्षी पक्षकार सं० 2 अपना दाम्पत्य गृह और याचीगण का साथ छोड़ चुकी थी।

4. आधारों को विस्तार देते हुए याचीगण के अधिवक्ता तर्क करेंगे कि प्राथमिकी में अंतर्विष्ट संपूर्ण प्रकथनों से यह पता चलेगा कि अभिकथित दुर्व्यवहार और क्रूरता जिससे परिवादी/विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 याचीगण के हाथों पीड़ित होने का दावा करती है, पूर्णत: उसके गया स्थित दाम्पत्य गृह में किया गया था और अभिकथित संव्यवहार का कोई अंश समय के किसी बिन्दु पर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची की अधिकारिता के भीतर नहीं हुआ था। विद्वान अधिवक्ता आगे तर्क करते हैं कि दिनांक 6.8.2006 के अभिकथित उदाहरण का एकमात्र अभिकथन केवल राँची स्थित विद्वान अवर न्यायालय की अधिकारिता के लिए आधार सृजित करने के असद्भावपूर्व आशय के साथ आशयपूर्वक जोड़ा गया है और यह इस तथ्य से स्पष्ट होगा कि ऐसे अभिकथन अस्पष्ट और बहुप्रयोजनीय प्रकृति की है। इसके अतिरिक्त, ऐसे अभिकथन ''क्रूरता'' गठित नहीं करते हैं जैसा इसे भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन परिभाषित किया गया है चूँकि स्वीकृत रूप से दिनांक 6.8.2006 को याचीगण में से किसी के द्वारा दहेज की मांग नहीं की गयी थी। विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते है कि यद्यपि राँची में अभिकथित रूप से हुआ दिनांक 6.8.2006 से संबंधित अभिकथन याची के राथू साहू पर गाली और धमकी देने का आरोप लगाता है, किन्तु उक्त राथू साहू को आरोप पत्र में नामित नहीं किया गया है।

5. दूसरी ओर, विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करेंगे कि विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के विरुद्ध याचीगण द्वारा किया गया क्रूरता का अपराध एक चालू रहने वाला अपराध है और यद्यपि महिला ने बाध्यकारी परिस्थिति में अपना ससुराल छोड़ा था एवं प्राथमिकी दर्ज किए जाने की दस महीने पहले से अपने माता-पिता के घर में रह रही थी किन्तु अभिकथन संपुष्ट करते हैं कि दिनांक 6.8.2006 को भी विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के पति और बहनोई महिला के पास राँची आए थे और उसको गालियाँ दी थी और उसको घायल करने की धमकी जारी की थी और यह पति और उसके बहनोई द्वारा उसको मानसिक क्रूरता कारित करता है।

6. परस्पर विरोधी तर्कों के बेहतर अधिमूल्यन के लिए संक्षेप में मामले के तथ्यों का कथन किया जा सकता है:-

विपक्षी पक्षकार सं० 2 ने पुलिस थाना में एक प्राथमिकी दर्ज की थी जिसके आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4

के अधीन अपराध के लिए मामला दर्ज किया गया था। पुलिस रपट और उसमें अंतर्विष्ट अन्वेषण अधिकारी अनुशंसा के आधार पर दोनों याचीगण के विरुद्ध उक्त अपराधों के लिए अवर न्यायालय ने संज्ञान लिया था।

सूचक/विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 का मामला यह है कि जिला धनबाद में मैथन स्थित उसके पिता के घर में हिन्दु रीति-रिवाजों के अनुसार दिनांक 28.6.2005 को उसका विवाह याची सं॰ 2 गंगा प्रसाद गुप्ता के साथ संपन्न हुआ था। विवाह के समय, महिला के पति और ससुराल वालों की मांग के मुताबिक उसके पिता ने 4,51,000/-रुपयों की नगर राशि और बैंक ऑफ बडौदा, राँची शाखा से बनाए गए पृथक बैंक ड्राफ्ट के माध्यम से 99,965/-रुपयों की अतिरिक्त राशि दिनांक 6.6.2005 को अभियुक्तगण को दिया था। इसके अतिरिक्त दो लाख रुपए मूल्य का रेफ्रिजरेटर, और अन्य घरेलू सामानों के साथ-साथ मोटर साइकिल, आभूषण और बर्तन भी विवाह के समय लड़की को दिया था। विवाह के बाद उसे गया स्थित उसके दाम्पत्य गृह में ले जाया गया था किन्तु तुरन्त बाद सुरक्षित अभिरक्षा के बहाने से उसके ससुराल वालों ने चतुराई से उसका सारा स्वर्णाभूषण ले लिया था। समय के क्रम में, कार खरीदने के लिए धन की नयी मांग की जाने लगी थी और अपने पिता से धन मंगाने के लिए अनेक तरीके से उस पर दबाव डाला जाता था। पति, सास, बहनोई, भाभी और दांपत्य। वैवाहिक परिवार के अन्य सदस्यों सहित अभियुक्तगण द्वारा मांगों को पूरा करने के लिए उसे मजबूर करने के लिए महिला के साथ दुर्व्यवहार और क्रूरता किया जाने लगा था। अंततः दिनांक 10.11.2005 को अभियुक्तगण द्वारा उसे उसके दाम्पत्य गृह से निष्कासित कर दिया गया था जिसके बाद वह अपने पिता के घर वापस चली आयी और तब से वह अपने पिता के घर रह रही थी। यह अभिकथन किया गया है कि दिनांक 6.1.2006 और पुनः दिनांक 6.8.2006 को पति और बहनोई अर्थात् रघु साहु उसके पिता के घर पर विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 से मिले और उसे गंभीर परिणामों की धमकी दी और उसे गालियाँ दी और हाथापाई किया और उसे गंभीर परिणामों की धमकी देते हुए यदि उसने मामला पुलिस को बताया, चले गए।

7. प्राथमिकी में कथित संपूर्ण तथ्यों से यह प्रतीत होता है कि क्रूरता के अभिकथित कृत्यों से संबंधित संव्यवहार परिवादी के गया स्थित दाम्पत्य गृह तक सीमित थे।

जैसा याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा सही प्रकार से इंगित किया गया है कि दिनांक 6.1.2001 और दिनांक 6.8.2006 की घटनाओं के अभिकथन पूर्णतः अस्पष्ट और बहुप्रयोजनीय है और अन्यथा भी अभिकथित कृत्य दहेज की किसी अभिकथित मांग से संबंधित नहीं है।

8. स्वीकृत तथ्यों की पृष्ठभूमि में कि परिवादी महिला ने अपना दाम्पत्य गृह नवम्बर, 2005 माह के किसी समय छोड़ दिया था और तत्पश्चात अपने पति के पास नहीं लौटी थी, प्राथमिकी में किए गए अभिकथनों को देखने की आवश्यकता है। स्वीकृत रूप से, दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए अपनी पत्नी के विरुद्ध पति ने सिविल वैवाहिक कार्यवाहियाँ संस्थापित किया था और कार्यवाही में जारी नोटिसें पत्नी के ऊपर तामील की गयी थी। प्रकटतः, अपना दाम्पत्य गृह छोड़ने के बाद, महिला ने अपने पति और ससुराल वालों के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं रखा था जो उसे उनके विरुद्ध तत्परता से परिवाद दाखिल करने के लिए प्रेरित कर सकता था। केवल वैवाहिक कार्यवाहियों में नोटिसों के मिलने के बाद ही महिला ने प्राथमिकी दर्ज करके दांडिक कार्रवाई का रास्ता चुना था। इसके अतिरिक्त, दाम्पत्य अधिकारों

के प्रत्यास्थापन के लिए सिविल वैवाहिक वाद दाखिल होने के बाद और अपने पति के विरुद्ध महिला द्वारा आरंभ की गयी किसी पूर्व कार्यवाही की अनुपस्थिति में, पति-पत्नी के बीच अलगाव के लगभग दस माह बाद उसके पिता के घर अपनी पत्नी से मिलने जाने के लिए और केवल उसे गाली और धमकी देने के लिए पति के पास कोई स्पष्ट कारण नहीं हो सकता था। बल्कि ये तथ्य इसे स्पष्ट बनाते हैं कि राँची में दिनांक 6.1.2006 और दिनांक 6.8.2006 की अभिकथित घटनाएँ और पति के विरुद्ध उनसे संबंधित अभिकथन मनगढ़ंत/काल्पनिक है। यह समझ में नहीं आता है कि क्यों परिवादी को गाली देने और उससे हाथापाई करने पति और उसका बहनोई गया से राँची की यात्रा करेंगे। ऐसे अभिकथनों को लगाने का स्पष्ट उद्देश्य राँची के न्यायालय की अधिकारिता प्रावधानित करना है।

9. अनिल शर्मा एवं अन्य बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं अन्य, ACR 3 (2007) 2772, मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष समरुप तथ्यों को अंतर्ग्रस्त करता ऐसा ही विवाद्यक विचारार्थ आया था। उस मामले के तथ्य अभिकथन अंतर्विष्ट करते थे कि अजमेर में रहने वाले अभियुक्तगण सूचक के पास आगरा गए थे और परिवादी के साथ मार-पीट किए थे। संपूर्ण क्रम और तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने पर, न्यायालय ने संप्रेक्षित किया था कि आगरा में अभिकथित घटना को केवल अभियुक्तगण को आगरा में परिवादी के स्थान पर मुकदमा चलाने की दृष्टि से बनाया गया है।

10. हरदीप सिंह बेदी एवं एक अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य मामले में और **दांडिक विविध याचिका सं॰ 66 वर्ष 2006** में एक अन्य मामले में इस न्यायालय द्वारा पारित एक अन्य निर्णय में इस तथ्य कि अभिकथित क्रूरता का संपूर्ण संव्यवहार एक भिन्न जिला में, एक पूर्णत: भिन्न न्यायालय की अधिकारिता के भीतर स्थित परिवादी के दाम्पत्य गृह में हुआ था, सहित मामले के स्वीकृत तथ्यों पर विचार करने के बाद और **मनीष रतन एवं अन्य बनाम म॰ प्र॰ राज्य एवं एक अन्य 2006 (8) Supreme 372** मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चित निर्णयाधार पर और **वाई॰ एब्राहम अजित बनाम पुलिस इंस्पेक्टर, 2004 (8) SCC 100,** मामले में सर्वोच्च न्यायालय के एक अन्य निर्णय पर विश्वास करते हुए इस न्यायालय ने संप्रेक्षित किया था कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराओं 177 और 178 के अधीन प्रावधानों में अंतर्विष्ट प्रतिषेध लागू होंगे और न्यायालय, जिसको क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं थी, द्वारा पारित संज्ञान का आदेश विधि की दृष्टि में दोषपूर्ण था।

11. मामले के सम्पूर्ण तथ्यों एवं परिस्थितियों में, मैं पाता हूँ कि विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 का परिवाद ग्रहण करने के लिए और अभिकथित अपराधों, जिनके लिए संज्ञान लिया गया था, के लिए अभियुक्तगण का विचारण करने के लिए राँची न्यायालय के पास अधिकारिता नहीं है। संज्ञान के ऐसे आदेश को और न्यायालय, जिसके पास अपराधियों के विचारण की अधिकारिता नहीं है, द्वारा दांडिक कार्यवाही को जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

12. तथ्यों और परिस्थितियों और ऊपर की गयी चर्चा के आलोक में, मैं इस आवेदन में गुणागुण पाता हूँ। तद्नुसार, इसे अनुज्ञात किया जाता है। धुर्वा पी॰ एस॰ केस सं॰ 185 वर्ष 2006 से उद्भूत जी॰ आर॰ केस सं॰ 3256 वर्ष 2006 के तहत आक्षेपित आदेश और संज्ञान के आदेश के अनुसरण में, श्री पी॰ के॰ चौरसिया, सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, राँची के न्यायालय में लंबित समस्त दांडिक कार्यवाही को एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

माननीय जे॰ सी॰ एस॰ रावत एवं डी॰ के॰ सिन्हा, न्यायमूर्तिगण

हरपाल सिंह उर्फ हीरे

बनाम

झारखंड राज्य

Criminal Appeal No. 1031 of 2008. Decided on 24th June, 2010.

सत्र विचारण सं॰ 57 वर्ष 2008 में श्री रघुबर दयाल, अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ III, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 19.6.2008 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दण्डादेश के विरूद्ध।

(क) भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धारा 302/34 सहपठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27—आग्नेयायुध द्वारा हत्या–आजीवन कारावास–एक अ॰ सा॰ को छोड़कर, अन्य सभी चश्मदीद गवाहों ने अभियोजन विवरण का समर्थन नहीं किया और उन्हें अभियोजन द्वारा पक्षद्रोही घोषित किया गया था–अभियोजन मामला चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं–पक्षों के बीच शत्रुता–अगर गवाहों को अभियुक्त से शत्रुता है, उनके साक्ष्यों की संवीक्षा सावधानी से की जानी चाहिए–घटना के दो असंगत और स्व-विरोधात्मक विवरण–अगर अभियोजन साक्षीगण घटना की उत्पत्ति के सम्बन्ध में सही विवरण नहीं देते हैं, ऐसे साक्ष्य पर भरोसा नहीं किया जाना चाहिए–अभियोजन अपना मामला संदेहों की छाया से परे प्रमाणित करने में विफल रहा–दोषसिद्धि एवं दण्डादेश अपास्त–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 11 से 18)

(ख) दाण्डिक विधि–साक्ष्य का अधिमूल्यन–खराब पूर्ववृत्तों एवं निम्न नैतिक स्तर वाले चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य का अधिमूल्यन सम्यक् सावधानी से किया जाना चाहिए एवं ऐसे साक्ष्य पर विश्वास करना सुरक्षित नहीं होगा जबतक कि यह स्वतंत्र स्रोतों या संलग्न परिस्थितियों द्वारा सम्पोषित न हो–शत्रुता एक दोतरफा हथियार है–यह प्रहार एवं साथ ही बचाव का एक आधार हो सकता है। (पैरा 11)

अधिवक्तागण.–M/s S. K. Murari, Rajan Raj, For the Appellants; Addl. P.P., For the Respondent.

आदेश

यह अपील सत्र विचारण सं॰ 57 वर्ष 2008 में प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 19.6.2008 के दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश और दिनांक 21.6.2008 के दंडादेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 सह-पठित धारा 34 और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है और 5000/-रुपया जुर्माना भुगतान करने और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में छह माह का अतिरिक्त कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है। आगे अपीलार्थी को आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन अपराध के लिए तीन वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंड देश दिया गया है। आगे निर्देशित किया गया था कि समस्त दंडादेश साथ-साथ चलेंगे।

2. संक्षेप में मामला के तथ्य ये हैं कि दिनांक 26.6.2006 को रात्रि लगभग 8.30 से 8.45 बजे सूचक अ॰ सा॰ 1 दुर्गा राय लाटू उर्फ जगतार सिंह (मृतक), मनोज कुमार सिंह उर्फ भोले, बिट्टू मिश्रा और मुन्ना यादव, गरवासा, पी॰ एस॰ गोलमुरी, जिला पूर्वी सिंहभूम में ट्रक गराज में अवस्थित अशोक होटल के सामने चौकी पर साथ बैठ कर खाना-पीना कर रहे थे। अचानक, हरपाल सिंह सिंह उर्फ हीरे

(अपीलार्थी), राजू चौधरी, संदीप मिश्रा, हरीश रॉय और सुच्चा सरदार ट्रकों, जिन्हें अशोक होटल के सामने पार्क किया गया था, के बगल से घटनास्थल पर आए। अपीलार्थी और राजू चौधरी अपने हाथों में पिस्तौल पकड़े हुए थे और उन्होंने मृतक लुटू उर्फ जगतार सिंह पर गोलियाँ चलायी जो उसके मस्तक पर लगी जिसके परिणामस्वरुप वह जमीन पर गिर गया और उसकी उपहति से रक्त बहने लगा। उसे अस्पताल ले जाया गया। इस बीच होटल में खाना खा रहे ग्राहकों और मृतक के दोस्तों ने अपराधियों को पकड़ने के लिए उनका पीछा किया किन्तु अंधकार के कारण वे घटनास्थल से सफलतापूर्वक भाग गए। मृतक को टी॰ एम॰ एच॰ जमशेदपुर ले जाया गया था जहाँ उसे डॉक्टर द्वारा मृत घोषित किया गया था। गोलमुरी पुलिस थाना में एक लिखित पर दर्ज की गयी थी जिसके आधार पर गोलमुरी पी॰ एस॰ केस सं॰ 157 वर्ष 2006 दर्ज किया गया था और अन्वेषण आरंभ किया गया था।

3. अन्वेषण अधिकारी ने अन्वेषण पूरा करने के बाद विचारण न्यायालय के समक्ष आरोप पत्र दाखिल किया। मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और अपीलार्थी के विरुद्ध आरोपों को विरचित किया गया था, उसने आरोपों से इंकार किया और विचारण किए जाने का दावा किया।

4. अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में सूचक अ॰ सा॰ 1 दुर्गा राय, अ॰ सा॰ 2 अनीस कुमार मिश्रा, उर्फ बिट्टू मिश्रा, जो मृतक के साथ बैठे हुए थे, का परीक्षण किया; अभियोजन ने अ॰ सा॰ 3 अशोक कुमार प्रसाद, जो होटल का स्वामी था और मृतक और उसके मित्रों के लिए भोजन तैयार कर रहा था, को भी प्रस्तुत किया। अ॰ सा॰ 4 महेन्द्र सिंह, अ॰ सा॰ 5 चंद्रिका प्रसाद सिंह, अ॰ सा॰ 6 राजेन्द्र प्रसाद, अ॰ सा॰ 7 मनोज कुमार दास उर्फ भगना दास भी घटना के चश्मदीद गवाह बताए गए थे। अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह उर्फ भोले है जो भगदड़ के समय मृतक के साथ था। अ॰ सा॰ 1 से 7 तक को यह देखते हुए पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया था कि उन्होंने इस तथ्य का समर्थन नहीं किया था कि उन्होंने अपीलार्थी को मृतक पर गोली चलाते देखा था। अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह उर्फ भोले ही घटना का एक मात्र चश्मदीद गवाह था और उसने अभियोजन विवरण का समर्थन किया है। अ॰ सा॰ 9 डॉ॰ ए॰ के॰ चौधरी ने दिनांक 27.6.2006 को मृतक के मृत शरीर की शव परीक्षा की थी और शव परीक्षण रपट तैयार किया था। अ॰ सा॰ 10 जी॰ डी॰ मिश्रा मामले का अन्वेषण अधिकारी है। अ॰ सा॰ 11 महेन्द्र कौर मृतक की माता है। वह घटना के समय घटनास्थल पर उपस्थित नहीं थी और उसे घटना के बारे में अगले दिन बताया गया था। अ॰ सा॰ 12 आर॰ एस॰ विद्यार्थी भी अन्वेषण अधिकारी है जिन्होंने मामले का अंशत: अन्वेषण किया था।

5. अभियोजन के साक्ष्य को दर्ज करने के बाद दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अपीलार्थी का परीक्षण किया गया था और उसने साक्ष्य में अपने विरुद्ध किए गए सारे प्रकथनों से इंकार किया और आगे कथन किया कि वह निर्दोष है और उसे मामले में झूठा फँसाया गया है।

6. विचारण की समाप्ति के बाद, विद्वान सत्र न्यायाधीश ने अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया और दंडादेश दिया जैसा ऊपर उपदर्शित किया गया है।

7. यह उल्लिखित करना आवश्यक है कि यह विवादित नहीं है कि इसी तिथि, समय और घटनास्थल पर मृतक की मृत्यु हुई थी और मृतक की मृत्यु को अपीलार्थी द्वारा विवादित नहीं किया गया है। इसके अतिरिक्त, अभियोजन ने अ॰ सा॰ 9 डॉ॰ ए॰ के॰ चौधरी का साक्ष्य भी दिया है जिन्होंने दिनांक 27.6.2006 को दोपहर 1.20 बजे मृत के मृत शरीर की शव परीक्षा संचालित की थी और निम्नलिखित उपहतियों को पाया था:–

मिडलाइन में गर्दन के 7-1cm ऊपर ऑक्सीपीटल स्कालप पर आग्नेस्त्रा का प्रवेश जख्म; 2 cm x 1/2 cm x क्रेनियल कैविटी, प्रोजेक्टाइल त्वचा और अस्थि भेदने के बाद ब्रेन मैटर से होते हुए आगे गया और स्कालप के फ्रॉंटललोब से दाएँ हिस्से पर पाया गया था। ऑक्सीपीटल पोस्टीरियर के दाएँ हिस्से पर त्वचा के नीचे मुलायम टिशू। पेराइटल और फ्रंटल स्कालप कॉन्ट्यूज्ड थे। दाएँ हिस्से का ऑक्सीपीटल और पेराइटल स्कालप अस्थि फ्रैक्चर युक्त था, ब्रेन खरोंचयुक्त था।

8. शव परीक्षा के समय एक प्रोजेक्टाइल बरामद किया गया था और इसे पुलिस को सौंप दिया गया था। अ॰ सा॰ 9 डॉक्टर ने मत दिया कि उपहतियाँ मृत्यु-पूर्व प्रकृति की थी और आग्नेयस्त्र से कारित की जा सकती थी। उन्होंने यह मत भी दिया कि मृतक की मृत्यु सिर और ब्रेन पर आग्नेयस्त्र उपहतियों के कारण कारित हुई थी और मृत्यु के समय से बीता समय लगभग 12 से 18 घंटों के भीतर का था।

9. इसके अतिरिक्त, सूचक अ॰ सा॰ 1 दुर्गा राय, अ॰ सा॰ 2 अनीस कुमार मिश्रा, अ॰ सा॰ 3 अशोक कुमार प्रसाद, अ॰ सा॰ 4 महेन्द्र सिंह, अ॰ सा॰ 5 चंद्रिका प्रसाद सिंह, अ॰ सा॰ 6 राजेन्द्र प्रसाद, अ॰ सा॰ 7 मनोज कुमार उर्फ भगीना दास और अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह उर्फ भोले ने कथन किया है कि जब मृतक अन्य व्यक्तियों के साथ बैठा हुआ था, किसी ने मृतक के ऊपर गोलियाँ चलायी जिसके परिणामस्वरुप वह गिर गया और तत्पश्चात् उसे अस्पताल ले जाया गया था जहाँ उसे मृत घोषित किया गया था। इस प्रकार, अभियोजन गवाहों ने मृतक की मृत्यु के तथ्य को सिद्ध किया है। अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह उर्फ भोले ने घटना के विवरणों को दिया है और कथन किया है कि उसने देखा था कि अपीलार्थी ने अपने आग्येयास्त्र से गोली चलायी थी। इस प्रकार, अभियोजन गवाहों के साक्ष्य से यह पूरी तरह स्थापित होता है कि मृतक की मृत्यु मानव वध थी जो दिनांक 26.6.2006 को रात्रि लगभग 8.45 बजे अशोक होटल में हुई थी।

10. यह न्याय निर्णयन करने की आवश्यकता है कि मृतक के शरीर पर उपहतियाँ कारित करने वाला कौन है। अभियोजन के अनुसार, अपीलार्थी मृतक के शरीर पर उपहतियाँ कारित करने वाला है। अपीलार्थी ने अभिवचन किया है कि वह निर्दोष है और उसे मामले में झूठा फँसाया गया है। मामला प्रत्यक्ष साक्ष्य पर टिका है। जैसा हमने पहले ही इंगित किया है, अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह उर्फ भोले को छोड़कर अन्य चश्मदीद गवाहों अर्थात् अ॰ सा॰ 1 से 7 को अभियोजन द्वारा पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है क्योंकि उन्होंने अभियोजन के विवरण का समर्थन नहीं किया है और कथन किया है कि उन्होंने नहीं देखा था कि किसने मृतक पर गोली चलायी थी। इस प्रकार अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह उर्फ भोले ही केवल घटना का चश्मदीद गवाह है जिसने अभियोजन विवरण का समर्थन किया है। अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह उर्फ भोले ने कथन किया है कि दिनांक 26.6.2006 को रात्रि लगभग 8.30 बजे वह मृतक, बिट्टू मिश्रा (अ॰ सा॰ 2), सूचक अ॰ सा॰ 1 दुर्गा राय और मुन्ना यादव के साथ अशोक होटल के सामने खाना-पीना कर रहा था जब वे चौकी पर बैठे हुए थे। साक्ष्य में यह भी आया है कि जब मृतक इन व्यक्तियों के साथ बैठा हुआ था, अपीलार्थी अचानक ट्रकों, जो वहाँ पार्क किए गए थे, के बगल से आया और मृतक पर गोलियाँ चलायी। गोली मृतक के मस्तक पर लगी थी जिसके परिणामस्वरुप वह जमीन पर गिर गया और उसकी उपहतियों से खून बहने लगा जिसके बाद उसे अस्पताल ले जाया गया था। घटना का कोई अन्य चश्मदीद गवाह नहीं है। अ॰ सा॰ 11 महेन्द्र कौर, जो मृतक की माता है, को भी अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किया गया था। उसने कथन किया है कि सूचक अ॰ सा॰ 1 दुर्गा राय ने उसे अगले दिन बताया कि अपीलार्थी द्वारा उसके पुत्र की हत्या कर दी गयी है।

11. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि मनोज कुमार सिंह (अ॰ सा॰ 8) और अपीलार्थी हरपाल सिंह उर्फ हीरे के बीच दुश्मनी थी। विद्वान अधिवक्ता ने यह प्रतिवाद भी किया कि साक्ष्य यह भी प्रकट करते हैं कि अपीलार्थी के भाई की हत्या पहले ही लुट्टू उर्फ जगतार सिंह (मृतक) द्वारा की गयी थी। अपीलार्थी ने अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह के विरुद्ध मामला दर्ज किया था; अ॰ सा॰ 8 ने इस तथ्य को अपने साक्ष्य में स्वीकार किया है। अत: उसके साक्ष्य का सावधानीपूर्वक, सतर्कतापूर्वक और विस्तार में संवीक्षण किया जाना चाहिए। यह विधि का सुनिश्चित सिद्धान्त है कि पक्षों के बीच दुश्मनी के आधार मात्र पर ही साक्ष्य त्यक्त नहीं किया जा सकता है। दुश्मनी एक दुधारी हथियार है। यह हमले का और बचाव का भी आधार हो सकता है। नि:संदेह, पक्षों के बीच दुश्मनी थी। यह विधि की सुनिश्चित अवस्था है कि यदि गवाह अभियुक्त के बैरी हैं, उनके साक्ष्य की सतर्कतापूर्वक संवीक्षा की जानी चाहिए। अत: इस गवाह के साक्ष्य का सतर्कतापूर्वक पठन करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह के साक्ष्य से यह भी स्पष्ट है कि यह गवाह कलंकित चरित्र का है और इसका दांडिक पूर्ववृत्त है, और उसके विरुद्ध पाँच मामला लंबित पड़ा है। उसने अपने प्रति-परीक्षण में स्वीकार किया है कि उन मामलों में से कुछ में उसे दोषमुक्त कर दिया गया है जबकि कुछ मामलों में वह अभी भी विचारण का सामना कर रहा है। इस प्रकार, साक्ष्य से पता चलता है कि उसका (अ॰ सा॰ 8) का दांडिक पूर्ववृत्त है। यह विधि की सुनिश्चित अवस्था है कि बुरे पूर्ववृत्त और निम्न नैतिक स्तर वाले चश्मदीद गवाह के साक्ष्य का अधिमूल्यन सावधानी और सतर्कता से किया जाना चाहिए और ऐसा साक्ष्य पर विश्वास करना तब तक सुरक्षित नहीं होगा जब तक उन्हें स्वतंत्र स्रोत अथवा उपस्थित परिस्थितियों द्वारा पुष्ट नहीं किया जाता है।

12. अ॰ सा॰ 8 के साक्ष्य का अधिमूल्यन करने के लिए हमें प्राथमिकी के आलोक में अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह के साक्ष्य का परीक्षण करना होगा। प्राथमिकी के अनुसार, यह प्रकट किया गया है कि अपीलार्थी अपने हाथों में पिस्तौल पकड़े हुए थे और उन्होंने मृतक पर गोलियाँ चलायी और बुलेट मृतक को लगा और उसने उपहतियाँ प्राप्त की और गिर गया। अत:, अभियोजन के विवरण के अनुसार आरंभिक चरण पर घटना स्थल पर दो गोलियाँ दागी गयी थी। इस विवरण के साथ संगति में अन्वेषण अधिकारी ने मृत्यु समीक्षा रपट तैयार किया और उसने मृतक के शरीर में गोली लगने से दो उपहतियों को पाया। उन्होंने इस तथ्य को अपनी मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट में उपदर्शित किया है और उन्होंने विचारण न्यायालय के समक्ष अभिसाक्ष्य भी दिया है कि मृतक के शरीर पर दो उपहतियाँ पायी गयी थी। एक मृतक के मस्तक पर थी और दूसरी कंधा पर था। जब अ॰ सा॰ 9 डॉ॰ ए॰ के॰ चौधरी द्वारा शव परीक्षण संचालित किया गया था, यह प्रकट किया गया था कि केवल एक आग्नेयस्त्र से की गयी उपहति थी। अभियोजन विवरण के अनुसार, दो भिन्न व्यक्तियों द्वारा दो गोलियाँ दागी गयी थी। अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह ने अपने मुख्य परीक्षण में अपने साक्ष्य में कथन किया है कि मृतक पर अपीलार्थी द्वारा केवल एक गोली दागी गयी थी। मृतक पर चलायी गयी दूसरी गोली के बारे में कोई उल्लेख नहीं है। अत: उक्त से स्पष्ट है कि घटना के तरीके के संबंध में घटना के दो विवरण है। अत: घटना का तरीका असंगत और स्वविरोधाभासी है। यह विधि की सुनिश्चित अवस्था है कि यदि घटना की उत्पत्ति और तरीके के संबंध में सही विवरण के साथ अभियोजन साक्षीगण सामने नहीं आते हैं, ऐसा साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जाना चाहिए।

13. द्वितीय तथ्य जो चिकित्सीय रपट से प्रकट होता है यह है कि जख्म के प्रवेश बिन्दु पर कोई जला हुआ अथवा काला पड़ा निशान नहीं है। रपट में यह उपदर्शित किया गया है कि प्रोजेक्टाइल मृतक के ब्रेन को भेदा जो वहाँ घुसा हुआ था और यह शव परीक्षण के क्रम में डॉक्टर द्वारा बरामद किया गया

था। साक्ष्य में यह भी है कि ट्रक उस स्थल के काफी निकट खड़ा था जहाँ मृतक अपने मित्रों के साथ बैठा था। अभियोजन का मामला यह भी है कि अपीलार्थी ट्रकों, जो वहाँ पार्क किए गए थे, के बगल में प्रकट हुआ था। मोदी के चिकित्सा विधि शास्त्र के अनुसार, यदि कम दूरी से, लगभग तीन गज से, आग्नेयस्त्र द्वारा उपहति कारित की गयी हो, जख्म के प्रवेश बिन्दु पर जला हुआ और काला पड़ा चिन्ह होगा। यह स्पष्ट है कि पूर्वोक्त तथ्य द्वारा अ॰ सा॰ 8 द्वारा कथित विवरण को संपुष्ट नहीं किया गया है। यदि गोली कम दूरी से चलायी गयी थी जैसा अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह द्वारा कथन किया गया है, जख्म के प्रवेश बिन्दु पर जला हुआ और काला पड़ा निशान होगा। चिकित्सा साक्ष्य अ॰ सा॰ 8 के साक्ष्य को संपुष्ट नहीं करता था।

14. प्राथमिकी के अनुसार, यह अभियोजन का मामला है कि दो गोलियाँ दागी गयी थी और इन गोलियों को ट्रकों, जो अशोक होटल के सामने घटनास्थल के निकट पार्क किए गए थे, के बगल से दागा गया था। मृतक और उसके मित्रगण होटल के बाहर बैठे हुए थे और एक साथ खा-पी रहे थे। अपीलार्थी और राजू चौधरी, जो अभिकथित रूप से अपने हाथों में पिस्तौल लिए हुए थे, ट्रकों के बगल से आए और उन्होंने होटल की ओर गोली दागी, मृतक के मस्तक पर केवल एक गोली लगी। चिकित्सीय रपट में यह कथन किया गया है कि मृतक के मस्तक पर केवल एक आग्नेयस्त्र उपहति पायी गयी थी। अन्वेषण अधिकारी (अ॰ सा॰ 10) ने कथन किया है कि घटना के तुरन्त बाद वह घटना स्थल पर आया और एक खड़े ट्रक के पहियों के नीचे पड़ा प्रोजेक्टाइल बरामद किया और यदि इसे ट्रकों के बगल से दागा गया था, यह संभव नहीं था कि प्रोजेक्टाइल ट्रक के टायर के नीचे चला जाएगा। अत: यह तथ्य भी स्पष्टत: प्रकट करता है कि अभियोजन द्वारा दिया गया विवरण ट्रक के टायर के नीचे से प्रोजेक्टाइल की उक्त बरामदगी द्वारा संपुष्ट नहीं किया गया है।

15. अभियोजन कथा प्रकट करती है कि जगतार सिंह (मृतक) अपने मित्रों के साथ खा-पी रहा था और मुन्ना यादव भी उसके मित्रों में से एक था जो उसके साथ खा-पी रहा था। केवल अभियोजन को ज्ञात कारणों से उक्त गवाह को न्यायालय के समक्ष अभियोजन ने प्रस्तुत नहीं किया है। अ॰ सा॰ 1 से 7 जो घटना का चश्मदीद गवाह होने का दावा करते थे, को पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया था और उन्होंने अभियोजन के विवरण का समर्थन नहीं किया है। अभियोजन ने अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह को घटना के चश्मदीद गवाह के रूप में प्रस्तुत किया है जो घटना के समय उपस्थित था। जैसी चर्चा हमने ऊपर की है, उसका साक्ष्य विश्वसनीय और तर्कपूर्ण नहीं है। मुन्ना यादव सबसे उपयुक्त व्यक्ति था जो न्यायालय के समक्ष घटना की उत्पत्ति के बारे में बता सकता था। उसे अभियोजन द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया है। उपस्थित परिस्थितियों के साथ-साथ उक्त गवाह का अप्रस्तुतीकरण अभियोजन के लिए घातक है।

16. इस परिप्रेक्ष्य में मामले पर समग्रता से विचार करते हुए यह प्रतीत होगा कि घटना की उत्पत्ति अथवा तरीका के संबंध में अभियोजन मामला के प्रत्येक महत्वपूर्ण और तात्विक पहलू पर, एकमात्र चश्मदीद गवाह अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह का साक्ष्य किसी स्वतंत्र स्रोत द्वारा संपुष्ट नहीं किया गया है। अन्वेषण अधिकारी के वस्तुपरक निष्कर्ष इस तथ्य का उपदर्शक है कि अभियोजन पक्ष ने न्यायालय से सत्य छुपाया है और उनके द्वारा प्रस्तुत कथा विश्वसनीय नहीं है। यह सुनिश्चित विधि है कि यदि घटना की उत्पत्ति और तरीका के संबंध में अभियोजन सत्य विवरण नहीं प्रस्तुत करता है, अभियोजन के मामला और साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता है। यदि इस मामला में परीक्षित किए गए समस्त गवाह

पक्षद्रोही हैं, केवल हितबद्ध अथवा शत्रु अथवा सपक्षी गवाहों को प्रस्तुत किया गया है और पक्षपाती गवाहों के उक्त साक्ष्य को स्वतंत्र स्रोत और उपस्थित परिस्थितियों द्वारा संपुष्ट नहीं किया गया है, यह माना जाएगा कि अभियोजन अपना मामला युक्तियुक्त संदेहों के परे सिद्ध करने में विफल रहा है। ऐसे गवाह जिसका खराब पूर्ववृत्त है और नैतिक स्तर निम्न है, के साक्ष्य को स्वतंत्र स्रोत से उद्भूत निर्णायक बिंदुओं पर संपुष्टि किए बिना स्वीकार करना जोखिम भरा होगा। अभियोजन का साक्ष्य विश्वसनीय नहीं है।

17. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता की सहायता से अभियोजन गवाहों के संपूर्ण साक्ष्य का परिशीलन किया है। अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह उर्फ भोले का साक्ष्य अन्य उपस्थित परिस्थितियों द्वारा संपुष्ट नहीं किया गया है जैसा ऊपर उपदर्शित किया गया है। अ॰ सा॰ 8 मनोज कुमार सिंह ने घटना की एक भिन्न कथा प्रस्तुत की है। हम उसका साक्ष्य तर्कपूर्ण और विश्वसनीय और विश्वास योग्य नहीं पाते हैं। अ॰ सा॰ 8 के साक्ष्य पर विश्वास करके विचारण न्यायालय ने गलती की है। अभियोजन अपना मामला समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने में विफल रहा है। मामले के इस दृष्टिकोण में, विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का आदेश और दंडादेश विधि में संपोषणीय नहीं है और अपास्त करने योग्य है और अपीलार्थी दोषमुक्ति का हकदार है।

18. उपरोक्त कारणों से, यह अपील अनुज्ञात की जाती है और सत्र विचारण सं॰ 57 वर्ष 2008 में विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी की दोषसिद्धि का आदेश और दंडादेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी अभिरक्षा में है। अपीलार्थी को आरोप से दोषमुक्त किया जाता है और यदि किसी अन्य मामला के संबंध में उसकी आवश्यकता नहीं है, उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है।

माननीय प्रशांत कुमार, न्यायमूर्ति

उम्बुलन मरकी एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (SJ) No. 180 of 2002. Decided on 3rd August, 2010.

सत्र विचारण सं॰ 169 वर्ष 1997 में श्री बिजय कुमार पंडित, सत्र न्यायाधीश, सिमडेगा द्वारा पारित दिनांक 17.4.2002 और दिनांक 19.4.2002 के क्रमशः दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दण्ड संहिता, 1860—धारा 376 (2) (g)—सामूहिक बलात्संग–अपीलार्थीगण को 10 वर्षों का कठोर कारावास का दण्डादेश–अभियोक्त्री का बालात्संग चार लोगों द्वारा किया गया था–अभियोजन मामला अभियोक्त्री के कथन एवं उनके पिता के साक्ष्य द्वारा दृढ़ता से समर्थित–केवल अभियोक्त्री द्वारा बलात्संग की प्रथम घटना के प्रकट न किए जाने के चलते, यह उपधारित नहीं किया जा सकता है कि उसने सहवास के लिए सम्मति दी थी–अभियोक्त्री की उम्र लगभग 15 वर्ष थी–अगर उसने सहवास के लिए अपनी सहमति दी थी इसका अभियोजन के मामले पर कोई प्रभाव नहीं है–एक अवयस्क लड़की के साथ यहाँ तक कि उसकी सम्मति से किया गया सहवास बलात्संग की रिष्टि के अंतर्गत आयेगा–अभियोक्त्री के पास अपीलार्थीगण को मिथ्यापूर्वक आलिप्त करने का कोई कारण नहीं था–दोषसिद्धि एवं दण्डादेश अभिपुष्ट–अपील खारिज। (पैराएँ 12 से 16)

अधिवक्तागण.–Mr. Arshad Hussain, For the Appellants; Mr. Tapas Roy, For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.—यह अपील एस० टी० सं० 169 वर्ष 1997 में सत्र न्यायाधीश, सिमडेगा द्वारा पारित दिनांक 17.4.2002 और दिनांक 19.4.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन अपीलार्थीगण को भा० दं० सं० की धारा 376 (G) के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और दस वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है।

2. संक्षेप में, दिनांक 26.12.1996 की प्राथमिकी के मुताबिक अभियोजन का मामला यह है कि एक माह पहले अभियोक्त्री (लगभग 16 वर्ष आयु की) महाबूयान्ग हाट में सामान खरीदने गयी थी। आगे अभिकथन किया गया है कि जब सांय लगभग 6-7 बजे वह बाजार से वापस लौट रही थी और एक पहाड़ी के निकट पहुँची, अपीलार्थी सं० 1 और 2 ने उसे पकड़ लिया। तत्पश्चात अपीलार्थी सं० 1 उसे जबरन वन में ले गया और उसके साथ बलात्संग किया। आगे अभिकथन किया गया है कि घटना के बाद उसने धमकी दी कि यदि उसने किसी व्यक्ति को यह तथ्य बताया तो उसकी हत्या कर दी जाएगी। यह कथन किया गया है कि उसने भयभीत होकर अपने परिवार के सदस्यों सहित किसी व्यक्ति को इस तथ्य को नहीं बताया। तब अभिकथन किया गया है कि दिनांक 25.12.1996 को सायं लगभग 6 बजे वह अपने घर से कुछ दूरी पर अवस्थित कुआँ से पानी लाने गयी। वह कथन करती है कि जब वह कुआँ पर पहुँची, उसने पूर्वोक्त चार अपीलार्थीगण को कुआँ के निकट खड़ा देखा। तब उसने अभिकथन किया कि अपीलार्थी सं० 1 ने उसे बुलाया किन्तु अपीलार्थीगण को देखकर उसने भागने की कोशिश की, पर अपीलार्थी सं० 1 ने उसे पकड़ लिया और उसका मुँह बन्द कर दिया, उसको खेत में ले गया और जमीन पर लिटाकर उसका बलात्संग किया। तब अभिकथन किया गया है कि अपीलार्थी सं० 1 के बाद अन्य तीन अपीलार्थीगण ने बारी-बारी से उसका बलात्संग किया। आगे अभिकथन किया गया है कि तत्पश्चात् अपीलार्थी सं० 1 पुनः दूसरी बार उसका बलात्संग करने लगा किन्तु जब वह ऐसा कर रहा था, अभियोक्त्री का पिता घटनास्थल पर आया, तब अपीलार्थी सं० 1 अपने कपड़ों अर्थात् पैंट, गमछा और जंघिया छोड़कर भाग गया। आगे कथन किया गया है कि अन्य अपीलार्थीगण भी उस समय भाग गए। यह कथन किया गया है कि सूचक अपने घर लौट गयी और अपने परिवार के सदस्यों को घटना के बारे में बताया। अगले दिन प्राथमिकी दर्ज की गयी और पुलिस ने अन्वेषण आरंभ किया।

3. अन्वेषण पूरा करने के बाद, पुलिस ने भा० दं० सं० की धारा 376/34 के अधीन अपीलार्थीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया। संज्ञान के बाद मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द कर दिया गया क्योंकि भा० दं० सं० की धारा 376 के अधीन अपराध अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है।

4. सत्र न्यायालय ने भा० दं० सं० की धारा 376 के अधीन आरोपों को विरचित किया और इन्हें अभियुक्तगण को स्पष्ट किया जिसके प्रति अभियुक्तगण ने दोषी नहीं होने का अभिवचन किया और विचारण किए जाने का दावा किया। तत्पश्चात्, अभियोजन ने कुल मिलाकर सात गवाहों का परीक्षण किया और अपना मामला सिद्ध करने के लिए प्राथमिकी और अभिग्रहण सूची को अभिलेख पर लाया।

5. अभियोजन का मामला बन्द करने के बाद, दं० प्र० सं० की धारा 313 के अधीन अपीलार्थीगण के बयानों को दर्ज किया गया जिसमें उनका बचाव पूर्ण इंकार का है।

6. यह प्रतीत होता है कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के बाद विद्वान अवर न्यायालय ने पूर्वोक्तानुसार अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध किया और दंडादेश दिया जिसके विरूद्ध वर्तमान अपील दाखिल की गयी है।

7. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता, श्री अरशद हुसैन विद्वान अवर न्यायालय के निर्णय का विरोध करते हुए निवेदन करते हैं कि वर्तमान मामले में अभियोजन मामला का समर्थन करने के लिए कोई स्वतंत्र गवाह नहीं है। वह आगे निवेदन करते हैं कि केवल अभियोक्त्री और उसके पिता के साक्ष्यों

पर विद्वान अवर न्यायालय ने अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध किया है और दंडादेश दिया है। डॉक्टर जिन्होंने अभियोक्त्री का चिकित्सीय परीक्षण किया था, को अभियोजन द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया है, अत: यह उपधारित किया जा सकता है कि अभियोक्त्री ने घटना के क्रम में कोई उपहति प्राप्त नहीं की थी। आगे निवेदन किया गया है कि अभियोक्त्री सहमत पक्षकार प्रतीत होती है क्योंकि उसने प्रकट नहीं किया था कि प्राथमिकी दर्ज किए जाने की तिथि से एक माह पहले अपीलार्थीगण द्वारा उसका बलात्संग किया गया था। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि अभियोक्त्री का पूर्वोक्त आचरण उसे अविश्वसनीय बनाता है। अत:, केवल अभियोक्त्री और उसके पिता के साक्ष्य पर अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध करना सुरक्षित नहीं है। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थीगण को उनके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त कर दिया जाय।

8. दूसरी ओर, विद्वान अपर लोक अभियोजक निवेदन करते हैं कि वर्तमान मामले में अभियोक्त्री ने घटना का सजीव चित्र प्रस्तुत किया है और अभियोजन के मामले का समर्थन किया है। उसका साक्ष्य अ॰ सा॰ 2 (अभियोक्त्री का पिता), अ॰ सा॰ 4 (अभियोक्त्री की माता) द्वारा पूर्णत: संपुष्ट होता है और अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 5, जो स्वतंत्र गवाह है, ने भी अभियोजन का मामला उस सीमा तक समर्थित किया है कि उन्हें घटना के बारे में अभियोक्त्री के पिता द्वारा सूचित किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि यह सुनिश्चित है कि सामान्यत: बलात्संग मामले में अभियोक्त्री को साक्ष्य पर संदेह नहीं किया जाना चाहिए और इस पर विश्वास किया जाना चाहिए और कोई संपुष्टि आवश्यक नहीं है जब तक बचाव नहीं दर्शाता है कि अपीलार्थीगण को झूठा आलिप्त करने के लिए कोई मजबूत कारण है। यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामले में यह दर्शाने का आत्यंतिक रूप से कोई कारण नहीं है कि अभियोक्त्री ने अपीलार्थीगण को मिथ्यापूर्वक आलिप्त किया था। आगे निवेदन किया गया है कि कल्पना के किसी विस्तार में यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियोक्त्री उक्त यौन संभोग का सहमत पक्षकार थी। यह निवेदन किया गया है कि पहले अवसर पर, जब अभियोक्त्री के साथ अपीलार्थीगण द्वारा बलात्संग किया गया था, उसने उसको हत्या की धमकी दी थी यदि वह उक्त तथ्य को प्रकट करेगी। अभियोक्त्री ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाली अवयस्क बालिका है और उक्त परिस्थिति के अधीन उसने उक्त धमकी के कारण अपने परिवार के सदस्यों को पूर्वोक्त तथ्य के बारे में नहीं बताया होगा। अत: केवल पहली घटना को प्रकट नहीं किए जाने के कारण यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियोक्त्री सहमत पक्षकार है। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि आक्षेपित निर्णय में कोई भी अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं है जिसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

9. पक्षों की ओर से निवेदनों को सुनने पर, मैंने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया है। अ॰ सा॰ 1 नारायण मांझी एक औपचारिक गवाह है जिसने प्राथमिकी (प्रदर्श-1) सिद्ध किया है; अ॰ सा॰ 2 मनोहर गुरिया अभियोक्त्री का पिता है और घटना के अंश का चश्मदीद गवाह है; अ॰ सा॰ 3 बुधवा सिंह सह-ग्रामीण है जिसका परीक्षण यह सिद्ध करने के लिए किया गया है कि उसे घटना के बारे में अ॰ सा॰ 2 द्वारा सूचित किया गया था। वह प्राथमिकी और अभिग्रहण सूची का भी गवाह है। अ॰ सा॰ 4 निरन्तर संतोषी अभियोक्त्री की माता है, अ॰ सा॰ 5 सिमसन बरायकी भी एक सह-ग्रामीण है जिसका परीक्षण यह सिद्ध करने के लिए किया गया है कि अ॰ सा॰ 2 द्वारा उसे घटना के बारे में सूचित किया गया था। अ॰ सा॰ 6 अभियोक्त्री है और अ॰ सा॰ 7 अन्वेषण अधिकारी है।

10. अत: अभिलेख के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि अभियोजन का संपूर्ण मामला अ॰ सा॰ 6 (अभियोक्त्री) और अ॰ सा॰ 2 (अभियोक्त्री का पिता) के परिसाक्ष्य पर आधारित है। अ॰ सा॰ 6 ने अपने अभिसाक्ष्य में दृढ़तापूर्वक कथन किया है कि दिनांक 25.12.1996 को सायं लगभग 6 बजे जब वह कुआँ से पानी लाने के लिए गयी, समस्त अपीलार्थीगण कुआँ के निकट खड़े थे। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने उसे बुलाया जिस पर उसने भागने का प्रयास किया किन्तु अपीलार्थी सं॰ 1

ने उसे पकड़ लिया और उसका मुँह बन्द कर दिया और उसे जयमंगल गुरिया के खेत में ले गया और उसको जमीन पर गिरा दिया और उसके साथ बलात्कार किया। तत्पश्चात् अन्य तीन अपीलार्थीगण ने बारी-बारी से उसका बलात्संग किया। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि जब अपीलार्थी सं० 1 ने दूसरी बार उसका बलात्कार करना शुरू किया, अ० सा० 2 (पिता) घटनास्थल पर आ गया और तत्पश्चात समस्त अपीलार्थीगण भाग गए। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि वर्तमान घटना की तिथि से एक माह पहले अपीलार्थी सं० 1 ने उसका बलात्संग किया था जब वह महाबुयुन्ग बाजार से लौट रही थी। अत: अभियोक्त्री के साक्ष्य के परिशीलन से मैं पाता हूँ कि वह प्राथमिकी में दिए गए पूर्व बयान के साथ संगत बनी रही। बचाव पक्ष द्वारा विस्तारपूर्वक उसका प्रति-परीक्षण किया गया। किन्तु उससे ऐसा कुछ भी प्राप्त नहीं किया गया है जिस पर उसके परिसाक्ष्य पर संदेह किया जा सकता है। अभियोक्त्री का बयान अ० सा० 2 (अभियोक्त्री का पिता) के साक्ष्य से भी पूर्णत: समर्थित होता है। इस गवाह ने अभिसाक्ष्य दिया कि घटना की तिथि पर सांयकाल में उसकी पुत्री कुआँ से पानी लाने गयी थी और जब वह काफी देर तक नहीं लौटी, वह उसे खोजते हुए कुआँ की ओर गया। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि जब वह जयमंगल गुरिया के खेत में पहुँचा, उसने अपीलार्थी सं० 1 को उसके साथ बलात्संग करता पाया। उसने अन्य अपीलार्थीगण को भी घटनास्थल पर देखा। तब वह कथन करता है कि उसको देखकर अपीलार्थीगण भाग गए। वह आगे कथन करता है कि अपीलार्थी सं० 1 अपना कपड़ा अर्थात् पैंट, जंघिया और गमछा छोड़कर भाग गया था। इस गवाह का भी प्रति-परीक्षण किया गया था किन्तु बचाव यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं प्राप्त कर सका था कि अपीलार्थीगण को झूठा आलिप्त करने के लिए उसको कोई निजी दुश्मनी थी।

11. वर्तमान मामले में, अ० सा० 7 के रूप में आई० ओ० का परीक्षण किया गया है और उसने यह कहते हुए कि जब उसने घटनास्थल अर्थात् जयमंगल गुरिया के खेत का निरीक्षण किया, उसने घटनास्थल पर कुचले जाने का निशान पाया, अभियोक्त्री के बयानों को संपुष्ट किया। अत: वर्तमान मामले में, मैं पाता हूँ कि अभियोक्त्री का बयान अभिलेख पर उपलब्ध अन्य साक्ष्य से पूर्णत: संपुष्ट होता है।

12. यह सुनिश्चित है कि अभियोक्त्री के साक्ष्य का मूल्यांकन करते हुए न्यायालय को ध्यान में रखना होगा कि कोई भी स्वाभिमानी महिला किसी कारण के बिना किसी व्यक्ति को झूठा आलिप्त करने के लिए अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध अपमानजनक बयान देने के लिए न्यायालय में सामने आएगी। आगे सुनिश्चित है कि यौन उत्पीड़न अंतर्ग्रस्त करते मामलों में सामग्रियाँ जिनका अभियोजन की सत्यता पर कोई प्रभाव नहीं है अथवा अभियोक्त्री के बयान में मामूली अंतर का भी उसकी विश्वसनीयता पर कोई प्रभाव नहीं है जब तक यह नहीं दर्शाया जाता है कि ये अंतर घातक प्रकृति के हैं। यह भी बराबर रूप से सुनिश्चित है कि यदि अभियोक्त्री का साक्ष्य विश्वास उत्पन्न करता है, किसी स्वतंत्र स्रोत, उदाहरणस्वरुप चिकित्सीय साक्ष्य आदि से उसके साक्ष्य की संपुष्टि पर जोर देना न्यायालय के लिए आवश्यक नहीं है।

13. वर्तमान मामले में, मैंने पहले ही ध्यान में लिया है कि अपीलार्थीगण को झूठा आलिप्त करने के लिए अभियोक्त्री के पास कोई कारण और/अथवा निजी दुश्मनी नहीं थी। अभियोक्त्री के साक्ष्य में कोई अंतर नहीं है। यह सत्य है कि वर्तमान मामले में अभियोजन ने डॉक्टर को प्रस्तुत नहीं किया है और उनका परीक्षण नहीं किया है जिन्होंने अभियोक्त्री का चिकित्सीय परीक्षण किया था। यह उल्लेखनीय है कि वर्तमान मामले में अभियोजन राज्य सरकार द्वारा संचालित किया गया था और अभियोजन को समस्त गवाहों का परीक्षण करना था। गवाहों के गैर-परीक्षण के लिए अभियोक्त्री को दोष नहीं दिया जा सकता है। इसके

अतिरिक्त, चूँकि अभियोक्त्री के साक्ष्य में कोई अंतर नहीं है और बचाव पक्ष भी यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं लाया है कि अपीलार्थीगण को झूठा आलिप्त किया गया है, मैं उसके साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं पाता हूँ जो अ॰ सा॰ 2 (अभियोक्त्री का पिता) के साक्ष्य द्वारा और अ॰ सा॰ 7 (अन्वेषण अधिकारी) के साक्ष्य द्वारा संपुष्ट किया गया है।

14. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता, श्री हुसैन का प्रतिवाद कि अभियोक्त्री एक सहमत पक्षकार है, निम्नलिखित कारण से आरंभ में ही अस्वीकार किए जाने योग्य है। कोई भी किसी महिला में अंतर्हित संकोचीपन और उन पर किए गए यौन प्रहार को छुपाने की प्रवृत्ति को ध्यान में ले सकता है। उक्त प्रवृत्ति गाँव में रहने वाली महिलाओं में सामान्य है। अत: यह प्रतीत होता है कि संभवत: पूर्वोक्त कारण से अभियोक्त्री ने अपीलार्थी सं॰ 1 द्वारा किए गए बलात्संग की पहली घटना को प्रकट नहीं किया था। इसके अतिरिक्त, अभियोक्त्री ने दृढ़तापूर्वक कथन किया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने उसको उसकी हत्या करने की धमकी दी थी यदि वह उक्त तथ्य किसी को भी प्रकट करेगी। यह प्रतीत होता है कि घटना के समय, अभियोक्त्री अवयस्क थी, अत: संकोच के कारण और भय के कारण भी उसने अपने परिवार के सदस्यों सहित किसी को पूर्वोक्त तथ्य प्रकट नहीं किया था। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन, अभियोक्त्री द्वारा पहली घटना के मात्र अप्रकटीकरण के कारण यह उपधारित नहीं किया जा सकता है कि उसने यौन संभोग के लिए सहमति दी थी। इसके अतिरिक्त, प्राथमिकी में कथन किया गया है कि घटना के समय अभियोक्त्री की आयु 15 वर्ष थी। उक्त परिस्थिति के अधीन, यदि उसने यौन संभोग के लिए सहमति दी भी थी, इसका अभियोजन के मामला पर कोई प्रभाव नहीं है। अवयस्क बालिका के साथ यौन संभोग, उसकी सहमति के साथ भी, बलात्संग की रिष्टि के भीतर आएगा।

15. उक्त की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं विद्वान अवर न्यायालय के आक्षेपित निर्णय में कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ जिसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

16. परिणामस्वरूप, इस अपील में कोई गुणागुण नहीं है। तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है। दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दंडादेश एतद् द्वारा संपुष्ट किया जाता है। अपीलार्थीगण जमानत पर है, उनका जमानत बंधपत्र रद्द किया जाता है। उन्हें दंड भुगतने के लिए अवर न्यायालय में आत्मसमर्पण करने का निर्देश दिया जाता है। उनकी उपस्थिति को प्राप्त करने के लिए अवर न्यायालय को समस्त प्रपीड़क कदम उठाना होगा।

माननीया जया रॉय, न्यायमूर्ति

सुशील मराँड़ी

बनाम

रगीना हंसदा एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 573 of 2010. Decided on 3rd November, 2010.

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—आवेदक-विपक्षी पक्षकार को वाद दाखिल करने की तिथि से 1,000/- रु॰ का मासिक भरण-पोषण भुगतान करने का निर्देश—याची ने विपक्षी पक्षकार को पत्नी के तौर पर स्वीकार किया है—याची ने जानबूझकर विपक्षी पक्षकार एवं उसके बच्चे को छोड़ दिया है और बार-बार आग्रह किए जाने के बावजूद उनके भरण-पोषण के लिए कोई धन राशि नहीं दिया है—विपक्षी पक्षकारगण याची के पत्नी एवं पुत्र हैं एवं वे याची

से भरण-पोषण की राशि पाने के हकदार हैं–विचारण न्यायालय द्वारा प्रदत्त 1,000/-रु॰ की मासिक भरण पोषण राशि युक्तियुक्त है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 6 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Sajid Yunus Waris, For the Petitioner; Mr. None, For the State.

आदेश

जया रॉय, न्यायमूर्ति.–दाण्डिक प्रकीर्ण केस सं॰ 117 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 20 मार्च, 2010 के आदेश के विरुद्ध याची ने वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन दाखिल किया है जिसके द्वारा प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, पाकुड ने वाद दाखिल करने की तिथि अर्थात् 26.11.2008 से आवेदक-विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 को 1,000/-रु॰ प्रति माह भरण-पोषण राशि का भुगतान करने का निर्देश याची को दिया है।

2. संक्षेप में, मामला यह है कि आवेदक-विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 एवं 2 ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन एक मामला दाखिल किया है इसमें यह कथन करते हुए कि आवेदक विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 रगीना हंसदा का विवाह याची सुशील मराँड़ी के साथ जुलाई, 1997 में जहीर स्थान में मिट्टी डालकर हुआ था एवं तत्पश्चात् उक्त विवाह से, उसने एक लड़के को जन्म दिया। आगे यह अभिकथन किया गया है कि याची ने आवेदक विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 रगीना हंसदा पर प्रहार करके उसके बच्चे के साथ बाहर निकाल दिया। बार-बार आग्रह किए जाने के बावजूद, जब याची ने भरण-पोषण राशि का भुगतान नहीं किया, आवेदक-विपक्षी पक्षकार के पास कोई अन्य विकल्प न होने के कारण स्वयं एवं अपने बच्चे के लिए भरण-पोषण का दावा करते हुए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अंतर्गत एक आवेदन दाखिल किया। उक्त आवेदन में आगे यह कहा गया है कि आवेदक-विपक्षी पक्षकार एक गरीब आदिवासी है और आय का कोई स्रोत नहीं है। दूसरी ओर, याची के पास 40-50 बीघा कृषि भूमि है एवं वह गिट्टी (स्टोन चिप्स) का भी कारोबार कर रहा है जिससे वह 15,000/-रु॰ प्रति माह कमाया करता था।

3. नोटिस प्राप्त करने पर, विपक्षी पक्षकार-याची उपस्थित हुआ और अपना कारण पृच्छा दाखिल किया, इसमें यह कथन करते हुए कि न तो उसका विवाह रगीना हंसदा विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 के साथ हुआ था और न ही आवेदक-विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 रातूलाल मरांडी उसका बेटा है। विपक्षी पक्षकार-याची का आगे का मामला यह है कि याची एक ईसाई है एवं ईसाईयों का विवाह सदैव चर्च में ''फादर'' की उपस्थिति में होता है। आवेदक-याची ने अपने कारण पृच्छा में आगे कहा है कि वह एक बेरोजगार छात्र है तथा उसके पास आय का कोई भी जरिया नहीं है एवं वह पूर्णत: अपने पिता पर आश्रित है।

4. आवेदक-विपक्षी पक्षकार ने अपना मामला प्रमाणित करने के लिए दो गवाहों का परीक्षण किया और PCR केस सं॰ 235 वर्ष 2008 में विद्वान SDJM, पाकुड़ द्वारा पारित निर्णय की एक प्रमाणित प्रति भी दाखिल की जो प्रदर्श-1 के तौर पर चिन्हित है। यद्यपि आवेदक याची उपस्थित हुआ और अपना कारण पृच्छा दाखिल किया और अ॰ सा॰ 1 को भी परीक्षित किया परन्तु उसने आवेदक-विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 अर्थात् अ॰ सा॰ 2 रगीना हंसदा को परीक्षित नहीं किया है और न ही उसने अपना मामला प्रमाणित करने के क्रम में किसी साक्षी को प्रस्तुत किया है। उसने अपना मामला प्रमाणित करने के क्रम में स्वयं की भी परीक्षा नहीं करायी।

5. याची की ओर से उपस्थित होने वाले अधिवक्ता ने तर्क किया कि आवेदक विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 ने स्वयं कहा है कि याची के साथ उसका विवाह जहीर स्थान पर सिर में मिट्टी डालकर हुआ था, अतएव, यह नहीं कहा जा सकता है कि विवाह समारोह आदिवासी रीति रिवाज के अनुसार या ईसाई धर्म के मुताबिक सम्पन्न हुआ था। इसलिए, आवेदक-विपक्षी पक्षकार स्वयं को वर्तमान याची की पत्नी होने

का दावा नहीं कर सकती। याची एक ईसाई है और इसलिए सामान्यत: इनलोगों का विवाह किसी चर्च या किसी न्यायालय में सम्पन्न होता है।

6. अभिलेख से, मैं पाती हूँ कि अ॰ सा॰ 1 जो आवेदक–विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 रगीना हंसदा का चाचा है, ने अपने साक्ष्य में कहा है कि उसका विवाह जहीर स्थान में सिर में मिट्टी डालकर याची अर्थात् सुशील मरांडी के साथ संपन्न हुआ था और उक्त विवाह से दोनों का रातूलाल भरांडी नामक एक पुत्र है। आवेदक–विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 (अ॰ सा॰ 2) ने अपने साक्ष्य में अभिसाक्ष्य दिया है कि वह मध्य विद्यालय, पाकुड़ में कक्षा VIII में पढ़ रही थी और उसे सुशील मरांड़ी से प्रेम हो गया एवं तत्पश्चात्, दोनों ने जहीर स्थान में शादी कर ली। जब वह गर्भवती हो गई, तो गाँव में एक पंचायत बुलाई गई एवं उसका पति उसे अपने घर में ले आया परन्तु तत्पश्चात्, उसने बच्चे का गर्भपात कराने पर बल दिया, परन्तु जब वह सहमत नहीं हुई और एक बच्चे ने जन्म ले लिया, तो उसे मारपीट कर घर से निकाल दिया गया। उसने आगे कहा है कि इस मारपीट के लिए उसने भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498 के अधीन एक दाण्डिक मामला दाखिल किया एवं उक्त मामले में, वर्तमान याची को दोषसिद्ध किया गया है। उसने आगे अपने साक्ष्य में कहा है कि आवेदक–याची ने उसे अपने घर से निकालने के बाद दूसरी लड़की से विवाह कर लिया है।

7. आवेदक विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 द्वारा दाखिल किए गए आवेदन से, मैं पाती हूँ कि याची द्वारा दाखिल जमानत आवेदन में, वर्तमान ने आवेदक विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 को पत्नी के तौर पर स्वीकार कर लिया है।

8. अभिलेख पर मौजूद इन सभी सामग्रियों से, मैं पाती हूँ कि आवेदक विपक्षी पक्षकार ने स्पष्ट रूप से अपना मामला स्थापित किया है। इसलिए, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि याची ने जानबूझकर आवेदक विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 एवं 2 को छोड़ दिया है एवं दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन आवेदन दाखिल किए जाने की तिथि से स्वीकृत रूप से बारम्बार आग्रह किए जाने के बावजूद उनलोगों को कोई भी भरण–पोषण राशि प्रदान नहीं कर रहा है।

9. चूँकि आवेदकगण–विपक्षी पक्षकार सं॰ 1 एवं 2 वर्तमान याची के पत्नी एवं पुत्र हैं, इसलिए, मेरी राय में, वे याची से भरण–पोषण राशि प्राप्त करने के हकदार हैं। अब, प्रश्न यह है कि भरण–पोषण की राशि क्या होनी चाहिए। नि:संदेह, आवेदक विपक्षी पक्षकारगण याची की आय के सम्बन्ध में कागज का कोई टुकरा भी पेश नहीं कर सके। जैसा कि आवेदक–विपक्षी पक्षकार द्वारा दाखिल आवेदन में वर्णित किया गया है कि याची के पास भूमि संपत्ति है, इसलिए, मेरी राय में, दोनों विचारण न्यायालय द्वारा आवेदन की तिथि से दोनों आवेदक विपक्षी पक्षकारों को प्रदान किया गया 1,000/-रु॰ का भरण–पोषण अयुक्तिसंगत एवं अत्यधिक नहीं है। इसलिए, जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, मैं आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया जाता है।